महाभारत की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं

A Thesis

Submitted in partial fulfillment of the requirements for the

Award of the degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

in

Performing Art's

By

Gurtej Singh

41400080

Supervised By

Dr Kulbir Kaur Virk

Co-Supervised By

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

PUNJAB

2020

महाभारत की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं

घोषणा पत्र

मैं गुरतेज सिंह यह घोषणा करता हूँ कि "महाभारत की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं" विषय पर लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय, जालंधर में पीएच.डी (परफोरमिंग आर्ट) की उपाधि के लिए प्रस्तुत यह शोध-प्रबंध मेरे निजी श्रम का ही प्रतिफल है। इस शोध-प्रबंध की निर्देशिका डॉ कुलबीर कौर विर्क हैं। उनसे मुझे जो निर्देशना मिली और समय समय पर उनके अमूल्य मार्गदर्शन और अपनत्व से मेरे इस शोध-प्रबंध को पूरा करने में जो योगदान प्राप्त हुआ है, उसके लिए मैं उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। यह शोध-प्रबंध उनके अमूल्य निर्देशन एवं स्नेह का साकार रूप है।

दिनांक : शोधार्थी

(गुरतेज सिंह)

प्रमाण – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि गुरतेज सिंह ने "महाभारत की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं" विषय पर शोध-कार्य मेरे निर्देशन में सम्पन्न किया है। मेरा विश्वास है कि यह शोध-प्रबंध सुयोग्य एवं स्तरानुकूल है, इसलिए मैं इसे परीक्षार्थ प्रस्तुत करने की अनुमति देती हूँ ।

दिनांक : **निर्देशिका**

डॉ कुलबीर कौर विर्क

आभार प्रदर्शन

मैं अपने शोध प्रबंध की निर्देशिका डॉ कुलबीर कौर जी का आभार प्रदर्शित करना चाहता हूँ, जिन्होंने गुरु रूप में मेरा मार्गदर्शन करके मेरे स्वरूप को विकसित किया। उनके स्नेहमयी सत्त सहयोग एवं दिशा-निर्देश में मैं यह शोध-कार्य पूर्ण करने में समर्थ हो सका हूँ।

मैं लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय में कार्यरत गुरुजनों, कर्मचारियों तथा सहपाठियों के प्रति भी सम्मानित भाव प्रकट करता हूँ। जिन विभिन्न शिक्षण संस्थानों में मैं गया वहाँ के सभी जनों का भी आभार, जिन्होने मेरी सहायता की।

अपने माता-पिता, सास-ससुर, भाई-बहन और अपनी सहनशील एवं स्नेहमयी जीवन साथी मेरी धर्म पत्नी का तह दिल से धन्यवाद करता हूँ। जिन्होने इस कार्य को सम्पूर्ण करने के लिए हर कदम पर मेरा साथ दिया ।

उन सभी मेरे रंगकर्मी गुरुजनों, साथियों, और मंदिरों में सेवा करते जनों को भी मैं इस श्रेय में शामिल करता हुआ धन्यवाद कहना चाहता हूँ। जिन्होंने मंच और धर्म ग्रन्थों के माध्यम से मुझे इस कार्य मे अग्रसर किया।

अंततः मैं उन सभी सहयोगियों और महानुभावों का आभारी हूँ, जिन्होंने परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप में मेरे शोध-कार्य को सम्पन्न होने तक सहयोग दिया । मैं माँ चिंतपुरनी, भगवान श्री कृष्ण एवं अपने माता-पिता के श्री चरणों में इस शोध-प्रबंध को समर्पित कर आज गौरव का अनुभव कर रहा हूँ।

(गुरतेज सिंह)

सारांश

महाभारत काव्य ग्रंथ को धर्म से न जोड़ कर देखा जाए तो यह नाटकीयता का उच्च स्रोत है। विश्व स्तरीय रंगमंच की यात्रा के लिए यह आज भी सूर्य की तरह है। नाट्य शास्त्र की रचना से पूर्व भारतीय रंगमंच इसी का आशर्य लेकर चलता आ रहा है । यहाँ की सभ्यता में इसका समावेश इतना है कि जहां भारत की बात होगी वहाँ महाभारत की बात अवश्य होगी।

शोध प्रबंध में चयनित नायिकाएँ इस कथा को अपने कंधों पर वर्तमान समय तक लेकर आधार स्तंभ की तरह खड़ी हुई हैं। भारतीय संस्कृति में यह अद्वितीय बीज है जो अनेकानेक साहित्य, रंगमंच, नृत्य, चित्रकला, मूर्तिक्ला एवं मीडिया क्षेत्र में रचनायों की प्रेरणा स्रोत बनी है। इस शोध प्रबंध में चुनी गई मुख्य नायिकाओं में उन नाटकीय संभावनाओं को खोजा गया, जिस कारण यह नायिकाएँ अद्वितीय बनी और आज भी इन पर साहित्य रचा जा रहा है।

युद्ध के द्वारा शांति का संदेश देने वाली यह उत्कृष्ट रचना है। जो इस संसार में घटित हो रहा है, वह सब इस रचना में विद्यमान है । नैतिकता और धूर्तता क्या है ? कैसे यह पारिवारिक और सामाजिक संबंधों पर प्रभाव डालती है, सबका प्रवाह इसमे देखने को मिलता है। महाभारत का कथानक वास्तव में महायुद्ध के आगमन का कारण है। नैतिक मूल्यों का डोलता हुआ ढांचा, इस इमारत की दीवारों के रूप में खड़ा है। द्वापर युग इस युद्ध का साक्षी बनता है। वैसे तो महाभारत को भारतीय संस्कृति में एक महायुद्ध के रूप में जाना जाता है। इसमें समाज के दोनों पहलू सम्मिलित है, पुरुष मन का अहं तथा स्त्री मन में से विलुप होती कोमलता, इन दोनों का चित्रण है।

स्त्री पुरुष जहां एक दूसरे के पूरक हैं तो एक दूसरे के विरोधी भी हैं। इन्हीं दोनों पहलुओं मे से स्त्री के पहलू को लेकर नाटकीयता को आँका गया है। जिस प्रकार औरत के बिना सृष्टि की रचना, कल्पना संभव नहीं। वैसे ही यह नायिकाएँ हैं, जिनके चरित्र और किए कार्यों से महाभारत को आगे बढ्ने की गति मिलती है।

रचनाकर को पूर्णतः जाने बिना उसकी कृति को भी समझना कठिन सा है। यहाँ तो वेदव्यास केवल रचनाकर ही नहीं बल्कि स्वयं इस कथा का पात्र भी है। वेदव्यास सत्यवती का ब्राह्मण पुत्र और क्षत्रिय कहे जाने वाले धृतराष्ट्र और पांडु का पिता भी। वेदव्यास ने वेदों का संकलन और संग्रह ही नहीं किया, इसके इलवा वेदव्यास भारत में धार्मिक कथा कहानियों को प्रचारित और प्रसारित करने वाले व्यक्ति विशेष और पद का प्रयवाची शब्द भी बन गया है।

कला, धर्म, विज्ञान, शिक्षा या और ऐसा और कौन सा क्षेत्र था जहां उस समय उन्नति नहीं थी। इस कथा में चारों युगों के पात्रों का समावेश देखने को मिलता हैं। सब कुछ अपने चरम पर था।

महाभारत कथा के सूर्य श्री कृष्ण है। जिसके साथ यह नायिकाएँ कोई सखा, पुत्र, ससुर, इत्यादि का रिश्ता लेकर जुड़ी हुई हैं। जैसे श्री कृष्ण द्रौपदी के सखा हैं, तो उसी के पतियों के भाई और मित्र भी। कुंती को बुआ कहते है, तो गांधारी को भी माँ के रूप में मानते है। अभिमन्यु के मामा होने नाते उत्तरा के ससुर का रिश्ता रखते है।

कोई भी रचना रंगमंच का हिस्सा तभी बन पाती है, जब उसमें नाटकीयता का समावेश रहता है। महाभारत कभी आंशिक रूप में, कभी पूर्ण रूप में रंगमंच का हिस्सा रहा है। विख्यात नाटककारो द्वारा इसी में से विषय लेकर लिखना वो चरम बिन्दु है, जो पाठक तथा दर्शक को सदैव आकर्षित करता रहा और कर रहा है। भास, कालीदास, धर्मवीर भारती, गिरीश कार्नड, इन्हीं की श्रेणी में आते हैं। इस कथा में आरंभ से इति तक नायिकाओं के अंदर समाए उनके दैवीय गुण, दुर्बलता, इत्यादि कुछ इस तरह ताना बाना बुनती है कि वह रौचकता के चरम बिन्दु को प्राप्त होती है।

कोई भी रचना जो किसी विशेष समय के ढांचे में बंध कर अपना वर्चस्व नहीं खोती वो कालजयी बन जाती है । महाभारत इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। इस तथ्य की पुष्टि सारे संसार में आज भी इसको खेला जाना है। शोध करता की शोध का आधार वेदव्यास कृत, गीता प्रैस द्वारा मुद्रति की गई महाभारत रही है।

अनुक्रमणिका

सारांश	vi – vii
अनुक्रमणिका	viii – ix
भूमिका	x – xvi
साहित्य की समीक्षा	xvii – xxiii
उद्देश्य	xxiv – xxiv
खोज विधि	xxv – xxv
विषय की नवीनता, मौलिकता एवं सारथिकता	xxvi – xxvi
विषय परिसीमा	xxvii – xxvii
प्राप्तियाँ	xxviii – xxviii
प्रथम अध्याय :	
1.2 महाभारत में कथानक एवं पात्र सुष्टि	29 – 38
1.3 नायिकाओं का महत्व	39 – 46
1.4 नायिकाओं का कथा में महत्व	47 – 47
1.5 शोध में चयन का आधार	48 – 50
द्वितीय अध्याय :	
2.1 कौन थे वेदव्यास	51 – 61
2.2 वेदव्यास: चरित्र और रचनात्मक कार्य	62 – 69
2.3 महाभारत काल	70 – 84
तृतीय अध्याय :	
3.1 कृष्ण से नायिकाओं का संबंध	85 – 90
3. 2 नायिकाओं में समानताएँ और विषमताएँ	91 – 100
3. 3 मुख्य नायिकाओं का चारित्रिक वर्णन	

3.3.1 सत्यवती 101 – 109
3.3.2 अम्बा 110 – 121
3.3.3 गांधारी 122 – 134
3.3.4 कुंती 135 – 152
3.3.5 हिडिम्बा 153 – 159
3.3.6 द्रौपदी 160 – 174
3.3.7 उत्तरा 175 – 180

चतुर्थ अध्याय :

4. 1 नाटकीयता एवं नाटकीय तत्व 181 – 207
4. 2 मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएँ
4.2.1 सत्यवती 208 – 219
4.2.2 अम्बा 220 – 233
4.2.3 गांधारी 234 – 250
4.2.4 कुंती 251 – 277
4.2.5 हिडिम्बा 278 – 290
4.2.6 द्रौपदी 291 – 325
4.2.7 उत्तरा 326 – 332
4.3 रंगमंचीय प्रस्तुतिकरण में नाटकीय संभावनाएं, 333 – 359
4.4 मीडिया प्रस्तुतिकरण में नाटकीय संभावनाए 360 – 369
4.5 महाभारत का कालजयी प्रभाव 370 – 380
उपसंहार 381 – 385
चित्र 386 – 389
साक्षात्कार 390 – 432
संदर्भ सूची 433 – 442

भूमिका

प्रस्तावित शोध प्रबंध का विषय "महाभारत की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं" लिया गया है। भारत के संदर्भ में महाभारत के महत्त्व से सभी परिचित है। इसने भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व के रंगमंच जगत को प्रभावित किया है। इस के पात्र असंख्य विशाल घटनाओं से सम्पूर्ण है। युद्ध जब भी हुआ है जर–जोरू–जमीं के लिए हुआ है। यहाँ जोरू(स्त्री) महत्वपूर्ण बिन्दु है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए उन मुख्य नायिकाओं का मुलांकन किया गया, जिनका स्पष्ट और सीधे तौर पर इस कथा में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

कोई भी साहित्यक रचना, जिस धरा वह रचित हुई हो वहाँ का अक्स दिखाती है। यह अक्स उस रचना के पात्रों, घटनाओं,नाटकीय मोड़ों और रचना सिद्धान्त में दिखाई पड़ता है। कोई भी व्यक्ति, विशेष अथवा साधारण नहीं होता। यह उसके कार्य पर निर्भर करता है कि उसने किस घटना को किस रूप में लिया और किस प्रकार उसका सामना किया। यह बात उसके व्यक्तित्व पर भी अपना प्रभाव डालती है। अगर यह घटनाएँ घटित न हो तो किसी भी साहित्य में रस की उत्पति नहीं होती। यही रस दर्शक और श्रोताओं को बांध कर रखने में सक्षम होता है।

व्यक्ति की जीवनचर्य अनेकों घटनाओं से युक्त होती है। इन घटनाओं को मन के कोने में सहेज कर रखें तो यह समृतियों के रूप में कुछ समय के लिए जीवित अवस्था में रहती हैं, इनको लिखित रूप में सहेजा जाए, तो पहले यह किस्सों के रूप में और फिर इतिहास के रूप में जीवित रहती हैं। कुछ किस्से और कहानिया अपने नाटकीयता भरपूर अंशों के कारण समय व्यतीत होने के साथ उत्तम साहित्य के रूप में भी परिवर्तित हो जाती है।महाभारत इसकी उत्तम उदाहरण है।

आदि मानव का विकास अनेकों नाटकीय दिलचस्प पड़ावों से होते हए मानव के रूप में परिवर्तित हुआ। जब अन्य धराएँ बोलने के लिए किसी बोली के प्रयोग को अपना रहीं थी, तब भारत में एक विकसित सभ्यता थी, जिसकी अपनी बोली और भाषा थी। जहां विभिन्न क्षेत्रों में अनेकों खोज कार्य किए गए। उनको लिखित रूप में ग्रंथों के माध्यम से संरक्षित किया जाने लगा था। वेद, उपनिषद, पुराण, शास्त्र, रामायण, महाभारत पर अनेकों विदुषियों और मुनिओं द्वारा कार्य किया गया। यह पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता गया।

5151 वर्ष पूर्व कुरुक्षेत्र की भूमि पर हुए महाभारत के महांयुद्ध को "वेदव्यास" ने कलमबद्ध किया, (यहाँ उसकी वास्तविकता या काल्पनिकता की चर्चा नहीं करेंगे)। इस युद्ध ने भारत की दिशा और दशा में अपना व्यापक प्रभाव छोड़ा। पारिवारिक से सामाजिक व्यवस्था, धर्म से युद्ध राजनीती, प्यार से लेकर षड्यंत्र, ब्रह्मज्ञान से लेकर विज्ञान तक, अनेकों गुणों से यह कथा परिपूर्ण है। अपने इन गुणों के कारण इस कथा ने भारत के पडोसी देशों में भी अपना प्रभुत्व बनाया है। उनकी सभ्यता पर भी इसकी छाप देखने को मिलती है।

हरिदत्त वेदलंकार कहते हैं, "जहां जहां रामायण का प्रचार हुआ हुआ, वहाँ महाभारत का भी हुआ। छठी शती तक सुदूर कंबोडिया के मंदिरों में इसका पाठ होने लगता है। सातवीं शती में मंगोलिया के तुर्क अपनी भाषा में हिडिंबा-वाढ आदि उपाख्यानों का आनंद लेने लगते हैं।" (*भारत का सांस्कृतिक इतिहास* 68)

महाभारत के प्रभाव ने संस्कृत भाषा से लेकर उर्दू, हिंदी, पंजाबी, गुजराती, मराठी अथवा भारत की अन्य क्षेत्रीय भाषाओँ को अनेको अद्वितीय रचनाएँ दे कर अमीर किया है, यह कार्य आज भी निरंतर जारी है। भारत ही नहीं अपितु अन्य देशों की मातृ और मुख्य भाषाओँ में भी इसको अनुवादित किया गया। भारत को अखंड भारत के नाम से भी पुकारा जाता है क्योंकि इसी देश से अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, श्री लंका, मियामर जैसे देश निकले हैं। इन देशों में भी महाभारत को अहम् स्थान प्राप्त है। भारत में स्थापित नालंदा और तक्षिला विश्वविद्यालय में अनेकों पडोसी देशों के छात्र शिक्षा गृहन करने आते थे, उनके साथ महाभारत भी उनके देशों में जा पहुंचा। दक्षिण एशिया के देशों में हिंदू और बौध धर्म कभी अपनी चरम सीमा तक पहुंचे थे। इनके प्रचार प्रसार के साथ महाभारत का उनकी सामाजिक, धार्मिक और साहित्यक कथाओं में समावेश हो गया। धीरे धीरे यह उनके रंगमंच का भी अहम् अंग बन गया। इंडोनेशिया में "व्यांग" विधा के रूप में महाभारत की कहानियां आज भी खेली जाती है। जावा, मलेशिया, थाईलैंड, सिंगापुर, सुमात्रा, बाली में यह "शेडो थिएटर" के रूप में खेला जाता है। इनकी विभिन्न रचनाओं और कलाकृतियों पर महाभारत का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। आधुनिक दौर में फ्रांस, रूस, जापान, न्यूज़ीलैण्ड और अमेंरिका में कई रंग मंडलियां इसकी विभिन्न कथाओं की रंग प्रस्तुतियां कर रही है। लंदन में पीटर ब्रूक जैसे निर्देशक "महांभारत" पर कार्य कर रहे है। शिकागो, एडिनबर्घ, पोर्ट्समाउथ और कैंटरबरी जैसे पाश्चात्य विश्वविद्यालों में महाभारत पर कार्य हो रहा है।

पाश्चात्य और भारतीय रंगकर्मियों ने महाभारत के बारे में अपने विचार प्रकट करते कहा है :-

पीटर ब्रूक – "यह कृति भारत में ही रची जा सकती थी, जिसमें सारी मनुष्य जाती के लिए प्रतिध्वनियाँ थीं।"

सर एडविन आर्नल्ड – "यह पूर्व का बेशकीमती रत्न है।"

रमेंशचन्द्र दत्त – "यह एशिया की कल्पनाशील सृजनात्मक्ता की महानतम कृति है।"

स्वामी विवेकानंद – "रामायण और महाभारत प्राचीन आर्य जीवन और ज्ञान के दो ऐसे विश्व कोश है, जिनमें ऐसी उन्नत सभ्यता का चित्र खींचा गया है जो मानव जाति को अब भी प्राप्त करनी है।"

जवाहर लाल नेहरू अपनी किताब डिस्कवरी ऑफ इंडिया में लिखते हैं – "Great as the Ramayana is as an Epic poem and loved by the people, it is really the Mahabharata that is one of the outstanding book of the world, It is a colossal work, an encyclopedia of tradition and legend, and political and social institutions of ancient India."

सीतेश आलोक अपने उपन्यास "महागाथा" में - "महाभारत के आकलन को लेकर अनेकानेक दृष्टिकोण समय समय पर सामने आते रहे हैं। जहां एक बड़ा श्रोता-पाठक वर्ग इसे धर्म ग्रंथ मानता रहा है, कुछ लोगों का स्पष्ट मत है कि यह तत्कालीन समाज के दर्पण-चित्रण के रूप में इतिहास ही है। इसके विपरीत एक वर्ग वह भी है जो इसे मानवीय जीवन-मूल्यों एवं पाशविक प्रवृतियों की संघर्ष कथा प्रस्तुत करने वाली काल्पनिक लेखकीय कृति के रूप में ही स्वीकार करता है। इन दृष्टिकोणों में उलझे बिना भी सहज ही निर्विवाद सत्य यह है कि महाभारत एक कालजयी साहित्यिक कृति है।"

महाभारत की बहुत सारी पांडुलिप्पियाँ मिलती हैं। इन सब में से गीता प्रैस गोरखपुर और ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीचिउट पुणे द्वारा प्रकाशित की गई प्रतियों को अधिकतर विश्वसनीय माना जाता है। अधिकांश रंगमंचीय प्रस्तुतियों का आधार भी यही रही है। बी.आर.चोपड़ा, पीटर ब्रूक, सिद्धार्थ आनंद कुमार, द्वारा बनाए गए धारावाहिक और अमान खान द्वारा बनाई फिल्म के मूल पाठ्य का आधार भी यही रही है। अधिकांश रंगकर्मी और पाठक वर्ग भी इसको विश्वसनीय मानते हैं। इस शोध कार्य का मूल आधार गीता प्रैस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित "महाभारत" है।

भारतीय संस्कृति में नारी का उल्लेख जगत जननी आदि शक्तिस्वरूपा के रूप में किया गया है। समृतियों और पुराणों में नारी को विशेष स्थान मिला है। मनु समृति में वर्णित है

यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता: ।

यत्रेतास्तु न पूज्यन्ते सर्वस्त्फ्ला :क्रिया । । (अध्याय 3/56)

अर्थात जहाँ नारी का समादर होता है, वहां देवता सदैव प्रसन्न रहते हैं और जहाँ ऐसा नहीं है वहां समस्त यज्ञादि क्रियाएँ व्यर्थ होती हैं। भारत में प्रारंभ से ही स्त्री का हर कार्य क्षेत्र में अहम् स्थान रहा है, घर हो या देश, गुरूकुल हो या राजनीती, वेदों की रचना हो या आयुर्वेद की खोजें, सबमें इनका अहम् और विशेष स्थान रहा है। महाभारत के स्त्री पात्र इसके अच्छे उदाहरण है। सत्यवती से शुरू होकर अम्बा, गांधारी, कुंती, हडिम्बा, द्रौपदी, उत्तरा तक ऐसे अनेकों पात्र हैं। यह पात्र अध्यात्मिक, राजनितिक, वैज्ञानिक, प्रशासनिक,अदिक गुणों से सम्पन थे। किस पात्र ने महाभारत में क्या योगदान दिया ? क्यों दिया ? किस प्रकार दिया ? इन सब को समझने के लिए उनकी मानसिकता और उनके जीवन में घटित हुए नाटकीय मोड़ों को समझना अति आवश्यक है। तभी इस महांकाव्य को समझने में सफ़ल हो सकेंगे।

प्रत्येक पात्र के प्रस्तुतिकरण में उसका गुण, अवगुण, विशेष या गौण स्थान उभर कर आता है। यह ही उसको नीरस या प्रभावशील बनाते हैं। इसी बात का ध्यान "वेदव्यास" ने ख़ूब रखा है। अनेकों पात्र इस रचना में होते हुए भी भिन्न हैं। सबका का अलग और विशेष स्थान है। महाभारत को एक साहित्य शास्त्र, धर्म शास्त्र, अर्थ शास्त्र, मोक्ष शास्त्र, नीति शास्त्र और इतिहास के रूप में देखा और जाना जाता है। स्वयं महाभारत में इसकी चर्चा की गई है।

धर्मशास्त्रमिदं पुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम ।

मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्त व्यासेनामितबुद्धिना ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 169)

प्रस्तुतिकरण तत्व के कारण ही यह अमरत्व को प्राप्त हुआ है। इसलिए भारत की संस्कृति को समझने के लिए इन विदुषिओं, वैज्ञानिक, दूरदर्शी, कुशल गृहणी, राजनितज्ञ, अच्छी राज्य संचालक प्रवृति वाली नायिकाओं और उनके चरित्र की नाटकीयता को शोधार्थी द्वारा समझा गया है।

रंगमंच आम जन जीवन से निकली कला है। जिसमें मानव जीवन छाया को लिखित रूप प्रदान कर उसको मंच के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। हर जाति, कौम, मज़हब और क्षेत्र का अपना विभिन्न साहित्य होता है। जिस से वह अपनी छवि को प्रस्तुत करने का प्रयत्न

करता है। नाटक हो या कथा, कहानी हो या महाकाव्य अथवा साहित्य का कोई भी अन्य रूप, इन सब में समस्त प्रकार के पात्र होते हैं, जो घटनाओं को जन्म देते हैं। पात्रों के बिना किसी भी कथा की कल्पना ही असंभव है।

हर पात्र की रचना का कोई न कोई आधार अवश्य होता है। बिना आधार कोई भी रचना नहीं की जाती। समय और विशेष परिस्थितियों से होते हुए वह अपनी रचना संपूर्ण करते है।

महाभारत असंख्य पात्रों का वह घना वन है, जिसमें सभी प्रकार के पात्र मिलते हैं, जो अपने आस-पास उत्पन्न हुई परिस्थितियों से लड़ते और जूझते हुए अपने संपूर्णत्व को प्राप्त होते हैं। बिना किसी के सहारे वह अडिग रहते हैं। मूलकथा शांतनु से सत्यवती तक, भीष्म से अम्बा तक, गांधारी से शकुनी तक, कुंती से सहदेव तक और द्रौपदी से लेकर श्री कृष्ण तक सभी पात्र अपने गुणों के कारण किसी पर भी निर्भर नहीं है। वह अपने आप में अपनी सारी कथा व्यक्त करते हैं। महाभारत की पात्र योजना ऐसी ही है, जिस प्रकार एक हीरा अपनी चमक को पाने के लिए लम्बे अंतराल तक कोयले की खदानों के गर्भ में दबा रह कर विभिन्न परिस्थितियों से जूझता है। उसी प्रकार यह हीरे की भांति चमकते पात्र भी राज परिवारों से तो संबंध रखते हैं, वह राजसी ठाठ और काया के सुखों के सहारे पलकर आगे नहीं बढे। वेदव्यास अपने पाठकों को इस बात का एहसास करवाना चाहते हैं कि भले ही यह पात्र राजसी हैं, फिर भी राजसी न होकर पाठकों को अपने आस-पास के लगें। महाभारत के पात्र अपने मनोबल के द्वारा हार जाने पर भी पराजित नहीं होते बल्कि नए उत्साह को अपने अंतर्मन में जन्म देकर, फिर से मुश्किलों का सामना करने के लिए खड़े हो जाते हैं। सत्यवती के समक्ष उसके दोनों पुत्रों चित्रांगद और विचित्रवीर की मृत्यु पर कुल के आगे बढ़ने का संकट, कर्ण का अपने अपमान का बदला, या पांडवों का दो-दो बार बनवास के बाद भी न हारना, इसी उत्साह की उदाहरण है। हर पात्र अपनी मनोस्थिति को खुलकर व्यक्त करता है और उसको जीता है। ख़ुशी करने वाला ख़ुशी नहीं रोकता और किसी से घृणा करने वाला खुलकर अपनी घृणा का प्रदर्शन करता है। दुर्योधन और शकुनी इसके अनुकूल उदाहरण हैं। अपने जीवन को खुल के जीने का, उसका निर्माण करने का, नए आयाम देने का, सब शब्दों को बांध कर कहा जाए तो यह जीवन पद्धति की कला सिखाते हैं।

आज तक असंख्य साहित्यक रचनाएं लिखी गई जो किसी संग्राहलय में धूल फांक रही है और कुछ विशेष ही ऐसी रचनाएं हुई हैं, जो आज भी अपना वर्चस्व बनाए हुए हैं, जिनमें 'महाभारत' एक है। इसके पात्र भारतीय ही नहीं अपितु अन्य देशों के समाज में भी घुल मिल गए हैं। भारत में तो शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति या परिवार हो जो इस कथा या इसके नाम से परिचित न हो। इसके पात्र उस बीज की तरह है जो अपने भीतर असंख्य पेड़-पौधे समाए बैठे हैं। किसी बीज के बाह्य रूप को देख कर छोड़ देंगे तो कुछ हासिल नहीं हो सकता। उसे मिट्टी में बड़े होते देखें उसके धरातल और जलवायु से होते संघर्ष को देखें तो बहुत सारे तत्व, विचार और दृश्य समक्ष प्रस्तुत होंगे। आदि मानव से लेकर आधुनिक मानव में ढलने तक, मानव ने बहुत सी परिस्थितयों का सामना किया है और स्वयं उन्हें अपने ढंग से ढाला भी है। इसी तरह किसी भी व्यक्ति का चरित्र इस बात पर निर्भर करता है कि उसका पालन कैसे और किन परिस्थितियों में हुआ है, उन सब का उसने किस ढंग से सामना किया है। जिस प्रकार एक मूर्तिकार जब कोई पत्थर तराशता है, तो उसको बहुत सी चोटें मारता है, जो पत्थर यह सब सहन करता है वह एक सुंदर मूर्ति के रूप में ढल जाता है, जो बाद में किसी मंदिर या आलीशान भवन का शृंगार बनता हैं। जो नहीं सहता और टूट जाता है, वह सिर्फ पत्थर ही बना रहता है। वह कंकर या राह चलते मार्ग का ही होकर रह जाता है।

जब कोई कहानीकार या नाटककार अपनी रचना को अपने मन के गर्भ से पन्नो के ऊपर एक रचना के रूप में जन्म देता है तो एक माँ की भांति वह भी अपने पात्रों के साथ खेलता है, उनको विभिन्न स्थितियाँ-परिस्थितियाँ में डाल कर, उन्हें एक निपुण और चिरंजीवी पात्र के रूप में अमर करने की कोशिश करता है। जो उसके पाठक या दर्शक के मन में एक शिलालेख की तरह अंकित हो जाए। मुख्य नायक हो या गौण पात्र वह सब को एक विशेष स्थान प्रदान करता है, जिस के साथ उसका वर्चस्व इतना स्थापित हो जाता है तो ऐसा लगता है कि अगर यह पात्र इस रचना में नहीं होता तो यह कहानी आगे न बढ़ती, मानो यही इस कथा का प्राण आधार है। एक उत्तम रचना के पात्र घटनाओं के साथ-साथ बहुत से विचार, दर्शकों का खिचाव, लय, कालमापन, भाषा, रंग और प्रसार आदि तत्वों को साथ लेकर चलते हैं जो उस रचना को अमरता और सुन्दरता प्रदान करती है ।

महाभारत को पढ़ें, देखें या सुने तो इसके सारे पात्र ही परिपूर्ण है। जिस कारण सहस्त्रों वर्ष बीत जाने पर भी इसका प्रभाव तनिक भी कम नहीं हुआ। क्या कारण है, इसकी उत्सुकता

आज भी कायम है ? ऐसे अनंत प्रश्न है जिन पर ध्यान केन्द्रित हो सकता है। रचनाकार पात्रों के माध्यम से ही अपनी बात दर्शक और पाठक वर्ग के समक्ष रखता है। महाभारत के सभी पात्र अपना विशेष और महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है। नायिकाएं वह पात्र हैं, जिन्होने आरंभ से लेकर अंत तक अथवा मध्य में जितनी भी महत्वपूर्ण पर्व, घटनाएं हैं उन सबको जोड़ने और आगे बढ़ाने में अपनी मुख्य भूमिका निभाई है। उन्हें नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता। वेदव्यास ने बड़ी चतुरता और समझदारी के साथ विभिन्न घटनायों को नायिकाओं के माध्यम से ही आगे बढाया है। इस कथा का आधार 'सत्यवती' नायिका से करवाया है, जो भीष्म से सौगंध लेती है कि उसकी संतान ही हस्तिनापुर के राज-सिंहासन की उत्तराधिकारी होंगी। आगे चल कर कथा का निर्वाह 'अम्बा-अम्बिका-अम्बालिका' के माध्यम से बढ़ा है। फिर गांधारी, कुंती और द्रौपदी को मुख्य बिन्दु बना कर कथा का प्रवाह कंधों पर लेकर चलती हैं। द्रौपदी का अपने अपमान का बदला लेने के लिए सभा को चेतावनी देना, कथा को नई ऊर्जा से प्रवाहित करता है। बनवास के दौरान बहुत से स्त्री पात्रों का पांड्वो के जीवन में समावेश होता है, जिसके माध्यम से वह अपनी शक्ति और सत्ता को मजबूत करते है। महाभारत का युद्ध प्रमुख घटना है। जिसमें सभी छोटी-बड़ी घटनाओं का भयानक परिणाम समक्ष आता है। इस घटना को अधिक सुन्दर रूप में प्रस्तुत करने के लिए हिडिम्बा का भीम से विवाह, घटोत्कच का जन्म, बर्बरीक का जन्म, कर्ण की कौरवों से मित्रता, शकुनी की चौसर में कुशलता आदि सब को युद्ध भूमि में होने वाली घटनाओं को देखते हुए बीज रूप में अंकुरित कर दिया गया और अंत में उत्तरा के गर्भ में पल रहे भ्रूण की हत्या और फिर श्री कृष्ण का उसको जीवित करना। इन सब घटनाओं में कथा के आदि से लेकर अंत तक इन सभी मुख्य नायिकाओं ने अपना विशेष योगदान दिया है। प्रकृति अपने कार्य में स्वयं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में हस्तक्षेप कर ही लेती है। जिस तरह इन दैवीय मानवीय पात्रों से जुड़े घटनाक्रम रोचक हैं उसी तरह पात्रों के जीवन निर्वाह भी कम रोचक नहीं हैं।

साहित्य की समीक्षा

महाभारत एक ऐसा महाकाव्य है, जिस पर भारत एवं अन्य देशों में भी विभिन्न भाषाओं में विभिन पहलुओं पर कार्य हुआ है जो आज भी प्रगतिशील हैं और भविष्य में भी होंगे । उस समय के हालातों के माध्यम से वेद व्यास ने इसके राजसी वर्ग से ले करके निमन वर्ग तक की स्त्री पात्रों का चित्रण बहुत ही खूबसूरती से किया है, जो अपने नाटकीय तत्वों के माध्यम से इसको सम्पुरणता की ओर अग्रसर करते है । तभी तो भी आज यह खोज व शोध का विषय बने हुए है । इनपर हो चुके कार्यों की चर्चा करें तो देखते है कि महांकवि भास से लेकर धर्मवीर भारती, गिरीष कार्नाड तक ने इस पर आधारित रचनाओं को जन्म दिया है, वर्तमान समय में भी बहुत से रंगकर्मी और अन्य क्ला क्षेत्रों के लोग इसको आधार बना कर इसपर प्रगतिशील कार्य कर रहे है |

भास की चर्चा करें तो उन्होंने इस महांकाव्य पर आधारित अपने जिन नाटकों की रचना की है, उनका परिचय इस प्रकार है पंचरात्र, मध्यमव्ययोग, दूतवाक्य, दूत घटोत्कच, कर्नाभारा और उरुभंगम । इन नाटकों को उन्होनें महाभारत में वर्णित घटनाओं को नाटक की रूप रेखा में प्रस्तुत किया है।

धर्मवीर भारती ने भी 1954 में अपनी एक शाहकार रचना "अंधायुग" रंगमंच जगत को दी है। जो महाभारत के युद्ध के अंतिम दिन की कहानी है, जिसको पांच अंको में प्रस्तुत किया गया है । यह नाटक युद्ध के विरुद्ध अपना संदेश देता है। किस प्रकार युद्ध मानवीय मूल्यों का हनन करके सब कुछ नष्ट कर देते हैं ।

महाभारत की केंद्र बिंदु पात्र "द्रौपदी" के ऊपर प्रतिभा रॉय ने 1984 में उडिया भाषा में "यज्ञासेनी" उपनन्यास लिखा। जो उसके जीवन चरित्र और संघर्ष को बहुत अच्छी तरह वर्णित किया । पौराणिक कथाओं में द्रौपदी को पंच सती के रूप में गिना गया है। किन्तु अभी तक अनेकों लोग उसके चरित्र को गलत तरीके से प्रस्तुत कर रहे हैं, उसके ऊपर ये कलंक लगाया गया है कि महाभारत का युद्ध उसने करवाया ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर देते इस उपनन्यास का अनुवाद अन्य भाषाओं में भी किया गया है ।

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा चित्रा कार्तिक चतुर्वेदी द्वारा रचित उपनन्यास "अम्बा नहीं मैं भीष्म" जो वर्ष 2006 में प्रकाशित किया गया है। इसमें उन्होंने मुख्य और नज़रअंदाज़ की गई नायिका "अम्बा" के बारे में लिखा है । जिसको भीष्म उसके स्वयम्बर से अपने अनुज के साथ

विवाह के लिए उठा लाया था। एक तेजस्विनी नायिका अपने प्रति हुए अन्याय के प्रतिकार के लिए जी जी कर मरती रही। इस समाज की संकीरण सोच के कारण वह न तो अपने पारिवारिक सुख को प्राप्त कर सकी और न ही अपने स्वामी को, इनसे वह अपनी मृत्यु तक वंचित रही। इस अपमान का बदला लेने हेतु उस किशोरी ने एक साधारण व्यक्ति को नहीं बल्कि, युग के प्रचंड महारथी भीष्म को चुनोती दी । तीन जन्मो तक अपने नाटकीय संघर्ष को जीवित रखा। अंत इस शीत युद्ध को शिखंडी के रूप में कुरक्षेत्र के मैदान मे समाप्त किया । अगर वह भीष्म के समक्ष ना आती तो पता नहीं युद्ध कब तक चलता रहता। इस महायुद्ध को एक निर्णायक मोड़ देने का कार्य देने वाली अम्बा के इतिहासिक भूमिका को कम कर के नहीं आंका जा सकता| इस उपन्यास में उसकी उस व्यथा कथा का ज़िक्र किया है, जिसकी दृड इच्छा शक्ति, संकल्प की दृडता और जुझारूपन को कौरव-पांडव महारथियों के तुमुल जयघोषों के तले दबा दिया गया था ।

मनु शर्मा ने 2009 में "गांधारी की आत्म कथा" नामक किताब लिखी उस में उस नायिका की मनोदशा को चित्रित किया है, जो अपने पति के समर्पण भाव को रखते हुए अपनी आँखों पर पट्टी बांध कर चिरजीवी अवस्था तक अपनी दृष्टि का त्याग कर देती है । गांधारी महाभारत के मुख्य शक्तिशाली पात्रों में से एक है । किस प्रकार उसने अपने सौ पुत्रों की आहुति कुरुक्षेत्र के मैदान में दे दी । उसके त्याग, अभिमान और राजत्व की व्यथा इसमें बयान की गई है।

महाभारत के विभिन पहलुओं और पात्रों पर नरेन्द्र कोहली ने भी काफी कार्य किया है। उनका कार्य आज भी जारी है। उन्होंने अपनी एक पुस्तक जो की "सौरंध्री" नाम के तले प्रकाशित हुई, उसमें उन्होंने महाभारत की मुख्य नायिका और कारण कहे जाने वाली पात्र "द्रौपदी" के उपर चर्चा की है। इस किताब का शीर्षक स्वयं ही अपने आप में सारी दशा व्यक्त करता है । किस प्रकार एक कन्या जिसका सारा लालन-पालन राज महल में हुआ, जहाँ उसने अपनी यौवन अवस्था को प्राप्त किया । जिसके एक इशारे मात्र से असंख्य दासियाँ उसके अगल बगल उपस्थित हो जाती थी। उसने स्वयं एक दासी बन के अपने जीवन को पांडवों को समर्पित कर दिया, उसकी मनोदशा क्या रही होगी ? जब पांडव बनवास अज्ञातवास पर थे ? बनवास के दौरान एक दासी की भांति उसकी जीवनचर्या और उसकी अन्य मनोभावों को प्रस्तुत किया गया है । राज सभा मे चीर हरण के बाद फिर दूसरी बार एक और राज दरबार मे

अपमानित होना पड़ा। अपनी अन्य रचना "प्रत्यक्ष" में उन्होंने "कुंती" की अपने पुत्रो के प्रति मनोदशा को दिखाया है । किस प्रकार हर स्थिति-परिस्थिति में उनका मार्गदर्शन करती है। जीवन के हर कठिन क्षण में वो उनके साथ साथ रहती है और युद्ध विजय कर लेने के बाद अपने जेठ जेठानी की सेवा और सुख के लिए अपने राजसी जीवन का त्याग कर उनके साथ चल देती है ।

हिंदी जगत के लेखक "डॉ जगत नारायण दिवेदी" ने अपनी पुस्तक "महाभारत के पात्र -2" जो की 2006 प्रकाशित हुई थी, में महाभारत के अन्य पात्रों के साथ साथ कुछ नायिकाओं का भी संक्षिप्त में जिक्र किया है। इसमे "द्रौपदी", "कुंती", "गांधारी", और "सुभद्रा" इसमें उनके जीवन काल और उनकी विचार धारा का व्याख्यान बड़ी संजीदगी के साथ संक्षिप्त में किया है। यहाँ उन्होंने केवल उनके जीवन की मुख्य विशेताओं और घटनाओं के चित्रण को प्रस्तुत किया है।

सृजन काव्य संस्था की और से 4 जनवरी 2014 को जयपुर (राजस्थान) में सिविल लाइंस स्थित तारक भवन में पंद्रहवीं मासिक काव्य गोष्ठी आयोजित की गई। इस में कवि बंकट बिहारी पागल की रचना "कुंती खंड काव्य" का विमोचन किया गया। इस गोष्ठी के विमोचन में ५४ पुष्ट के खंडकाव्य में कुंती के कृतित्व और व्यक्तित्व का काव्यात्मक वर्णन किया गया है।

दर्शन दिवेदी जी ने विकिपीडिया पर द्रौपदी के ऊपर आर्टिकल लिखा है। जिसमे उन्होंने उसके जीवन काल की बात की है। मुख्य तौर पर उनका केद्र बिंदु इस बात पर रहा है कि क्या "द्रौपदी " के पांच पति थे ? इसके बारे में महाभारत क्या कहती है ? इस जैसे कुछ और पक्षों को ध्यान में रखते उन्हों अपने पक्ष को प्रकट किया है।

साथ साथ आम जन द्वारा विभिन विभिन वेबसाइट्स पर ब्लॉग के जरिए भी महाभारत की स्त्री पात्रों पर चर्चा होती रहती है। ऐसे ही सुलेखा.कॉम पर एस श्रीनिवास राव द्वारा वर्ष 2008 में महाभारत की तीन मुख्य नायिकाओं सत्यवती, कुंती और द्रौपदी के उपर चर्चा की गई। इसमें चर्चा की गई है के महाभारत के युद्ध में चाहे कहीं न कहीं पुरुषों ने किए । किन्तु इसमें महिलाएं अपनी शक्ति और विशेष प्रभाव रखती है, वो महिलाऐं ही हैं जो घटनाओं के पाठ्यक्रम को प्रत्यक्ष और पुरुषों के भाग्य का फैसला और उनकी पीढ़ियों का पालन करने के लिए निर्णय लेती है । महिलाऐं ही असल तौर पर इस महाकाव्य की शक्तिशाली नेता हैं। यह महांकाव्य महिलाओं की बुद्धिमता, शक्ति और उनके नेतृतव में बुना है।

इसी प्रकार डॉ रवि खानगी ने २१ मार्च २०१२ को अपने एक ब्लॉग "द औदर वीमेन इन महाभारत" में गौण की गई स्त्रिओं पर चर्चा की है। उन्होंने इस विषय पर बात की है कैसे महाभारत जैसे लोकप्रिय महांकाव्य में सामाज के मूल्यों और लोकाचार में एक अंतर्दृष्टि देता है। यहाँ राक्षश वंशी राजकुमारी हिडिम्बा और नागा राजकुमारी उलूपी और महिलाओं का चित्रण इस बात का संकेत देता है, कैसे उन्हें "अन्य महिलाओं" का दर्जा लेखकों द्वारा दे दिया गया है। "अन्य महिलाओं" को केवल आर्य पुरुषों की आकर्षकता के रूप में चित्रित किया जा रहा है ।

डॉ चंद्रकांत बांदिवडेकर की किताब का 2009 में "भारतीय साहित्य पर महाभारत का प्रभाव" नाम के तहत प्रथम संस्करण छपा था, जिसमे उन्होंने इस बात पर कार्य किया था। किस प्रकार लगभग भारत की हर क्षेत्रीय भाषा में महाभारत का अनुवाद हुआ है और किस प्रकार उनकी रचनाओं में इसकी घटनाओं का जिक्र मिलता है। महाभारत को उपजीवय बनाकर अनेको रचनाएं लिखी गई। किस प्रकार विभिन्न धर्मों और मतों ने इसको अपने अनुसार इसके पाठ को खुद अनुसार ढाल लिया। यही नहीं बल्कि इन पर लिखे गए छोटे छोटे ग्रंथों का भी जिक्र किया गया है। साहित्य जगत में भी अनंत ऐसी रचनाएं है, जो महाभारत से सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव के तहत आकर लिखी गई हैं। भारत को छोड़ इसके पडोसी देशों में भी किस प्रकार ये आज भी अपना विशेष प्रभाव रखती है।

पाश्चात्य देशों में हुए कार्य - यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैंटरबरी में 1987 में हेलेन सदेर्मन ने "वीमेन ऑफ़ महाभारत" पर कार्य किआ। जिन पक्षों पर कार्य किया गया वो इस प्रकार है, 1) उन महिलाओं के अनुभव और विचार. 2) स्त्री और पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं पर लगे प्रतिबन्ध. 3) महिलाओं पर पितुसत्ता के अन्दर लगे धार्मिक और सामाजिक प्रतिबन्ध।

सन 2012 में हार्वर्ड साइंस सेण्टर में "स्त्री- द वीमेन ऑफ़ महाभारत" और "जाया: परफॉरमेंस इन महाभारत" के उपर गेस्ट लेक्चर के साथ साथ इसमें पुस्तक चर्चा भी की गई ।

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के प्रेस ने 'डिपार्टमेंट ऑफ़ साउथ एशियाई स्टडी' से 'एसोसिएट केविन मैकग्राथ' की एक पुस्तक "स्त्री –द वीमेन ऑफ़ महाभारत" मार्च 2009 मुद्रित की है। इस पुस्तक में महाभारत में प्रस्तुत वीर स्त्रीत्व पर कार्य किया है और मुख्य तौर पर पत्नी, बेटी, माँ की भूमिका पर ध्यान केन्द्रित किया है। इसमें महिलाओं के उन गुणों का चित्रण किया गया है, जो उन्हें साधारण महिलाओं से विभिन करते है । कैसे उन महिलाओं ने अपने वीर्तव को

महत्वपूरण वक्ता बन कर अपनी पीढ़ी के संस्कृत मूल्यों का संरक्षण किया। यह महाभारत के कार्यो और रूपकों का प्रतिनिध्तव करती है ।

10 मार्च 2012 को रेडियो रूस की वेबसाइट पर एक खबर के अनुसार सेंट-पीटरसेबर्ग में एक रंगमंच की मंडली "तेआत्रिका" हाल ही में महाभारत के उपर मास्को स्थित भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में रंग प्रस्तुति की है। इस मंडली के संस्थापक और निर्देशक प्योत्र नेमोई का कहना है, उन्होने दुनिया की सबसे पुरातन माने जानी वाली सभ्यता भारत की धरा के उपर लिखे ग्रन्थ महाभारत पर इसलिय कार्य शुरू किया है, क्योंकि वह इसको भारतीय दर्शन और यहाँ के धार्मिक रिवाजों के संदर्भ में जानना चाहते है । उनका मानना है इस ग्रन्थ की रचना के साथ ही भारतीय रंगमंच की शुरुआत हो गई थी। अपनी प्रस्तुतिओं में वह इसमें वर्णित विभिन्न नाटकीय भरपूर घटनाओं का प्रस्तुतीकरण करते है|

रंगमंच के कलाकारों की बात की जाए तो बहुत से कलाकार महाभारत की कथाओं को लेकर कार्य कर रहे हैं । भारत ही नहीं अपितु भारत से बहार भी विभिन्न शैलियों में इसका प्रस्तुतीकरण होता रहता है|

अनुरूपा रॉय इस कथा को अपनी पपेट के माध्यम से आधुनिकता का सुमेल कर के खेल रही हैं। जिसमे फोल्क मार्शल आर्ट और मानवीय कद की कठपुतलियों का इस्तेमाल कर रही है। महाभारत के माध्यम से नए प्रयोगों को रूप देने मे डॉ पाशा का नाम भी आता है। इसमे उन्होने इस कथा की नाटकीयता को दिवयांग कलाकारों के माध्यम से बाहर निकाला है, जो कि चर्चा का विषय बनी हुई है। इसमे उनकी वीलचेयर ही रथ बनती है और उनकी बैसाखी ब्रह्म अस्त्र । यह प्रस्तुति कल्पना को एक नया आसमान देती है।

हरियाणा की फोल्क आर्टिस्ट डॉ संध्या शर्मा लोक शैली स्वांग के माध्यम से महाभारत की कथाओं और इसकी कायिकाओं को व्यक्त करती रहती हैं । इसमे वह पारंपरिक रूप के साथ आधुनिकता का भी सुमेल कर रही हैं।

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की छात्रा रह चुकी असीमा भट्ट ने भी द्रौपदी को लेकर एकल प्रस्तुति तैयार की है। जिसका मंचन वह विभिन्न स्थानों पर करती रहती हैं। इस प्रस्तुति में वह आधुनिक अँग्रेजी भाषा का प्रयोग द्रौपदी पात्र के मुख से करवाती हैं। आधुनिक नारी और द्रौपदी की मनोस्थिति और व्यथा को जोड़ कर सूक्ष्म रूप से इसमे प्रस्तुत किया गया है।

चंडीगढ़ से संबन्धित रंगकर्मी मुकेश शर्मा ने नाटक "गांधारी" की प्रस्तुति की थी । जिसमे गांधारी की पीड़ा, वेदना और संवेदना को सलोनी राणा नमक अभिनेत्री ने अपने किरदार के माध्यम से दिखाई थी।

क्लासिकल डांसर और रंगकर्मी संतोष नायर ने द गेम ऑफ डाइस नामक एक नाटक तैयार किया है। जिसकी प्रस्तुति देश विदेश और भारतीय सांसद परिसर में भी वह कर चुके हैं। इसमे बहुत से कलाकारों, लोक नृत्य और तकनीकी माध्यम से नाटकीय तत्वों का प्रयोग किया गया।

वर्ष जुलाई 2015 में फ्रांस में जापान के रंगकर्मियों द्वारा महाभारत की प्रस्तुति जापानी शैली में प्रस्तुत की गई| जिसमे जापानी आधुनिक और लोक कला के माध्यम से इसको प्रस्तुत किया गया ।

आधुनिक मीडिया के दौर में भी महाभारत का वर्चस्व तनिक भी कम नहीं हुआ है। समय समय पर इस कथा से प्रभावित और आधारित प्रस्तुतियाँ आती रहती हैं। वर्ष 1989 मे बी° आर° चोपड़ा ने, वर्ष 1989 में पीटर ब्रुक ने भी गहन अध्यन के बाद महाभारत की प्रस्तुति धारावाहिक के रूप में की थी। बी° आर चोपड़ा की प्रस्तुति मे जहां उस समय अनुसार आधुनिक तकनीकों का सुमेल था तो वहीं पीटर ब्रूक ने अपनी प्रस्तुति को थिएटर जैसा ही रखा, इसकी कॉस्ट्यूम, सेट, मेक-अप इत्यादि सब रंगमंच सा ही था। इसी दौर मे 1993 में रामानन्द सागर ने भी महाभारत ऊपर आधारित धारावाहिक श्री कृष्णा का निर्माण किया था। वहीं वर्ष 2013 में सिद्धार्थ आनंद कुमार की निर्देशना में भी एक महाभारत आई थी, जिसमे हर नई तकनीक का इस्तेमाल इस रचना को और रौचक बनाने के लिए किया गया था। इस समय दौरान एकता कपूर नामक एक प्रोड्यूसर ने भी महाभारत को धारावाहिक के रूप में पर्दे पर उतारा था, जिसको दर्शकों ने नकार दिया था। इसमे एकता कपूर ने महाभारत को रोमन स्टाइल में प्रस्तुत करने की कोशिश की थी। इन सब को देखें तो एक बात निकाल कर सामने आती है माना यह सब प्रस्तुतियाँ गहन अध्यन के बाद बनाई गई। पर अभी तक एक भी ऐसी प्रस्तुति नहीं आई जो केवल चुनी गई नायिकाओं को आधार लेकर बनाई गई हो।

भारतीय लेखकों की बात करें तो कुछ नाम जिक्रयोग है जिन्होंने महाभारत पर कार्य किया है। जैसे की भारवि, माघ, श्री हर्ष, कालिदास, महाकवि भास, भट्ट नायक, सारलादास, मैथली शरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, माखनलाल चतुर्वेदी,

जयशंकर प्रसाद, रामकुमार वर्मा, शंकर शेष, बाबुराम वर्मा अदिक नामवर लेखकों ने महाभारत के ऊपर बहुत से उपन्यास, नाटक और रचनाए लिखी हैं|

वर्तमान समय में नरेंद्र कोहली, देवदत्त पटनायक इत्यादि के नाम प्रमुख है । इन्हों ने महाभारत की विभिन्न घटनाओं, प्रसंगों और इसकी मुख्य नायिकाओं के जीवन और चरित्र की चुम्बकीय नाटकीय घटनायों के बारे मे अलग अलग कोणों से लिखा है। किन्तु स्पष्ट और मुख्य तौर पर चुनी गई नायिकाओं मे छुपी नाटकीयता को ले कर कार्य नहीं हुआ ।

उदेश्य

- इस कार्य का मुख्य मंतव्य विश्व प्रसिद्ध भारतीय महांकाव्य महाभारत की चुनी गई मुख्य नायिकाओं मे छुपी हुई नाटकीयता का गहन अध्ययन करना था जो कि कर लिया गया है। उनमें उन तत्वों को खोजा गया है, जिन कारण वह अमरतव को प्राप्त हुई ।
- महाभारत के प्रस्तुतिकरण में समय समय पर उपयुक्त विभिन्न तकनीकों के उपयोग की संभावनाएँ क्या है ? किस तरह उनको प्रयोग में लाया जा रहा है, यह ढूँढा गया।
- नाटकीय संभावनायों की रंगमंचीय खोजबीन की गई ।
- महाभारत की कालजयिता को वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत किया गया।

खोज विधि

खोज का प्रमुख कार्य ज्ञान में बढ़ोतरी करना है। यह बढ़ोतरी विभिन्न विधियों के साथ संभव है। जिनके साथ अब तक मनुष्य ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित करता आया है| हर खोज कार्य की विधि विभिन्न होती है, ऐसा स्वाभाविक है, क्योंकि प्रत्येक मानव की प्रवृति विभिन्न है, उसकी समस्याएं विभिन हैं और निश्चित रूप से ही उन सब को हल करने वाली प्रविधि भी विभिन होगी। इस खोज कार्य मे रहस्यवादी विधि, संदेहवादी विधि, परिणामवादी विधि, तर्कवादी विधि (निगमनात्मक विधि ,अगम्नात्मक विधि) का प्रयोग किया गया है । इन विधिओं के इलावा विषय की जरुरत को मुख्य रखते हुए समय-समय पर पुस्तकालय की सहायता ली गई। जिसमे विषय से संबंधित प्रत्यक्ष व् अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित पुस्तकों की सहायता ली गई। खोजर्थी को अपने खोज कार्य के दौरान क्षेत्रीय कार्य करना पड़ता है। इस के बिना ये कार्य अधुरा माना जाता है। इसलिए महाभारत से संबन्धित विभिन्न स्थलों का भ्रमण भी किया गया जिस से इस कथा को और समझने का अवसर मिला। शोध कार्य मे परिपकता लाने के लिए साधू, संतों, कथावाचको, कला के विद्वानों एवं विदुषिओं और आम जन से भेंट की गई और तैयार की गई प्रशन सूची के आधारपर संबंधित विषय से सवालों को पूछ कर जुडी जानकारी जुटाई गई । किए गए खोज कार्य में मनोविश्लेश्नात्मक प्रणाली का भी प्रयोग किया गया। क्योंकि साहित्य अध्यन की इस विधि में लेखक की मानसिकता और पात्रों की परिस्थितिओं में उनके व्यव्हार का अध्यन किया जाता है। यह अध्यन प्रणाली तो आलोचक के मनोविज्ञान को भी अध्यन का विषय बनाती है। मनोविश्लेश्नात्मक अध्यन विधि का आधार मनोविज्ञान है, मनोविज्ञान वह विज्ञानं है जो मानवीय मन का अध्यन करता है।

उपरोक्त सभी विधिओं का प्रयोग इस कार्य को परिपूर्ण करने के लिए किया गया है।

विषय की नवीनता, मौलिकता और सार्थिकता

अभी तक महाभारत पर इसके विभिन्न पहलुओं पर कार्य हो चूका है। लेकिन इस महांकाव्य की नायिकाओं के ऊपर रंगमंच और नाटकीयता के सन्दर्भ में इस विषय पर कार्य नहीं हुआ है। किस दृष्टि और प्रकार से वेद व्यास ने इनमे नाटकीयता का समावेश किया है, इस विषय पर कार्य होना अभी शेष है। कोई संदेह नहीं कि रंगमंच जगत में इसका विशेष स्थान है और यह समय के अनुसार नवीन होती चली जाती है। जैसे जैसे समय अनुसार नई विधाएँ और उपकरण आते जा रहे है वैसे ही प्रस्तुतीकरण का नवीनीकरण होता जा रहा है। यही इस विषय की नवीनता तथा मौलिकता है। यहाँ इस विषय पर कार्य किया गया है कि इस कथा की नायिकायों को किस तरह और किन नाटकीय तत्वों के माध्यम से रंगमंच तथा मीडिया मे प्रस्तुत किया गया है|

नायिकाओं को उनकी नाटकीयता से आँका जाना रंगमंच की दुनिया में स्वयं अपनी सार्थकता स्पष्ट रूप से सिद्ध कर देता है|

विषय परिसीमा

"महाभारत की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं" के अंतर्गत शोधार्थी ने विषम नायिकाओं का ही चयन किया है, जिनकी स्वयं की अपनी एक विचारधारा है। जो इस महानकाव्य की मूल स्तंभ हैं। इस परिसीमा से बाहर जाकर कार्य अत्यधिक विशाल हो जायगा। इसलिए सत्यवती, अम्बा, गांधारी, कुंती, हिडिम्बा, द्रौपदी और उत्तरा नायिकाओं का चुनाव कथा में उनकी महत्वता और नाटकीयता के कारण किया गया है।

प्राप्तियाँ

- इस कार्य में महाभारत की मुख्य नायिकाओं के चरित्र में छुपी नाटकीयता और उभार कर सामने लाया गया है ।
- किस तरह टीवी और फिल्म प्रस्तुतीकरण में विभिन्न तकनीकें उपयोग में आ रही हैं, इस पर कार्य किया गया है ।
- रंगमंच की धरा पर इसके प्रस्तुतीकरण में अन्य विधाओं के माध्यम से नाटकीय संभावनायों को रेखांकित किया गया है ।
- इतने वर्ष बीत जाने पर भी इसकी कालजयिता आज भी बरकरार क्यों है, इन पहलुओं पर चर्चा की गई है ।

प्रथम अध्याय

महाभारत में कथानक एवं पात्र सृष्टि

महाकाव्य महाभारत इस जगत् की विशाल महानतम रचनाओं में से एक है। समस्त विश्व में विभिन्न रूपों के सन्दर्भ में इसका मंथन हो रहा है और इसमें से अनंत रचनाएँ जन्म ले रही हैं। संस्कृत रंगमंच हो या आधुनिक दौर का रंगमंच, भास की रचनाएं हों या फिर पीटर ब्रुक की, यह बहुत सी धाराएं, विचार और ज्ञान सब के समक्ष रख रहा है। इसका कथानक जितना सरल है, उतना ही जटिल और सौंदर्यपूर्ण भी है। महाभारत को एक धर्मग्रन्थ या महाकाव्य कहने मात्र से समझा नहीं जा सकता।

किसी भी रचना के आधार में कुछ तथ्य होते हैं और तथ्यों से बनता है कथ्य और कथ्य से बनता है कथानक, कथानक कहीं बाहर से नहीं आम जीवन में से पनपते हैं। महाभारत उस विशालकाय बरगद के वृक्ष की तरह है, जो समय के साथ अपनी सुंदरता को और बढ़ाता आया है। अनेको शाखाएँ, लताएं, पत्ते, फ़ल और फूल इसको और निखार रहे हैं। इसमें अनंत कथानक भरे पड़े हैं, जिसे व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुसार निकाल लेता है। हर कथा, कहानी, उपन्यास, नाटक या महाकाव्य इत्यादि का एक केंद्र बिंदु होता है, जिसके आसपास सारी संरचना की जाती है। उसमें बहुत से अन्य विचार होते हैं, जो मुख्य विचार के सह विचार होते है।

ब्रैंडर मेंथयुज इस संदर्भ में कहते हैं, "कथानक कितना भी जटिल क्यों न हो नाटककार को अपने दर्शकों के लिए कथा को ऐसा बनाना होता है कि वह आसानी से उसे समझ सकें। रंगमंच के किसी भी व्यपार के लिए दर्शक के मन में कोई उलझाव या संदेह नहीं रहना चाहिए। पहले अंक को तो स्पष्ट होना ही चाहिए, सभी अंको को स्पष्ट होना चाहिए नहीं तो वे रौचक न होंगे।" (*नाटक साहित्य का अध्ययन* 97)

कथानक क्या है ? इस को समझना बहुत आवश्यक है। यह किसी भी रचना का मुख्य बिंदु होता है, जो उसको भ्रूण से लेकर जन्म तक और यौवन से संपूर्णता तक लेकर जाता है। कार्यव्यापार की योजना को कथानक कहा जाता है जिसे अंग्रेजी में Plot भी कहते हैं। कथानक और कथा दोनों शब्दों की उत्पत्ति संस्कृत से 'कथ' धातु से उत्पन्न हुई है। संस्कृत साहित्यशास्त्र के अनुसार कथा शब्द का प्रयोग एक निश्चित रूप के लिए किया जाता है। कथा अपने दम पर अकेले अपना स्वरुप प्रकट नहीं कर सकती। उसे अन्य तत्वों की सहायता अवश्य पड़ती है।

जिस प्रकार एक स्त्री सोलह श्रृंगार करके निकलती है, तो आकर्षण का केंद्र बन जाती है । उसके इस आकर्षण के पीछे बिंदी, गजरा, कजरा, चूड़ी, कंगन, पायल, साड़ी इत्यादि का योगदान रहता हैं । उसी प्रकार कथानक वह स्त्री है जो सह कथायों रुपी श्रृंगार से सज धज कर प्रस्तुत होती है।

समरसेट मॉम कहते हैं, "कथानक का जो मुख्य काम है, उस पर बहुत लोग ध्यान नहीं देते। यह काम है, पाठक की रुचि को दिशा-निर्देश देना। कथा साहित्य में संभवतः सबसे मुख्य काम यही है, क्योंकि यह रुचि का दिशा निर्देश ही है, जिसके द्वारा लेखक पाठक को एक पृष्ठ से दूसरे पृष्ठ की ओर बढ़ाता है, और यह रुचि का दिशा-निर्देश ही है जिसके द्वारा वह पाठक में मनचाही मनःस्थितियों की सृष्टि करता है।" (*नाटकलोचन के सिद्धान्त* 101)

महाभारत की कथा देखने में जितनी जटिल लगती है उतनी ही सरल है। जैसे ही इसको पढ़ते, सुनते अथवा देखने लगते हैं इसकी सतहें अपने आप खुलने लगती हैं। इनके साथ पाठक/ प्रेक्षक अपना एक संबंध बना लेता है। उसे सारी कथा और कथानक स्पष्ट रूप में समझ आने लगता है।

कथानक में काल की गति घटनावली को खोल कर चलती है। आरंभ-मध्य और अंत, तीनों ही सुनिश्चित रहता है, कथानक कला का साधन है। इसमें भावों की उत्तेजना के समावेश के लिए जीवन की यथार्थक्ता के साथ आकस्मिकता के तत्व की भी आवश्यकता है। यही कारण है कि कथानक की घटनाएं यथार्थ घटनाओं की यथावत अनुकृति मात्र न होकर, यह कला के स्वनिर्मित विधान के अनुसार संयोजित रहती है। कथानक अक्सर देव-दानव, और अतिप्रकृत घटनाओं के द्वारा भी अंकुरित होते हैं। यह अविश्वसनीय होते हुए भी विश्वसनीय होते हैं। मनुष्य का जीवन सीधी और सरल रेखा में नहीं चलता। सुख-दुःख, उतार-चढ़ाव, आंतरिक और बाह्य परिस्थितियाँ उसके भाग्य को बदल कर रख देती हैं, उसको स्वयं से भी युद्ध करना पड़ता है। कथानक में जीवन की इसी गतिमान संघर्षशील रूप की जीवंत अवतारणा की जाती है ।

महाभारत के कथानक में स्त्री पात्रों ने इसको अपने चरित्र से दर्शाया और बढाया है। बाहरी युद्ध हो या आंतरिक युद्ध दोनों में उन्होंने अपना परचम लहराया है। विभिन्न घटनाक्रमों में से गुजरते उन्होंने इसके रूप को और भी श्रृंगारा है। इनके चरित्र की नाटकीयता इस मात्रा

में है कि पढने, सुनने और देखने वाला हर व्यक्ति एक उत्सुकता के साथ भरा रहता हैं। वह इनके प्रति अपना एक विशेष लगाव रखता है।

डॉ विनोद महाभारत के कथानक के संदर्भ में कहते हैं, "भीष्म के जन्म और कुरुवंश के वर्णन से मूल कथा का प्रारम्भ होता है। इस वर्णन में राजकुमारों की शिक्षा रंगभूमि प्रसंग, वनयात्रा, विराट नगर निवास, उद्योग और भीष्मपर्व वर्णन तथा युद्ध का सम्पूर्ण वर्णन है। युद्ध के कथानक के मध्य ही यथासवर दार्शनिक चिंतन के लिए स्थान निकाल लिया गया है। स्त्री पर्व तक के कथा विकास का महाभारत के वस्तु संयोजन का मध्य माना जा सकता है। शांति पर्व से आगे सारी कथा उपसंहार है। इसका मुख्य कारण यह है कि यदि युधिष्ठिर के राज्यारोहण पर ही कथा समाप्त कर दी जाती तब भी महाकाव्य की दृष्टि से गौरव का अभाव नहीं होता । इसके आगे की कथा का मुख्य उदेश्य दार्शनिक विवेचन और नर के नारायणतव प्राप्ति के अध्येय का प्रकाशन है । इस प्रकार महाभारत के विराट कलेवर में सामाजिक जीवन की अनेक गाथाएँ आकर एकाकार हो गई हैं। महाभारतकार ने विशेष उद्देश्य से अनेक उपाख्यान और प्रासंगिक वृतों का समावेश जिस रूप से किया है उसकी चर्चा अप्रासंगिक न होगी।

महाभारत के कथानक में कौरव पांडवों की मूल कथा के साथ अनेक प्रासंगिक वृतों उपाख्यानों और पूर्ववर्ती कथायो के समिश्रण से महाभारत के कथानक का स्वरूप निर्मित हुआ है। इन उपाख्यानों के आधार पर आधुनिक काल में बहुत कुछ लिखा गया है। यह उपाख्यान अपनी सिद्धांतवादिता के कारण प्रत्येक युग को प्रभावित करते हैं। इन समस्त लघु कथा अंगों का मूल कथा से गहरा संबंध है।

समायत ये उपाख्यान महाभारत पूर्व युग में आविभूत हो चुके थे और महाभारत में सिद्धान्त प्रतिपादन के लिए इनका समावेश हुआ। इनमें आस्तीक , राजा दुष्यंत, ययाति तपती एवं स्वरण, वशिष्ठ और औच , सुद-उपदुस, राजा नल, अष्टावक्र, मनु, सकन्द, भगवान राम, सती सावित्री और अम्बा आदि उपाख्यान प्रसिद्ध है। उद्योगपर्व के पश्चात युद्ध प्रारम्भ हो जाता है और स्त्रीपर्व तक कुछ ही स्वतंत्र उपाख्यान कथा के मध्य में आ पाते है। इसके पश्चात शांतिपर्व, अनुशासन पर्व आश्वमधिकपर्व प्रमुख रूप में दार्शनिक धार्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक विचारों को प्रस्तुत करते हैं। इन पर्वों में राजधर्मनुशासन राजा के अनेक कर्तव्य मोक्षधर्म पर्मप्रपति का उपाय धर्म स्वरूप आदि पर भीष्म के द्वारा विचार किया गया है।

अनुशासन पर्व में दान धर्म पर विस्तृत चर्चा है। इस धार्मिक चर्चा में भीष्म ने युधिष्ठिर को सम्मान के हेतु अनेक पूर्व प्रसंगों और चरित्रों को उदाहरण स्वरूप रखा है। अतः उन पर्वों में आने वाले सभी संक्षिप्त व्रत्त उपदेश , नीति , दृष्टांत कथानक की परिधि में आते है और उनको संक्षिप्त उपाख्यान के रूप में मानते हुए भी अधिक महत्व दिया जा सकता , यहाँ पर यह उपाख्यान या प्रासंगिक व्रत्त गौण हैं और प्रतिपादित विचार प्रमुख हैं। प्रमुख वचन भीष्म और अनेक स्थलों पर श्री कृष्ण ने प्राचीन ऋषियों और राजयों के उदाहरण देकर युधिष्ठिर की निवृति की ओर जाने वाली भावनायों की प्रवृति की ओर मोड़ने का सफल प्रयत्न किया है। इन सिद्धान्त क्रियायों में स्वर्ग के देवता भी सम्मिलित हैं और प्राचीन राजा तथा ऋषि भी।

इन प्रमुख उपाख्यानों के अतिरिक्त आने वाले संक्षिप्त कथानक प्रासंगिक क्थायों से भिन्न हैं। उनकी महाभारत की कथा से संबंधता ऐसा रूप है जो उनको उपाख्यानों से पृथक करता है । कथा के प्रवाह में कोई लघु कथा अथवा घटना मुख्यपत्र का साथ लेकर थोड़ी देर तक गतिमान रहती है और बाद में समाप्त हो जाती है – यह प्रासंगिक कथा होती है। ऐसी प्रासंगिक कथाएँ महाभारत में अनेक हैं ।

पूर्वजनम की कथाएँ, प्राचीन युग की कथाएँ, स्वर्ग की कथाएँ, वरदान की कथाएँ प्रमुख पात्रों के साथ घटित संक्षिप्त घटनायों की कथाएँ और दृष्टांत कथाएँ- यह सभी प्रासंगिक कथाएँ मूल कथा के साथ सहयोग करती हैं। मूल कथा के विस्तृत घटना पर पर अनायास ऐसी घटना घटित होती है जिसका संबंध मुख्य कथा के पात्रों से हो जाता हैं। उदाहरण के लिए हिडिंबा की कथा प्रासंगिक है । वन में रहते हुए पांडवों में से भीम पर हिडिंबा का आकर्षित होना और भीम तथा कुंती द्वारा उसे वधू रूप में स्वीकार करना तथा उससे घटोत्कच की उत्पत्ति और अंत में हिडिंबा का भीम से पृथक हो जाना , समस्त व्रत प्रासंगिक है।

इसी प्रकार पूर्वजन्म एवं प्राचीन प्रसंगों को लेकर कथा प्रवाह में आने वाली लघु कथाएँ भी प्रासंगिक हैं क्योंकि उनका उदय एक विशिष्ट प्रसंग को गति देने के लिए होता है। इतिहास और पुरानों की सम्मिथित शैली में एक कथा के साथ दूसरी कथा निसृत होना चाहती है। उदित प्रसंग की समाप्ति के साथ कथा भी समाप्त हो जाती है। सिद्धान्त निरूपिन इन कथायो के सभी पात्र केवल लोक विश्वास पर जीवित रहते है। आधुनिक प्रबंध काव्य में मूल कथा के साथ इन उपाख्यानों को भी उसी रूप में ग्रहण किया किया है । इन उपाख्यानों का प्रभाव कई स्थानों पर प्रत्यक्ष और कई स्थानों पर अप्रत्यक्ष रूप से पड़ा ही है। किन्तु अंतर्कथा के रूप में भी

इनका अस्तित्व विद्यमान है। इन कथायो में जीवन के नैतिक कर्तव्यों नियमों विधानों का वर्णन है। प्रत्येक सिद्धान्त के साक्ष्य होने के प्रमाण से महाभारत में किसी प्राचीन कथा को दृष्टांत रूप में रखने की प्रवृति सर्वत्र विद्यामान है। विधि निषेध के साथ चलने वाले ये कथानक महाभारत में अंत क्षणभर के लिए आलोक जगा कर पुनः मूल कथा के सागर में निमग्न हो जाते हैं।" (*महाभारत का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव*)

सत्यवती अपने पुत्र को हस्तिनपुर का राजा बनाने की इच्छा को व्यक्त करके महाभारत जैसे युद्ध के बीज को अंकुरित करती है। जिसे अम्बा-अम्बिका-अम्बालिका ने पनपने के लिए पोषक धरातल दिया। पंडू और धृतराष्ट्र के मानसिक द्वंद्ध ने इस कथा को बालरूप में परिवर्तित किया। कौमार्य काल में कुंती ने कर्ण को जन्म देकर इस कथा को जल दिया। गांधारी और कुंती पुत्तरों से एक ही वंश की शाखाएं 'कुरु और पंडू' वंश में विभाजित हुई। लाक्षाग्रह की घटना हो या भीम का हिडिम्बा से विवाह, द्रौपदी का राज सभा में अनादर, पांडवों को छलावे से बनवास देना, श्री कृष्ण का अपमान ऐसी बहुत सी घटनायों से महाभारत को सजाते हुए वेदव्यास ने सबको कुरुक्षेत्र की भूमि में लाकर खड़ा कर दिया। परिणाम क्या हुआ, सबको ज्ञात है। हस्तिनापुर की राज सत्ता की प्राप्ति के लिए 18 दिन तक वीभत्स और भयानक युद्ध हुआ। जो अनेकों प्रश्न पीछे छोड़ गया।

आम जीवन में भी व्यक्ति अपनी इच्छाओं, उपेक्षाओं और परिस्थितियों से लड़ता, गिरता और संभलता हुआ आगे बढता है। यह जीवन के रंग है जो जीवन को एक सुन्दर कला कृति के रूप में विद्यमान करते हैं और इसी कला को मंच पर प्रस्तुत किया जाता है। कुछ वास्तविक पात्रों के रूप में और कुछ काल्पनिक पात्रों के साथ।

सी॰ई॰एम॰ जोड़ कहते हैं, "कथानक जीवन के एक टुकड़े को शिल्प में बांध कर प्रस्तुत करता है , और ऐसा करके वह हमें जीवन को जैसे माइक्रोस्कोप के द्वारा दिखलाता है, हमें इस योग्य बनाता है कि जीवन को हम जैसा देख सकते हैं उससे अधिक स्पष्ट रूप से देख सकें।" (*नाटकलोचन के सिद्धान्त* 102)

पात्र जो भी हो वास्तविक या काल्पनिक, वह कथा को गति प्रदान करते हैं। महाभारत में वेदव्यास ने नायिकाओं के माध्यम से उस शक्ति का प्रदर्शन किया है, जिसकी कल्पना आम जन सिर्फ पुरुष रुपी शरीर वाले प्राणियों में करते हैं। इन्हीं नायिकाओं ने कथानक को अपने असल स्थान पर पहुंचाया है ।

कथानक में नाटकीयता : लक्ष्मीनारायण कहते हैं, "कथावस्तु नाटक का वह मूलाधार है जहां से नाटक का सारा विकास, उसकी सारी परिणति और संभावनाएं अपने लिए ठोस भूमि पाती है। कथावस्तु ही नाटक में घटित समस्त घटनाओं और कार्यों को समुचित व्याख्या और अर्थबोध देती है।"(*रंगमंच और नाटक की भूमिका* 109)

नाटकीयता को तनाव, रौचकता और संघर्ष इत्यादि से भी जाना है, किसी भी विधा में कथा कहने की कला तनाव पर निर्भर करती है। नाटक में गतिशीलता तभी प्रवाहित रहती है जब नाट्य-वस्तु व्यक्ति-जीवन या समूहिक जीवन में लक्षित तेज उथल पुथल के प्रसंगों की टक्कर से पैदा होती है। इस तरह गत्यात्मकता का संबंध संघर्षशीलता से बड़ी सहजता से जुड़ जाता है जो वस्तु में नाटकीयता की सृष्टि करता है।

डबलिउ°एच° हडसन अनुसार, "प्रत्येक नाटकीय कथानक का आविर्भाव किसी संघर्ष से होता है जो कि विरोधी-व्यक्तियों अथवा भावों अथवा हितों की टक्कर से छिड्ता है। संघर्ष किसी भी प्रकार का क्यों न हो, नाटकीय कथानक के लिए वह एक आधारभूत तत्व है। संघर्ष के आरंभ से वास्तविक कथानक का आरंभ होता है और उसकी समाप्ति के साथ ही वास्तविक कथानक की होती है।"(*एन इंटरोडकशन ऑफ द स्टडी ऑफ लिट्रेचर* 190)

कथानक के विकास और चरमसीमा के लिए तनाव आवश्यक है। यह आवश्यक नहीं कि तनाव की समाप्ति के साथ ही कथानक भी समाप्त हो जाए, यह भी संभव है कि कथानक की समाप्ति के बाद भी तनाव मौजूद रहे और यह तनाव पाठको या दर्शकों के मन में चलता रहे।

चरमसीमा अधिक तनाव का बिन्दु है। चरमसीमा पर पहुँचने से पहले संघर्ष का विकास घात-प्रतिघात की शैली में होता है। इसलिए कथानक के संगठन में संघर्ष, घटनाओं तथा क्रियाओं का महत्वपूर्ण स्थान है, जो तनाव को और गहरा करता है। कथानक का यह अंदरूनी तनाव वस्तु की व्यवस्था मे अव्यवस्था की प्रतीति करता है।

तनाव में जीवन और उसके कार्य-व्यापार घटित होते है। नाटक में प्रत्येक कार्य-व्यापार तनाव का वह विस्फोट है, जो सम्पूर्ण रचना में अन्य कार्य-व्यापारों को जन्म देता है । रचना केवल कार्य व्यापारों की लड़ी नहीं होती बल्कि वह एक निश्चित कार्य अथवा कारणों की एक व्यवस्था होती है। मुख्य कार्य व्यापार एक तरह का विस्फोट है जो पात्रों और उनके वातावरण के बीच सबसे ज्यादा परिवर्तन करता है।

मुखय: तौर पर वस्तु में संघर्ष विरोधी शक्तियों में होता है, जो तनाव की उत्पत्ति करता है। अधिक तीव्रता और प्रभाव के लिए इन विरोधों का समान रूप से शक्तिशाली होना आवश्यक है। इसके साथ ही शक्तियों के संतुलन को परिवर्तित कर एक नई स्थिति के निर्माण द्वारा तनावों की एक नई शृंखला को रूप दिया जा सकता है। एक भावबिन्दु से दूसरे भाव बिन्दु तक, एक विचार-बिन्दु से दूसरे विचार-बिन्दु तक जो स्थिति के अतिरिकित वस्तु में आकस्मिकता, कौतूहल, द्वंद, व्यंग, विडम्बना, रहस्यात्मकता, भ्रांति आदि की नियोजना द्वारा भी तनाव की सृष्टि की जा सकती है।

इस प्रकार कथावस्तु को एक सूत्रता में बांधे रखने के लिए, उसमें सजीवता, जीवंतता उत्पन्न करने के लिए, उसे गतिशील बनाए रखने के लिए, उसमे नाटकीयता की उत्पत्ति करने के लिए तनाव एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

<u>कथानक और पात्रों का संबंध</u> : तन में प्राण हैं तो एक जीवित मानव हैं। अगर प्राणों को अलग कर दें तो तन मात्र एक मास का टुकड़ा अथवा शव ही है। कथानक भी रचना में प्राण का कार्य करता है। बिना कथानक के सिर्फ वह इधर उधर कुछ बातों का संग्रह रह जाएगी। नाटक के तत्वों में कथानक का अहम् स्थान है।

ब्रैंडर मैथ्युज अनुसार, "किसी भी महत्वपूर्ण नाटक में पात्र ही कथानक का निर्माण करते हैं, और कथा का स्वरूप भी पात्रों के व्यक्तित्व से ही निर्मित होता है। फिर भी पात्र उसी प्रकार के होते हैं जैसा उन्हें कथानक बना दें। पात्र और कथानक का संयोग कोई आकस्मिक यांत्रिक मित्रता नहीं है, घनिष्ठ रसायनिक यौगिक के समान है। पात्र और कथानक समांतर नहीं रखे जाते, वे परस्पर एकीकृत होते हैं उनका अस्तित्व एक दूसरे के लिए है और एक दूसरे के साथ है ।" (*नाटक साहित्य का अध्ययन* 87)

एक सिक्के के दो पहलु की तरह कथानक और पात्र एक तरह से यह आपस में जुड़े हुए है। दोनों के संबंध को देखते हुए यह प्रश्न अनिवार्य नहीं लगता कि दोनों में अधिक महत्वपूर्ण कौन है। दोनों को अलग कर के देखा ही नहीं जा सकता। जो भी रचना रची जाती है। उसके घटकों का एक मूल्य होता है, वह छोटा हो या बड़ा। जैसे मशीनरी में एक पुर्जा भी खराब हो जाए तो बड़े बड़े यंत्रो की गति रुक जाती है। भारतीय नाट्यसिद्धांत को देखें तो वस्तु और नेता में तुलनात्मक महत्त्व का प्रश्न उत्पन्न नहीं किया गया। दोनों ही रसनिष्पति के साधन बन कर आते हैं।

डॉ विनय लिखते हैं, "महाभारत में चरित्र सृष्टि का आधार यथार्थवादी प्रवत्ति और एतिहासिक पृष्ठभूमि है। महाभारत में सभी सात्विक पात्र अपनी अपनी सीमा में आदर्शवादी हैं। उनके प्रत्येक कर्म के पीछे आदर्श का आधार दिखाया गया है। वे वीरस्व के तेजोदीप्त जीवन के मध्य अपनी चितवृति का प्रतिनिधित्व करते हैं । इन चरित्रों में सबसे प्रमुख उल्लेखनीय तत्व है इनकी निर्भयता और सपष्टवादिता । ये जीवन में विविध और यथार्थवादी है। व्यास जी ने इन चरित्रों का आलेखन अत्यंत साहस के साथ किया हैं।" (*महाभारत का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव* 265-266)

हर पात्र अपने कुछ विशेष गुण-अवगुणों के साथ उत्पन्न होकर पुस्तक से बाहर निकल कर मंच के माध्यम से खड़ा होता है, स्वयं के बारे में सबको परिचित करवाता है। उनकी रचना रंगकर्मी के रूप में अवतरित होकर, दर्शको के समक्ष आकर उन भावो-विचारों का निर्वाह उन तक करें जिनसे रचनाकार ने उन्हे परिपूर्ण किया है। चरित्र एक चिरंजीवी अमर रचना है, जो लम्बे अंतराल तक सृजित रहती है और हर बार नई उर्जा और रूप के साथ आती है। संस्कृत की सूक्ति है 'जो क्षण-क्षण नवीन होता जाता है, वही सौंदर्य है" महाभारत की कथा भी अनंत सुंदर चरित्र रचनाओं के साथ संपूर्ण है। जो एक नयापन और नई उर्जा का संचार करते हैं। सर्व प्रथम किसी भी पात्र का जन्म नाटककार के माध्यम से होता है। दूसरी बार अभिनेताओं के माध्यम से (हर बार हर अभिनेता एक नए रूप में उसे जन्म देता है)। उसके बाद हर बार दर्शक वर्ग के मन में, हर प्रस्तुति में विभिन्न रूप में बदलते हुए दर्शकों की रूचि एवं संस्कार के अनुरूप।

जार्ज सातायना / डॉ शर्मा कृष्णदेव का विचार है कि, "कथानक के निर्माण को हम आविष्कार कहते हैं, पर चरित्र के निर्माण को हम सृष्टि कहकर गौरवांचित अनुभव करते हैं।" (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 325)

'महाभारत' साहित्य जगत् में सूर्य की भांति आज भी चमक रहा है और यह चमक समय व्यतीत होने के साथ और भी बढ़ती जा रही है।

डॉ प्रसाद भोलेशंकर का मत है, "संस्कृत के पद्यसाहित्य में सबसे प्रमुख महाकाव्य साहित्य है। महाकाव्य प्रबंध काव्य की कोटि के इति वृतात्मक विषयप्रधान काव्य हैं। संस्कृत में महाकाव्यों की विशेष पद्दती पाई जाती है। ये सर्गों में विभक्त होते हैं जो संख्या में आठ से अधिक होते हैं। इनका नायक देवता या उच्चकुलोत्पन्न राजा होता है जो धीरोदात्त कोटि का

नायक होता है। नाटकों की भांति महाकाव्य की कथावस्तु भी पंचसधिसमन्वित होनी चाहिए । चतुर्वर्ग इन महाकाव्यों का लक्ष्य होता है और इनमें पुत्रजन्मोत्सव, विवाह, युद्ध आदि के वर्णन होते हैं।" (*साहित्यक आधार तथा परंपरा* 210)

चरित्र सूष्टि के निर्माण का आधार क्या है ? इसका उत्तर है मानव जीवन का काल्पनिक जीवन नहीं वास्तविक जीवन। जीवन के कुछ घटना क्रम जरुर काल्पनिक हो सकते हैं। नाटककार आम जीवन से रचना के पात्रों का आधार लेता है। आस पास विचर रहे व्यक्तियों को वह देखता है, सुनता है, उनको महसूस करता है और उनकी क्रिया-प्रतिकिर्या सब को ध्यान पूर्वक अपने अंतर्मन में कहीं समेंटता रहता है। उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व और चरित्र का गहन अध्ययन करता है। जिसके आधार पर नाटक में चरित्रसूष्टि करता है। सब प्रश्न मन में रखता है और उनके जवाब स्वयं खोजता और देखता है, सबका मंथन करता है। उन जीवंत पात्रों को इस तरह से मंथन करके कल्पना और वास्तविकता के मिश्रण से रचना करता है कि उस पात्र की रचना वास्तविक पात्र से अधिक सशक्त लगने लगती है। जिसमें दर्शक/पाठक अपने किसी परिचित या अपरिचित व्यक्ति का रूप देखते हैं, हुबहू उस रूप में समक्ष नहीं होता पर काफी हद तक वह उसके नजदीक होता है।

इस सन्दर्भ में पाश्चत्य विद्वान इब्सन ने अपने अनुभव को इन शब्दों में प्रस्तुत किया है "मैं एक भी शब्द लिखूं' इसके पहले चरित्र पूरी तरह मेरे मन में होना चाहिए ! मुझे उसकी आत्मा की आखिरी शिकन तक पहुँच जाना चाहिए। मैं हमेंशा व्यक्ति से ही शुरू करता हूँ। दृश्यबंध नाटकीय समष्टि सब सहज रूप से आते हैं और मेरे लिए चिंता का कारण नहीं बनते। लेकिन मेरे मन में बाह्य रूप पूर्णत:स्पष्ट रहना चाहिए। आखरी बटन तक कैसे वह खड़ा होता है, चलता है, व्यव्हार कैसे करता है, उसकी आवाज़ कैसे हैं ? मैं उसे तब तक नहीं छोड़ता जब तक नियति पूरी नहीं हो जाती"।

महाभारत के नारी पात्रों को इस कला के साथ इतनी परिपूर्णता के साथ लिखा गया है कि आज भी जब उन पात्रों को देखते या पढ़ते हैं तो लगता है कि यह पात्र हमारे घर, आस पास, समाज के ही हैं। जिस कुशलता और नाटकीय भरपूर तत्वों से इसको लिखा गया है यही इस की कालजयिता का कारण है। तन में प्राण हैं तो एक जीवित मानव हैं। अगर प्राणों को अलग कर दें तो तन मात्र एक मास का टुकड़ा अथवा शव ही है। कथानक भी रचना में प्राण

का कार्य करता है। बिना कथानक के सिर्फ वह इधर उधर कुछ बातों का संग्रह रह जाएगी। नाटक के तत्वों में कथानक का अहम् स्थान है।

नायिकाओं का महत्त्व

भारत वर्ष में स्त्री का स्थान सदैव ही सम्मानजनक रहा है। भारतीय समाज में आज भी अधिकतर दिन-त्यौहार और अनेको कर्म-संस्कार ऐसे हैं, जो स्त्री की उपस्थिति अथवा उसके हस्तक्षेप के बिना अधूरे माने जाते हैं। इस देश को भी एक नारी की संज्ञा देकर 'भारत माता' के रूप में प्रचारित और प्रसारित किया गया है। उनके विशेष अधिकारों को सुरक्षित रखा गया है। महाभारत काल में भी नारी के अधिकारों को खंडित नहीं किया, बल्कि उनमें बढ़ोतरी ही की गई। उनको पुरुष वर्ग से कम नहीं आँका गया। उनके जन्म और संस्कारों को उतने ही उत्साह से मनाया जाता दिखाया गया है, जितना किसी लड़के के जन्म पर मनाया जाता है। वह भी अपने पिता, स्वामी अथवा पुत्र/पुत्री के पीछे एक ढाल बन के सदैव खड़ी हैं। इस बात से उनका चरित्र अत्यधिक उभर कर सामने आया है। वेदव्यास ने इन सब को उभारने और दिखाने के लिए बहुत सी घटनाओं का नाटकीय प्रस्तुतीकरण किया है। इन नायिकाओं के कारण नायकों की गतिशीलता और बड़ी है। गांधारी, कुंती, द्रौपदी, सुभद्रा, सत्यभामा यह उदाहरण है। इनके चरित्र में जो विशिष्ट और ओजस्वी गुण दिखाई पड़ते हैं, वह अपने नाटकीय तत्वों की भरपूरता के कारण ही आकर्षित करते हैं।

नारी के महत्व की बात करते डॉ सत्यनारायन दुबे कहते हैं, "देवों के जीवन में देवियों का महत्वपूर्ण समान भाग है। नारी की कामनीय प्रतिमा के बिना क्ला ही नहीं विश्व भी अपूर्ण है। नारी का लावण्य क्ला का ललाम भाव है। वह रस बनकर कला में ओत प्रोत है। भारतीय क्ला में देव और देवियों का समान रूप से अंकन किया गया है। जहां भारतीय कला में यक्ष, नाग, किन्नर, सिद्ध, गंधर्व, विद्यासागर, अप्सरा आदि अनेक देव हैं वहीं देवियों की कल्पना भी की जाती है।" (*भारतीय कला एवं संस्कृति* 29)

महाभारत को अनंत मोड़ देने में, उसका मंथन करने में, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की दुनिया से एक विकसित सभ्यता को अंत तक ले जाने में और फिर एक नई सभ्यता के बीज अंकुरित कर के छोड़ देने में नारी पात्रों का अति महत्वपूर्ण योगदान है। इन पात्रों में गतिशीलता का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। गतिशीलता का तत्व किसी भी पात्र में होना अतिआवश्यक भी है, इसके बिना वह अपना विशिष्ट पद खो बैठता है।

भारतीय समाज में आदि काल से धर्म का अहम् और प्रथम स्थान रहा है। यह बात साहित्य में साफ़ और स्पष्ट रूप से दिखाई भी पड़ती है। क्योंकि अधिकांश साहित्य इन धर्म ग्रंथो में से ही निकला है। साहित्य रचनाकारो ने इस बात का लाभ भी उठाया है। इसका प्रमाण है कि आज पौराणिक साहित्यक रचनाएं, अपने साथ एक धार्मिक रचना का दर्जा भी रखती है। देव-दानव, चमत्कारिक-शक्तियां, पुन्य-पाप और शाप इन सब चीजों का इस्तेमाल करके रचनाओं को और भी रौचक और नाटकीय बना दिया जाता रहा है। वेदव्यास ने भी अपनी कथा के नारी पात्रों के चरित्र चित्रण में इसका खूब प्रयोग किया, जिसके साथ वह और उभर कर सामने आई।

अत्यधिक पात्र अतिमानवीय और देवी गुणों वाले है। इनका जन्म भी बहुत नाटकीय ढंग से हुआ है, दर्शक और पाठ्य वर्ग की बुद्धि को किसी चक्रवात में डालने के लिए कथा में उनका आगमन एक अलग और विशेष विधि से किया गया है। यह गुण लगभग सभी भारतीय पुरातन साहित्य और धर्म ग्रंथो में मिलता है। सत्यवती का जन्म एक मछली के पेट से और द्रौपदी का यज्ञ कुंड से हुआ है। गांधारी अपने पतिव्रता धर्म की शक्ति से ही अनंत शक्तियों की स्वामिनी हो जाती है। जिसका प्रयोग वह युद्ध के पश्चात् श्री कृष्ण को शाप देकर करती है, वहीं कुंती दैवीय गुणों वाली क्षत्रिय कन्या है जो अपनी शक्तियों से पंडू महाराज से काम क्रीडा किए बिना ही चार देवों (तत्वों) की सहायता से चार पुत्रों को जन्म देती है, फिर उसी कला को माद्री को सिखाती है जिस से वह अपने दो पुत्रों नकुल और सहदेव को जन्म देती है। सब के पितामह माने जाने वाले इच्छा मृत्यु वरदान के स्वामी भीष्म को एक कन्या अम्बा जिसने अभी योवन में कदम रखा ही है, उसके द्वारा उसकी मृत्यु का कारण बनने की चुनौती दिलवाई। राक्षस हिडिम्ब राज की बहन हिडिम्बा है तो राक्षसी, उसका स्वाभाव और गुण मानवीय है, उसका भीम से विवाह करवा के "घटोत्कच" का जन्म वेदव्यास ने अंतिम युद्ध के लिए एक नायक की प्रस्तुति करदी। उत्तरा के गर्भ में जब अश्वत्थामा पांडवों के आखरी अंश को भी समाप्त कर देता है, उस क्षण श्री कृष्ण के मुख से यह शब्द कहलवा के अति नाटकीय ढंग से उत्तरा के गर्भ में मृत पड़े भ्रूण को जीवित करवाया "हे अश्वथामा ! अधर्म, पाप, छल, कपटचरित्र दोष आदि सब प्रकार के पापों को मैं क्षमा कर सकता हूँ, भ्रूण हत्या का पाप मैं कदापि क्षमा नहीं कर सकता"। इन सब गुणों के कारण इन स्त्री पात्रों की विशेषता बढ़ाते हुए एक आदर्श पात्रों की श्रेणी में भी लाकर खड़ा कर दिया है। जहां कहीं भी कथा में वेदव्यास को उनके चरित्र में कोई

कमी दिखाई पड़ी तो उसको अपनी कवि-कल्पना अथवा नाट्य कल्पना से पूर्व निर्धारित आदर्शो से प्रतिष्ठित कर दिया है। यही किसी रचनाकार की तीक्ष्ण बुद्धि का परिचय है कि किस प्रकार वह अपने पात्रों को समाज के सामने एक विशेष पात्र के रूप में प्रस्तुत करते है ।

अपने अस्तित्व के लिए हर व्यक्ति माँ के गर्भ से जन्म लेने से मृत्यु तक एक लड़ाई लड़ता हैं। उसका अस्तित्व किसी भी क्षेत्र में ही क्यों न हो उसे यह हर हाल में लड़नी ही पड़ती है। इस लड़ाई में जो श्रेष्ट योद्धा बन के रण भूमि में आता है, वह जीवन की लड़ाई विजय भी पाता है। अगर वह नहीं भी जीत पाता तो उस योद्धा की बहादुरी के किस्से लम्बे अंतराल तक गूंजते रहते हैं और ऐसा लगने लगता है कि अगर यह न होता तो कुछ अधूरा अधूरा होता। महाभारत में भी इन नायिकाओं ने अपने गर्भ से इस महाकाव्य के अनेकों योद्धाओं को जन्म दिया और हर पग पर प्रेरित किया ।

जोशी दिनकर/त्रिवेदी प्रसाद शूकला महाभारत के संदर्भ मे बात करते हुए कहते हैं, "महाभारत एक इन्द्रधनुष है। इसमें यदि कोई निश्चित रंग देखना हो तो खास तरह के काँच से वह विशिष्ट रूप में देखा जा सकता है। असीम आकाश में इंद्रधनुष के सातों रंग एक पट्टी में जरूर देखें जा सकते हैं, किन्तु उनमें से एक ही रंग को यदि अलग करके उसके सौंदर्य का आनंद लेना हो तो उसके लिए खास तरह का काँच लेना पड़ेगा। - इस काँच से जब महाभारत के इन स्त्री को देखते हैं तो न केवल मुग्ध हो जाना पड़ता है बल्कि स्तब्ध भी हो जाना पड़ता है। स्तब्धता का यह आभास जब पिघलता है तो पहली संवेदना यह प्रकट होती है – अरे ! महाभारत की कथा के सही नायक के स्थान पर यदि किसी को स्थापित ही करना हो तो अन्य किसी को नहीं, इन माताओं को- इनके मातृत्व को ही सही स्थान देना चाहिए।" (*महाभारत में मातृ-वंदना* 9)

किसी के कारण स्वयं को कष्ट देना वह भी निरपराध और इस को अंतिम सांस तक देते रहना। बिना नियति को अपनी नियति बना लेना और उसको एक वास्तविक रूप में ढाल लेना, किसी के साहस का परिचय देता है। यह साहस कभी मार्ग से भटकाकर किसी और ही अधूरे मार्ग पर ले जाता है। जहाँ अपने मार्ग का नीव पत्थर रखा था। ऐसा सब कुछ इस कथा की नायिका अम्बा में देखने को मिलता है ।

दुनिया के समस्त शास्त्रो का सार महाभारत में समाया हुआ है। महाभारत के रचयिता से लेकर इस युद्ध में भाग लेने वाले सभी क्षत्रिय पुरुष थे। स्त्री पात्रों का इस युद्ध या इस कथा में

क्या स्थान है ? उनका अस्तित्व कहाँ तक स्थापित है ? क्या उनको इस रचना की नायिका भी कह सकते है ? अनंत प्रश्न मन में उत्पन्न होते हैं, इनका उत्पन्न होना भी अति आवश्यक है। स्त्रियाँ पुरुषों की तरह समक्ष आकर सीधा रण और कर्म भूमि में नहीं लड़ीं। इन सब पुरुष योद्धाओं को आगे बढ़ने के लिए उचित बल और छल इन्ही नायिकाओं ने दिया है। महाकाव्य का मुख्य महानायक श्री कृष्ण स्पष्ट रूप में समक्ष ना आकर भी सब घटनाओं को निर्देशित कर पूर्ण करता है। इसी प्रकार स्त्री पात्र भी उस महानायक के पद चिन्हों पर चलीं है। इनका चरित्र ओजस्वी शक्तियों से भरा पड़ा है। सत्यवती का हर हाल में हस्तिनापुर को योग्य शासक देने के लिए लड़ना, अम्बा द्वारा प्ररिशोध का प्रण, गांधारी का आँखों पर पट्टी बांधना, कुंती का अपने पति के साथ वन में प्रस्थान और उसके बाद पुत्रों के साथ वन गमन करना, द्रौपदी का अपने पाँच पतियों को अन्याय से युद्ध करने के लिए प्रेरित करना, हिडिम्बा का भीम से दूर रह कर भी उनकी रक्षा करना और उत्तरा का अभिमन्यु के वंश का पालन।

सत्यवती, अम्बा, गांधारी, कुंती, हडिम्बा, द्रौपदी और उत्तरा। यह पात्र महाभारत के मुख्य स्तंभों में से हैं। यहाँ नारी पात्रों के माध्यम से उसने नारी के सशक्त रूप से सबको परिचय करवाया है, सबको विशेष नाटकीय हालात पैदा करके आगे बढाया है। सत्यवती को उत्तराधिकारी की खोज में, अम्बा को प्रतिशोध की आकांक्षा में, गांधारी को पति और पुत्र मोह के में, कुंती को सदैव कष्टों में डाल कर, हिडिम्बा को विरह में, द्रौपदी को अस्तित्व की खोज में और उत्तरा को इस महाकाव्य के अंकुर को बचाने की ज्वाला में तपा कर विशेष रूप में खड़ा कर दिया। जिस कारण इन सबको आदर्श नायिकाओं के रूप में माना जाता है।

व्यक्ति का चरित्र, उसके कार्य, उसके विचार समाज में किस प्रकार अपना प्रभुत्व रखते हैं। जीवन में आई विपत्तियों और सुखद क्षणों में उसका आचार कैसा रहा और उनको किस ढंग से नियंत्रित किया यह सब विशेष महत्व रखता है। इसी आधार पर किसी पात्र को नायक या नायिका की संज्ञा मिलती हैं। भारतीय साहित्य में अधिकांश नायक अथवा नायिका सर्वगुण संपन्न होते हैं। भारतीय आचार्यो ने नायकों की तरह नायिका भेद भी बताएं है (यहाँ उसकी चर्चा अभी उपयुक्त नहीं है)। नायिका के लिए वह स्त्री पात्र अत्यधिक उपयुक्त है जो या तो नायक की पत्नी हो या प्रेमिका। भरत मुनि, धंनजय, शारदातनय, विश्वनाथ और अभिनवगुप्त आदि जैसे विभिन्न आचार्यों ने अपनी नायिका के रूप की परिभाषा दी है लगभग जो एक दूसरे से काफी मिलती है।

शोधकर्ता ने इन नायिकाओं को क्यों चुना ? क्या यह महत्वपूर्ण है ? इतनी नायिकाओं में से सिर्फ इन 7 नायिकाओं का ही चयन क्यों ? यहाँ (भारत) पर स्त्री को हर क्षेत्र में एक विशेष स्थान पर रखा जाता था और है। वेद और पुराण इत्यादि ग्रन्थों को लिखने में गार्गी, मैत्रयी इत्यादि विदुषियों का हाथ है। शक्ति पूजा और ईश्वरीय रूप में स्त्री रूप को प्रमुख रखा गया जैसे माँ दुर्गा, माँ लक्ष्मी, माँ पार्वती इत्यादि। यहाँ भगवान आशुतोष (शिव) को अर्धनारेश्वर के रूप में भी जाना जाता है अर्थात हर पुरुष में नारी है वह नारी के बिना अधूरा है। यहाँ तक कि हनुमान अवतरण के लिए विष्णु ने स्त्री का रूप (मोहिनी) धारण किया । बहुत से तथ्य हैं जिनको अनदेखा नहीं कर सकते और वेदव्यास ने भी इनको नज़रंदाज़ नहीं किया। इनकी विशेषताओं को देखते हुए अपनी महाकथा में स्थान दिया है। इस कथा का आरंभ सत्यवती और इति उत्तरा नामक स्त्री पात्रों से किया है। विशेष समय और हालातो को ध्यान में रखते हुए और कथा में निरंतर निर्वाह लाने में इनका विशेष योगदान है। उदाहरण वश गंगा के स्वर्ग लोक चले जाने के बाद सत्यवती का आगमन करवा कर कथा को गति प्रदान की, शाल्व राज द्वारा अम्बा का बहिष्कार करवा के भीष्म की शक्ति पर अंकुश लगवाया, गांधारी और कुंती के प्रवेश से कथानक को गति दी, हिडिम्बा का भीम से विवाह करवा कर पांडवों की शक्ति में नया प्रवाह प्रवाहित किया, द्रौपदी के आत्मसम्मान के माध्यम से कथा को कुरुक्षेत्र की ओर ले गए और महाभारत की कथा को जारी रखने के लिए अंत में उत्तरा को खड़ा कर दिया। यह महाकाव्य की मुख्य धुरी है, जो समय समय पर बनती रही है।

इन नायिकाओं का जीवन और जीवन की घटनाएं अति रोचक हैं। जो भी इस महाकाव्य को पढता है, वह इन पात्रों के प्रभाव से अछूता नहीं रह पाता। एक पात्र पर अनेक पुस्तकें लिख दी गई और आज भी यह कार्य निरंतर चल रहा है। जब भी कोई उसके बारे में सुनता, पढता या देखता है, तो लगता है, इसका मुझसे कहीं न कहीं कोई सम्बन्ध है या जीवन का ही अंग है। हजारों ग्रन्थ, उपन्यास, पुस्तकें, काव्य ग्रन्थ लिखे गए जो आज किसी संग्राहलय या किसी पुस्तकालय में धूल फांक रहे हैं, किन्तु महाभारत के संदर्भ में यह बात कदापि उचित नहीं ठहरती।

आज भी आम जन इस कथा के पात्रों के जीवन को देखते आए हुए कष्टों को कम समझते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा लेते हैं। नारी की दिशा और दशा पर विचार करने की पहल भी करते हैं। जहाँ इसका पूजन नहीं होता वहाँ महाभारत सा युद्ध किसी न किसी रूप में

अवश्य होता है। इन पात्रों ने किसी से कुछ न कह कर भी सब कुछ व्यक्त कर दिया। इस युद्ध के उद्घोष का स्तम्भ एक स्त्री द्रौपदी को ही बनाया है। सिर्फ द्रौपदी ही नहीं अन्य स्त्री पात्र भी उचित समय पर अपनी शक्ति और सामर्थ्य का परिचय देती रहती है। यही नाटकीय तत्व और घटनाएँ हैं जो आकर्षण का कारण बनते रहें हैं।

स्त्री को भारत में भगवान अथवा देवी का दर्जा दिया जाता है। सनातन, सिख, बौध, जैन और अन्य धर्मो में भी यही धारणा है। यह महाकाव्य नारीवाद के विषय में एक अच्छा ग्रन्थ सिद्ध होता है। सत्यवती को एक नाविक से एक महत्वकांक्षी राज रानी के रूप में लाके छोड़ दिया, फिर उस को वनस्थल की और भेज दिया।

अम्बा जो हँसती खेलती कन्या थी, उसके जीवन में भीष्म भूकंप लाकर उसका धरातल ही बदल दिया, जो अपने सम्मान की लड़ाई तीन जन्मो तक लडती रही और फिर शिखंडी रूप में खंड मृत्यु को प्राप्त हुई।

एक कन्या जिसके चक्षु समक्ष देखने में सक्षम है, उसको अंधकार की दुनिया में ले जाकर पुत्र मोह, धर्म और अधर्म आदि के चक्र में घुमा दिया, फिर युद्ध पश्चात उसके सभी पुण्यों को, श्री कृष्ण को शाप दिलवाकर ख़त्म कर दिया। जब श्री कृष्ण ने उस शाप को स्वीकार कर लिया तो एक पीड़ा में उसको भी वन गमन को भेज दिया।

कुंती जो राजसी, क्षत्रिय और विदुषी कन्या थी। जिसको उसके पिता ने बचपन में ही उसके फूफा को दान में दे दिया, वह चुप रही एक शब्द भी न बोली। विवाह के पश्चात अपने पति पांडू द्वारा दूसरी पत्नी "माद्री" को लाने पर भी चुप रही और उसको अपनी छोटी बहन की तरह स्वीकार किया। रंगभूमि में अपने ज्येष्ठ पुत्र कर्ण को सवीकार क्यों न कर सकी ? पंडू के स्वर्गवास के बाद अपने अनाथ बच्चों की शिक्षा और पालन में कोई कमी नहीं छोड़ी, हर स्थिति में उनको कौरवों से बचाते रही और युद्ध के पाश्चात्य वह धृतराष्ट और गांधारी के साथ चली गई।

हिडिम्बा एक स्त्री जो विवाहित है, उसका भरा पूरा परिवार है, सब कुछ होते हुए भी अपने बच्चे के साथ अलग वनों में रहना उसका लालन पालन करना। उसकी मनोदशा क्या होगी ? क्या उसका मन कभी अपने पति से मिलने का नही हुआ होगा ? अपनी सास की सेवा का मन नहीं हुआ होगा ? फिर भी शांत।

यज्ञ से जन्मी सर्व सुखों से पली कन्या द्रौपदी जो वनों में अनेको दुःख सहती रही, उसका अपहरण हुआ, अपमान हुआ, फिर भी अपने पतियों के साथ उनकी शक्ति बन कर रही, भरी सभा में जब उसको केशों से पकड़ कर अपमानित किया गया तो उसकी कोधाग्नि में सारा कुरु साम्राज्य जल गया।

छोटी सी कन्या उत्तरा, जिसने चढ़ते यौवन में ही अपने पति की कुरुक्षेत्र की भूमि में आहूती दे दी। बिना बाप के इस गाथा के आखिरी बीज को सँभालने में उसकी क्या हालत हुई होगी ? जिसने अपनी आँखों के सामने अपने वंश का विनाश होते देखा उसकी मनोदशा क्या हो गई होगी ?

यह पात्र अपने मन के अन्दर और तन के बाहर बहुत सी नाटकीय गाथाएँ छुपा कर बैठे हैं। जिनको समझने जानने के लिए इस विषय की ओर अग्रसर हुए हैं। नाट्यशास्त्र, दशरूपक, कामशास्त्र, अग्निपुराण, साहित्यदर्पण, काव्यनुशासन, भानुदत्त की रसमंजरी, श्रृंगारमंजरी आदि बहुत से भारतीय ग्रन्थ है, जिनको पढ़ा जाए तो नायक भेद से ज्यादा नायिका भेद दिए गए हैं, जो स्पष्ट करते हैं कि स्त्री, पुरुष पात्रों से ज्यादा नाटकीय होते हैं।

यह भरत वर्ष की सीधी व सरल कथा नहीं है। यह कथा भारतीय संस्कृति के ऊतार चढ़ाव की हैं, सत्य और असत्य के महायुद्ध की, अँधेरे से जूझने वाले उजाले की कथा, व्यक्ति के चित में उभरने वाले ज्वारभाटे की कथा हैं। जो आधुनिक दौर में रंगमंच मंदिरों या गाँव की चौपाल से निकल कर अति-आधुनिक पेक्षाग्रहों में आ पहुंचा है। जो सभी आधुनिक संसाधनों से पूर्ण है। AIU द्वारा भारत के उच्च शिक्षण संस्थानों में आयोजित किए जाने वाले युवा उत्सव इस बात के साक्षी हैं कि आज नाटकीय तत्व सिर्फ लेखन के दायरे से निकल कर प्रस्तुतिकर्ण में भी आ चुके है। आज भारी भरकम सेट के बिना भी सब कुछ प्रस्तुत किया जा सकता है जैसे सत्यवती की नाव, गांधारी का अँधेरा, अम्बा का शिखंडी तक का सफ़र, कुंती का दुःख, हिडिम्बा का रूप, द्रौपदी की प्रतिज्ञा और उत्तरा का अपने गर्भ में शिशु पालन, इनके प्रस्तुतीकरण में भी एक नवेलापन आ गया है। 80 के दशक में दूरदर्शन के दौर में जब बी आर चोपड़ा ने "महाभारत" को धारावाहिक के रूप में उतारा जो टेलीविज़न के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुई थी। अब 21वी सदी के अति तकनीकी दौर में स्टार प्लस नामक निजी टेलीविज़न चैनेल ने सिद्धार्थ आनंद कुमार की निर्देशना में 2013 में थ्री डी इफ़ेक्ट और नई तकनीकों का इस्तेमाल करते हुए महाभारत को फिर से टेलीविज़न पर उतारा। आधुनिक युवा

वर्ग ने इसको स्वीकारा और यही महसूस किया कि यह कथा आज के आधुनिक वैज्ञानिक युग की है। जहाँ सब बारूद के ढेर में खड़े हैं, वहाँ एक छोटी सी चिंगारी सब कुछ तबाह कर के रख देगी। यह सब इसके नाटकीय तत्वों के कारण ही संभव हुआ है।

महाभारत को अनंत मोड़ देने में, उसका मंथन करने में, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की दुनिया से एक विकसित सभ्यता को अंत तक ले जाने में और फिर एक नई सभ्यता के बीज अंकुरित कर के छोड़ देने में नारी पात्रों का अति महत्वपूर्ण योगदान है । जिस प्रकार इस संसार के बने रहने के लिए नर और मादा दोनों का होना अतिआवश्यक है। केवल एक की होंद से हम नए जन्म अथवा रचना की कल्पना नहीं कर सकते । कुछ ऐसा स्थान इस कथा मे नायिकाओं का है । महाभारत के रंगमंचीय रूप के अध्ययन करने के बाद शोध करता ने इन सभी तत्वों को ध्यान में रखते हुए, इन मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं विषय में खोज करने का चयन किया है ।

नायिकाओं का कथा में महत्व

चरित्रों के बिना कथा पग नहीं भरती। इसी शोध में यह तथ्य सामने आया है कि चरित्र रचयिता के सूक्ष्म मन में कही बहुत पहले से पड़े होते है। वह अक्सर उनसे वार्तालाप करता रहता है, और जैसे ही वह रचना का संकल्प लेता है, तो उन बीजो को अपनी बुद्धि से सींच कर पेड़ बनने तक पोषण करता है। इसमें अंश मात्र भी संशय नहीं कि वही पात्र पेड़ की तरह ही रचना को संभाले हुए, उसका वहन करते हुए, उसका महत्त्व बनते हैं।

इस महाकाव्य के नायक, नायिकाओं के माध्यम से ही दम भरते हैं। उनके जीवन पर, हर कार्य पर स्पष्ट और असपष्ट रूप से नायिकाओं का प्रभाव दिखाई पड़ता है। यह ही अन्य मुख्य नायकों को पल प्रतिफल गति और मार्ग देती है। चाहे भीष्म, कौरव हों या पांडव इस सबको इन्हीं नायिकाओं ने हाथ पकड़ कर बढ़ाया है। शकुंतला से लेकर उत्तरा तक गलती चाहे किसी की भी हो परिणाम नायिकाओं ने ही भोगा है। इनके चरित्र में भी सतरंगी झूले की तरह प्रत्येक रंग दिखाई पड़ते हैं जो इस कथा को और श्रृंगारते हैं।

रंगमंच की दुनिया में पात्र और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं। रंगमंच की जीवत्ता में यह जीवन का संचार करते हैं, क्योंकि रचयिता अपनी हर बात इन्ही के माध्यम से प्रदर्शित करता है।

शोध में चयन का आधार

महाभारत असंख्य पात्रों से भरी पड़ी है। यदापि शोधकर्ता का यह मानना है कि हर पात्र उतना ही महत्वपूर्ण होता है, जितना कि कोई भी अन्य दूसरा पात्र। लेकिन इस शोध कार्य के लिए शोधकर्ता के चयन की कसौटी कुछ यूं रही जैसे पके हुए चावलों में से एक दाना ही देख कर अनुमान लगाया जा सकता है कि वह पके हुए हैं या नहीं ? उसी तरह कुछ चुनिन्दा नायिकाओं के चरित्र चित्रण को चुन कर आँका गया है। कथा की समय सारणी के अनुसार जो भी नायिका कथा का केंद्र बिंदु बनती गई, उसका विवेचन अनिवार्य हो गया । इनके चरित्र और जीवन के नाटकीय संदर्भों को देखते हुए इन का चयन अनिवार्य हो गया। इसलिए अनेकानेक पात्र सामने होने के पश्चात् इस शोध कार्य को इन नायिकाओं तक सीमित किया।

सभी नायिकाओं को आंकने के लिए शायद कई दशक लगते तो यहाँ शोध करता ने नाटकीय संभावनाओं की अधिकता को देखते हुए, इन मुख्य नायिकाओं (सत्यवती, अम्बा, गांधारी, कुंती, हिडिंबा, द्रौपदी और उत्तरा) का चयन किया। इनमे से प्रत्येक नायिका मानसिक आधार पर अपनी एक स्वतंत्र सोच लेकर चलती है। वह पुरुष सत्ता के साथ तो हैं लेकिन आधीन नहीं हैं।

शांतनु के समय में गंगा से अधिक सशक्त सत्यवती को पाया है। उसका जन्म और संघर्ष एक नए शिखर पर उसको स्थापित करता है। वह अपनी लालसा की वजह से अधिक नाटकीयता का समावेश लिए हुए है।

कथा के अगले प्रवाह में देवव्रत (भीष्म) अपने सौतेले भाई विचित्रवीर के लिए काशी राज की पुत्रियों अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका का अपहरण करता है। जिसमें से अम्बिका और अम्बालिका स्वयं को शांति पूर्वक कुरु वंश की वधु मान लेती हैं, अम्बा इस बात को मानने लिए तैयार नहीं होती, वह पहले से शाल्व राज को प्रेम करती थी और पति रूप में स्वीकार भी कर चुकी थी। किन्तु भीष्म द्वारा अपहरण के पश्चात शाल्व राज ने भी उसे अपनाने से मना कर दिया। फिर कुरु वंश की वधु रूप में आने के लिए भीष्म को अपने पति के रूप में पाने की बात रखी, भीष्म ने अपनी ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा के कारणवश इसको नकार दिया, इस बात पर किशोर युवती अम्बा ने भीष्म को चुनौती दी कि वह उसकी मृत्यु का कारण बनेगी, जबकि वह जानती थी उस भीष्म को इच्छा मृत्यु का वरदान प्राप्त है। चींटी का हाथी को चुनौती देना स्वयं में नाटकीयता का अथाह भंडार है।

गांधारी को भगवान शिव द्वारा 100 पुत्रों का वरदान ही अपने आप मे नाटकीय है, यह फलित भी हुआ। इस बात से सभी परिचित है कि महाभारत कौरवों और पांडवों के बीच हुई। यह वही नायिका है जिसने आँखों पर पट्टी बांधे हुए भी सब देखा और कथा के अंत में जगत पालक श्रीकृष्ण को शाप दे दिया था। इससे बड़ी और क्या नाटकीयता होगी।

पाँच पांडवों की माता का भी वही स्थान है जो गांधारी का। कुंती 6 पुत्रों की माता थी। जो मानवीय पुत्र न होकर देवताओं के पुत्र थे। सभी दैवीय गुणों से परिपूर्ण थे। उसका पहला पुत्र कर्ण अपने ही भाइयों के विरुद्ध लड़ा था। जिसे वह सारा जीवन अपना न सकी। सारा जीवन उसने सुखी जीवन के लिए संघर्ष किया और जब वह समय आया तो फिर बनवास पर चली गई। यही नाटकीयता उसकी और खींचती है ।

पांडवों में अत्यधिक बलशाली भीम था और भीम के बारे में यदा कदा राक्षसों का वध करने के अनेकों सन्दर्भ महाभारत में पाएं जाते हैं। ऐसे ही वन गमन करते समय राक्षस हिडिम्ब का वध कर, उसकी विशालकाय राक्षसी बहन हिडिम्बा से गन्धर्व विवाह करके अत्यंत शक्तिशाली पुत्र घटोत्कच और पौत्र बर्बरीक को पाना, हिडिम्बा का स्थान अहम् बना देता है। उसके द्वारा पांडवों कि रक्षा करना और उनके अंश का लालन पालन सुहागन होते हुए भी अकेले रह कर करना, उसमे छुपी नाटकीयता को समक्ष लाने मे सक्षम है।

यज्ञ वेदी से जन्मी द्रौपदी को कौन नहीं जानता। पाँच पतियों का वरदान, सीधा यौवन रूप में जन्म नाटकीय पाश में बांध लेता है। राज कन्या से ब्राह्मण कन्या की तरह जीवन यापन उसकी ओर अग्रसर करता है। राजस्वला की स्थिति में उसका भरी सभा में अपमान महाभारत के यज्ञ मे मुख्य आहुति बना। देव पतियों की पत्नी और हस्तिनापुर की वधू की हालत उस समय और समाज की दयनीय और नाटकीय स्थिति को दिखाती है। पाँच पांडवों की संयुक्त पत्नी द्रौपदी महाभारत के वट वृक्ष का तना है। जिसके साथ अनेकों नाटकीय लताएँ लटकी हुई हैं।

कथा का सत्य की तरफ झुकाव दिखाने के लिए अर्जुन पुत्र अभिमन्यु की पत्नी उत्तरा के गर्भ को संकेत रूप में बचा लिया जाता है जो उत्तरा की महत्वता का साक्षी है । इस युद्ध में उसने पिता, पति एवं भाई की आहुति दी । वही उत्तरा जिसको कभी उसके पिता ने अर्जुन

की वधू रूप मे देखा था । सभी नायिकाओं के नाटकीय अंशो और कथा को ले वो आगे बढ़ती है । यही उसकी मुख्य नाटकीयता है।

पांडवों की विजय इस लिए हुई, क्योंकि उनके सखा नारायण थे और जीवनशक्ति रूपी द्रौपदी उन में शक्ति भर रही थी इस विजय के लिए अम्बा, गांधारी, कुंती, हिडिंबा और उत्तरा आदि सभी नायिकाओं ने बलिदान किए, तभी पशुबल का शमन हुआ। वस्तुतः नर की विजय का मूल्य नारी ही चुकाती आई है । इस तरह से इन सात नारी पात्रों को इनके नाटकीय संभावनाओं की वजह से चयन किया गया है ।

द्वितीय अध्याय

कौन थे वेदवेदव्यास ?

भारत देश की धरा पर रचित हुए साहित्य के प्रचार और प्रसार के बाद जब पाश्चात्य विद्वानों ने इनका अध्यन किया तो इनसे प्रभावित होकर उन्होने भारत को "पंडितों का देश (अर्थात विद्वानों का देश) कहा, भारत की इस प्राचीन पंडित परंपरा में एक महापंडित वेदव्यास भी हुए । भारतीय साहित्य में वेदव्यास एक ऐसे स्मारक, एक ऐसे युग निर्माता महापुरुष हुए जिन्होने एक ओर तो सहसत्रों वर्षो से भरपूर वेद, पुराण और महाकाव्यों से इस धरा को संचित किया जिससे न केवल भारत बल्कि अन्य देश भी फूलते-फलते रहे।

व्यास नाम को लेकर अनेकों भारतीय और पाश्चात्य विद्वानो ने अपने अपने मत और तर्क से इसका एक रूप सिद्ध करने की कोशिश व्यक्त की है। किसी ने इसको एक व्यक्ति, किसी ने एक जातीय परंपरा, शिष्य परंपरा, वंश परंपरा, इत्यादि सिद्ध करने की कोशिश की है। व्यास नाम की प्रसिद्धि और लोकप्रियता को देखकर यही ज्ञात होता है कि उसका अस्तित्व भारतीय साहित्य जितना ही पुरातन है। शोधार्थी यहाँ उस वेद व्यास, कृष्ण द्वैपायन की चर्चा की गई है, जिसको महाभारत की नायिका "सत्यवती" ने जन्म दिया है।

व्यास के बारे मे गौरेला वाचस्पति कहते है, "व्यास-वंश के मूल-पुरुष ब्रह्मा के एक पुत्र का नाम वशिष्ठ था, संभवतः 'महाभारत' में जिनको आपव भी कहा गया है। वशिष्ठ के पुत्र शक्ति और शक्ति के पुत्र हुए पराशर। इस पराशर से दाशराज की कन्या सत्यवती का विवाह हुआ। सत्यवती का ही दूसरा नाम योजनगंधा या मतस्यगंधा भी था। कृष्ण-द्वैपयान वेदव्यास के यही माता-पिता थे।"(*संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास* 178)

महाभारत की कथा के अनुसार एक बार दाशराज कन्या मतस्यगंधा नदी के तट पर नांव चला रही थी। ऋषि पराशर नदी पार करने के लिए उस नांव पर सवार हो गए, वह मतस्यगंधा के रूप को देखकर मोहित हो गए और उनसे समागम करने की इच्छा व्यक्त की। लेकिन दाशराज कन्या ने कुछ शर्ते रख दी। ऋषि पराशर ने उसकी सभी शर्ते मान ली और फिर उनके समागम से जिस बालक का जन्म हुआ उसका नाम ही "द्वैपयान कृष्ण" रखा गया जो बाद में वेद व्यास अथवा व्यास नाम से भी प्रसिद्ध हुआ।

व्यक्ति अपनी मानसिक शक्ति से बहुत कुछ कर सकता है। असंभव चीजों को संभव कर सकता है। भारतीय समाज का इतिहास लम्बे अन्तराल तक एक सुनहरी युग का साक्षी

रहा है। जहां पृथ्वी से लेकर सौर मंडल तक, चमत्कारिक अस्त्रों से लेकर आयुष विज्ञानं, लेखन कला से लेकर सर्वे सुखन्तु तक सफ़र तय किया है। इसकी रमणीक झांकी महाभारत में देखने को मिली है। दुखद दुर्भाग्य की बात यह है कि इस पर इतनी सदियों से दंतकथाओं, चमत्कारों और भक्तिभाव से प्रेरित स्तुतियों की धूल चढ़ गई है।

महाभारत केवल युद्ध या श्री कृष्ण की बात नहीं करता वह सब आम जन की बात करता है। यह बात सत्य भी है, जिस व्यक्ति ने भारत की संस्कृति और वर्ण व्यवस्था को लिखित रूप दिया। सबसे पहले उसने वेद को अपने श्रोतायों की आवश्यकता और सुविधा के अनुसार वेदों में विभाजित कर के "वेदव्यास" का नाम ग्रहण किया। वेदों तक ही उसका योगदान सीमित नहीं रहा, उसको 18 पुराणों, भारतीय वेदांत धरा, पतंजलि कृत सूत्रों, श्रीमद भगवद गीता, महाभारत, ब्रह्मसूत्र के प्रणेता भी माना जाता हैं। उसने वेदों के प्रमार्थ को उपनिषदों में प्रतिष्ठित किया, फिर उसी सार को "ब्रह्मसूत्र" में सूत्रबद्ध कर भारत के दार्शनिक चिंतन को आधार दिया। इसकी व्याख्या आज तक विभिन्न दार्शनिक अपनी बुद्धि के अनुसार करते हैं। यही नहीं वह एक स्मृतिकार भी है। जिस प्रकार ऋषि मनु "मनु स्मृति" का स्मृतिकार है, इसी तरह वह "व्यास-स्मृति" का जनक है।

"कामधेनु गो" की तरह महाभारत "कामधेनु ग्रन्थ" है। जो कोई व्यक्ति इच्छा करके इससे कुछ मांगता है, यह उसे प्रदान करता है। इसमें से प्रत्येक मनुष्य ने अपनी इच्छा अनुसार अपने जीवन को एक विशेष दिशा में ले जाने के लिए पर्याप्त सामग्री ली है। राजनीती का तो यह सर्वस्व है ही, यह एक संविधान की तरह भी है, जिसमें शासक और प्रजा के विभिन्न विभिन्न कर्तव्यों, अधिकारों को वर्णित किया गया हैं। यहाँ वेदव्यास का एक संविधान निर्माता का रूप भी देखने को मिला है।

कर्म के बिना इस संसार में कुछ नहीं मिलता। व्यक्ति का कर्मठ होना अतिआवश्यक है। वेदव्यास ने यही बात स्वयं के ऊपर धारण करके और इसको महाभारत के मध्य में विराजमान "श्रीमद्भागवत-गीता" में कर्मज्ञान और भक्ति आदि का अति सुन्दर समन्वय कर के कही भी। वेदव्यास स्वयं कर्मवादी व्यक्ति है। यही सन्देश उसने देने की कोशिश की है "कर्म कर फल की इच्छा मत कर" भाव व्यक्ति को अपना कर्म करना चाहिए। इस चीज़ को अन्तःमन से निकाल देना चाहिए कि सफलता मिलेगी या असफलता। कर्म करने का लाभ प्रत्येक व्यक्ति को मिलता है। या तो उसे सफलता मिलती है या अनुभव। वेदव्यास के कर्म ज्ञान

से आज चाइना और ब्रिटेन जैसे देश भी प्रभावित है। आज चीनी भाषा में "गीता" छापी जा रही है और पढ़ी जा रही है । सऊदी अर्ब में भी यह अरबी भाषा में अनुवादित हो चुकी है। वेदव्यास एक कर्मठ व्यक्ति के रूप में अपनी रचना के माध्यम से जीवित हैं।

मनुष्य को इस ब्रह्माण्ड की सबसे सुन्दर रचना कहा जाता है। जैसे मानव विकसित होता गया उसने टोलियाँ बना ली। जो पहले कस्बों, गाँव और राज्य और फिर देश के रूप में परिवर्तित हो गई। भारतीय संस्कृति "वसुदैव कुटुंभ्कम" से इस बात का सदैव नेतृतव करती आई है। महाभारत में जब भी किसी पर कोई विपत्ति आई, तो वेदव्यास ने उसे "तीर्थ यात्रा" पर तीर्थ स्नान करने को कहा है। वह स्वयं भी यात्रा पर ही रहते थे। संभवतः इस "तीर्थ यात्रा" की शुरुआत वेदव्यास ने समूचे देश और मानव जाती को संगठित करने के उद्देश्य से ही की होगी । इसी कारण से तो इस कथा में विभिन्न देशों की संस्कृति को प्रस्तुत किया गया।

डॉ विनय वेद व्यास के बारे में कहते है, "भगवान वेदव्यास ने इस महाकाव्य की रचना में इतिहास और पुरानों का मंथन करके उनका प्रशस्त रूप प्रकट किया है। कोई भी विषय उनकी प्रतिभा प्रकाश की सीमा से बाहर नहीं रह पाया। इसकी रचना प्राण के लिए उस युग की पुष्ठभूमि का ज्ञान आवश्यक है। महाभारत की रचना अपने युग के विभिन्न धार्मिक संप्रदायों दार्शनिक विचारों और जीव जगत की अनेक विधा विशेषताओं के समन्वय के लिए हुई। अतः "महाभारत" की प्रेरणा कवि की लोक मंगलकारी दृष्टि और संस्कृति की रक्षा तथा विशाल राष्ट्रनिर्माण की भावना का अभ्युदय मानी जा सकती है।"(*महाभारत का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव* 8)

वेदों की चार संहिताओं यानि ऋग्वेद संहिता, यजुर्वेद संहिता, सामवेद संहिता और अथर्ववेद संहिता का जो आधुनिक रूप प्राप्त होता है, वह वेदव्यास ने ही रचा है। यही उसके नाम का मुख्य आधार बना है। ऐसा नहीं है कि यह संहिताएँ पहले प्राप्त नहीं होती थी। इसमें समय-समय पर अधिकांश सूक्त जुड़ते चले गए। एक भाषा और लिपि वैज्ञानिक के भाँति उसने इन चारों को ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत किया। वेदव्यास ने ग्रन्थ का रूप देकर पठन-पाठन और गुरु-शिष्य परंपरा का चलन प्रस्तुत किया, जो आज भी निरंतर चल रहा है।

निसंदेह वह युग परम्पराओं का युग था, विज्ञानं का युग था और मानवीय मूल्यों को पतन की ओर लेकर जाने की शुरुआत वाला युग था। आज के युग की भाँति हर एक वस्तु को रेखांकित कर दिया गया, यहाँ तक कि इस पृथ्वी को भी। रोमन सभ्यता को कुछ लोग प्रथम

विश्व मानचित्र बनाने का श्रेय देते हैं, तो कुछ लोग कहते हैं पहला विश्व का मानचित्र नार्वे के वैकिंग्स की देन है। पुर्तगाली और फ्रेंच लोग भी इसका श्रेय लेने से नहीं चूकते। पर महाभारत के अध्ययन से हैरानीजनक तथ्य निकलके सामने आए हैं। भीष्म पर्व में एक श्लोक आता है।

सुदर्शनं प्रवक्ष्यामि द्वीपं तु कुरुनन्दनं ।

परिमण्डलो महाराज द्वीपोंऽसौ चक्रसंस्थित: ।।

यथा हि पुरुष : पश्येददार्शे मुखमात्मन: ।

एवं सुदार्शंद्वीपो दृश्यतो चन्द्रमंडले ।।

द्विरंशे पिपलस्तत्र द्विरंशे च शशो महान । (*महाभारत* भीष्मपर्वणि 2555-2556)

अर्थात : हे कुरुनन्दन ! सुदर्शन नामक द्वीप चक्र की भांति गोलाकार स्थित है। जैसे पुरुष दर्पण में अपना मुख देखता है। उसी प्रकार यह द्वीप चन्द्रमंडल में दिखायी पड़ता है। इसके दो अंशो में पीपल के पत्ते और दो अंशो में महान शश (खरगोश) दिखायी पड़ता है। निम्नचित्र में वैसा दिखाया गया है।

एक खरगोश और दो पत्तो का चित्र

चित्र को उल्टा करने पर बना पृथ्वी का मानचित्र

(प्रतीकात्मक चित्र)

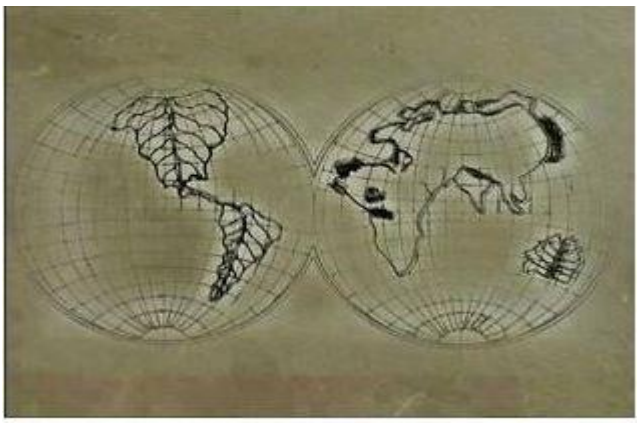

उपरोक्त मानचित्र ग्लोब में

यानि अगर महाभारत के इस श्लोक को आधार माना जाए, तो हजारों वर्ष पूर्व ही भारत की धरती पर वेदव्यास द्वारा सौर मंडल की पृथ्वी का प्रथम मानचित् तैयार कर दिया गया था। उसका व्यक्तित्व कैसा रहा होगा ? यह सब बातें वेदव्यास स्वयं ही उसका व्याख्यान कर देती है। निश्चय ही वह भूगोल के बारे में भी बहुत सटीक जानकारी रखते थे, क्योंकि वह अपने जीवन में अधिकतर गमन पर ही रहे।

"जो इसमें नहीं (महाभारत) वह पूरे संसार में कहीं नही"। क्या किसी रचनाकार में इतना विश्वास हो सकता है कि वह इतनी बड़ी बात कह सके ? क्या संपूर्ण विश्व को अक्षरों के माध्यम से एक रचना का आकर देकर एक ग्रन्थ में बाँधा जा सकता है ? क्या कोई रचना सदैव के लिए अपना अस्तित्व शीर्ष पर स्थाई रख सकती है ? वेदव्यास ने कुछ ऐसे ही असंभव कार्यों को संभव कर के सबको चकित कर दिया। कला के माध्यम से भी यह अतिउत्तम ग्रन्थ है। किसी भी रचना में नाटकीय तत्व होना आवश्यक है। जैसे एक तन में प्राण न हो तो वह सिर्फ एक शव होता है, जो कुछ दिन तक रखा जा सकता है। नाटकीय तत्व किसी रचना के लिए उसका प्राण आधार होते हैं, जिसके बिना रचना जीवित नहीं हो सकती। वेदव्यास ने बड़ी कलात्मकता से अपने पात्रों की रचना नाटकीय भरपूर तत्वों से की। मानवीय जीव देवीय ढंग से अवतरित होते हैं। जब कोई किसी बाधा में फँस जाता है, वहाँ वेदव्यास स्वयं उसका मार्गदर्शन करने पहुँच जाता है। नाटकीय ढंग से स्वयं का प्रवेश करवा कर वह अपने पात्रों को निकालता है। इस कथा में केवल एक युग के पात्र नहीं अन्य युगों के पात्रों को भी "महाभारत" की भूमि में लाकर एक दूसरे के समक्ष खड़ा कर दिया। उनके विचारों का टकराव, सिद्धांतों का टकराव और फिर उस टकराव से उत्पन्न होने वाले हालात, जो एक अलग ही वातावरण की उत्पत्ति कर देते है, इस काव्य का और श्रृंगार करते है।

भगवान परशुराम त्रेता युग के पात्र है। उसको भी वेदव्यास ने अपने युग के पात्रों से मिलाकर अपने जैसे बना दिया। यही नहीं त्रेता के गुणों और असूलों का शिक्षा के माध्यम से देवव्रत में प्रवेश करवा दिया, फिर अम्बा को भगवान् परशुराम के पास न्याय मांगने के लिए खड़ा कर दोनों गुरु शिष्यों को युद्ध की परिस्थिति में झोक दिया। ऐसी स्थिति को नाटकीय तत्वों से भरपूर कर उन्होंने अपने पाठको को एक भंवर में डाल दिया, जहाँ से उन्होंने स्वयं बाहर निकलना है। विदुर जैसे सत्यवादी, विचारक, नीतिवादी, सतयुगी पात्र को दुर्योधन के साथ खड़ा कर आम जन को सोचने को मजबूर कर दिया। विदुर को अंतर्मन की सुनामी में डाल कर अन्ततः वनों में भेज कर एक युग का अंत कर दिया। द्रोणाचार्य, कर्ण, भीष्म, शकुनी, पांडव, शिखंडी, अभिमन्यु, धृतराष्ट आदि सब अपने अन्दर एक युद्ध में फंसे हुए है। इस कथा को विभिन्न पात्रों और उनके स्वभाव से चारों युगों की कथा बना दिया। इसलिए आज भी यह आसपास घटित हो रही कथा लगती है। किसी भी वस्तु की ख़ूबसूरती तब उभर कर सामने आती है, जब उसका व्याख्यान उत्तम ढंग से किया जाए। यही नाटकीयता का मुख्य तत्व है। आज भी जब "व्यासपीठ" जब कोई कथाव्यास बैठता है, इस का भरपूर प्रयोग करता है। मुख्य पात्रों से लेकर गौण पात्रों तक को वेदव्यास ने अपनी नजरो से विलुप्त नहीं किया। उन सबको शीर्ष पर बिठा कर रखा है। उनका व्याख्यान सूक्षम बुद्धि से किया है। उस समय में प्रचलित सब कलाओं को, जीवनचर्या को भी इतनी सरलता से प्रस्तुत कर दिया कि इसको समझने के लिए कुछ भी समझने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

भारत में कथा कहानियाँ हर घर में सुनाई जाती रही है। इसका क्या कारण है ? समस्त पुराणों, ग्रंथो, स्मृतियों में अनंत कथा कहानियाँ है। यह भारतीय शिक्षा पद्धति का मुख्य अंग रही है। जब भी कोई बालक किसी आश्रम या गुरुकुल में जाता, तब उसको इन समस्त ग्रंथों का रटन करवाया जाता था। उनका अध्ययन करवाया जाता था। भारतीय शिक्षा पद्धति वैज्ञानिक ढंग से बनाई गई थी। छोटी छोटी सुन्दर कहानियों के माध्यम से विभिन्न विचारो को प्रस्तुत किया गया। कई शिक्षा वैज्ञानिक ऐसा भी मानते हैं, शिक्षा को खेल, संगीत, कहानी और रंगमंच के माध्यम से दिया जाना चाहिए।

चेनी शेल्डान भी कहते हैं, "नाटकीय भावाभिव्यक्ति के पीछे भी, उसे आप दैवी और मानवीय कहें अथवा धार्मिक और सामाजिक कहें, अथवा आध्यात्मिक और मात्र मनोरंजनकारी

कहें- भावनाओं का द्वन्द्वात्मक स्वभाव ही छिपा होता है।" (*रंगमंच – नाटक अभिनय और मंच शिल्प* 1)

यह ढंग सबसे उत्तम है। पुरातन भारतीय शिक्षा पद्धति (लार्ड मैकाले की प्रणाली से पहले) को देखें तो यही ढंग है। जिसके माध्यम से छात्रो को पढाया जाता है, पहले यही शिक्षा दी जाती थी। विज्ञानं के पहलुओं को कथा कहानी के माध्यम से समझाया जाता था। वेदव्यास ने भी इस विधा का प्रयोग किया। सब प्रकार की विज्ञानं और अन्य विषयों को महाभारत में प्रस्तुत कर दिया। दुर्भाग्यवश इस विधा को आधुनिक युग में जारी नहीं रख पाए, पढे लिखे गुलामो की खेप पैदा करने के लिए एक नई शिक्षा पद्धति थोप दी गई। पुरातन ग्रंथो में छिपे विज्ञानं को छोड़ दिया, सिर्फ कहानियों को आगे बढ़ा दिया, उन पर अंध श्रद्धा, धर्म और चमत्कारिक शक्तियों की परत चढ़ा दी। इसका जो परिणाम हुआ वह सब के समक्ष है। शिक्षा की ओर मुख्य तौर पर ध्यान देने के लिए मानो वेदव्यास ने विद्वानों की मण्डली तैयार की थी। जो उसके देहावसान के बाद भी उसके पद चिन्हों पर चलते हुए कार्य करती रही।

बाल्य काल में उसकी बातों को सुनकर पिता ऋषि पराशर और माँ सत्यवती आश्चर्य चकित रह जाते थे। हर बात को समझ कर उसकी तह तक जाना सिर्फ उसकी ही नहीं उसके शिष्यों की भी खूबी थी। महाभारत इस बात का जीता जागता सबूत है। हर मुश्किल समय में वह अपनी माँ का साथ देने उनके पास आते हैं। जब उनके सौतेले भाई देवव्रत नियोग प्रथा का पालन करने से मना कर देता है, तब वह अपनी माता की आज्ञा से उपस्थित हो जाते है। उन्होने अपनी माँ को वचन दिया था, जब भी वह याद करेंगी वह उपस्थित हो जाया करेंगे। यही नहीं, सत्यवती भी उसके आश्रम में जाती रहती थी। जब भी पांडव किसी मुश्किल में फंस जाते, वह जिस भी भू-भाग में होते तो वेदव्यास उनका मार्गदर्शन करने के लिए पहुँच जाते थे। ।

किसी व्यक्ति का अक्स उसकी रचना में स्पष्ट दिखाई देता है। महाभारत को देख सुन और पढ़ कर उनके चरित्र का साफ़ अंदाज़ा हो जाता है। श्रीमद भगवद गीता की रचना उनका चरित्र साफ़ दिखाती है। वह साक्षात् भगवान कहे जाने वाले श्री कृष्ण के मन को भी जानता और मानता था। अपने वंश की कथा अपने जन्म से पहले से लेकर भरतो के युद्ध के बाद तक की कथा को इस प्रकार वर्णन करके यह दिखाया, कि यह कहानी किसी एक युद्ध की नहीं बल्कि अनंत युगों की कथा है। महाभारत केवल धार्मिक या साहित्य ग्रन्थ ही नहीं बल्कि संपूर्ण शास्त्रों के रूप में जाना जाता है। उस समय विज्ञानं जो अपनी चरम सीमा पर था, उसको भी

कला के माध्यम से प्रस्तुत किया। एक रचनाकार समस्त विश्व को प्यार करता है। इस रचना को जहां आस्तिक लोगों ने इसे अपने एक धर्म ग्रन्थ के रूप में देखा, "जहाँ धर्म है वही जय है", । वहीं दूसरी उर्जा वाले लोगों ने इससे एक साहित्य ग्रन्थ और विज्ञानं की बात करने वाला रूप निकाला। इस खूबी को जिस प्रकार वेदव्यास ने भुनाया है वह भी रौचक है।

व्यास एक व्यक्ति था या पदवी ? : क्या इतनी सारी रचनाएं एक व्यक्ति ने ही रचित की ? क्या वेदव्यास एक व्यक्ति था या पदवी ? वेदव्यास ! इसका एक और समानार्थक शब्द है संपादक। अनेको पुराने ऐसे ग्रंथकार हुए है, जिनका सम्मान इस उपाधि से किया गया है। विशेषकर वेदव्यास की उपाधि केवल उन को दी गई जिन्होंने वेदों को व्यवस्थित रूप प्रदान करने में अपना विशेष योगदान दिया। जो चिरंजीवी होने के कारण आश्वत कहलाते है। महाभारत के संकलनकर्ता, वेदान्तदर्शन के स्थापनकर्ता और पुराणों के रचनाकारों को भी यह नाम दिया गया है।

भारतीय परम्परा को देखें और इनका अध्ययन करें तो सब वेदव्यास को एक व्यक्ति ही मानते है। जो सनातन धर्म के ऋषि पराशर पुत्र श्री कृष्ण द्वैपायन हुए हैं। पुराणों में अठारह प्रकार के व्यासों का उलेख है। जो ब्रह्मा अथवा भगवान् विष्णु के अवतार कहलाते है। इस धरा पर वेदों की व्याख्या और उनका प्रचार करने के लिए अवतीरण होते हैं। श्री कृष्ण द्वैपायन (वेदव्यास) को भगवान विष्णु का 18वां अवतार माना जाता है। कहा जाता है कि सबसे पहले द्वापर युग में स्वयं ब्रह्मा जी वेदव्यास हुए। दूसरे प्रजापति, तीसरे शुक्राचार्य, चौथे ब्रहस्पति वेदव्यास हुए। इस प्रकार सूर्य, मृत्यु, इंद्र, धनंजय, श्री कृष्ण द्वैपायन और आशवस्थामा आदि 28 वेदव्यास हुए हैं।

किसी भी व्यक्ति के लिए इतने सारे साहित्य को रचना और इस प्रकार से लिखना कि वह चिरंजीव अवस्था तक अमर रहे। जिसको सब रचनाओं के शीर्ष पर बिराजमान कर दिया जाए, कदाचित संभव नहीं लगता, वेदव्यास ने ऐसा कार्य कर के एक कीर्तिमान स्थापित कर दिया।

आधुनिक युग में मनुष्य की औसतन आयु 65 वर्ष तक माने तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। मनुष्य की आयु उसके खान-पान, वातावरण पर भी बहुत निर्भर करती है। थोडा पीछे चला जाए, अपने बजुर्गों को देखें तो उनकी आयु 90 वर्षों से ऊपर थी। लिखित इतिहास को अध्ययन करा जाए, तो एक अनुमान निकलता है कि वेदव्यास की आयु 250 वर्ष से ऊपर होगी। भारत में अधिकांश लोग यही मानते हैं, वेदव्यास एक ही व्यक्ति था। इसको भी मन की

प्रयोगशाला में परखा जाना चाहिए। जिस प्रकार आज के आधुनिक युग में शिक्षा के लिए बहुत बड़े बड़े विश्वविध्यालय का निर्माण हुआ है। द्वापर युग में भी ऐसे विश्वविध्यालय थे, जिनमें बच्चों को हर प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। ऐसे गुरुकुलों और आश्रमों का परिचय महाभारत में बहुत जगह पर मिल जाता है। जैसे भीष्म पितामा को भगवान परशुराम के आश्रम में शिक्षा मिली, कुंती को भी उसकी शिक्षा के लिए आश्रम भेजा गया, कौरव और पांडव गुरु द्रोण के गुरुकुल में शिक्षा हेतु गए, श्री कृष्ण -बलराम और सुदामा अपनी उच्य शिक्षा के लिए महर्षि सांदीपनी के आश्रम (उज्जैन) में गए। यह शिक्षण संस्थान परिपूर्ण थे।

आज कोई भी छात्र किसी विख्यात विश्वविध्यालय में पढता है। तो उसका परिचय उसका नाम उसके विश्वविध्यालय पर पड़ जाता है। अब यह भी हो सकता है, वेदव्यास के जितने भी शिष्य उसके आश्रम या गुर्कुल से निकलें हों उन्हें वेदव्यास के नाम से जाना जाता हो ! भारत में जाति वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वेश्य, शुद्र की व्यवस्था है। हर व्यक्ति अपने नाम के पीछे अपना गोत्र लगाता है। ऐसा भी हो सकता है, वेदव्यास के वंशजों ने जो भी साहित्य उनको विरासत में मिला हो उन्होंने उसमें सुधार करते हुए दुबारा रचित किया हो। यह भी माना जा सकता है, उनके बाद जो साहित्य रचा गया वह उसी शैली में लिखा गया, जिस तरह वेदव्यास रचते थे, रचे हुए साहित्य का रूप देख कर यह मान लिया हो कि यह सभी साहित्य वेदव्यास ने रचा हो। महाभारत और विभिन्न ग्रंथो में वेदव्यास और उनके शिष्यों का परिचय मिलता है। उसकी अपनी एक विद्वान शिष्यों की मण्डली थी, जो विभिन्न ग्रंथो को लेकर कार्य करती थी।

सूर्यकांत बाली इस संदर्भ में बात करते कहते हैं, "भाषा के साथ जिनका परिचय सामान्य है, वह जानते हैं व्याकरण और भाषा-विज्ञान में एक शब्द है : समास, जिसका अर्थ है-संक्षेप, समास से उलटा एक शब्द है वेदव्यास, और इसका अर्थ है विस्तार, विशेषणवाची बन जाने पर वेदव्यास का अर्थ हो जाता है, वह व्यक्ति, जिसने विस्तार कर दिया हो। आज भी हमारे देश में कथा वाचकों की गद्दी को वेदव्यास गद्दी कहा जाता है, क्योंकि कथावाचक वह लोग होते हैं जो उदाहरण और दृष्टांत देकर, कई तरह की कथाएँ-उपकथाएँ सुनाकर खूब फैला देते हैं।"(*महाभारत का धर्मसंकट* 102)

इन सब तर्कों को भी अंतर्मन में लेकर चल सकते हैं। जिस प्रकार मंच पर किसी नाटक की प्रस्तुति देखते हैं, तो एक कलाकारों का समूह उसका निर्माण करता है। जिसमें निर्माता, निर्देशक, अदाकार, मंच-निर्माणकर्ता, संगीतज्ञ सब लोग होते हैं। इन सब में निर्देशक

का अहम् स्थान होता है। कार्य तो सब कर रहे होते है, उनको आदेश निर्देशक देता है। किस प्रकार का अभिनय वह प्रस्तुति में चाहता है। किस प्रकार का संगीत उसको चाहिए। वह दर्शक वर्ग को क्या देना चाहता है। वेदव्यास की कार्य प्रणाली को देखने पर तो ऐसा ही ज्ञात होता है, उसके पास ऐसी ही एक विद्वानों की टोली रही होगी। जो उसके विचारों से मेंल खाती होगी, तभी तो गुरु-शिष्य की परम्परा उसके नाम पर चली थी।

आदि काल में साहित्य को लिख कर संगृहत करने की जगह कंठस्त करने का प्रचलन था। एक पीड़ी अपनी दूसरी पीड़ी को कंठस्त करा देती थी। वेदों की रचना के बाद भी संहिता के रूप में वह एक के बाद दूसरी पीड़ी तक पहुँचते रहे। इन संहितायों को वेदव्यास ने अपने शिष्यों के माध्यम से लिखित रूप में एक ग्रन्थ के रूप में अवतरित कर दिया। अपने शिष्य पैल को ऋग्वेद, वैशम्पायन को यजुर्वेद, जैमिनी को सामवेद और सुमंतु को अथर्ववेद पर कार्य करने को कहा। इसका परिणाम यह हुआ की वेदों का एक शब्द तो क्या एक मात्रा भी अपने स्थान से प्रास्थानित नहीं हुई। यही ज्ञान परम्परा भारत देश की रगों में समां कर इसका अभिन्य अंग बन गई।

वेदों के साथ-साथ पुराणों को भी हमारी संस्कृति का एक स्तम्भ माना जाता है। पुराणों को लिखने की शुरआत वेदव्यास के पिता ऋषि पराशर ने की थी। 18 पुराणों की रचना वेदव्यास ने की थी। इस बात पर भी कुछ मस्तिष्कों में संदेह आ सकता है। इसका भी निवारण करना अनिवार्य है। कथाओं के माध्यम से पता चलता है, भागवत महापुराण का रचयिता वेदव्यास था। उसके पुत्र शुकदेव ने इस पुराण को राजा परीक्षित को सुनाया था। इस धारणा और दूसरे तर्कों के आधार पर यह कहा जाता है कि सभी पुराणों की रचना वेदव्यास ने की थी। तारीख का तो बताना मुश्किल है, इतिहास को जांचा जाए और इसके घटनाक्रम को देखें तो तथ्य सामने आता है। महाभारत के पास 1500 वर्ष बाद नैमिषरण्य में विद्वानों का एक बहुत बड़ा समुदाय एक समारोह में इकठा हुआ था। इस समांरोह के आयोजक शौनक मुनि थे (यह भी हो सकता है कि वह सभी शौनक मुनि के वंशज होंगे जो समस्त भारत वर्ष में फैले हुए होंगे)। इस समारोह के मुख्य अतिथि सूतजी थे। उनकी हाजरी में शौनक ऋषि के नेतृत्व में बहुत से सवाल जवाब हुए। यह समारोह काफी लम्बे अंतराल तक चला। इस समारोह में जो संवाद हुए और उनमें से जो कुछ उभर कर आया, उसी को बाद में अलग-अलग पुराणों में लिपिबद्ध कर दिया गया। बाद में काफी वर्षो के अन्तराल में उसमें कुछ-कुछ जुड़ता भी रहा

होगा। यहाँ प्रश्न पैदा होता है, कि अगर पुराणों की रचना इस प्रक्रिया से हुई है, तो इनका वेदव्यास से क्या सम्बन्ध है ? महाभारत और भागवत पुराण जिस शैली पर आधारित हैं, जिस तरह से उनका सूत्रपात हुआ है, उसी प्रकार बाकी अन्य पुराण उसी शेली पर आधारित है। इसलिए वेदव्यास के प्रभाव को वेदव्यास की रचना का रूप मान लिया गया हो। दूसरा कारण यह भी हो सकता है, भारत देश में साहित्य परम्परा में एक पुराण संहिता के नाम से प्रचलित ग्रन्थ की रचना का श्रेय भी वेदव्यास को दिया जाता है।

संभावित है सभी पुराणों की रचना उसी शैली से प्रभावित है, तो सभी पुराणों के साथ वेदव्यास का नाम जोड़ दिया जाना अस्वाभाविक नहीं लगता। हाँ जो भी हो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में वेदव्यास का इनमें हस्तक्षेप जरुर है। वेद व्यास को लेकर विभिन्न विद्वानों अथवा आम जनों के मत विभिन्न हो सकते हैं। इस संदर्भ में उनके तर्क और मत भी बहुत सारे हो सकते हैं , जिनकी चर्चा भी ऊपर की गई है । यह विषय एक अलग खोज का विषय बन सकता है। लेकिन शोध करता यहाँ वेद व्यास उस व्यक्ति को मान कर चल रहा है जो सत्यवती और पाराशर का पुत्र है।

वेदव्यास : चरित्र और रचनात्मक कार्य

इस दुनिया की हर चीज़ सपनों में से ही निकली है। वह अस्तित्व हो या यह ब्रह्माण्ड। अगर किसी ने उड़ने का सपना देखा तो विमानों के युग में पहुंचे। किसी ने सपना देखा होगा दूर आकाश में टूटती बनती आकाश गंगाओं को पास से देखने का, तभी आज मंगल गृह पर एक नई धरा की खोज में पहुँच गए हैं। रंगमंच वह कला हैं जिसमें सपने देखे जाते है फिर लिखे जाते हैं, अंत में उन सपनो को मंच की धरा पर रंगकर्मी यथार्थ में लाने का प्रयास करते हैं। एक रचयिता सबसे पहले किसी भी विचार का सपना ही देखता है, फिर उसे अपनी कल्पना के माध्यम से लिखता है। कल्पना साहित्य का अति महत्वपूर्ण तत्व है। साहित्य काव्य कल्पना से ही प्रेरित होता है। यह यथार्थ के साथ मिलकर नई रचना को जन्म देता है। इसे कला और वस्तु का संयोजक तत्व भी कह ले तो अतकथनी नहीं होगी। वेदव्यास ने भी एक विशाल रचना का सपना देखा फिर यथार्थ और कल्पना का सहारा लेकर उसे महाकाव्य का रूप देकर पूरा भी किया।

श्री सुखमय भट्टाचार्य बताते है, "5000 वर्ष पूर्व की घटना को लिखने का कार्य वेद व्यास ने श्री गणेश से करवाया और इसका प्रथम प्रचार पंजाब के तक्षिला आज कल के रावलपिंडी-पाकिस्तानी,पंजाब में करवाया ।" (*महाभारत कालीन समाज* 8)

पाश्चात्य विद्वान ड्यूनल्ड स्ट्यूवर्ट कहते है, "An uncommon degree of imagination constitutes poetical genius." (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 168)

आरंभ से इति तक के सफ़र और इस बीच घटित होने वाली घटनाएं रोचकता और उसकी पूर्णता को वजन देते हैं। यह घटनाएं ही नाटकीयता का रूप हैं जो सारी कथा को नाटक के रूप में व्यक्त करती हैं। जितने ज्यादा मोड़, कठिनाइयाँ, उतार-चढ़ाव होंगे सफ़र उतना ही मज़ेदार होगा। इन सब को रंगमंचीय भाषा में नाटकीयता भी कहते हैं। जो किसी भी कुशल रचना और उसके रचयिता की पहचान के रूप में भी जाने जाते हैं। महाभारत की विशेषता है कि यहाँ हर पर्व, कथा, पात्र सब में लबालब नाटकीयता भरी हुई है। इतने कालों से चलती आ रही इस कथा ने जहाँ जो अच्छा लगा उसका अपने अंदर समावेश करके स्वयं को समृद्ध कर लिया। यूरोप, एशिया, सब जगह यह एक माणिक की भाँति है, वह लोग भी इसे अपनी कथा मानकर खेलते हैं। इतने देशों और भाषाओं में इसे खेले जाने का कारण भी यही नाटकीयता और सुंदरता है।

आज महाभारत को एक धर्म ग्रंथ के रूप में अधिक प्रसिद्धि मिली है, इसका पाठ किया जाता है और इसके पात्रों की भगवान अथवा अवतार के रूपों में पुजा होती है।

डॉ जगदीश दीक्षित दत्त लिखते हैं कि जार्ज बर्नड्शा कहते हैं कि, "नाटक धार्मिक प्रवचन के समान होते हैं, इनमें उपदेश दिया जाता है और एक उदेश्य छिपा रहता है। अनेक देश (चीन, जापान, इंग्लैंड आदि) में प्रारम्भिक नाटक धार्मिक कथावस्तु पर आधारित हैं। इंग्लैंड के मिस्त्री और मिरेकल नाटक धर्म-प्रचार से संबन्धित है। शा महोदय के आधुनिक जीवन में नाट्यशाला का वही स्थान स्वीकार किया है जो एक समय चर्च का था ।" (*भास की भाषा संबंधी तथा नाटकीय विशेषताएँ* 143)

रचनाकार अपनी बात कहने के लिए पात्रों की सुष्टि करते हैं। पात्र किसी भी रचना का मुख्य आधार होते हैं। वह केवल रचनाकार, निर्माता, निर्देशक या अभिनेता के अंतर्मन की ही नहीं, सबके मन की बात करते हैं। समाज की, आम जन की, जिस वजह से वह सबके मन के पास हो जाते हैं। यहीं नहीं बल्कि वह उनका एक अंग ही बन जाते है जिस के बिना वह स्वयं को दिव्यांग महसूस करते हैं। पात्र अपने मुख से सबकी बात करते हैं। जीवन की तरह इस कथा के पात्र भी बहुत उतार चढ़ाव से गुज़रे हैं, हिमालय की भांति विशाल कद लेकर अडिग हैं। एक भूकंप उसकी नीव में चल रहा है। वह कब, क्या, और किस ओर करवट लेगा इसका कोई पता नहीं है। यह पात्र हिमालय यूँ ही नहीं बने इन्होने भी धरातल के बहुत से रूप देखें हैं। कभी जमीन में विलुप्त हुए, तो कभी एक दम उभर कर विशालकाय हो गए, कभी विशाल समंदर की तरह असंख्य भावों को अपने अंदर समा लिया तो कभी कच्छ के रण की भाँति सूख कर अपना रूप बदल दिया। जिसमें छुपाने के लिए कुछ नहीं है।

बुद्धदेव बसु का कहना है, "महाभारत में कल्पना की इतनी मणियाँ बिखरी हुई है और वे उन घटनाओं में छिपी पड़ी है जिन्हे समान्यत शिक्षप्रद मानते हैं।" (*महाभारत की कथा* 28)

किसी भी पात्र की रचना यूँ ही नहीं होती और ना ही की जाती है। जब तक पानी की सतह पर नहीं जाते, किसी भी जल स्रोत की गहराई का अनुमान नहीं लगा सकते। न ही ज्ञात कर सकते हैं उसमें मोती भरे हैं या कंकर। यह ज्ञात करने के लिए एक कुशल गोताखोर होना आवश्यक है। कथा के प्रारंभ में उसने एक बात कही है "जो इसमें नहीं ! वह पूरे संसार में कहीं नहीं"। इस बात को उसने किस आधार पर कहा ? क्यों कहा ? किस लिए कहा ? इस

बात का ज्ञान तब होता है, जब इस महाकाव्य को पढ़ने उपरांत इसके मोड़ और पन्ने स्वयं पाठक या श्रोता गणों के मन में खुलते जाएँगे ।

रामधारी सिंह दिनकर कहते हैं, "महाकाव्य केवल भावनाओं पर नहीं लिखे जाते। उनके भीतर विचार भी आते हैं और वे भावनाओं के साथ-साथ चलते हैं। महाकाव्य प्रगीतों के समुच्चय का नाम नहीं है। महाकाव्य मे वर्णन भी होता है, नाटकीयता भी होती है और प्रगीत भी होते हैं। किन्तु, वे अलग से आकर एकत्र नहीं हो जाते। वे एक ही महा कल्पना के अधीन, अपने-अपने उचित स्थान पर, जन्म लेते हैं और उन सबका उद्देश्य उस एक ध्येय की सेवा करना होता है, जो कवि का मुख्य ध्येय है।" (*कविता और शुद्ध कविता* 144/45)

कथा कहानीयां भारतीय जीवन का अहम् अंग रही है। कभी दादी-नानी और कभी गाँव की चौपाल या फिर कभी धार्मिक स्थल पर यह सुनने को मिल जाती है, जो आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती रहती हैं। इस विशाल महाभारत कथा की असंख्य छोटी छोटी कहानियां भारतीय जीवन में फैली हुई हैं। भारत भूमि पर कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जिसने इसके बारे में सुना, पढ़ा या देखा न हो। 80 के दशक में बी आर चोपड़ा ने इसको नाटक के रूप में प्रसारित किया। जिसने नए आयाम स्थापित किये। फिर उसके बाद आज 21वीं सदी में आधुनिक तकनीक से इस कथा को स्टार प्लस नामक निजी टीवी चेनल ने आधुनिक युवा पीढ़ी के लिए प्रसारित किया और इस कथा को आधुनिक पीढ़ी में लोकप्रिय बनाने के कार्य में वह सफल भी रहे।

किसी बात का व्याख्यान किसी भी रूप में वह ही कर सकता है जो उस बात का साक्षी रहा हो, देखा हो। इस सब को लिखित रूप में सब प्रकार के रूपों से श्रृंगारित करने के कार्य के लिए एक कुशल रचनाकार की आवश्यकता होती है। जो सत्य, यथार्थ और कल्पना के माध्यम से रचना को रचित करता है। भारत की भूमि पर अनेकों ग्रन्थ, वेद, पुराण, उपनिषद आदिक की रचना की गई। प्रथम पुराण जिसको विष्णु पुराण के नाम से जानते है उस के रचनाकार ऋषि पराशर थे। एक दिन तीर्थ यात्रा के लिए वो यमुना नदी के तट पर भ्रमण कर रहे थे, तब मतस्यगंधा वहां पिता के साथ उसकी सेवा के लिए नाव चलाने आई हुई थी। ऋषि पराशर ने उसके रूप पे मोहित होकर उस से संगम करने की इच्छा व्यक्त की और कहा
"संगमं भम कल्याणी कुरुष्वेत्यभ्याभाषात" (महाभारत,आदिपर्वणि 176,72)

अर्थात : हे कल्याणी ! मेरे साथ संगम करो..... उसकी इस इच्छा को जान कर मत्स्यगंधा कुछ इतरा सा गई। उसने डर के कहा यह कैसे हो सकता है..... ? आप एक ब्राह्मण..... हो और मैं.... एक मतस्य कन्या। वह कुछ क्षण शांत रही, पश्चात कुछ सोच कर उसने कहा ठीक है.... मेरी कुछ शर्ते हैं, जो आपको माननी पड़ेगी। आप उन्हें पूर्ण करोगे तो मैं अपना आप आपको सौंपने के लिए तैयार हूँ। उसकी बात सुनके ऋषि पराशर ने गहन भाव से देखा और हाँ की मुद्रा में अपना सर हिला दिया। इस को देख कर मतस्यगंधा के कहां "मेरी पहली शर्त है कि हमारे मिलन को कोई भी देख न सके, दूसरी शर्त है कि इस से मेरा कौमार्य भंग न हो, तीसरी शर्त है कि मेरी जो भी संतान होगी, वह बहुत गुणी और विद्वान और चिरंजीव हो आप की तरह"। उसका इस मछुआरों से कोई सम्बन्ध न हो। इन सब शर्तों को सुन कर ऋषि पराशर ने अपनी शक्ति से नदी के तट में एक टापू का निर्माण कर दिया जो चारों तरफ से बादलो से घिरा हुआ था। इसी टापू पर उन दोनों का मिलन हुआ। तत्पश्चात ऋषि पराशर ने उसे एक वरदान दिया कि उसके तन से आने वाली दुर्गन्ध एक दिव्य गंध में परिवर्तित हो जाएगी, जो सबको मोहित और आकर्षित करने वाली होगी। सत्यवती का कौमार्य भी स्थापित रहा। सुनने में यह कुछ अटपटा और असंभव सा लगे पर यही तो नाटकीयता युक्त तत्व हैं जो इस कथा में रौचकता पैदा करता है।

इस संदर्भ मे डॉ कृष्ण देव शर्मा कहना है, "महाकाव्य में प्रयुक्त कथानक के लिए अवशयक है कि उसका क्रम पूर्व से संबंध हो, उसमें संभावना तथा कौतूहल आदि गुण हो। उसमें अतिप्रकृति तत्वों का भी समावेश होता है। अतः असंभव और अविश्वसनीय बातों के वर्णन भी पाठक के कौतूहलवर्धन में सहायक होता है।" (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 210)

यहाँ यह सब शर्ते और मतस्यगंधा का ऋषि पराशर से मिलन बहुत सी नाटकीय संभावनाएं तथा दर्शक मन मे कौतूहल पैदा करने के लिए पर्याप्त भी है। इनके मिलने से ही इस कथा के रचनाकर का जन्म होने वाला था। यह माना जाता है कि आज से ३००० वर्ष ई० पु आषाड पूर्णिमा को (इस तिथि को लेकर विभिन्न विद्वानों में मतभेद हैं कुछ इसको ५००० वर्ष पूर्व मानते है) मतस्यगंधा ने(हिन्दू मान्यताओं के अनुसार ऐसा माना जाता है अखंड भारत में दमौली नाम के एक गाँव आधुनिक नेपाल में तान्हू जिले में पड़ता है, स्थान की सत्यता यहाँ चर्चा का विषय नहीं है) में एक पुत्र वेदव्यास को जन्म दिया। जिसको श्याम वर्ण के कारण श्री कृष्ण द्वेपायण भी जाना गया। अपने पिता की भाँति बहुत ही विद्वान था। जब वह छे वर्ष का हुआ, तो

उसने वन गमन की इच्छा जताई। उसकी माँ सत्यवती ने अपनी असहमति जताई। उस बालक ने अपनी माँ को बहुत शालीनता से उत्तर दिया "माँ जीवन में जब भी कभी आपको मेरी आवश्यकता पड़ेगी आप मुझे याद करना मैं तुम्हारे पास उपस्थित हो जाऊँगा" इतना कह कर वह वन की और प्रस्थान कर गया।

अधिकांश लोग वेदव्यास को केवल महाभारत के रचनाकार के रूप में जानते हैं । उसका परिचय यहीं तक सीमित नहीं रह जाता। उसकी आयु ढाई सौ से लेकर तीन सौ वर्ष तक रही होगी। इस बात का अनुमान इस बात से लगा सकते हैं, कि उसने महाराज शांतनु, विचित्रवीर्य, पंडू और धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, अभिमन्यु, परीक्षित, जनमेजय, शतानीक तक का काल देखा। कुल मिलाकर भरतों की आठ पीड़ियों का साक्षात्कार किया। उस समय दीर्घ आयु जीने वालों की एक पीढ़ी की औसतन उम्र ३० साल मान कर चलें तो वेदव्यास की औसतन उम्र इतनी ही निकलती है। इतनी लम्बी आयु का उसने जीवन यापन किया। श्याम वर्ण के कारण उसको श्री कृष्ण नाम मिला। संयोगवश उसी काल में देवकीनंदन श्री कृष्ण ने भी अवतार लिया। उन दोनों के नाम में एक सी सामान्यता थी। उसने अलग पहचान के लिए अपना नाम कृष्ण द्वैपायन प्रचारित किया अर्थात वह कृष्ण जिसका जन्म एक द्वीप पर हुआ था।

गैरोला वाचस्पति भी लिखते हैं, "इन्हीं कृष्ण-द्वैपायन वेदव्यास का एक नाम, जिनको आचार्या शंकर ने पुरायुगीन वेदव्यास का अवतार माना है, बादरायण भी था।"(*संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास* 177)

जब वेदव्यास अपना घर बार त्याग कर तपोवन के लिए अग्रसर हो गए। तब वह "बदरी आश्रम" गए। जहां उसने अध्यात्मिक गहन अध्ययन किया। जिसको ब्रह्म ज्ञान कहा जाता है। चारों आश्रमों का ज्ञान उसने इसी आश्रम में प्राप्त किया था। हिमालय के आँचल से निकलती सरस्वती और अलकनंदा के संगम पर यह आश्रम था। आज के समय में उसी भूगोल को देखा जाए तो मान्यता है यह वही स्थान है, जहाँ पर भारतीय तीर्थ बदरीनाथ धाम है। आज उसे बद्रीनाथ नाम से भी जाना जाता है (इसकी वास्तविकता अथवा अवास्तविकता यहाँ चर्चा का विषय नहीं है)। भारत वर्ष में सदैव से ही ऋषि मुनियों ने प्रकृति की गोद में बैठ कर अपनी साधना और कार्य किए हैं।

सरस्वती नदी की किनारे अनेकों आश्रम थे। स्वयं का ज्ञान, ब्रह्म का ज्ञान, सत्य की खोज, कहते हैं इन सब के उत्तर वेदव्यास ने यहाँ पर उस बदरी आश्रम में पाए शायद इसलिए

उनका का एक नाम बादरायण मुनि भी पड़ा था। उसके तप और भावना के वश उन्हें दिव्य दृष्टि की प्राप्ति हुई थी। यह दिव्यदृष्टि उसने महाभारत के युद्ध के समय में युधिष्ठिर को देनी चाही थी। वह इस से डर गया (शायद वह अन्तःमन से तैयार नहीं होगा) फिर उसने यह दृष्टि संजय को दे दी थी। अध्यात्म कहता है की यह दिव्य दृष्टि जिसके पास होती है, किसी भी कार्य को करने में सक्षम होता है। इसमें इंसान स्वयं का साक्षात्कार करता है। यह दृष्टि श्री कृष्ण के पास भी थी। कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन जब सब हथियार डाल कर बैठ गया, तब श्री कृष्ण ने उसे वह दृष्टि प्रदान की, जिस के पश्चात वह धर्म के लिए शस्त्र लेकर उठ खड़ा हुआ।

लिखने का गुण और विद्वता उसे अपने खून में मिली थी। प्रश्न यह है कि अगर वह श्री कृष्ण द्वैपायन से व्यास बन गया, तो उसने किस चीज का विस्तार किया ? वणों में उसने साहित्य लेखन का कार्य प्रारंभ कर दिया। उसने पुराणों की रचना कार्य में अपना योगदान दिया जिसको उसके पिता ऋषि पराशर ने प्रारंभ किया था। उसने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अथर्ववेद की रचना की और अपने शिष्यों पैल, जेमिनी, वैशम्पायन, सुमन्तुमुनि की सहायता से इसका प्रचार करवाया। जिस कारण इसको वेदव्यास के नाम से भी जाना गया। अपनी लेखन कला के दम पर उसने अपना परचम सब जगह लहराया। महर्षि वाल्मिक जी के बाद लेखन कला में उसका नाम आता है। दूरदर्शी सोच, कुशलता, आदि सब गुणों से वेदव्यास भरपूर थे। भारतीय सभ्यता के सब गुणों को, व्यवस्था को उसने पन्नो में समेंटना शुरू किया था। भारतीय साहित्य, समाज और संस्कृति पर वेदव्यास का बहुत बड़ा ऋण है। यह श्रुति, स्मृति, जन्मतिथि-व्यास हैं। भारत वर्ष का मुख्य आधार कहे जाने वाले सनातन धर्म और उनके धर्म ग्रन्थ जिन्होंने भारत को जगद्गुरु के सिंहासन पर आसीन दिया था। उनके प्रचार और प्रसार में वेदव्यास का सबसे अमूल्य योगदान था। पुराण अपने व्याख्यता प्रधान तत्व के कारण इतिहास ग्रन्थ भी बन गए है। दर्शन, अध्यातम, आचार-विचार, रीतिनीति, विज्ञानं कला, वस्तुधर्म और धर्म आदिक सब कुछ उनके द्वारा लिखे ग्रंथो से ही अनुप्राणित हैं।

भारत का प्राण आधार कहे जाने वाले वेद जो यहाँ की संस्कृति का आधार है। वेदव्यास ने इनका विभाजन कर युगांतकारी कार्य करके इनसे अथाह ज्ञान दिया है। आज न्यू-यॉर्क में वेदाज़ भवन का निर्माण किया गया है। जहां वेदो पर विचार चर्चा होती है।

भारत देश में जो आधुनिक शिक्षा पद्धति है उसके जन्मदाता लॉर्ड मेंकाले ने 2 फरवरी 1835 को ब्रिटिश संसद में अपने दिए गए भाषण में कहा था कि, “भारत के वेद और अन्य

अध्यात्म ग्रंथ इसकी मजबूत नींव का आधार है और सबसे पहले इनको मिटाना होगा। इसके युवा को वेदों , पुराणो, और स्मृतियों आदि से दूर करदो"। बाद में इनमें खूब मिलावट भी की गई। इस बात का भरपूर इस्तेमाल भी किया गया । मेंक्स्मुलर जैसे लोगों ने अपनी एक टीम के तहत इस कार्य को पूर्ण किया। महाभारत की कथा को एक मिथ्या कह कर प्रचारित किया गया। आज आधुनिक खोजों और प्रमाणो से यह सत्य साबित हो रहा है कि यह युद्ध सत्य में हुआ था (यहाँ किसी विद्वान की विद्वता पर या किसी देश या व्यक्ति के प्रति अपना संदेह नहीं प्रकट कर रहे और न ही इन ग्रंथो के धार्मिक रूप को लेकर चल रहे है, अपितु इन सब को वेदव्यास की उत्तम कार्यशेली पर चर्चा को लेकर चल रहे हैं) वेदों की भाषा कठिन होने के कारण उनमें शोध भी की। इन सबके सार को उसने इकत्रित किया और महाभारत नाम के विशाल महाकाव्य शेली में ग्रन्थ की रचना कर डाली। पुरातन अखंड भारत की आर्य भूमि पंजाब (तक्षिला) में अपने शिष्य वैशमापयन के माध्यम से इसका प्रथम पाठ करवाया।आज भी असंख्य कथाकारों और कलाकारों के माध्यम यह प्रचारित और प्रसारित हो रही है। इसकी लेखन कला और गुणों से प्रभावित होकर विश्व के लोगों ने इसको अपनाया ।

वासुदेव पोद्दार का भी मानना है, "वेदों से लेकर द्वापर युग तक की समग्र एतिहासिक परम्परा का समुचित सम्पादन करने के उद्देश्य से वेदव्यास हिमालय की गहन गुफाओं के भीतर गए, उन्होने इस महान इतिहास को लिखने के लिये शब्द ब्रह्म के भीतर समाधि लगाई। "असम्बद्ध शृंखला" का प्रश्न ही नहीं उठता। ग्रंथ को लिखने के पूर्व आठ हजार श्लोकों की वृहत्काय सिनोप्सिस वेद व्यास ने बनाई है । सम्पूर्ण महाभारत का गठन सुशृंखलित, संलिष्ट और सम्बद्ध है ; किसी भी विश्वकोश से अधिक वर्गीकृत, संलिष्ट एवं वेज्ञानिक है। वेदों के महान विभाजक के लिये 'श्रमसाध्य प्रयत्न' के संदर्भ में सोचना एक अतुलनीय अज्ञता का ही परिचय है।" (*रामायण महाभारत-काल, इतिहास – सिद्धान्त* 63)

जब वेदों की रचना हुई तो यह आम जन की भाषा में नहीं थे। यह उनकी समझ में आते थे। सिर्फ विद्वान और पढे लिखे लोग ही इसको समझ सकते थे। तब वेदव्यास भगवान ब्रह्मा से मिले, कि कोई ऐसा ग्रन्थ बनाया जाए, जिसमें इन सबका सार हो । तब भगवान श्री गणेश जी की सहायता से उसने महाभारत की रचना की। जिन वेदों के कारण वो व्यास से वेदव्यास बना, उन्ही वेदों के सार से रंगमंच की दुनिया का आधार माने जाने वाले ग्रन्थ जिसको

महाभारत की भाँति पंचम वेद की संज्ञा दी गई, नाट्य शस्त्र की रचना हुई। यानी कला का बीज भी वेदव्यास ने बो दिया था।

किसी भी कुशल रचना को जन्म वह ही दे सकता है, जिसने जीवन को जीवन की नज़र से देखा हो। उसकी बारीकियों को छू कर देखा हो। उसकी गहराइयों को अपने अन्तः मन से पार किया हो। जो अपनी मानवीय आँख में वह दिव्य शक्ति रखता हो जो सदियों पहले और सदियों बाद की बातें देख, सुन, सोच और महसूस कर सकता हो। वेदव्यास इस प्रकार के सब गुणों से भरपूर थे। उनके शिष्य उन्हें भगवान विष्णु का कलावतार मानते है। अपने शिष्यों को सम्मान और स्नेह देने में वह कभी नहीं कतराते थे। गुरु-शिष्य की परंम्परा के जन्मदाता इनको ही माना जाता है। आज भी इनके जन्म दिवस को गुरु-पूर्णिमा अथवा वेदव्यास पूर्णिमा या व्यास पूजा दिवस के रूप में मनाया जाता है।

महाभारत काल

किसी भी देश, उसकी संस्कृति, समाज, जीवन मूल्यों को समझना है, तो वहां की व्यवस्था को भी समझना ज़रूरी है। मानवता को सब से श्रेष्ट और मानव को देवों से भी ऊपर माना गया है। इसी कारण महाभारत में उन सभी पहलुओं की वार्ता की गई, जिनका संबंध मानवीय जीवन के साथ है। मानवीय जीवन, विवाह पद्धति, नारी जीवन, विज्ञानं और कला, कर्म संस्कार, चार-आश्रम, शिक्षा, कृषि और पशुपालन। क्या वह युग कला और तकीनीकी युग था ? उस समाज के मानक कैसे थे ? क्या यह अध्यात्मिक आन्दोलन था ? क्या यह युग था जिसने सारी मानवता को विनाश की अग्नि में झोक दिया ? आखिर कैसा था महाभारत का युग ?

शशि थरूर इस युग के बारे मे कहते हैं, "ये दोनों हिन्दू महाकाव्य, 'रामायण' और 'महाभारत', अत्यंत हृदयस्पर्शी और नाटकीय कथाएँ सुनाते हुए नैतिकता, सिद्धांतों और मूल्यों की शिक्षा देते हैं। ये बहुकेंद्रीय और आधारभूत ग्रंथ हैं और सभी प्रमुख सामाजिक विषयों को स्पर्श करते हैं- नैतिक आचरण क्या है ? एक न्यायपूर्ण समाज किस तरह बनता हैं ? राजाओं, मंत्रियों, योद्धायों, स्त्रियाँ और ऋषि-मुनियों के क्या कर्तव्य हैं ? इनमें महान नैतिक द्वंद्वों, सद आचरण की कसौटियों, न्याय और निष्ठा, हिंसा और प्रायश्चित इत्यादि के साथ-साथ सामाजिक और राजनीतिक कृत्यों के आदर्श मापदण्डों का भी विस्तृत चित्रण है।" (*मैं हिन्दू क्यों हूँ* 78)

महाभारत केवल कौरवों और पांडवों की कुल अथवा संघर्ष कथा मात्र नहीं है, बल्कि भारतीय संस्कृति और सनातन धर्म के स्वर्णिम विकास का प्रदर्शक एक महा विश्व कोष है। जिसमें द्वापर कालीन उस समय के धार्मिक, दार्शनिक, नैतिक अथवा एतिहासिक आदर्शों का बेशकीमती अनमोल संग्रह है। इसको भारतीय संस्कृति का मुख्य मार्गदर्शक कहें तो कोई आपत्ति नहीं होगी।

यह वह युद्ध था, जिस से स्वयं को भगवान कहलाने वाले श्री कृष्ण भी विनाशकारी तत्वों से डरते थे। इस महाविनाश को रोकने के लिए वह स्वयं पांडवों के राजदूत बन कर कुरु दरबार में गए और झोली फैलाई। फिर भी वह इस महाविनाश को न रोक पाए और 18 दिन तक चले इस भीषण युद्ध में एक अतिविकसित सभ्यता ख़त्म हो गई। भारत वर्ष अपने शिखर से तीव्र वेग से नीचे आ गया।

महाभारत की संस्कृति कैसी थी ? इसका समाज कैसा था ? मात्र इस की कल्पना से चित आनंद विभोर हो उठता है। सब घटनाओ को बड़ी कुशलता से कला, नाटकीयता, धर्म

और विज्ञानं के लेप के साथ वेदव्यास ने लिपिबद्ध किया है । जिसको पढ़ते ही अंतर्मन में एक कोतुहल पनपने लगता है। सत्यवती का एक मतस्य के गर्भ से जन्म, गंगा का अपने पुत्र को देवलोक ले जाना, भीष्म का इच्छा मृत्यु वरदान, अम्बा की भीष्म को चुनौती, गांधारी का आँखों पर पट्टी बांध कर जीवन यापन करना, कुंती का सूर्य तत्व से कर्ण को जन्म देना, आधुनिक टेस्ट ट्यूब बेबी की तरह कौरवों का कुंभों से जन्म, यज्ञ वेदी से द्रौपदी जन्म, ब्रह्मास्त्र, सुदर्शन-चक्र, धनुर्विद्या आदि अनेको तरह की शिक्षा, लाक्षागृह का निर्माण, माया महल, इन्द्रप्रस्थ महल का निर्माण, भीष्म-विदुर-युधिष्ठिर का धर्म पथ पर चलना, नारियों का त्याग, नीतियों का बनना और टूटना, असंख्य घटनाएँ हैं, जो इसमें रौचकता का समावेश बनाए रखती हैं ।

गीता प्रैस गोरखपुर द्वारा मुद्रित वेदव्यास रचित महाभारत और सुखमय भट्टाचार्य द्वारा लिखित पुष्पा जैन द्वारा हिन्दी में अनुवादित पुस्तक महाभारत कालीन समाज के माध्यम से जो जानकारी मिलती है, उसके बारे में चर्चा करना यहाँ अनिवार्य लगता है। किसी भी समाज की उत्पति के लिए नारी और पुरुष का होना अनिवार्य है। इनके मिलन से ही एक नए मानवीय जीव की उत्पत्ति होती है। महाभारत के काल के सवा सौ साल वर्ष पूर्व सविता ऋषि की पुत्री सूर्य सावित्री ने उस विवाह सूक्त की रचना कर दी, जिसका रूप आज भी भारतीय लोग विवाह संस्कार के रूप में अपना रहे हैं। जब भी कोई लड़का या लड़की भारतीय कानून के हिसाब से बालिग़ हो जाता है, तो वह शादी कर सकता है। हजारो वर्ष पूर्व रचे इस विवाह सूक्त को अब भी भारतीय समाज में अपनाया जाता है। महाभारत काल में विवाह सूक्ति क्या होती होगी ? उस समय कैसे एक दूसरे के साथ बंधन में बंधते होंगे।

विवाह को स्त्री-पुरुष के लिए एक बहुत ही पवित्र संस्कार माना गया, जो उनको एक पवित्र बंधन में बांधता है। गृहस्थ धर्म की सुख शांति और कर्तव्यनिष्ठा इसी पर आधारित है। ब्रह्मचर्य के पालन के बाद जब भी कोई गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है, तो विवाह के बंधन के माध्यम से पति अथवा पत्नी ग्रहण करना उसके लिए आवश्यक है। जो व्यक्ति अपने माता-पिता की अकेली संतान होती है, उसके लिए विवाह अनिवार्य था । साधारण व्यक्ति जो इस बंधन में नहीं बंधता था, उसे कोई ज्यादा अच्छी नज़र से नहीं देखा जाता था। जो ब्रह्मचर्य का पालन करते थे, उन्हें श्रद्धा की नज़र से देखा जाता था। देवव्रत भीष्म और तपस्विनी सुलभा इसके उत्तम उदाहरण है।

बाल विवाह का प्रावधान निषेध था। आदि मनु स्वयंभू ने आठ प्रकार के ब्रह्म, देव, आर्ष, प्रजापत्य, असुर, गंधर्व, राक्षस और पिशाच विवाहों की व्यवस्था की थी। यौवन काल में ही उनकी शादी होती थी। किसी भी नायिका का विवाह बाल्य काल में नहीं हुआ। सत्यवती, गांधारी, कुंती, द्रौपदी, सुभद्रा, माद्री, आदि सब बालिग होकर ही परिणीता हुई थी।

नारी को विवाह के सम्बन्ध में यह छूट दी गई थी, वह अपनी मर्जी से अपना वर चुन सकती थी। अम्बा इसका उत्तम उदाहरण है। दूसरा उदाहरण तब देखा जा सकता है, जब द्रौपदी के स्वयंवर में वह ब्राह्मण वेष में परिवर्तित हुए पांडवों को चुनती है। वहीं पुरुष भी एक से अधिक विवाह कर सकता था। शांतनु ने भी गंगा और सत्यवती से विवाह किया था और पांड्वो ने भी एक से ज्यादा विवाह किए थे। एक पत्नी से विवाह करने वाले को सम्मान अधिक दिया जाता था। यदि कोई व्यक्ति अपनी संतान को जन्म दिए बिना ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता था, तो उसके लिए नियोग धर्म का प्रावधान भी था।

सनातन धर्म के चार आश्रमों से एक गृहस्थ आश्रम है। जब नर-नारी का आत्मिक और शारीरिक मिलन होता है, तब ही गृहस्थ का संसार बढता है। इस गृहस्थ-निर्वाह में नारी को एक विशिष्ट पद प्रदान किया गया है।

संपूर्ण महाभारत में कहीं भी पुत्र और कन्या में भेद नहीं किया गया। कन्या के जन्म पर पुत्र के जन्म की भाँति खुशियाँ मनाई जाती थी। जबकि पुत्र का जन्म होना आवश्यक माना जाता था। जिस तरह पुत्र के जातकर्मादी संस्कार आदि किए जाते थे, उसी तरह कन्या के भी किए जाते थे। महाराज शांतनु गौतम के पुत्र और पुत्री (कृप और कृपी) को वन से उठा कर घर लाए और शाश्त्रों के अनुसार उनका नामकरण किया। उस समय पुत्र की भाँति पुत्री भी गोद लेने का रिवाज़ था। यदुश्रेष्ठ शूर की पुत्री पृथा को उसके फुफेरे भाई कुंतीभोज ने गोद लिया था। उसके लालन पालन में कोई भेद नहीं किया। उसका सगी पुत्री की भाँति पालन किया, उसे सब प्रकार की शिक्षा से संपन्न भी किया। उसी के नाम से पृथा आगे चल कर कुंती के नाम से जानी गई।

आधुनिक युग की तरह उस युग की स्त्रियाँ भी किसी से कम नहीं थी। वह भी अपने परिवार में सब की तरह कार्य करती थी। कंधे से कन्धा मिला कर चलती थी। सत्यवती अपने पिता के साथ नौका विहार का कार्य करती थी। कुंती भी सब आने वाले अतिथियों की सेवा

करती थी। महर्षि कण्व भी जब आश्रम छोड़ कर कही किसी कार्य से बाहर जाते तो शकुन्तला पीछे से सारा कार्य भर संभालती थी।

महाभारत युग से ही स्त्रियाँ आश्रित रहीं है। बचपन में वह पिता के, यौवन काल में पति और वृधावस्था में पुत्र के अधीन रहना पड़ता था। जो नारी ब्रह्मचर्य को धारण कर लेती थी उन पर यह नियम लागू नहीं होता था। ऐसा नहीं है कि नारी केवल एक गुलाम अथवा भोग वस्तु थी, वह इसी में बाध्य थी। विवाहिता नारी का घर पति का घर ही है। कुछ हालातों में यह नियम टूट भी जाते थे। जब पांडव बनवास के लिए निकले तो सुभद्रा अपने बच्चों के सहित अपने पिता के घर चली गई थी (यह नारी की अपनी मर्ज़ी होती थी, आवश्यक नहीं था कि वह भी उनके साथ बनवास में जाए) ज्यादा समय तक अगर कोई विवाहिता नारी पिता के घर रहती थी, तो उसे अच्छा नहीं समझा जाता था। अगर नारी संतानहीन है और विधवा भी तो वह अपने पिता के घर ही रहती थी।

आज भी भारत में पतिव्रता और पत्निव्रता धर्म का पालन करने वाले को अधिक सम्मान से देखा जाता है। महाभारत में भी इसी धर्म पर अधिक बल दिया गया है। सतीत्व वर्णन की बहुलता देखने को मिलती है। नारी अपने पति के साथ-साथ बाकी सारे परिवार का भी ध्यान रखती थी। गांधारी भी अपने विवाह के बाद समस्त कुरुवंश की भलाई में लगी रहती है। सावित्री, दमयन्ती, शकुन्तला, गांधारी, द्रौपदी, सत्यभामा, सुभद्रा आदि इन नायिकाओं से पता चलता है कि वेदव्यास ने इन पात्रों के माध्यम से सतीत्व को उभार कर सब के समक्ष रखा है। इसकी रक्षा में उनका चरित्र और अधिक उभर कर सामने आया है। घर हो या वन, युद्ध हो या उपवन, सब जगह नारी अपने पति की सहायक और सहधर्मिणी रही है।

वेदव्यास ने नारीपात्रों को खूब सारी विशेषताओं के साथ प्रस्तुत किया है, वह स्वयं ही सबका ध्यान अपनी और केन्द्रित करने में समय नहीं लगाती। वह कथा की गति के साथ-साथ स्वयं के चरित्र को तो उभार कर सामने लाती है, बल्कि अन्य अपने सहायक पात्रों को भी उभार कर लाती है। उनके चरित में छुपे नाटकीय तत्व और नाटकीय संभावनाएं ही इतनी हैं, कि हर मोड़ पर आगे बढ़ने के लिए पहले इनका अध्ययन करना आवश्यक है।

इन नारी पात्रों की तेजस्वियता देखते ही बनती है। शकुन्तला, सत्यवती, अम्बा, गांधारी, कुंती, हिडिम्बा, सत्यभामा, सुभद्रा, द्रौपदी, उत्तरा में असाधारण तेज दिखाई पड़ता है। जो उनमें समाए नाटकीय तत्वों को अधिक उभार कर सामने लाते हैं। शकुन्तला जब अपने पुत्र के साथ

हस्तिनापुर स्थित दुष्यंत के दरबार में जाती है। उस समय अपने हक को पाने के लिए एक राजा के समक्ष खड़ी फडफड़ाते होठों वाली शकुन्तला का जो चरित्र अंकित किया गया है, वह स्वयं उसकी तेजस्वियता दर्शाता है। वह राजा को नीति संगत कठोर वचन कहती है। जब कोई भी व्यक्ति क्रोध में होता है तो उसका अपनी जुबान पर बस नहीं होता। क्रोध में भी संतुलित वचनों का प्रयोग जो शकुन्तला ने किया वही उसकी बुद्धिमता, धैर्य के साथ उसके चरित्र की असाधारण विशेषता को खींच कर लाता है।

जब देवव्रत ने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करने का वचन लिया था, तब सत्यवती ने अपने लोभ से हस्तिनापुर का राज्य पाठ अपनी संतान के नाम करवा लिया था। सत्यवती को अपनी महत्वकांक्षाओं के पीछे भागता देखा, फिर अपने अन्धकार में डूबे भविष्य को निकालने के लिए उसका संघर्ष, यह सब उसके चरित्र को आगे लाते हैं। अम्बा जैसी छोटी बालिका का भीष्म को ललकारना अपनी दशा का बदला लेने के लिए हर हालात में लड़ना और फिर प्रतिशोध की ज्वाला में स्वयं को और तपा लेना। अम्बा के विशाल चरित्र को भीष्म से भी बड़ा कर देता है। गांधारी भी अत्यंत तेजस्विनी नारियों में अपना स्थान रखती है। जब भरी सभा में तमाम योद्धा और वीर पुरुषों के सामने द्रौपदी को उसके केशों से पकड़ कर घसीटते हुए दुशासन ला रहा था, तब गांधारी यह सब दृश्य सुन और महसूस कर क्षोभ और लज्जा से झुक गई थी। बाद में एक दिन वह धृतराष्ट को कहती है – '"तुम भरत वंशी होकर इस तरह के कार्य मत करो, ऐसे अपराध तुम्हें शोभा नहीं देते। तुम युधिष्ठिर आदि के परामर्श से चलो। परम ज्ञानी विदुर तुम्हारे मंत्री हैं। उनका कहना मानो, पुत्र प्रेम में अंधे होकर कुल को दाग मत लगाओ। वर्ना यह तुम्हारे वंश के नाश का कारण बनेगी। निश्चय ही तुम्हें अपनी गलती से सबक लेना चाहिए और आगे से ऐसा कर्म मत करो।"

कुंती एक संपूर्ण माँ, पत्नी और बहन के रूप में सदा स्वयं को साबित करती रही। बिना किसी से कुछ कहे सब कष्ट वह सहती गई। अपने पति पांडू का हर पग पर साथ दिया, फिर अपने पुत्रो का । कुंती ने ही युधिष्ठिर को युद्ध के लिए प्रेरित किया था। वह उसे कहती है कि "दरिद्रता और मृत्यु एक ही चीज है।" वह श्री कृष्ण से कहती है कि "युधिष्ठिर से कहना क्षत्रिय सनातन युद्ध में कभी भयभीत न हों, क्षत्रिय कभी युद्ध से नहीं डरते। मैं भी क्षत्रिय कन्या और पत्नी हूँ, चाहती हूँ कि क्षत्रिय जननी के रूप में मैं भी अपना परिचय दे सकूँ।" उसने स्वयं को हर रूप में सिद्ध किया था। धैर्य ही उसका बल था।

द्रौपदी महाभारत जगत् में एक सौर की भांति चमकने वाला सितारा है। बहुत कुछ उसने अपनी सासू माँ कुंती से सीखा और अमल में भी लाया। उसके चरित्र में दृढ़ता का गुण दिखाई पड़ता है। वनपर्व में युधिष्ठिर से उसकी बातचीत में वह अपने क्षत्रिय नारीसुलभ महाशक्ति का परिचय देती हैं। एक अबला नारी की तरह वह बिल्कुल ही छुईमुई नहीं थी। कीचक को अपने एक धक्के से छित्रमुल वृक्ष की तरह गिरा देती है। जब माँ कुंती ने उसको पांच भाइयों में बाँट दिया, तब भी वह अडिग रही। जब युधिष्ठिर ने जुए में उसको दांव पर लगा दिया, और दुशासन ने उसको अपमानित किया। तब भी अपने धैर्य पर कायम रही। युधिष्ठिर को उसने खूब खरी खोटी सुनाई और यह आवश्यक भी था। उसने अपने पतियों का साथ कभी नहीं छोड़ा। वह उनको उसके अपमान का बदला लेने के लिए प्रेरित करती रही। वनगमन के दौरान भी उसने बहुत से कष्ट सहन किए। उसके चरित्र के जैसे मृदु-कठोर नारी चरित्र पूरे महाभारत में कहीं नहीं।

महाभारत में भीष्म कहते हैं "दीक्षा देने वाला गुरु, शिक्षा देने वाले गुरु से दस गुणा अधिक महान होता है। पिता इससे भी दस गुणा महान होते है। माँ तो पिता से भी कई गुणा महान होती है। इसलिए माँ से बड़ा गुरु कोई नहीं हो सकता।"

गांधारी की संकल्प शक्ति दृड थी। पूरे कुरु वंश ने उसे अपनी आँखों पर पट्टी न बाँधने के लिए कहा। लेकिन उसने अपने संकल्प की प्रबलता को मजबूत रखने के लिए पट्टी बाँधी।

कुंती ने कष्टों में भी अपने पुत्रों को डोलने नहीं दिया और उनकी शिक्षा इस तरह से की वह अंत तक इकठे रहे, नकुल और सहदेव को यह महसूस नहीं होने दिया को वह उसके सौतेले पुत्र है। उन सब को एक रखने के लिए उसने द्रौपदी को भी पाँचों में बाँट दिया।

द्रौपदी उस युग की श्रेष्ट नारियों में आती हैं। कभी अपनी पीड़ा को बाहर नहीं आने दिया, न ही अपने ससुराल परिवार को छोड़ा। उसने पांडवों के साथ रह कर उनके अन्दर प्रतिशोध की ज्वाला को जलाए रखा।

भारतीय समाज का आधार वर्ण व्यवस्था पर आधारित है। उस समय वर्णव्यवस्था क्या थी ? उस समय के समाज को वर्णाश्रम समाज के नाम से जाना जाता था। समाज में शाश्त्रीय वर्ण, जाति और ब्रह्मचर्य आदि आश्रमों का प्रचलन था। उसी को वर्णाश्रम समाज का नाम दिया गया। वर्णभेद में अनुष्ठान एवं रीती-निति का पार्थक्य स्पष्ट था। सुखमय भट्टाचार्य अपनी किताब महाभारत कालीन समाज में उस समय के समाज की वर्ण जाति की चर्चा करते हुए बताते है,

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र। यह चार वर्ण के नाम अभिहित थे। इन वर्णों में समान वर्ण के स्त्री पुरुष से उत्पन्न संतान भी माता पिता के वर्ण से ही परिचित होती थी। विभिन्न वर्णों के स्त्री पुरुष के समार्ग से जो संतान होती थी, उसका सिर्फ जाति द्वारा समाज में परिचय होता था वर्ण नहीं। परवर्ती काल में, भाषा में वर्ण व जाति का इस तरह विचारपूर्वक प्रयोग कोई बहुत दिखाई नहीं देता। वर्ण और जाती के सम्बन्ध में महाभारत के अनेक तथ्य मिल सकते हैं।

कर्मो द्वारा जाति निर्धारण करनी होती तो वर्णसकर की सार्थिकता रह पानी मुश्किल थी। व्यक्ति जिस जाति के कर्म करता वह उसी जाति का कहलाता था। यह वर्णसकरता तो व्यक्ति के जन्म से ही निश्चित हो जाती है। कहीं कर्म द्वारा व्यक्ति की जाति और वर्ण निर्धारित किया जाता था। इसके प्रमाण भी महाभारत में मिलते रहते है। जो भी ब्राह्मण जाति के कर्म जैसे यजन, याजन, अध्यापना, तपस्या इत्यादि करते थे। उन्हें ब्राह्मण ही कहा जाता था। जो क्षत्रियों के कार्य करते थे, उन्हें क्षत्रिय कहते थे। उसी तरह वैश्य और शुद्र आदि का निर्णय भी कर लिया जाता था। महाभारत में एक जगह युधिष्ठिर नहुष को बताते हैं, "जिस व्यक्ति में सत्य, दया, कोमलता, दान, क्षमा, तपस्या आदि के गुण हो वह ब्राह्मण ही है।" उनका उत्तर सुनकर नहुष कहता है, "यदि यह गुण किसी जन्मगत शुद्र में पाएं जाएँ तो ?" उसका प्रश्न सुनकर युधिष्ठिर कहता है, "यदि शुद्र के गुण किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय में पाए गए, तो मैं उसे भी शुद्र कहूँगा और यदि किसी ब्राह्मण के गुण किसी वैश्य या शुद्र में पाए जाते हैं, तो मैं उसे भी ब्राह्मण ही कहूँगा और मानूँगा।"

शिक्षा एक ढांचा होती है। जिस प्रकार की शिक्षा में व्यक्ति रहता है, वह वैसा ही बन जाता है। यह अपने घर, समाज और पाठशाला से मिलती है।महाभारत जैसे युग की शिक्षा पद्धति कैसी होगी ? उस काल में दो प्रकार की विद्या पर बल दिया जाता था-शस्त्र और शास्त्र विद्या। शास्त्र विद्या अंतर्मन की रक्षा के लिए और शस्त्र तन और समाज की रक्षा के लिए। आधुनिक स्कूलों और छात्रवास की भांति उस समय में सर्वगुण संपन गुरुकुल और आश्रम होते थे। जिनमें बालक अपने बाल्य काल से लेकर यौवन काल तक शिक्षा ग्रहण करते थे। शिक्षा संपन्न होने के पश्चात् जो कुछ भी उसने ग्रहण किया, उसका प्रदर्शन भी किया जाता था, भाव उनकी परीक्षा होती थी। महाभारत में इसके अनेकों उदाहरण मिलते हैं।

सनातन धर्म के चतुराश्रम हैं। इनमें से एक है ब्रह्मचर्य आश्रम। जब बालक अपनी शिक्षा के लिए गुरुकुल में जाता था, तो उसको इस आश्रम का पालन करना पड़ता था। इसका

शाब्दिक अर्थ करें तो इस प्रकार है, अपने मन में सदैव उच्च विचारों को लाना और अपने तन की बाहरी विकारों से रक्षा करनी तथा समस्त बुराइयों से स्वयं को सुरक्षित रखना। इस आश्रम में मन को सदैव स्थिर रखना पड़ता है। स्थिर मन के कारण वह शिक्षा को सही तरह ग्रहण कर सकते हैं। उस समय दो प्रकार से शिक्षा ग्रहण की जा सकती थी, या तो विद्यारथी गुरु आश्रम में जा कर शिक्षा ले सकता था अथवा गुरु को अपने गृह में रख कर। गुरु को अपने घर में रखना धनी परिवारों के लिए कठिन नहीं था।

बाल्यावस्था में ही अध्ययन आरंभ हो जाता था। कौरव-पांडव, अश्वत्थामा, कुंती, द्रौपदी, कृष्ण–बलराम आदि सब ने बाल्यकाल में ही शिक्षा ग्रहण करनी शुरू करदी थी। ययाति ने ब्रह्मचर्य की सहायता से वेदों का अध्ययन किया। भीष्म ने अपने शैशवकाल में शिक्षा ग्रहण की, और धृतराष्ट्र की शिक्षा उपनयन के बाद शुरू हो गई थी। इस बात से अनुमान लगा सकते हैं की ब्राह्मण अपने बालक की शिक्षा 5 से 8 वर्ष की आयु में। क्षत्रिय 8 से 10 वर्ष की आयु में और वैश्य 11 से 12 वर्ष की आयु में तथा 13 वर्ष की आयु में शुद्र आरंभ कर देते थे। सभी वर्णों को सामान शिक्षा दी जाती थी इसमें किसी से भी भेद नहीं किया जाता था। शिक्षा शुरू करने की उम्र में जरुर अंतर था। एक दासी पुत्र होने पर भी विदुर की शिक्षा किसी से कम नहीं थी उनका ज्ञान अतुलनीय था। उनकी गिनती विद्वान पंडितों में होती है। लोमहर्षण, संजय और सौती सूत पुत्र होते हुए भी बहुत ज्ञानी थे। सौती तो महाभारत के प्रचारक भी रहे हैं। युधिष्ठिर जब राजसूय यज्ञ करता है, तो उसमें सबको आमंत्रित करने के लिए दूत भेजे जाते हैं, दूतों को विशेष आदेश दिया जाता है कि "मान्य शूद्रों को निमंत्रित किया जाए।"

छात्रों को परम विद्वान बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के विषय पढ़ाए जाते थे। वेद, पुराण, तर्कविद्या, वार्ता, कृषि, वाणिज्य और दंडनीति आदि पढ़ाए जाने वाले विषय थे। प्रत्येक विद्यार्थी अपना मनपसंद के विषय पढता था। सारे विषय अनिवार्य नहीं थे। युक्तिशास्त्र, शब्द्शास्त्र, गंधर्वशास्त्र, रंगमंच और कालविद्या भी मनपसंद विषयों में आते थे। अपभ्रंश भाषा का इस्तेमाल पढ़ने में किया जाता था। वहाँ विभिन्न देशों से बालक पढने आते थे। निश्चय ही एक दूसरे के संपर्क में आकर वह अन्य भाषाओ के भी ज्ञानी हो जाते थे। उनको कुछ विशेष भाषा भी सिखाई जाती थी। जब पांडव अपनी माँ के साथ वारणावत की ओर निकलते हैं, तो विदुर उन्हें एक विशेष भाषा में भविष्य में आने वाली बाधायों के बारे में अवगत करवाता है। यह भाषा युधिष्ठिर के बिना कोई नहीं जानता था। उन्होंने क्या कहा था ? वह बाद में माँ कुंती को बताते

हैं। इन भाषाओँ को सिखाने के लिए भाषा विज्ञानी और पंडित नियुक्त किए जाते थे। उनको विशेष वेतन भी दिया जाता था। कुछ विशेष विद्याएँ होती थी, जिनको देवताओं से लिया जाता था। द्रोणाचार्य, भीष्म पितामह को बताते है, कि उन्होंने धनुर विद्या के लिए महर्षि अग्निवेश को गुरु रूप में वर्ण किया था। अर्जुन ने भी महादेव और देवराज इंद्र से अस्त्र विद्या का लाभ लेने के लिए काफी ताप किया था। वेदव्यास के पुत्र कहे जाने वाले शुकदेव ने ब्रहस्पति को अपना गुरु बना कर वेद, इतिहास, राजधर्म आदि की शिक्षा ली थी। आचार्य लोग कोई भी शिक्षा ऐसे ही किसी को नहीं देते थे। वह पहले इस बात की जांच करते थे, कौन किस गुण के लिए योग्य है। किस शिक्षा का अधिकारी है। क्या वह उस शिक्षा का सही ढंग से पालन करेगा भी कि नहीं। बात यहीं ख़तम नहीं होती थी, वह इस बात की परीक्षा भी लेते थे।

एक शिष्य अपने गुरुकुल में कितना समय रहेगा, यह कोई निश्चित नहीं था। बचपन से लेकर यौवनकाल तक तो अपने गुरु घर में वे रहते ही थे। इतिहास में एक कथा आती है, उत्तक ने अपने बाल्य काल में शिक्षा आरंभ की थी और उनके गुरु घर में रहते ही बाल सफ़ेद हो गए थे। बाद में उन्होंने गृहस्थ आश्रम अपनाया था। शिष्यों की संख्या को देखे तो महाभारत में जो वर्णन मिलता उनमें साफ़ स्पष्ट दिखाई पड़ता है, जब वेदव्यास जनमानव विहीन पर्वत पर बैठे अपने शिष्यों को शिक्षा दे रहे थे उनके सामने उनके 4 शिष्य बैठे थे, जिन चारों ने वेदों का संपादन भी किया था। कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, आचार्य धौम्य आदि अनेको ऋषियों के शिष्य काफी संख्या में होते थे। अनुमान लगा सकते है कि निश्चित संख्या उस समय नहीं होती होगी।

सिर्फ ब्राह्मण ही उपदेशक होते थे, ऐसा बिल्कुल भी नहीं था। इसकी उदाहरण भी महाभारत से कम नहीं है। राजऋषि जनक ने वेदव्यास के पुत्र शुकदेव को आत्मतव के बारे में उपदेश दिया था। शुकदेव ने अपने पिता की आज्ञा पाकर उनको अपना गुरु स्वीकार किया था। उपनिषदों को देखें तो अनेक गुणों के जानकार और विद्वान क्षत्रिय ही थे, ब्राह्मणों ने उनको अपना गुरु भी स्वीकार किया। महाभारत के कथक तो सूत जाति से संबंध रखते थे, ब्राह्मण ऋषियों ने उनके मुख से उनके समक्ष बैठ कर महाभारत सुनी थी। यदि केवल ब्राह्मण ही उपदेष्टा होते तो बाकी वर्णों की यथार्थता नहीं रखी जा सकती थी।

गुरु शिष्य परम्परा को अपनाते हुए, इस कथा के सभी पात्र बड़े हुए और इतने कुशल भी, कि किसी भी पात्र का स्थान कोई और पात्र ले ही नहीं सकता। उस समय की शिक्षा प्रणाली

कितनी मजबूत थी, इस बात का अंदाज़ा लगा ही सकते है। क्योंकि शिक्षा ही किसी भी समाज की रीढ़ होती है।

"जहाँ धर्म है वहीं जय है" "यदा यदा ही धर्मस्त्य""धर्म का अधर्म के खिलाफ युद्ध" इन सब वाक्यों को महाभारत में समय-समय पर सुनते रहे हैं। आखिर क्या है धर्म? जो आज देखते और मानते है क्या यह वाला ही धर्म उस समय था ? कौन सा धर्म था जिस के लिए इतना भयंकर युद्ध हुआ, 18 दिन में लाखों लोग मारे गए और एक विकसित सभ्यता का अंत हो गया। महाभारत में बहुत से धर्मों के बारे में बताया गया है। समाज धर्म, राजधर्म, लौकिक धर्म, कुलधर्म, आदि धर्म की वृद्धि से समाज का कल्याण होता

वेदव्यास ने पूरी महाभारत में सैंकड़ों बार धर्म शब्द का प्रयोग किया है। आज भी भारतीय इस का प्रयोग करते है। भारत के स्वतंत्रता संग्रामी महात्मा गाँधी भी आदि पर्व में वेदव्यास द्वारा कहे गए वाक्य "अहिंसा परमो धर्म" को मानते थे। कहीं भी वेदव्यास ने स्पष्ट शब्दों में धर्म की व्याख्या क्यों नहीं की ? श्री कृष्ण गीता में एक जगह सिर्फ इतना कहते हैं कि – "एष धर्म: सनातन:" अर्थात यह वह धर्म है, जो सदा रहने वाला है। यहाँ भी वह बात को गोल मोल कर गए। अनुशासन पर्व में भी वेदव्यास कहते हैं – "अनुक्रोशो हि साधुनां महद धर्मस्य लक्षणंम" अर्थात दूसरों पर दया करना ही सबसे बड़ा धर्म है।

धर्म का शाब्दिक अर्थ जो भी हो , इसका व्यावहाँरिक रूप देखे तो शुद्ध आचरण को ही धर्म मानते है। यह आचरण केवल बाहरी नहीं होना चाहिए। आन्तरिक मन की अच्छी भावनाओं को भी धर्म में गिना जाता है। ऐसा माना जाता है, यह इस धरा और परलोक में भी कल्याण करने वाला होता है ।

महाभारत मेंअनेकों बार राज धर्म शब्द पढ़ने को मिलता है। शांतिपर्व को पढ़ें तो अनेको तथ्यों से भरा पड़ा है। राजा का पहला धर्म होता था, वह समाज की व्यवस्था ठीक रखे। हर कोई धर्म की बात खुल कर सके, हर कोई शांति से जी सके। अगर उसके समाज की व्यवस्था अराजक हो जाएगी तो सब बिगड़ जायगा। फिर आम जन की कोई सुनने वाला नहीं होता। इसलिए राज्य व्यवस्था को ठीक रखना चाहिए। राजा जो अपने राज्य के समाज की धुरी होता है। राजा के डर से ही शांति व्यवस्था बनी रहती है। हर चोर व्यक्ति को राजा का डर होता है, कि राजा उसे दंड देगा। मुनि शमिक कहते हैं, राजा का डर प्रजा में फैले अराजक तत्वों में

बने रहना चाहिए। एक प्रजा का राजा कैसा हो ? यह अधिकार प्रजा को था। अपना जीवन सुखमय बिताने के लिए वह गुणवान व्यक्ति को राज पद पर बिठाती थी।

अपनी प्रजा के लिए राजा को किसी भी कठोर त्याग से नहीं घबराना चाहिए। प्रजा हित के लिए हरीशचंद्र की उदहारण उपयुक्त है। वहीं राजा सागर ने भी प्रजा हित के लिए अपने ज्येष्ठ पुत्र को त्याग दिया था।

कोई क्षत्रिय राजा हो और उसने कभी युद्ध न लड़ा हो ऐसा बहुत ही कम होता था। महाभारत ऐसे ही क्षत्रियों के बीच हुए महायुद्ध का वर्णन करता है, जिसमें सब वर्णों के लोगों ने हिस्सा लिया था। इस के नाम के पीछे बहुत से तथ्य जुड़े हुए हैं, हर विद्वान अपना मत प्रस्तुत करता है। यह युद्ध कथा बहुत कुछ सिखाती है "यतो धर्मस्ततो जय" और कभी कहती है "समूलस्तु विनश्यति"।

साम्राज्य का विस्तार और धर्म की स्थापना के लिए युद्ध अक्सर हो जाते थे। पंडू, कर्ण और पांडवों ने भी युद्ध लडे। वह युद्ध किसी लोभ वश नहीं थे, उन्होंने बस उन राज्यों को अपने साथ जोड़ा न कि उन पर कब्जा किया। जो महाभारत का युद्ध हुआ उसके मूल में दुर्योधन की समराजयलिप्सा थी। अगर वह अपनी भोग लिप्सा को हद ज्यादा से न बढ़ाता तो शायद यह युद्ध न होता। इस युद्ध की शुरुआत में पांडव पक्ष घोषणा करता है, इस धर्म युद्ध में यदि कोई अब भी पांडव पक्ष का साथ देना चाहता है, तो साथ आ सकता है। उनकी पैतृक संपत्ति को हड़प लिया गया था। फिर उन्हें जुए के खेल में बहका कर बनवास पर भी भेज दिया, उनको कहीं भी अपमानित करने का और उनका जीवन ख़त्म करने का अवसर भी कभी नहीं छोड़ा। इतना कुछ सह कर भी पांडवों ने अंत में केवल पांच गाँव मांगे तो आगे से उन्हें उत्तर मिला के उन्हें "सुई की नोक जितनी जगह भी नहीं मिलेगी"। फिर क्या हुआ ? वह सब कुरुक्षेत्र की भूमि पर सबने देखा।

युद्ध सदैव मानव जाति के लिए खतरा हैं। जहाँ तक हो इसको टाला जाए तो बेहतर है। भीष्म पर्व में निमिताख्यान अध्याय में समझाया और कहा गया है कि वीर पुरुष को पहले अपनी चतुरगिणी फ़ौज इकठी करके साम-दाम से अपने विरोधी को जीतने का प्रयास करना चाहिए। यदि इस कार्य को सफलतापूर्वक नहीं कर सकता तो उसको उनमें फूट डाल कर उन्हें शक्तिहीन करने का प्रयास करना चाहिए। अंतिम रास्ता युद्ध होता है। युद्ध में जहाँ विजय भी होती है, तो उसके साथ हानि भी होती है और उस हानि को भरपाना कठिन होता है।

युद्ध से पहले दोनों पक्षों में सामान्य व्यवहाँर होता था। आपस में बातचीत भी होती थी। महाभारत में युद्ध शुरू होने से पहले युधिष्ठिर अपने विरोधी भाव त्याग कर, नंगे पाँव चल कर भीष्म, द्रोणाचार्य जैसे अपने गुरु जनो का आशीर्वाद लेने जाता है। वह उसके विरोधी खेमें में थे। वह उनको आशीर्वाद देते हुए कहते हैं कि वह दुर्योधन के अर्थ के दासत्व हैं, वह उसकी तरफ से युद्ध करने के लिए बाध्य हैं। पांडवों को डरने की जरुरत नहीं है, क्योंकि स्वयं वासुदेव श्री कृष्ण तुम्हारे मंत्री हैं तुम्हारे सार्थी हैं। जहाँ धर्म है, वहां श्री कृष्ण हैं, जहाँ श्री कृष्ण हैं वहां विजय तो होगी ही। दोनों पक्षों के प्रधान पुरुषो का एक अलग ही व्यव्हार देखने को मिलता है। जो युद्ध के मैदान में नहीं मिलता।

युद्ध में एक नियम था कि सामान्य पद वाला अधिकारी ही एक दूसरे से युद्ध लड़ता था। सूर्य ढलने के पश्चात् युद्ध नहीं होता था। आवश्यक समझने पर रात्रि को भी युद्ध किया गया था इसका प्रमाण कुरुक्षेत्र के मैदान में मिल ही जाता है। युद्ध की अवधि क्या होगी यह कोई तय नहीं होता था।

युद्ध से पहले श्री कृष्ण कार्तिक मास में रेवती नक्षत्र (इस नक्षत्र में जब सूर्य इसके पास से गुजरता है तो एक नए सौर वर्ष की शुरुआत होती है, उद्योग पर्व में इसका विस्तार सहित विवरण मिलता है) का योग देखकर दूत बन कर युद्ध रोकने के लिए हस्तिनापुर गए थे। वह इस प्रयास में सफल नहीं हो पाए। अहंकार के अंधकार में लिप्त दुर्योधन ने श्री कृष्ण को बंधी बनाने की कोशिश करके अपमानित किया। वापिस लौटते समय उनकी भेंट कर्ण से हुई, तो उन्होंने युद्ध के बारे में चर्चा करते हुए कहा कि वह भीष्म, गुरु द्रोण अथवा कृपाचार्य से कहे कि अगहन मास में युद्ध का समय ठीक है। इस मास में तृण (घास) और काष्ठ (लकड़ी) अच्छी मात्रा में मिलती है। यह मौसम ठीक है अधिक गर्मी नहीं होती। इस मौसम में जल स्वच्छ होता है और बहता रहता है। जंगलों में भी बहार होती है, फूल लताएं भरी होती हैं। हर प्रकार के फूल और फल अच्छी मात्रा में मिलेंगे और औषधियां भी सही मात्रा में मिलती है। आज से सप्ताह के आखरी दिन अमावस्या है। उसी दिन युद्ध शुरू हो जाना चाहिए।

उस समय युद्ध का आयोजन और स्थान दोनों पक्ष मिल कर तय करते थे। निर्धारित स्थान पर दोनों पक्षों की सेना इकट्ठी हो जाती थी। अपने यान, वाहन, अस्त्र, शस्त्र और अन्य सामग्री लेकर। युद्ध स्थल पर हर वीर योद्धा के लिए एक शिविर बनाया जाता था। जिसमें उसके लिए पर्याप्त मात्र में हर प्रकार की सामग्री रखी जाती थी। युद्ध शुरू होने पर विशेष

नियम तय किए जाते थे, जिनका पालन होना अनिवार्य भी था (महाभारत में बहुत से नियम टूटे भी) किसी भी नियम का उलंघन करना अच्छा नहीं समझा जाता था। महाभारत युद्ध के जो नियम बनाए गए वह इस प्रकार थे,

- प्रतिदिन युद्ध की समाप्ति के बाद आपसी पारंपरिक सनेह संबंधों में कोई भी अंतर नहीं आएगा।
- सामान पद वाले विपक्षी से युद्ध किया जाएगा।
- जो वाग्युद्ध का प्रयोग करेगा। उसके साथ वचनों द्वारा ही युद्ध किया जाए।
- जो भी व्यक्ति अपनी सेना को छोड़ कर चला जाएगा, उसका वध नहीं किया जाएगा।
- रथ वाले के साथ रथ वाला, घोड़े वाले के साथ घोड़े वाला, हाथी वाले के साथ हाथी वाला और पैदल सैनिक के साथ पैदल सैनिक ही युद्ध करेगा।
- प्रतिपक्षी की योग्यता, उत्सव, बाल आदि को ध्यान में रख कर युद्ध करना होगा। इन विषयों से कोई भी अनभिज्ञ न हो।
- जब भी किसी विरोधी पर प्रहार करना है, तो उसे ललकार कर करना है। किसी कार्य में लगे हुए व्यक्ति पर हमला या प्रहार नहीं करना।
- जिसके शरीर पर रक्षा कवच न हो उसके साथ युद्ध करना मना है।
- युद्ध में एक एक को अववाहन करना होगा।
- यह बाण मैंने छोड़ा, अब तुम छोडो, ऐसे वचन कह के युद्ध होगा।
  धर्म योद्धा के साथ धर्म युद्ध और कूट योद्धा के साथ कूट युद्ध ही होगा।
- अलग अलग वाहनों में बैठे वीर एक दूसरे के साथ युद्ध नहीं करेंगे। इसके लिए उनके पास एक सा वाहन होना आवश्यक है।
- विषबुझे और विपरीत मुख बाणों से युद्ध नहीं होगा।
- दुर्बल व्यक्ति पर प्रहार नहीं करना।
- संतानहीन व्यक्ति वध करने योग्य नहीं है।
- भग्नशस्त्र, न्यस्तशस्त्र, विपत्र, कृतज्ञ और हतवाहन व्यक्ति का भी वध नही किया जाएगा। इस प्रकार की विपदा में पड़े व्यक्ति के इलाज का प्रबंध करवाकर उसे घर वापिस भेज देना उचित होगा।
- जो अभिज्ञ न हो उस पे ब्रह्मास्त्र नहीं छोड़ना होगा"

(*महाभारत-भीष्म पर्व* 2544)

यहाँ युद्ध के नियमों के पालन को ही धर्म कहा गया है। जो भी कोई क्षत्रिय इन नियमों का उलंघन करके अधर्म की राह पर चल कर विजय होता है, वह पाप का भागी होता है। उसका इस लोक और उस परलोक में कोई ठिकाना नहीं होता। इस प्रकार और भी बहुत से नियम बने थे, जिनको आधार बनाकर युद्ध लड़ा गया। जो नियम बनाए गए, वह नियम बीच में टूटे भी।

इस युद्ध में व्यूहों का बहुत योगदान रहा है। वेदव्यास ने युद्ध का विस्तार वर्णन करने के लिए संजय के चरित्र उसकी उर्जा का सही इस्तेमाल किया है। उसने बताया कि 18 दिन तक कौन सी सेना कौन से व्यूह में खड़ी की गई। इन व्यूहों में वज्र, क्रौंच, गरुड़, अर्धचन्द्र, मकर, श्येन, मंडल, सागर, श्रृंगाटक, सर्वतोभद्र, चर्क व्यूह प्रमुखता से बताएं गए हैं। जिस दिन अर्जुन पुत्र अभिमन्यु की मृत्यु हुई थी, उस दिन कौरव सेना अभेद्य चक्र व्यूह में खड़ी थी। उसके अगले दिन जब अर्जुन ने बदला लेने के लिए जयद्रथ को मारा तो द्रोणाचार्य ने उसे उस दिन शकट व्यूह के प्रयोग से सुरक्षित रखने की कोशिश की थी।

महाभारत युग में न सिर्फ ऐसे विमानों की कल्पना की गई, उन्हें हकीकत में तब्दील भी किया गया। उनके नक़्शे भी बनाए गए। श्रीमद भागवत पुराण के दशम स्कन्द में राजा शाल्व के एक ऐसे ही विचित्र विमान का विवरण आता है। आज से पांच हजार वर्ष पूर्व बने इस सौभ नामक विमान को लेकर शाल्व ने द्वारका पर चढ़ाई की थी। इसका निर्माण मय नाम के एक दानव ने किया था। यह विमान तकनीकी कारणों से भी अति उत्तम था। चालक की इच्छा मात्र से ही यह गति और दिशा पकड़ लेता था। यह एक उड़ता फिरता नगर था। यह विमान पौराणिक युग में तैयार हो गया था। जबकि आधुनिक युग में 1670 में "डी लीना" ने हवा में उड़ने के लिए एक यंत्र बनाने का सुझाव दिया था। ऐसे ही कई विमानों का प्रयोग इस युद्ध में भी हुआ था। इस महायुद्ध में विज्ञानं का बहुत ही अद्भुत रूप देखने को मिला। इस युद्ध में बहुत ही घातक और विनाशकरी अस्त्रों शास्त्रो का इस्तेमाल हुए। युद्ध में विज्ञानं के गलत इस्तेमाल ने मानवीय जाति को लगभग ख़त्म ही कर दिया था। इस युद्ध में बस कुछ लोग ही शेष बचे थे। उनमें से भी कुछ योद्धा बाद में मारे गए। वेदव्यास जैसे लोग उस युद्ध के गवाह बन उनको लिपिबद्ध करने के लिए शेष रह गए।

इनमें किसी संप्रदाय अथवा जाति का बंधन नहीं है। भौतिक क्षेत्र में युद्ध नीति, प्रकृतिक विज्ञान, शिल्प, वाणिज्य और व्यवसाय की दृष्टि से भारत अपनी चरम सीमा पर था। स्वर्णिम भारतीय इतिहास /मिथिहास की बात करें तो इसमें महाभारत का काल प्रथम पंक्ति में खड़ा है। महाभारत भारतीय समाज की आधारशिला की भांति है। इसके उज्ज्वल रूप, धार्मिक, दार्शनिक, राजनैतिक और नैतिक आदर्शों को ध्यान में रखते हुए जीवन यापन करने की सलाह दी जाती है ।

तृतीय अध्याय

कृष्ण से नायिकाओं का संबंध

कृष्ण महाभारत की वह धुरी हैं, जिसमे सब पात्र ठीक उसी तरह घूमते हैं, जैसे सौर मंडल के गृह सूर्य के चक्र लगाते हैं। उनके विकास में सूर्य का प्रकाश और गति अपना बहुत महत्वपूर्ण योगदान देती है। कोई उसके अधिक पास रहे या अधिक दूर, उस पर, उसकी गतिविधि पर, उसका प्रभाव रहता है। श्री कृष्ण का लगभग हर पात्र के साथ स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से संपर्क रहा है।

वासुदेव पोद्दार का भी मानना है, "कृष्ण को हटा देने पर महाभारत का अस्तित्व ही किसी बिन्दु पर स्थिर नहीं हो पाता- न कथानक की दृष्टि से न कथा के शिल्प की दृष्टि से, कृष्ण महाभारत के भीतर प्रारम्भ से अंत तक सूत्र की ओत-प्रोत हैं। सम्पूर्ण महाभारत का कथानक कृष्ण की घूमती हुई भृकुटियों की महाकथा है। महाभारत युद्ध के सबसे बड़े योद्धा अर्जुन के श्वेत अश्वों की वल्गा कृष्ण के हाथों में है। कृष्ण को महाभारत से हटाने का अर्थ है, शरीर के ऊपर से उसके शिरोभाग को ही उससे अलग कर देना। राम, कृष्ण और बुद्ध को भारतीय इतिहास से हटाने का अर्थ है- इतिहास के सम्पूर्ण स्वरूप का अवसान।"(*रामायण-महाभारत : काल, इतिहास, सिद्धान्त* 62)

इस कथा की मुख्य नायिकाओं का बात कर लें और श्री कृष्ण की चर्चा न करें तो बात अस्वाभाविक सी लगेगी। महाभारत की मुख्य नायिकाओं का श्री कृष्ण से कहीं बेटे के रूप में, कहीं भतीजे के रूप में, कहीं गुरु के रूप में, तो कहीं सखा या प्रेमी के रूप में संबंध रहा है। इन रूपों का उन सभी नायिकाओं के चरित्र में बहुत सा असर दिखता है। खोज के विषय के लिए जिन नायिकाओं का चयन किया गया है, उनके अध्यात्मिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि सभी पक्षों में श्री कृष्ण का प्रभाव साफ और स्पष्ट दिखाई पड़ता है। जहाँ वह कमजोर पड़ती है, वहां श्री कृष्ण की सहायता से स्वयं को बलशाली बनाती हैं।

दिनकर जोशी कहते हैं, "महाभारत में तमाम घटनायों पर कृष्ण का अद्भुत प्रभुत्व है, यह सही है और महाभारत के अन्य तमाम पात्र कृष्ण का केन्द्रवर्ती स्थान एक या दूसरे रूप में स्वीकार करते हैं।" (*महाभारत में पितृ-वंदना* 16)

सत्यवती : हस्तिनापुर की महारानी सत्यवती महा साम्राज्य की स्वामिनी थी। जो उस समय लगभग बहुत बड़े भू-भाग पर शासन करती थी। इस कथा में उसका सामना या संबंध श्री कृष्ण से नहीं होता, पर उसकी आने वाली पीड़ियों का भविष्य और उसके साम्राज्य की रूप रेखा श्री कृष्ण तय करने में बहुत बड़ी भूमिका अदा करता हैं।

अम्बा : काशी राज की पुत्री अम्बा, जिसका अपहरण भीष्म पितामहः अपनी माता सत्यवती के इच्छा पर अपने छोटे सौतेले भाई से विवाह करने के लिए कर लाता है। अम्बा तो शाल्वराज को मन ही मन अपना पति मान चुकी थी। उसके साथ प्रेम विवाह करने का फैसला भी कर चुकी थी। वह खुलकर उन दोनों का विरोध करती है। अपने अपमान का बदला लेने के लिए भीष्म को ललकारती भी है। जब उसकी सहायता के लिए कोई नहीं आता उसके पश्चात वह धीरे धीरे हठ योग से अपनी देह का त्याग कर देती है। तीसरे जन्म में राजा द्रुपद के घर शिखंडी रूप में पैदा होती है। तब भी वह इस लक्ष्य को नहीं भूलती और उसके इस लक्ष्य को पूरा करने में श्री कृष्ण उसका साथ देते हैं। वह उसे पांडवों का सेनापति बना कर आगे लाते हैं। जहाँ वह अपने पूर्व जन्मों की जल रही प्रतिशोध की ज्वाला को शांत करती है।

गांधारी : कौरवों की जननी और त्याग की प्रतिमा कहे जाने वाली गांधारी, जिसने पुत्र मोह के वश में पड कर कुरु वंश को समाप्त कर दिया। इसका सीधे तौर पर श्री कृष्ण से कोई संबंध नहीं था। कुंती के कारण इसका संबंध श्री कृष्ण से बनता था। वह उसको माँ का स्थान देते थे। गांधारी जानती थी, कि श्री कृष्ण एक कुशल ज्ञानी राजनितज्ञ है। उसके पुत्र उनका मुकाबला नहीं कर सकते। वह अपने पुत्रो को समझाती भी है कि श्री कृष्ण की बात मान कर पांडवों को केवल 5 गाँव दे दें, वह उस बात को नहीं मानते और युद्ध में सभी हस्तिनापुर को झोंक देते हैं। युद्ध के अंत में जब अपने सभी पुत्रों को मौत के बिस्तर पर कुरुक्षेत्र की भूमि में पड़ा देखती है, तब वह श्री कृष्ण को भी उसके वंश के नाश का शाप दे देती है। श्री कृष्ण उसको माँ की आज्ञा मान कर धारण करते है। गांधारी को लगता है, कि यह क्या बोल दिया, वह शाप वापिस लेने की कोशिश करती है। तब श्री कृष्ण उसको मना कर देते है। कुछ ना होते हुए भी कुछ रिश्ता होना, बिना किसी गलती के भयंकर परिणाम देखने के लिए तैयार होना। यह सब उस रिश्ते में ही हो सकता है, जो गांधारी और श्री कृष्ण में था।

कुंती : क से कुंती और क से कृष्ण। श्री कृष्ण को एक युगपुरुष का दर्जा भी दिया गया है। जो सदैव सत्य के पक्ष में रहता, और असत्य को ध्वस्त करने वाला रहा है। रिश्ते में

कुंती श्री कृष्ण की बुआ लगती थी। कथा में इन दोनों का बहुत गहरा संबंध रहा है। जहां कुंती को श्री कृष्ण की जरूरत पड़ी, वहां वह दौड़े चले आए। इन दोनों बुआ भतीजे के जीवन में कितना कुछ सामान्य भी मिलता है। श्री कृष्ण को जन्म देने वाले माता पिता तो वासुदेव और देवकी थे, उसका लालन पालन यशोदा और नन्द ने किया। यही कुंती के जीवन में देखने को मिलती है। उसको जन्म तो राजा शूरसेन ने दिया, उसका पालन पोषण राजा कुंतीभोज ने किया। पृथा से कुंती तक का मार्ग बहुत कठिनाईयों से भरा रहा। जिसने उसके चरित्र को और भी मजबूत बनाया। उसी तरह माखन चोर से लेकर श्री कृष्ण बनने तक का सफ़र बहुत ही उतार चड़ाव भरा रहा है। सबको रिश्तों की परिभाषा समझाने वाले श्री कृष्ण अपने रिश्तों की कैसे पार ना पाते। इनके गृह और नक्षत्र एक जैसे थे। श्री कृष्ण का अपना जीवन यातनायों से उभरता है तो कुंती के पथ में भी यातना बचपन काल से ही शुरू हो जाती है। शूरसेन की पुत्री को कुंती भोज अपनी बेटी बना कर, जब दूसरी मिट्टी पनपने के लिए देता है, तब कुंती जैसा संवेदनशील पौधा पृथा से कुंती हो जाता है। कुंती में पृथा कभी विकराल रूप लेती है, तो कभी अपने आप को समेट लेती है। यही होनी श्री कृष्ण की भी है। वह भी देवकी नंदन से यशोदा नंदन बनता है।

जीवन के पथ पर जब विधवा कुंती चलती है, कई बार वह डगमगाती है। कई बार कुछ भय उसके सामने छा जाता है। श्री कृष्ण हर बार उसके साथ एक बेटे की भूमिका निभाते हुए आकर खड़े हो जाते है। बनवास के दौरान भी कुंती और पांडवों का मार्ग दर्शन करने दौड़े चले जाते हैं। जब भी कुंती किसी मोड़ या भंवर में फंस जाती, तब वह श्री कृष्ण को ही याद करती थी।

कुंती का सेवा भाव अगर दुर्वाषा ऋषि को खुश करता है, तो वहीं श्री कृष्ण महर्षि संदीपनी की सेवा भाव में लिप्त रहते है। श्री कृष्ण सुदामा को अपने प्रेम और स्नेह भाव से अपना राज सम्मान त्याग करते सिंहासन पर बिठाता है। कुंती भी माद्री को प्रेम और स्नेह भाव से संतान प्राप्ति का मन्त्र देती है। कुंती पग पग पर पांडवों का कुटनीतिक और राजनितिक मार्ग दर्शन करती है, श्री कृष्ण भी संपूर्ण कथा में इसका परिचय देते है। श्री कृष्ण और कुंती का संबंध पूरी महाभारत में माता और पुत्र का संबंध है। कुंती और श्री कृष्ण का सूत्र ही गांधारी और श्री कृष्ण का सूत्र बनता है।

इस महाभारत की लड़ाई में श्री कृष्ण कुंती नंदन के सार्थी बनते हैं। युद्ध में उनका मार्ग दर्शन करते हैं। कथा के अंत में कुंती पुत्रों को बचा कर स्वयं अपने वंश नाश का शाप धारण करते हैं। कुंती और श्री कृष्ण का संबंध अपनी भूमिका पूरी कथा में अदा करता है।

हिडिम्बा : साम-दाम-दंड भेद, चालें, युद्ध, नीति, राजनीती और कूटनीति आदि के वेग से यह कथा निरंतर आगे बढती रहती है। इसी कूटनीति और रजनीति चाल के अंतर्गत हिडिम्बा का कथा में आगमन होता है। जब बनवास के दौरान पांडव वणों में विश्राम कर रहे होते हैं, तब उनका सामना एक राक्षस राजा हिडिम्ब से होता है। जिसका वध भीम कर देता है। अपने भाई की मृत्यु के पश्चात उसकी बहन हिडिंबा कुंती के सामने भीम के साथ अपने विवाह की इच्छा व्यक्त करती है, जिसे कुंती स्वीकार करती है। जिस से उसको पुत्र "घटोत्कच" की प्राप्ति होती है। हिडिम्बा और श्री कृष्ण का सामना इस कथा में नहीं मिलता। महाभारत के युद्ध में कर्ण जिस अस्त्र को अर्जुन पर प्रयोग करने को आरक्षित किए बैठा होता है, उस अस्त्र को हिडिम्बा पुत्र घटोत्कच ही अपने तन पर सहता है।

द्रौपदी : युद्ध का मुख्य कारण कहे जाने वाली और युद्ध को जीतने वाले दोनों किरदारों का एक ऐसा रिश्ता और संबंध है, जिसको हर कोई अपने चश्मे से देखने का प्रयत्न करता है। प्रेमी, पति, भाई, सखा और गुरु। जहाँ जो स्थिति आई वहां वैसा रूप धारण कर लिया। एक ऐसा रिश्ता जो कभी भी किसी भी बंधन में नहीं आता, कुछ ऐसा ही रिश्ता है द्रौपदी और श्री कृष्ण का। यज्ञ की अग्नि से जन्मी द्रौपदी श्री कृष्ण को अपना स्वामी मानती थी। उसको श्री कृष्ण का नाम भी मिला हुआ था "कृष्णा"। अग्नि की पुत्री जिसने अपने अपमान को, अपने अहसासों को, छोटी बड़ी कामना को सब को एक अग्नि में जला दिया। स्वयंवर के समय भी श्री कृष्ण एक दोस्त बन कर उसका मार्गदर्शन करते हैं, उसको पांडवों से बंधन बाँधने को कहते है। वह सब कुछ भूल कर श्री कृष्ण की आज्ञा मानती है। सिर्फ पांडवों से बाँध देने के समय ही नहीं बल्कि पश्चात भी सदैव श्री कृष्ण उसके साथ रहे ।

उनका एक दैवीय रिश्ता भी सामने आता है। श्री कृष्ण को भगवान विष्णु का अवतार कहा गया है, और द्रौपदी को इन्द्राणी का अंशावतार कहा गया है। एक शिष्य अपने गुरु के मार्ग दर्शन में सारी उम्र रहता है, गुरु भी कभी अपने शिष्य को नहीं छोड़ता। इसी प्रकार द्रौपदी भी श्री कृष्ण को गुरु मानती थी और श्री कृष्ण भी सारी उम्र उसका मार्गदर्शन करते रहे, वह राज दरबार में रही हो या बनवास में।

उसका एक मुख्य रूप जो पूरी कथा में देखने को मिलता है, वह है सखा का रूप, वह श्री कृष्ण को अपना सखा मानती थी। जिस से वह अपने दिल की बात बिना झिझक कह सकती थी, कर सकती थी। जब भी वह उदास होती या किसी भंवर में फंसा महसूस करती, तब तब श्री कृष्ण को ही याद करती थी। किसी भी रूप में हो श्री कृष्ण दौड़े चले आते थे। जब भरी सभा में कौरवों द्वारा उसको केशों से पकड़ कर लाया गया, उसको अपमानित किया गया, समस्त हस्तिनापुर के बड़े बड़े योद्धा, वीर, गुरु जन सब चुपचाप हाथ बाँध कर बैठे तमाशा देख रहे थे, कोई भी उसकी रक्षा के लिए आगे नहीं आया, तब उसकी आँखों ने बंद हो कर सिर्फ श्री कृष्ण को ही पुकारा, और बिना किसी देरी के वह अपने दिव्य नाटकीय साड़ी रूप में प्रकट होकर उसकी रक्षा भी करते है। द्रौपदी वहां कहती भी है, उसे अब श्री कृष्ण के बिना किसी और पर भरोसा नहीं रह गया है। एक बार जब श्री कृष्ण शिशुपाल का वध करते हैं, तब उनकी एक ऊँगली पर सुदर्शन चक्र से घांव हो जाता है, जिससे खून बहने लगता है। तब द्रौपदी अपनी साडी के पल्लू को फाड़ कर उसकी ऊँगली पर बाँध देती हैं। कहा जाता है उस दिन सावन पूर्णिमा थी, जिसको आज भी सनातन धर्म में रक्षा बंधन के तौर पर मनाया जाता है।

श्री कृष्ण और द्रौपदी का रिश्ता आदर्श था। जितने आयाम और नाम खोजने की क्रिया जारी रखेंगे उतने ही नाम और आयाम मिलते जाएँगे। जैसे लकड़ी में अग्नि, पुष्प में खुशबु, वायुमंडल में नक्षत्र और मानवीय देह में स्वास, बस कुछ इसी तरह का संबंध है दोनों का।

उत्तरा : उत्तरा राजा विराट की पुत्री थी। जब पांडव अज्ञातवास कर रहे थे, उस समय अर्जुन वृहनल्ला नाम ग्रहण करके रह रहे थे। उसने ही उत्तरा को नृत्य, संगीत आदि की शिक्षा दी थी। जिस समय कौरवों ने राजा विराट के गौ धन को हस्तगत कर लिया था, उस समय अर्जुन ने ही कौरवों से युद्ध कर के अपूर्व पराक्रम दिखाया और गौ धन को वापिस छुड़ाया था। अर्जुन की उस वीरता से प्रभावित होकर राजा विराट ने अपनी कन्या उत्तरा का विवाह अर्जुन से करने का प्रस्ताव रखा था। अर्जुन से यह कह कर कि उत्तरा उनकी शिष्या होने के कारण उनकी पुत्री के समान है, इस लिए उससे विवाह नहीं कर सकते, कहके अस्वीकार कर दिया था। उसका विवाह अपने पुत्र अभिमन्यु के करवा कर उसे पुत्र वधू के रूप में स्वीकार कर लिया था। महाभारत के युद्ध पश्चात पांडवों के आखिरी बचे वंशज राजा परीक्षित का जन्म अभिमन्यु की मृत्यु के बाद उत्तरा की कोख से ही हुआ था।

एक छोटी सी कन्या, जिसने अभी यौवन में प्रवेश किया था। जिसे कुरुक्षेत्र की भूमि पर समस्त हस्तिनापुर के मर्दों की लाशों के साथ अपने पति, पिता और भाई की लाश देखने को मिली। उसने युद्ध में भाग नहीं लिया था, न ही उसकी होने वाली संतान ने। अश्वत्थामा जब ब्रह्म अस्त्र से उसके गर्भ में पालने वाली पांडवों की आखिरी संतान की भ्रूण हत्या कर देता है, तब वह श्री कृष्ण के चरणों में अपना दर्द व्यक्त करती है। रिश्ते में श्री कृष्ण उसके मामा ससुर लगते हैं। श्री कृष्ण भी उसके दर्द को समझते हैं। वह उसके दुःख को समझते हुए उसकी संतान को दोबारा प्राण देते हैं, और अश्वत्थामा को चिरकाल तक भटकने का शाप।

महाभारत में वेद व्यास भीष्म पर्व में कहते है, "द्वापर की युग भूमि बड़ी विषम है- उससे जुड़ी हुई कलि की युग-भूमि और भी विषदंष्ट्र। कृष्ण का व्यक्तित्व अपने प्रियजनों के लिए कितना भी मधुर क्यों न हो, पर काल की क्रूरता के भीतर गरजता हुआ कृष्ण काल से भी अधिक प्रचंड और दुधर्ष है।" (*भीष्म पर्व* 35)

केवल नायिकाएँ ही नहीं बल्कि इसके मुख्य नायकों के साथ भी श्री कृष्ण के प्रतयक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध रहे हैं। जहां भी जो भी मुख्य घटना हुई उनकी उपसतिथी अवश्य रही, या तो उनके मार्गदर्शन में या उनकी बातों के माध्यम से।

नायिकाओं में सामान्यताएँ और विषमताएं

महाभारत जितनी रहस्मय और उत्सुकता पूर्ण है, उतने ही इसके पात्र भी रहस्य पूर्ण है। कोई किसी का अवतार है, कोई अंशावतार, कोई मानवीय प्रक्रिया से जन्म ले रहा है, कोई नाटकीय ढंग से जन्म ले रहा है। इसका प्रत्येक पात्र अपने आप में एक रहस्य है और कई रहस्यों से भरा पड़ा है। कोई किसी देव अथवा देवी का अवतार है, कोई किसी राक्षस का, लगभग सभी पात्र देवता, गंधर्व , यक्ष, रूद्र, वसु , अप्सरा और ऋषियों के ही अवतार अथवा अंशावतार थे। बहुत कम पात्र है जो साधारण मनुष्य रहे हों। यही विशेषताएँ महाभारत की नाटकीयता को और अमीर बनाती हैं।

इस खोज कार्य के लिए भी जिन मुख्य नायिकाओं का चयन किया गया है, उनके जीवन भी इन सब अतिनाटकीय अंशों से परिपूर्ण है। यह सभी नायिकाएँ समय समय पर इस कथा के मुख्य पर्वों और उपाख्यानों इत्यादि में प्रवेश कर के अपना योगदान देती हैं। किसी भी नायिका के योगदान को कम नहीं आँका जा सकता। इन सभी के चरित्र में बहुत सी सामान्यताएँ और विषमताएं पाई गई हैं। इस तरह लगता है कि वेदव्यास ने सत्यवती से उत्तरा तक सभी नायिकाओं को मिलते जुलते अंशों से भरा है। इस ढंग से अंशो का समावेश किया गया है, कि सामान्य होने पर भी सामान्य नहीं लगते। वेदव्यास की नाटकीय सूझ का रूप दिखाई देता है, जिसने इस कथा को "महाभारत" बनाया है।

चन्द्रकान्त बंदीवाडेकर कहते हैं, "अगर हम महाभारत के रचना-शिल्प पर विचार करें तो वह कथाओं, दंतकथाओं, काल्पनिक स्वरूपों और विरूपिकरण से भरा है, जो एक सर्जनात्मक कृति की कलात्मक माँग होती है। इसकी कथाओं और पात्रों में अनेक प्रकार के संकेत और गूढ़ार्थ हैं।" (*भारतीय साहित्य पर महाभारत का प्रभाव* 12)

भारतीय समाज में नारी का स्थान सदैव ही शीर्ष पर रहा है (बाहरी आक्रमण से विभिन्न सभ्यताओं के समावेश से कुछ कुछ बदलाव हुए है)। यही सन्देश सबको दिया जाता है, जहाँ नारी का सम्मान नहीं होता, वहां देवते खुश नहीं होते।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रफलाः क्रियाः । (*मनु स्मृति* अध्याय 3/56)

यह कथा नारी से शुरू होती है, नारी उत्पीडन और उसके सम्मान को दोबारा स्थापित करते हुए एक नारी पर ही जा ख़त्म होती है। कुरु वंश ने अपना लोहा सम्पूर्ण भू भाग में मना

लिया था। उनके ही परिवार में अस्थिरता सदैव रही, जो धीरे धीरे स्वयं उनके द्वारा उनकी ही कुल वधु के निंदनीय अपमान के बाद, कुरुक्षेत्र के मैदान में खुल कर सामने आई। उसकी कल्पना मात्र से सहम जाते हैं। जितनी ख़ूबसूरती से उन्होंने अपने रण को जीता है, वह सब के लिए एक मिसाल है। नारी की दिशा और दशा को नारी पात्रों के द्वारा ही दिखाया गया है।

इस खोज कार्य में सत्यवती, अम्बा, गांधारी, कुंती, हिडिम्बा, द्रौपदी और उत्तरा का चयन किया गया है। यह नायिकाएँ समय समय पर महाभारत को आगे एक निर्णायक मोड़ पर लेकर गई। सबके चरित्र में बहुत कुछ भिन्न है, बहुत कुछ सामन्य भी है। इस कथा के बहुत से पात्र हैं, जिनका जन्म अस्वाभाविक और अमानवीय ढंग से हुआ है। वह या तो किसी के पूर्ण अवतार है या अंशावतार है। चुनी गई नायिकाओं के जन्म अति नाटकीय ढंग से हुए है। इस कथा की शिलाधार सबसे मुख्य पहली नायिका सत्यवती के जन्म के पीछे की घटना बहुत नाटकीय है। इसका जन्म एक मछली के पेट से हुआ। जो देखने और सुनने में बहुत अटपटा लगता है, असल में यही इसकी नाटकीयता है। जब इसको मंच या पर्दे पर प्रस्तुत करते हैं, तब यह अपनी और खींचती है। इससे भी बड़ी नाटकीयता तब समक्ष आती है, जिस मछली के पेट से इसने जन्म लिया था, वह मछली एक अप्सरा थी, जो शाप के कारण मछली बन गई थी। इस घटना के पीछे भी बहुत सी घटनाएं थी, जिस कारण महाभारत आगे बढती है। मतस्य कन्या होने कारण उसके तन से बहुत गंध आती थी। जिसको ऋषि पराशर दूर करते हैं। उसको वेदव्यास नामक संतान देते हैं।

केवल सत्यवती ही नहीं और भी नायिकाएं है, जिनका जन्म अस्वाभाविक तरीके से हुआ है। द्रौपदी का जन्म भी अति नाटकीय ढंग से हुआ था। इसका जन्म यज्ञ अग्नि से हुआ था, जो उसके पिता राजा द्रुपद ने अपने मित्र से अपने अपमान का बदला लेने के लिए करवाया था । यज्ञ से जन्म लेने कारण उसका नाम याज्ञसेनी रखा गया, बाद में वह कृष्णा, पांचाली और द्रौपदी के नाम से भी जानी गई।

दिनकर जोशी लिखते है, "महाभारत के सबसे अधिक तेजस्वी और विश्व साहित्य में भी जिनका स्थान विराट व्यक्तित्व के रूप में रखा जा सके, ऐसे तमाम पात्रों के पिता बहुधा इन पुत्रों के विकास या निर्माण के लिए आगे नहीं आए हैं। अपवाद- स्वरूप एक दो को छोड़ दें तो पिता पुत्रों को अवैध जन्म देकर अदृश्य हो जाते हैं। इसके बाद की सारी कथा पुत्रजन्म को ठीक, पुत्र के पालन-पोषण और निर्माण तक की कथा, उसका संघर्ष इन स्त्री पात्रों ने सहा है,

फिर भले ही वह सत्यवती हो, कुंती हो, गांधारी हो या एकदम बच्ची जैसी लगती किशोरी उत्तरा हो। सत्यवती के गर्भ से जन्मे दो पुत्र कुछ कर सकें, उसके पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो जाएँ और उसके बाद दो युवा विधवा पुत्रवधुओं के बीच सत्यवती जो संघर्ष करती है- वंश के विस्तार के लिए – वह अद्‌भुत कथा है, रोमांचक कल्पना है। इस सभी स्त्री पात्रों ने कठिन संघर्ष करके अपने गर्भ को जन्म दिया – जन्म देने के बाद उनके पालन-पोषण के लिए जो संघर्ष जाने अनजाने आ पड़ा उसे झेला और अपनी संतानों को महान पात्रों के रूप में समाज के समक्ष रखा।" (*महाभारत में मातृ-वंदना* 8)

जिन नायिकाओं का चयन किया गया है, वह सभी की सभी साधारण स्त्रियाँ नहीं थी। सत्यवती एक मतस्य कन्या का रूप थी। दूसरी नायिका अम्बा, वह भी दोबारा जन्म लेती हैं, जिसमें वह शिखंडी के नाम से जानी गई। अपने पति के दर्द को समझने वाली कौरवों की माँ महारानी गांधारी भी कोई साधारण स्त्री नहीं थी, मति का अवतार मानी गई हैं। श्री कृष्ण की बुआ और पांडवों की माँ कुंती जो एक बहुत ही कुशल राजनितज्ञ थी, वह सिद्धि का अवतार कही गई है। हिडिंबा भी एक दैत्य कन्या थी। हस्तिनापुर का भू-भाग और दशा बदल देने वाली यज्ञ की बेटी द्रौपदी इन्द्राणी का अवतार थी।

इस कथा की जितनी भी मुख्य नायिकाएँ है उनके रूप की चर्चा खुल कर इस कथा में की गई हैं। वह बहुत दिव्य रूप वाली थी। सत्यवती के समान कुंती, माद्री और गांधारी भी विश्व की असाधारण सुंदरियाँ थी, और द्रौपदी तो ऐसी अद्‌भुत रूपवती युवती थी कि पुरुष मन उसे देखकर स्थिर रह ही नहीं सकता था। विराट पर्व में उत्तरा के सौंदर्य की चर्चा भी खुल कर की गई है।

सभी नायिकाएं साधारण जन नहीं थी। वह राज्य परिवारों से संबंध रखतीं थी। महारानी सत्यवती एक राजघराने में नहीं पैदा हुई, विवाह के पश्चात् वह हस्तिनापुर के राज्य सिंहासन पर आसीन हुई। नारीवाद, सम्मान और जज़्बे की ज्वाला को जीवित रखने वाली काशी राज की राजकुमारी अम्बा, काशीराज की सबसे बड़ी बेटी थी। वह शाल्वराज से अपना प्रेम रखती थी, भीष्म के कारण वह अपने प्रेम को नहीं पा सकी, वह भी रानी थी, शिखंडी रूप में भी उसका जन्म राजा द्रुपद के राज परिवार में होता है। कौरवों की माँ जिसकी ममता के आगे श्री कृष्ण भी टिक नहीं पाए, उसने भी उसके शाप को धारण किया। वह महारानी गांधारी, गंधार नरेश सुबल की पुत्री थी, उनके राज्य के नाम पर ही उसका नाम गांधारी पड़ा। महाराजा शूरसेन के

घर एक पुत्री ने जन्म लिया, जिसका नाम पृथा रखा गया। जब वह राज कन्या बाल अवस्था में आई, उसको उसके पिता ने अपने भाई राजा कुंतीभोज को अर्पण कर दिया। जिसका नाम रानी कुंती पड गया, फिर विवाह के पश्चात् वह हस्तिनापुर की रानी बनी। भीम की पतनी और घटोत्कच की माँ राजा हिडिम्ब की बहन भी राक्षस राज्य परिवार से संबंध रखती थी। जिसने अपने भाई हिडिम्ब की मृत्यु के बाद सारा राज्य भाग संभाला, पांडवों की रक्षा भी की, अपने पुत्र की आहुति से महाभारत के युद्ध में एक निर्णायक मोड़ को गति प्रदान की। राजा पांचाल की पुत्री राजकुमारी द्रौपदी, जिसने पांडवों को बांध कर रखा, उनको एक कुशल महारानी का रूप दिखाते हुए मार्ग दर्शन किया। पांचाल की राजकुमारी से हस्तिनापुर की महारानी तक एक बहुत लंबा सफ़र तय किया है। चयनित की गई नायिकाओं में से अंतिम नायिका उत्तरा, जो महाभारत की कथा को सबसे अंतिम मोड पर आगे लेकर जाती है, जिसके गर्भ में पांडवों का आखिरी अंश पल रहा था। वह थी राजा विरत के राज्य परिवार से ही संबंध रखती थी।

एक मुख्य सामान्यता जो सब नायिकाओं के संघर्ष को जारी रखती हैं, वह है बिन पिता के बच्चों का लालन पालन। सत्यवती वह नायिका है, जो इस संघर्ष को जारी रखती है (वैसे तो यह संघर्ष राजा भारत के पालन से शुरू हो जाता है, उससे पहले शकुन्तला इस को सह चुकी है) राजा शांतनु की मृत्यु के बाद उसके दो पुत्र चित्रांगद, विचित्रवीर्य और एक सौतेला पुत्र देवव्रत भीष्म रह जाते हैं। इसके साथ वह हस्तिनापुर की विशाल सत्ता को भी संभालती है। दूसरी नायिका पांडवों की माँ कुंती, राजा पांडु को जब मिले शाप के कारण उसकी मृत्यु हो जाती है, फिर कुंती का अकेली माँ का सफ़र शुरू होता है। वह अपने और माद्री के पुत्रो को अच्छा पालन पोषण देती है। उसने जिंदगी भर नकुल और सहदेव को कभी यह महसूस नहीं होने दिया, कि वह उसके सौतेले पुत्र है। उनके विवाह के पश्चात् महाभारत के युद्ध तक उनका मार्गदर्शन करती रही। युद्ध ख़त्म होने के बाद अपनी संतानों का त्याग कर अपने जेठ जेठानी के साथ वनों में चली गई। उसके चरित्र में केवल मातृत्व ही नहीं पितृत्व का तत्व भी उभर कर सामने आता है। इन नायिकाओं ने कभी स्वयं में बेचारे या अकेलेपन का एहसास नहीं होने दिया। उन्होंने स्वयं को किसी पुरुष शक्ति के सहारे का बाध्य नहीं रखा। बनवास के दौरान पांडवों का सामना का एक राक्षस राजा हिडिम्ब से होता है। जो भीम के हाथों मृत्यु को प्राप्त हो जाता है । उसकी बहन हिडिम्बा, भीम से विवाह कर के पांडु वंश की वधु बनती है। वह भी पुत्र प्राप्ति के बाद भीम के चले जाने के पश्चात् अकेले वनों में घटोत्कच का पालन करती है। एक

पति के बिना संतान के पालन का संताप वह भी अपने तन और मन पर झेलती है। सभी नायिकाओं ने अपनी संतानों का पालन इतने अच्छे ढंग से किया । हिडिम्बा का पुत्र भी अपनी माँ के संस्कारों पर चलता हुआ, धर्म युद्ध में अपने प्राणों की आहुति दे देता है। महाभारत का युद्ध ख़त्म हुआ तो बड़ी संख्या में जवान स्त्रियाँ बचीं थी। जिन्होंने बिन बाप के अपने बच्चों का पालन करना था। एक पीढ़ी को आगे बढ़ाना था। मानो सत्यवती का संताप और गृह नक्षत्र संपूर्ण हस्तिनापुर की स्त्रियों के भाग्य में प्रवेश कर चुके थे। उनका नेतृत्व करने के लिए पांडवों के आखिरी अंश को अपने गर्भ में धारण किए उत्तरा खड़ी थी। जिसने अपने पुत्र का अपने पूर्वजों की भाँति बिना पिता के पालन पोषण करना था।

गृह हो या राज्य, युद्ध हो या कूटनीति सब जगह नायिकाओं ने स्वयं को साबित किया इस कथा में बड़े और निर्णायक मोड़ आए हैं, सब में उन्होंने स्वयं को खड़ा किया। भारत देश का नामकरण और आरंभ राजा भरत से माना जाता है, जिसने देश की बाहों को बहुत बड़े भू भाग तक फैलाया, जिसमें आगे चलकर राजा शांतनु ने भी अपना योगदान दिया। उसकी पत्नी सत्यवती सत्ता के शीर्ष पर बिराजमान होती है। वह किसी राज्य परिवार से संबंध नहीं रखती थी, पर राजा शांतनु के संग रह कर उसकी राजनीतक और कुटनीतिक समझ इतनी ज्यादा प्रबल और अमीर हो गई थी, कि उसने अपने बल और छल से हस्तिनापुर की हदों का और विस्तार किया। बड़ी ही समझ से उसने भीष्म का प्रयोग किया। जिसने उसकी सत्ता की रक्षा की, जब उसके दोनों बेटे बिना किसी संतान प्राप्ति के मृत्यु के मूंह में चले गए, तो उसने भीष्म को अपनी प्रतिज्ञा तोड़ कर आगे आने को कहा, जब उसने मना कर दिया तो अपने ब्राह्मण पुत्र वेदव्यास से नियोग प्रथा का सहारा लेते हुए पौत्रों की प्राप्ति कर राज्य सिंहासन को उत्तराधिकारी दिए। कथा के बीच में अपनी वधुओं और ब्राह्मण पुत्र वेदव्यास के साथ बनवास ले कर सत्ता का त्याग कर चली गई। पीड़ा और संताप भी इन सभी नायिकाओं के जीवन का एक अंग था। सभी नायिकाओं ने संताप झेला है। गांधारी और द्रौपदी का इस युद्ध के अंत में एक भी पुत्र जीवित नहीं बचा था।

कुंती एक कुशल राजनीतिज्ञ थी। बचपन से ही उसने राजनीति की शिक्षा ग्रहण की थी, इसका प्रमाण वह कथा में देती रहती है। पति की मृत्यु के पश्चात उसने संघर्ष नहीं छोड़ा। वह जानती थी, कौरव संख्या और बल में पांडवों से ज्यादा है। जब भी उसके पुत्र बनवास पर गए, वह अपने पुत्रों के साथ गई। इस दौरान उसने अपने पुत्रों के बल पर कई क्षेत्रीय राजाओं से

बल, छल, राजीनीति , कुटनीतिक और विवाह चाल से संबंध स्थापित किए। हिडिम्बा से विवाह, द्रौपदी से पाँचों भाइयों का विवाह और मणिपुर की राज कन्या से विवाह, यह सब इसी कुशल राजनीति के प्रमाण है। वह हर पल श्री कृष्ण से भी संपर्क साधे रखती है और उसको कहती है, "अगर तुम अपने भाइयों की रक्षा और मार्ग दर्शन नहीं करोगे तो कौन करेगा ? श्री कृष्ण उनका सदैव मार्गदर्शन करते रहे। कुरुक्षेत्र के मैदान में भी किया। जब युद्ध ख़त्म हो जाता है, तब वह अपने जेठ जेठानी के साथ बनवास लेकर अपनी कुटनीतिक चाल को सिद्ध करती है, कि वह वनों में जाकर यह देख सके, कही वह उनके पुत्रो के खिलाफ कोई षड्यंत्र तो नहीं कर रहे। एक कमाल का रूप वेदव्यास ने उसको दिया है।

राक्षसी कुल में पैदा हुई हिडिम्बा अपनी कुशलता का परिचय पग-पग पर देती है। जब द्वंद्ध युद्ध में उसके भाई हिडिम्ब का वध भीम के हाथों हो जाता है, तब वह अपनी बात कुंती के समक्ष रखती है, कि उसका भाई ही उसका सब कुछ था, जिसकी छाया में वह जीवन यापन करती थी। अब वह अकेली रह गई है, उसकी रक्षा कौन करेगा ? इस लिए वह चाहती है, वह भीम से विवाह करे क्यों कि वह भीम को चाहने लगी है। वह जानती थी कि अकेली रह कर वह अपनी सत्ता, राज्य आदि खो सकती है। कोई भी उसके राज्य पर हमला कर सकता है। इसी लिए उनसे विवाह संबंध स्थापित किया, ताकि वह सुरक्षित रह सके। वह अपना एक उत्तम राजनितज्ञा का रूप दिखाती है। जब महाभारत का युद्ध आरंभ होता है, तब वह अपनी सेना और सत्ता से पांडव पक्ष की सहायता करती है। यही नहीं अपने पुत्र और पौत्र के प्राणों की आहुति इस युद्ध में दे देती है।

द्रौपदी तो अग्नि की पुत्री और इन्द्राणी का अवतार थी। जैसी संगत वैसी रंगत, फिर भला श्री कृष्ण से जिसकी संगत हो जिसको श्री कृष्ण का नाम कृष्णा मिला हो, जिसको महाभारत का सबसे बड़ा नायक स्वयं अपनी सखा कहता हो, वह भला किसी से कम कैसे हो सकती है। एक तो वह पांचाल की राजकुमारी और फिर हस्तिनापुर की राज्य वधु। जब भी उसके पतियों के ऊपर कोई समस्या आई, तब उसने ही सबका मार्गदर्शन किया। बनवास के दौरान वह उन सबके साथ कंधे से कन्धा मिलाकर चली। जब राज्य सभा में उसका चीर हरण और अपमान हुआ उसके बाद भी घबराई नहीं। जब उसे कुछ मांगने के लिए कहा गया तब उसने पांडवों की मुक्ति मांगी, वह उनकी शक्ति को जानती थी। उसके खुले केशों ने पांडवों के

खून को सदा खौलता रखा। जब भी वह कहीं कमज़ोर पड़ती या मनोबल गिरता, तब वह अपने सखा श्री कृष्ण का सहारा लेती। उन सब पांडवों की शक्ति को निर्देशित और जागरूक करके ही महाभारत के युद्ध में अपने राज्य सभा में हुए अपमान का बदला लिया, और स्वयं को कुशल राजनीतिज्ञा भी साबित किया।

एक नारी के सम्मान को जब ठेस लगती है, या जब चोट पहुंचाई जाती है, तब क्या होता है ? एक नारी क्या कर सकती है ? एक नारी को कैसे जीवन यापन करना चाहिए ? असल में नारीवाद है क्या ? बहुत से प्रश्न है, जो उपजते हैं। उन सब को एक जगह एक नायिका के चरित्र में डाल दिया। जिस नारीवाद का बीज अम्बा ने बोया था, उसको उसकी अगले जन्म की बहन द्रौपदी ने एक विशाल पेड़ के रूप में परिवर्तित कर दिया। जिसकी छाया और फ़ल चिरंकाल तक और लोगों को संदेश और सुख प्रदान करेंगे।

जिन नायिकाओं का चयन किया गया है, उनमें सत्यवती और कुंती के जीवन कथा में एक और सामान्यता है, जो बिलकुल मिलती जुलती है। वह है विवाह पूर्व संतान की प्राप्ति और फिर दोबारा कौमार्य की प्राप्ति कर लेना। जब सत्यवती के समक्ष महर्षि पराशर ने उससे मिलन की इच्छा जताई, तब उसके तन से आने वाली मछली की दुर्गन्ध को एक अलोकिक सी दिव्य गंध में तब्दील कर दिया और सत्यवती ने भी अपनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए कहा, आपसे प्राप्त होने वाली संतान भी आपसी ही दिव्य और विद्वान हो, दूसरी शर्त की "उसका कौमार्य भंग न हो संतान प्राप्ति के बाद वह फिर कौमार्य को प्राप्त करले। कथा में होता भी बिलकुल वैसा ही है। उसको एक पुत्र की प्राप्ति होती है, जो वेदव्यास नाम से जाना गया। सत्यवती को फिर दोबारा कौमार्य प्राप्त हो गया। सुनने में जैसा भी हो, यह घटना बहुत रोचकता और नाटकीयता भरपूर है।

दूसरी घटना उसी की पौत्र वधु कुंती की। जब वह कुरु वंश की वधु नहीं बनी थी। वह गुरुकुल आश्रम में रहती थी, तब वहां महर्षि दुर्वाषा आए हुए थे, उनकी सेवा के लिए कुंती को कार्यभार मिला हुआ था। उसकी सेवा और भाव से वह इतने खुश हुए की उन्होंने उसको कुछ मंत्रो का वरदान दिया, जिसके प्रयोग से वह किसी भी देवता की सहायता से संतान प्राप्ति कर सकती है। उस समय कुंती के मन इतना कौतुहल था कि एक दिन कुंती ने इस बात को परखने के लिए उन मन्त्रों का प्रयोग कर डाला। सूर्य देव उसके सामने आ खड़े हो गए, और जिस से

उसको एक सुंदर बालक की प्राप्ति हुई। जो सूर्य समान तेज था। जो अपने तन पर कवच और कुंडल धारण किए हुए था। लोक लज्जा के भय से कुंती ने उस बालक का त्याग कर दिया। जिसको आगे चल कर अधिरथ और उसकी पत्नी राधा ने पाला। यह दोनों की सामान्यता है, दोनों सास बहु ने विवाह पूर्व ऐसी संतानों की प्राप्ति की, जो बहुत अधिक गुणवान, विद्वान और शक्तिशाली थी।

एक व्यक्ति के कई नाम होते है या उसको कई नामों से जाना जाता है। उसी प्रकार इन नायिकाओं के भी कई नाम थे। सत्यवती को उसके तन से निकलने वाली मछली की गंध के कारण मतस्य गंधा के नाम से जाना जाता था। महर्षि पराशर के उपचार के बाद योजङ्गंधा / सत्यवती के रूप में जानी जाने लगी। भीष्म की जिंदगी में भीषण बदलाव लाने वाली अम्बा भी अपने अगले जन्म में शिखंडिनी और शिखंडी के नाम से जानी गई। राजा शूरसेन के घर पैदा हुई लड़की पृथा जिसको उन्होंने अपने वचन के अनुसार अपने निसंतान भाई कुंतीभोज को गोद दे दिया, बाद में वह "कुंती" नाम से जानी गई, जिसने पांडवों को जन्म दिया। श्री कृष्ण की सखा और इस महा युद्ध की महानायिका जिसका जन्म यज्ञ की अग्नि से हुआ, वह भी याज्ञसेनी, कृष्णा, सैरंध्री और द्रौपदी के नाम से जानी गई।

एक और अजीब संयोग इन सभी नायिकाओं में दिखता है। सभी की संताने पुत्र ही हैं। सत्यवती की संतानों को देखें तो उसका ब्राह्मण पुत्र हुआ वेदव्यास, फिर उसके बाद शांतनु नन्दन हुए चित्रांगद और विचित्रवीर्य

दूसरी नायिका गांधारी, इसको सौ संतानों की प्राप्ति का वर प्राप्त था। उसके सौ के सौ संतान पुत्र ही पैदा हुए, इसकी 101वीं संतान दुशाला नामक पुत्री थी। इसके इलावा इसकी सौतेली संतान भी पुत्र था। जो उसकी एक दासी से प्राप्त हुआ था। इन सबके नाम इस प्रकार हैं।

1) दुर्योधन. 2) दु:शासन. 3) दु:सह. 4) दु :शल. 5) जलसंघ. 6) सम. 7) सह. 8) विंद. 9) अनुविंद. 10) दुर्धर्ष. 11) सुबाहु. 12) दुष्प्रघर्षण. 13) दुमुर्म्ष्ण. 14) दुर्मुख. 15) दुष्कर्ण. 16) कर्ण. 17) विविंशति. 18) विकर्ण. 19) शल. 20) सत्व. 21) सुलोचन. 22) चित्र. 23) उपचित्र. 24) चित्राक्ष. 25) चरुचित्रशरासन (चित्र-चाप). 26) दुर्मद.

27) दुर्विगाह. 28) विवित्सु. 29) विकटानन (विकट). 30) उर्न्नाभ. 31) सुनाम (पद्मनाभ). 32) नन्द. 33) उपनन्द. 34) चित्रबाण (चित्रबाहू). 35) चित्रवर्मा. 36) सुवर्मा. 37) दुर्विरोचन. 38) अयोबाहू. 39) महाबाहु चित्रांगद. 40) चित्रकुण्डल. 41) भीमवेग. 42) भीमबल. 43) बलाकी. 44) बलवर्धन (विक्रम). 45) उग्रायुध. 46) सुषेण. 47) कुंणडोदर. 48) महोदर. 49) चित्रायुध. 50) निषंगी. 51) पाशी. 52) वृन्दारक. 53) दृदवर्मा. 54) दृदक्षत्र. 55) सोमकीर्ति. 56) अनूदर. 57) दृदसंघ. 58) जरासंघ. 59) सत्यसंघ. 60) सद:सुवाक. 61) उग्रश्रवा. 62) उग्रसेन. 63) सेनानी. 64) दुष्पराज्य. 65) अपराजित. 66) पण्डितक. 67) विशालाक्ष. 68) दुराधर. 69) दृदहस्त. 70) सुहस्त. 71) वातवेग. 72) सुवर्चा. 73) आदित्यकेतु. 74) बहाशी. 75) नागदत्त. 76) अग्रयायी. 77) कवची. 78) क्रथन. 79) दंडी. 80) दण्डधार. 81) धनुग्ह्र. 82) उग्र. 83) भीमरथ. 84) वीरबाहू. 85) अलोलुप. 86) अभय. 87) रौद्र्कर्मा. 88) दृदरथाश्रय. 89) अनाधुष्य. 90) कुंडभेदी. 91) विरावी. 92) प्रमथ. 93) प्रमाथी. 94) धीर्घलोचन. 95) दीर्घबाहु. 96) महाबाहु व्यूढोरू. 97) कनकध्वज. 98) कुण्डाशी. 99) विरजा. 100) युयुत्सु.

(*महाभारत* आदिपर्वणि 346)

इसको संयोग कहो या कुछ और लेकिन बात सोचने पर मजबूर करती है ऐसे क्यों ? गांधारी की देवरानी कुंती और माद्री इन दोनों की संतानें भी जो पैदा हुई वह भी पुत्र ही पैदा हुए, जो आगे चल कर पांच पांडवों के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन पाँचों पांडवों के नाम निम्नलिखित है।

कर्ण (कुंती द्वारा कौमार्य अवस्था में पैदा किया गया जिसको पांडवों में नहीं गिना जाता) युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव।

हिडिम्बा जिसका विवाह भीम से हुआ था, उसको जो संतान प्राप्त हुई थी, वह भी पुत्र ही था जिसको घटोत्कच के नाम से जाना जाता है।

पांडवों की मुख्य अर्धांगिनी जो पग पग उनके साथ रही, द्रौपदी" उसकी भी जो संतान पैदा हुई वह सभी की सभी पुत्र ही थे जो इन नामों से जाने गए:-

1)युधिष्ठिर के पुत्र का नाम : प्रतिविन्ध्य।

2)भीमसेन से उत्पन्न पुत्र का नाम : सुतसोम।

3)अर्जुन के पुत्र का नाम : श्रुतकर्मा।

4) नकुल से प्राप्त पुत्र का नाम : शतानीक।

5) सहदेव के पुत्र का नाम : श्रुतसेन।

वेदव्यास ने इस कथा को आगे जारी रखने के लिए जिस नायिका का सहारा लिया, उसकी कोख से पैदा हुई संतान भी पुत्र थी। जिसको राजा परीक्षित से जाना गया।

महाभारत काल ने नारी को एक स्वतंत्रता थी, वह अपनी मर्जी से अपने होने वाले जीवन साथी का चुनाव कर सकती थी। बहुत सी कथाएँ इस प्रथा की और इशारा करती हैं। इसी से जुडी एक और सामान्यता जो चुनी गई इन नायिकाओं में देखने को मिलती है, प्रेम विवाह, सबसे पहले सत्यवती का प्रेम विवाह महाराज शांतनु से हुआ। अम्बा भी शाल्व राज से प्रेम करती थी और उससे विवाह करना चाहती थी (जिसको भीष्म के कदम से वह पूर्ण नहीं कर पाई)। हिडिम्बा का प्रेम विवाह भीम से हुआ।

यह नायिकाएँ अपने चरित्र में नाटकीयता के ढेर और बहुत सी सामान्यताएँ लेकर स्तंभ बन कर खड़ी हुई हैं। इनके चरित्र में इतनी समान्यताएँ हैं कि कभी ऐसा लगता है सब एक दूसरे की पूरक हैं। इनमें से एक को भी छोड़ दिया जाए तो बाकी सब कहीं बहुत पीछे छूट जाएंगी।

मुख्य नायिकाओं का चारित्रिक वर्णन

सत्यवती

साहित्य में यह गुण आवश्यक है कि उसके पात्र जितनी जटिल स्थिति से स्वयं को निकाल कर बाहर लाएंगे, वह उतने ही अधिक रूप से श्रोता/दर्शक गण के मन में उतर जाएंगे। भारत में कोई भी विद्वान व्यक्ति हो या अनपढ़ व्यक्ति, सब महाभारत से परिचित है। कभी गाँव की चौपाल या मंदिर के प्रांगण में व्यासपीठ पर बिराजमान कथाव्यास से इनको सुना है अथवा इसे कभी रास-लीला के रूप में, कभी जन्माष्टमी के उत्सव में देखा है। भारतीय समाज की आधार वर्ण और जाति व्यवस्था की चर्चा से पता चलता है, किसी प्रकार कौन किस कुल, गोत्र और जाति से सम्बन्धित है। यह व्यवस्था इतने वर्ष बीत जाने पर भी चली आ रही है। महाभारत को पढ़ते, सुनते या देखते समय यह महसूस करते हैं, कि वह परशुराम जी के वंशज है, श्री कृष्ण की कुल से है, संजय उनकी जाति से थे, अश्वत्थामा उनकी कुल से जुड़े हुए है, उन्होने ही एकलव्य को अभी तक जीवित रखा है।

कभी समाज संयुक्त परिवारों में रहता था, दादा- ताऊ-चाचा-बुआ आदि सब मिल कर रहते थे। भारतीय समाज ऐसा था, यहाँ कई पीड़ियों तक की जानकारी संयुक्त कर के रखी जाती थी। महाभारत के इस महासागर में डुबकी लगाने से पहले इसके बारे में जानना जरूरी है। हर काम में पुरुषों का प्रभुत्व देखने को मिलता है। पर इस कथा में नारियां प्रारंभ से लेकर अंतिम क्षण तक जुडी हुई हैं। इनको पल भर के लिए भी आँखों से ओझल कर दिया जाए, तो यह कथा एक उलझा हुआ ताना रह जाएंगी। जिस प्रकार अपने अराध्य की उपासना करने के लिए आरती की थाली तैयार करते हैं, तो उसमें बाती, धूफ, फूल, फल, धन, तिलक सब कुछ रख देते हैं। तब तक वह थाली ही रहती है, जब तक अग्नि की सहायता से ज्योत और धूफ़ प्रज्वलित न हो। इस कथा के नायिकाएँ उस अग्नि की भाँति है जो इस कथा को संपूर्ण करती हैं। जहाँ यह पात्र युद्ध का आधार बनते हुए नज़र आते हैं, वही यह पात्र धर्म की धरा को बचाते हुए भी दिखते हैं। किसी भी व्यक्तित्व के निर्माण के लिए गुण, कार्य, चरित्र, स्वाभाव बहुत महत्त्व रखते है। इसी के आधार में सब कुछ होता है। कुछ व्यक्ति नारियल की भांति बाहर से कठोर, अन्दर से कोमल होते हैं। कुछ बाहर से कोमल और अन्दर से कठोर। वह ऐसे क्यों है, इन सब के कारणों और हालातों को समझना अति आवश्यक है।

वेदव्यास ने इसके पात्रों की रचना एक पल में नहीं की होगी। पहले सारी कथा को स्मरण किया होगा, समझा होगा, पात्रों के मनमस्तिष्क का भ्रमण किया होगा, तब जाकर इसको लिखित रूप प्रदान किया होगा। हालातों के जल में पहले मत्स्य गंधा (सत्यवती) रुपी मछली की उत्पति की, फिर चित्रांगद और विचित्रवीर दो जीव पैदा करके, स्वयं कथा में आगमन किया और धृतराष्ट्र और पंडू के संग गांधारी और कुंती की सहायता से एक मानवीय जीवों से भरी इस महाभारत नामक पृथ्वी का निर्माण कर दिया। "डार्विन कहता है, हर जीव को जीवित रहने के लिए हालातो से लड़ना पड़ता है, जो नहीं लड़ता वह अपना अस्तित्व खो बैठता है।" डाईनासौर कभी इस पृथ्वी पर राज करते थे, जलवायु परिवर्तन को सहन न कर पाए और उनका अस्तित्व ख़त्म हो गया। आज सिर्फ उनके अवशेष किसी मयूजियम में देखने को मिलते हैं। हालातो से कोई किस प्रकार और कैसे लड़ता है, कब तक लड़ता है, यह उस की क्षमता पर निर्भर करता है। इस कथा में सत्यवती बड़ी कुशलता पूर्वक अन्तः और बाहरी परिस्थितियों से लड़ती हुई स्वयं को सिद्ध करती है।

नरेंद्र कोहली लिखते हैं, "महाभारत की कथा में सत्यवती बहुत कम समय के लिए आई, किन्तु वह इस कथा की अत्यंत महत्वपूर्ण पात्र है। वस्तुतः सत्यवती का अतीत (जो महाभारत की मुख्य कथा का अंग नहीं है) उसके वर्तमान तथा भविष्य को न केवल प्रेरित करता है, वरन उसके व्यक्तिगत गुण-दोषों के विचार के लिए भी एक महत्वपूर्ण आधार है।" (*महासमर-आनुषंगिक* 19)

महाभारत के आदि पर्व के अंशावतार पर्व में सत्यवती के जन्म की नाटकीय घटना का वर्णन आता है। छेदिराज़ वसु आकाश में रहते थे, जिन्हे राजा उपरिचर भी कहा जाता था। उसकी पत्नी का नाम गिरिका था। एक बार वह जब शिकार करने के लिए जंगल में गया, तो वहाँ उद्दीपन सामाग्री पाकर कामाग्नि से संतप्त हो गया। फलत: उसका वीर्य स्खलित हो गया। राजा ने अपने वीर्य को व्यर्थ होने से बचाने के लिए उसे पुत्र उत्पत्ति कारक मंत्रों से अभिमंत्रित कर श्येन पक्षी के द्वारा अपनी पत्नी गिरिका के पास भेजा, वायु मार्ग से जाते उस श्येन पक्षी का बाज पक्षी से युद्ध हो गया, जिस कारण वह वीर्य नीचे बह रही जनुमा के जल में गिर गया। उसी नदी में एक मछली रहती थी, जिसका नाम अद्रिका था। असल में वह एक अप्सरा थी, जिसको भगवान् ब्रह्मा का श्राप मिला हुआ था। उस मछली ने वह वीर्य निघल लिया जिस से उसने गर्भ धारण कर लिया। एक दिन उसी नदी के तट पर एक निषाद ने उस मछली को अपने जाल में

फंसा लिया। जब उसका पेट चीरा तो उसमें से एक बालक और एक बालिका निकली। जिसको देख कर वह हैरान रह गया और उनको निकाल कर वह राजा छेदिराज़ वसु के पास ले गया। राजा के कोई संतान नहीं थी, उसने बालक को अपने पास रख लिया और बालिका जिसके तन से मछली की गंध आती थी, को निषाद को सौंप दिया। उसके तन से निकलने वाली गंध के कारण उसका नाम मतस्यगंधा पड़ा। पश्चात ऋषि पराशर के वरदान के बाद योजनगंधा और सत्यवती भी पड़ा। यह उस पात्र की जन्म कथा है जिसके गर्भ से स्वयं वेदव्यास ने जन्म लिया। इस कथा की ज्यादातर विशिष्ट नायिकाओं का जन्म ऐसे ही दैवीय, अमानवीय अथवा नाटकीय ढंग से हुआ है।

एक मछली बनी अप्सरा के गर्भ से वह पैदा हुई। एक मछुआरे के घर में वह पली बड़ी, एक ब्राह्मण ऋषि से उसका प्रेम फिर एक संतान प्राप्ति हुई। कैसी थी सत्यवती ? जिसका भाई एक राजा बना और वह अपने सौतेले पिता के साथ नौका विहार का कार्य करती रही। उसकी मनोदशा कैसी होगी ? उसके तन से एक मछली की गंध आती थी। जब वह यौवन काल में आई होगी, तब उसे कैसे इस से जूझना पड़ा होगा ? एक मतस्य कन्या उस समय के सबसे शक्तिशाली राज घराने की वधु बनी। पति शांतनु के मरने के बाद राजकाज कैसे चलाया ? दो जवान पुत्रों की मृत्यु के बाद क्या उसका मन नहीं डोला होगा ? अंबिका और अंबालिका से उसका रिश्ता कैसा रहा होगा ? क्या भीष्म सदैव उसका दास बनके रहा होगा या उसने बना के रखा ? महाभारत की बात करते सत्यवती का नाम आम जन के मन में क्यों नहीं आता ? जबकि यह तो वह बीज है, जिसने अपने मन में इस युद्ध की भूमि तैयार की। यह स्वयं इसके रचयिता वेदव्यास की माँ भी है। यह वह पेड़ है, जिसकी छाँव में सभी खेल पल कर आगे बड़े। जिसने बसंत और पतझड़ में सबकी रक्षा की, धुप में स्वयं जली और अमावास की रात में अंधकार का सामना भी किया।

सत्यवती एक कुशल नौका वाहिनी थी, जो अपने पिता के साथ नदी पर मुसाफिरों को पार लगाती थी। सिर्फ बाहरी तौर पर ही नहीं वह अपने जीवन में भी एक कुशल नौका वाहिनी थी। जिसने हर कठिन से कठिन परिस्थिति में भी अपनी जीवन की नौका को डोलने नहीं दिया, उसे वह तट पर लेकर ही आई। जब भी कोई विपत्ति आई उसने अपने मस्तिष्क के चप्पू चला कर उसको दूर कर दिया।

विज्ञान के अनुसार हमारे जीन और डी॰एन॰ए हमारे पूर्वजों और संतानों से मिलते हैं। सत्यवती का जन्म एक मछली के पेट से हुआ था, वो असल में एक अप्सरा थी ,जो उसको जन्म देने के बाद शाप मुक्त हो मतस्य तन को त्याग कर स्वर्ग लोक में चली गई थ। गंध के साथ सत्यवती के पास मुग्ध करने वाला रूप भी था। जिसकी सुन्दरता देखते ही बनती थी। इसका उदाहरण ऋषि पराशर हैं। जो उस पर मोहित हो गए थे। जब वह उन्हें नदी पार करवा रही थी, तब उन्होंने उसके साथ मिलन की इच्छा जताई। उसके काफी वर्षों के बाद जब एक दिन महाराज शांतनु शिकार खेलते खेलते अकेले ही बहुत दूर निकल आए, तो नदी के तट पर उसका सामना सत्यवती से होता है। गंगा के प्रस्थान के बाद जो शांतनु बुझ सा गया था, जिसने ब्रह्मचर्य का पालन किया था, वह सत्यवती के रूप को देख कर वह फिर जाग गया, उसके रूप से प्रभावित होकर विवाह का प्रस्ताव उसके सामने रख दिया। निश्चय ही एक अप्सरा की पुत्री कितनी सुन्दर होगी इस बात का अंदाज़ा लगा ही सकते हैं।

धर्म अनुसार कहा जाता है, भाग्य ही मनुष्य को कहीं भी खींच कर ले जाता है। भाग्य को बदलने की क्षमता सिर्फ और सिर्फ मनुष्य में ही होती है। भाग्य उस को मछुआरों के घर में ले आया पर अपने कर्म से वह भरत वंश की पुत्र वधु बनी। भाग्य ने जिन्दगी की शतरंज ने ढाई कदम चाल चली और उसके पुत्रों को छीन लिया। वह यहाँ कहाँ रुकने वाली थी, उसने फिर भाग्य को शह मात देते हुए, वेदव्यास के माध्यम से नियोग प्रथा का सहारा लेकर अपने वंश को आगे बढ़ा लिया। अपनी प्रबल इच्छा के कारण सत्यवती ने अपने जीवन में जो चाहा वह सब पाया।

राजसत्ता की चिंगारी कहीं न कहीं उसके ह्रदय में लग गई थी। उसे आग के रूप में फिर ज्वाला के रूप में और फिर ज्वालामुखी के रूप में परिवर्तित होने तक ठंडा नहीं होने दिया। सब उसको देखना तो चाहते थे और उसके पास भी आना चाहते थे, किन्तु उसकी गंध के कारण वह आ नहीं सकते थे। किसी जवान कन्या के साथ ऐसा हो तो उसकी मनोदशा क्या होती होगी। एक दिन जब वह ऋषि पराशर को नदी पार करवा रही थी तब उन्होंने उससे मिलन की इच्छा जताई। वह ऋषि पराशर के ज्ञान, साधुत्व और शक्तियों के बारे में जानती थी। इस इच्छा को जानकार वह कुछ क्षण चुप रही और फिर बहुत चतुरता से उसके सामने कुछ शर्ते रख दी (पुरुष सदैव नारी के आगे झुक जाता हैं, वह अक्सर अपनी इन्द्रियों पर काबू नहीं रख पाता) उसने पहली शर्त रखी कि उनकी इस प्रक्रिया को कोई भी देख न सके। यह बात

सुनते ऋषि पराशर ने बादलों का एक घना कोहरा बना दिया जिसमें कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता था। फिर मतस्यगंधा ने कहा "मेरे कौमार्य को कोई भी क्षति न पहुंचे", भाव उसका कौमार्य भंग न हो। इस बात का ध्यान उसने भी रखा, और यह शर्त भी मनवा ली। निश्चय ही स्त्री-पुरुष के मिलन के बाद संतान की उत्पत्ति तो होती है। इस बात का ध्यान भी उसके मन में था। वह नहीं चाहती थी, उसकी औलाद भी किसी नदी के तट पर मछलियाँ पकडे और नाव चलाए। उसने एक और शर्त रखी कि उसकी संतान उसी की तरह परम ज्ञानी और विद्वान् हो। उसका सदियों तक नाम हो जो गुण आप में हैं वह उसमें भी हों। ऋषि पराशर में इस शर्त पर भी मोहर लगा दी। उसे एक बालक की प्राप्ति हुई जिसका नाम कृष्ण रखा गया जो "वेदव्यास" के नाम से विख्यात हुआ। उसकी इच्छा थी, उसके तन से आने वाली दुर्गन्ध सदा के लिए दूर हो जाए। ऋषि पराशर ने इसका इलाज भी कर दिया, उसके वरदान से गंध एक सुगंध में बदल गई जो काफी दूर तक हवा में रहती थी। इसी घटना के पश्चात वह योजङ्गंधा के नाम से भी जानी गई ।

जब राजा शांतनु ने उसके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा तो वह चकित हो गई, उसने महसूस किया भाग्य, कर्म इच्छा के आगे गिड़गिड़ा रहा है। उसके द्वार पर दस्तक दे रहा है। उसकी इच्छाएँ फिर अपने को एक साकार रूप में परिवर्तित होने को लेकर व्याकुल थी। यहाँ शांतनु के समक्ष शर्त रखी गई कि भविष्य में सत्यवती की संतान ही हस्तिनापुर की राज गद्दी पर बैठेगी। शांतनु चुपचाप राज महल लौट आया क्योकि विधि के अनुसार उसका बड़ा पुत्र देवव्रत राज्य सत्ता का उत्तराधिकारी बनता था।

जो व्यक्ति दूर की नहीं सोच के चलता है, वह जीवन में कभी सफलता का आनंद चिरं काल तक नहीं पा सकता। दूरदर्शिता का गुण सत्यवती के चरित्र की विशेषता थी। महाभारत कथा की विशेष बात है कि जिसे जो सही लगा उसने वह किया। इसमें वेदव्यास ने किसी को गलत नहीं कहा न ही प्रस्तुत किया। अपनी समझ के अनुसार जो कुछ सही लगा वह करते गए। जब देवव्रत सत्यवती से मिलने गया तो उसने अपनी शर्त बताई कि उसकी औलाद ही राज्य सत्ता पर बैठेगी। इस बात को देवव्रत ने सवीकार कर लिया। सत्यवती का दिमाग दूर की सोच रहा था। उसने यह प्रश्न किया, अगर तुम्हारी कोई संतान बड़े होकर अपना अधिकार जमाने की कोशिश करेगी तब क्या होगा ? गंगा पुत्र ने अपने पिता की ख़ुशी के लिए घोषणा

की, "मैं.....आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करुंगा"। सत्यवती भी यह सब देख कर स्तब्ध रह गई। इसी भीष्म प्रतिज्ञा से वह देवव्रत से भीष्म बन गए और बाद में भीष्म पितामह।

सत्यवती ने भीष्म को सत्ता के साथ जोड़े रख कर भी सत्ता से विहीन रखा। उसको कभी राज्य दरबार से दूर न करके अपनी दूरगामी दृष्टि का परिचय भी दे दिया। उसको संतान मोह था, यह तो ज्ञात है, उसकी रक्षा भी ज़रूरी है। क्योकि दूसरी बार उसका मिलन एक ऋषि से नहीं बल्कि एक राजा से हुआ था। वेदव्यास तो अपने पिता पराशर के ज्ञान और शक्तियों के कारण समाज और जीवन की युद्ध कला में सर्वगुण संपन्न हो गए थे। शांतनु की संतान के सन्दर्भ में ऐसा नहीं था। वह तभी से सतर्क हो गई थी, जब राजा शांतनु ने उसके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा था। उस समय उसकी आयु राजा शांतनु की आयु से काफी कम थी, उसको पता था कि हो सकता हैं, वह पहले देह त्याग सकते है। इसलिए उसने भीष्म से जब प्रतिज्ञा तो ली पर उसका त्याग नहीं किया। वह उसकी शक्तियों के बारे में भी जानती थी। गंगा पुत्र भीष्म इतना बलशाली है, समस्त जगत् में उसका मुकाबला कोई नहीं कर सकता। सत्यवती के दो पुत्र हुए चित्रांगद-विचित्रवीर। चित्रांगद अपने नाम वाले एक गंधर्व राजा चित्रांगद से युद्ध में मारा गया, वह भी सिर्क इसी चकर में कि एक नाम वाले दो राजा एक साथ नहीं हो सकते। सत्यवती अपनी बुद्धिमता अपनी संतान को नहीं दे पाई। इस घटना को देख कर ऐसा ही लगता है। उसकी दूसरी संतान विचित्रवीर शारीरिक और मानसिक क्षमता से इतना प्रबल नहीं था, कि वह हस्तिनापुर का राज्य सिंहासन संभाल सके। शांतनु पुत्र होकर भी वह शांतनु जैसे विख्यात न हुए। जब वह जवान हुआ तो उसके विवाह की चिंता उसको सताने लगी। क्षत्रिय कन्याएं उस समय अपना मन मर्जी का वर चुनती थी। सत्यवती को भी चिंता थी, भारत वर्ष में कोई भी विचित्रवीर को अपनी कन्या नहीं देगा। भाग्यवश उसी समय काशी नरेश की तीन पुत्रियों अम्बा-अंबिका और अंबालिका का स्वयंवर आयोजित हुआ। इसमें उनको आमंत्रित नहीं किया गया। सत्यवती इस कारण से परिचित थी, इस लिए उसने भीष्म से आग्रह किया कि वह काशीराज की पुत्रियों को विचित्रवीर के लिए हर के लाए। भीष्म ने इस बात का पालन भी किया। जिसमें से अंबिका और अंबालिका का विवाह उससे हुआ । विचित्रवीर किसी भी संतान का बीज उत्पन्न किए बिना ही मृत्यु का ग्रास बन गया। सत्यवती ने सदैव ही भीष्म को रक्षा कवच की तरह प्रयोग किया, वह जानती थी अगर भीष्म नहीं होंगे तो उसका साम्राज्य तिनको की तरह बिखर जाएगा। भीष्म सत्यवती की ढाल ही रहे हैं। उसने भीष्म को अंबिका और

अंबालिका से संतान प्राप्ति के लिए कहा, जब भीष्म ने उसके आदेश का पालन करने से मना कर दिया, तब उसने नियोग प्रथा का सहारा लेते हुए अपने ब्राह्मण पुत्र वेद व्यास का स्मरण किया। क्या हुआ उसके पुत्रों के वंशज राज गद्दी पर न बैठें, उसके ऋषि पुत्र वेदव्यास की संतान तो बैठ ही सकती है।

जिस प्रकार एक कलाकार अगर जिन्दगी भर एक ही तरह का अभिनय करता रहेगा तो उसे अच्छा अभिनेता नहीं माना जाएगा। उसकी कला तभी सामने उभर कर आती है, जब वह अलग अलग ढंग के किरदार को मंच पर जीता है। रंगमंच जीवन से उपजी हुई कला है, जिसका बहुत गहरा असर है। ऐसी मान्यता है, महाभारत के रचयिता वेदव्यास ने जिन वेदों को संपादित किया था बाद में उन्ही वेदों के सार को मिला कर नाट्य शास्त्र बना है। जिनमें से ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से संगीत, यजुर्वेद से अभिनय, और अथर्ववेद से रसों का संग्रह किया। इसके प्रचार और प्रसार का प्रभार ब्रह्मा ने भरत मुनि और उसके शिष्यों को दिया।

व्यक्ति अपनी जिन्दगी को अपने ढंग से चलाने की कोशिश करता है। कभी उसमें सफल होता है, कभी असफ्लातों से निराश होकर भी बैठ जाता है। इसी तरह सत्यवती थी जो जीवन युद्ध को लडती रही। हालातों ने उसे मिटाने की कोशिश की, किन्तु वह और उभर कर सामने आती रही। यह सब उस के चरित्र में छुपी हुई नाटकीयता ही थी।

हालात और परिस्थितियाँ व्यक्ति को बदल देती हैं, उसमें बहुत सी क्षमतायों का समावेश कर देती है। व्यक्ति के ऊपर भी बहुत कुछ किर्भर करता है, वह किस घटना से सीख लेता है। क्या एक बालक जो किसी सड़क के किनारे पला बड़ा हो या उसका पालन ऐसी जगह हुआ, जहाँ उसको अमीर वर्ग की तरह शिक्षा या पालन न मिला हो, उसको किसी राजस्व पद पर नियुक्त कर दिया जाए और किसी प्रदेश का कार्यभर सौंप दिया जाए, क्या वह उसको चला पाएगा ? वह अपनी जिम्मेदारी निभा पाएगा ? शायद उत्तर होगा... नहीं। सुबह से लेकर शाम तक नांव पर मुसाफिरों को एक से दूसरे तट पर लेकर जाना, फिर शाम को घर के दैनिक कार्य करना। उनकी बस्ती उसी नदी के तट के पास थी, जहाँ शासक वर्ग के लोग कभी आते भी न थे। नदी से पकड़ी जाने वाली मछलियों को बाजार में बेच कर घर का खर्चा चलता था। इस हालत में सत्यवती पली बड़ी, बाहर क्या होता है ? कैसे होता है ? इसके बारे में कोई खबर नहीं थी। एक दिन जब राजा शांतनु का आगमन हुआ फिर उसके बाद उसके साथ विवाह पश्चात् वह राज महल में आई, सब कुछ उसके सामने नया था। उसने धीरे धीरे सबको देखा

और उनके बारे में जानकारी अपने मन में संगृहत की। राजा शांतनु की मृत्यु के बाद वह राज गद्दी पर बैठी और उसने एक कुशल शासक की तरह हस्तिनापुर को संभाला। जब उसके पुत्र बिना किसी संतान को उत्पन्न किए मृत्यु के मुह में चले गए, उसे हस्तिनापुर का भविष्य अंधकार में डूबा नज़र आने लगा। इसी सोग में अंदर से वह टूट सी गई। उसने भीष्म को राजसत्ता को चलाने और वंशज देने के लिए कहा, किन्तु उसने मना कर दिया। भीष्म चाहते तो इस प्रथा का पालन कर शांतनु वंशजों को आगे बढ़ा सकते थे। शायद वह सत्यवती को उसकी पीड़ा में झोंक देना चाहते थे, जिसमें वह स्वयं झुलस रहे थे। वेदव्यास के माध्यम से धृतराष्ट्र, पांडू, विदुर के जन्म के साथ एक रौशनी की किरण उसने भारत वर्ष को दी। एक मतस्य कन्या होकर भी कुशल राजनेता की भाँति उसने राजपाट को संभाला।

वह किसी भी परिस्थिति में घबराई नहीं। महाभारत के नियमानुसार किसी सुदीर्घ विलाप से पूर्ण कोई शोक्चित्र सत्यवती के आचरण में नहीं दिखता। यही तक नहीं दो जवान पुत्रों को खोकर उसका ह्रदय विदीर्ण हो गया हो, ऐसा चित्र भी महाभारत के रचयिता ने सामने नहीं रखा। वह सब आपदायों का हल ढूंढ कर उनको पीछे छोडती हुई आगे चलती गई।

उसके इस साहसिक गुण को देखते हुए नरेंद्र कोहली लिखते हैं, "सत्यवती अत्यंत रजोगुणी महिला है। पति की मृत्यु उसे सत्ता और अधिकार से तनिक भी विमुख नहीं कर पाई होगी। पति की मृत्यु के पश्चात यदि वह जीवन से विरत हो गई होती, तो राज्य के सूत्रों को वह कदापि अपने हाथों में नहीं लेती। महाभारत की घटनाएँ साक्षी हैं कि न तो शांतनु की मृत्यु, सत्यवती को सत्ता और ऐश्वर्या से विरत कर पाई, न चित्रांगद की, और न ही विचित्रवीर्य की।" (*महासमर-आनुषंगिक* 26)

यह वह नायिका है, जिसने अपने मन में इस कथा के बीज को उत्पन्न किया। अपना विशेष स्थान वह इसलिए भी रखती है। जहाँ आम मछुआरों का नेतृत्व करती है वहां भारत की राज्य शक्ति का भी। जहाँ एक समय की मारी नारी है, तो एक योद्धा के रूप में लडती तेजस्वी औरत भी, तो कभी दूरदर्शी सोच वाली नेता, सब से महत्वपूर्ण इस कथा के रचयिता को जन्म देने वाली नारी भी सत्यवती ही है । वही सत्यवती अपनी कुल के नाश को देखने से पहले ही अपने पुत्र वेद व्यास के कहने पर अपनी दोनों पुत्र वधुओं के संग उसके साथ वनवास में चली जाती है।

वेदव्यास द्वारा रचित महभारत में सत्यवती और शांतनु दोनों का अलग अलग कुल से होना स्वयं में रोचकता भरपूर है। देवव्रत का भीष्म बनना अपने आप में अपूर्व है। जिन के लिए उसने शांतनु से विवाह किया, उनका बिना किसी संतान की उत्पत्ति के युवा अवस्था में ही मर जाना, अत्यंत दुखदाई है। कथा के संपूर्ण अध्ययन के बाद सामने आता है, कि सत्यवती रुपी पात्र महायुद्ध की जड़ में बीज का काम कर रही है। इन्ही कारणों के रहते यह कथा निरंतर पूरे विश्व के लिए खेलने के लिए सर्वप्रथम रही । जिस महत्वकांक्षा के लिए उसने शांतनु का संग निभाया वह पूर्ण न होने पर भी वह टूटी नहीं। यह उसके चरित्र को अत्यधिक प्रबल रूप में व्यक्त करती है।

अम्बा

राज महल में अठखेलियाँ करती इधर से उधर भागती किशोर युवती अपनी माँ कौशल्या के साथ मन की हर बात कर लेती। अपने सपनो के महल बना लेती तो कभी उसको एक पल में नष्ट कर देती। अभी वह अपने बाल्य काल से यौवन में पग भर रही थी। हर चीज को पाने की इच्छा और वह भी दिल से। अपनी दो छोटी बहनों अंबिका-अंबालिका को भी अम्बा बहुत प्रेम करती थी। दुनिया क्या है? उसके क्या नियम है ? इसके बारे में कुछ नहीं जानती थी। वह बस हंसना चाहती थी और हस कर जीवन जीना चाहती थी। वह भी उसके साथ जिसको वह अपने ह्रदय से प्रेम करती थी। भाग्य को कुछ और ही मान्य था। वह उस सबके लिए तैयार थी जो होने वाला था ? क्या वह जो उसके साथ हुआ उस सब को झेल पाई ? एक किशोरी युवती समय की उस मार को सह पाई ? उसकी दशा क्या हुई होगी ? वह समय धुल में धूमिल क्यों हो गई ? धूमिल हो गई या कर दी गई ?

इन सभी प्रश्नों को चिन्हित करती चित्रा चतुर्वेदी कार्तिका कहती है, "अम्बा ने वह इतिहास रच डाला जो वास्तव में मानवातीत था। भीष्म को पराजित करना असंभव था, इच्छा मृत्यु का वरदान भी उन्हे प्राप्त था। यदि अम्बा अपना संकल्प पूरा करने के लिए शिखंडी बनकर भीष्म पर प्रहार न करती तो भीष्म चिरंजीवी हो गए होते, और यह युद्ध अनंतकाल तक चलता ही रहता। महाभारत में इतिहास बदल देने वाली अम्बा अथवा शिखंडी की इस निर्णायक भूमिका को जैसे नकार ही दिया गया। अम्बा का योगदान, उसका प्रताप आदि सब कौरव-पांडवो की तुमुल जय-जयकारों के उन्मत्त घोष से दबा दिया गया।" (*अम्बा नहीं मैं भीष्मा* 15)

बलशाली भारतवंशी भीष्म उसको उसकी बहनों के संग हरण करके ले जा रहा था। साथ-साथ वह शल्व राज पर अपने बाणों से प्रहर भी कर रहा था, जो उसके रास्ते में आ रहा था। यह देख कर वह स्तब्ध रह गई। उसने तो अपने स्वयंवर का आयोजन किया था, जो लड़ाई के मैदान में परिवर्तित हो गया। जब वह हस्तिनापुर राजमहल पहुंची तो उसके सामने सबसे शक्तिशाली नारी सत्यवती खड़ी थी। जिसके आगे राजा शांतनु और ऋषि पराशर भी झुक गए थे। भीष्म भी अपनी आवाज़ उसके सामने नहीं निकाल सकता था। एक ओर कुरुवंश स्वामिनी सत्यवती और बलशाली भीष्म खड़े थे, दूसरी ओर किशोरी युवती अपनी दो सहमी हुई बहनों के साथ। सत्यवती और भीष्म से वह निडर होकर अपने अपहरण का विरोध करती है।

सत्यवती से खुल कर संवाद करती है। कहने को वह भरत वंशी है, पर उनका अपहरण करके उसने संदेह में डाल दिया है कि क्या सच में वह भरतवंशी है ? जिनके सामने सब सहम जाते थे, वहां अम्बा खुल के सिंह की भाँति गर्जी। उसकी शख्शियत ने उसको यह आज्ञा नहीं दी कि वह अपनी बहनों कि तरह बेचारी बन कर रहे। सत्य को सत्य कहने का सहस उसकी रगों में था। अगर वह भी अपनी बहनों की तरह बेचारी बन जाती तो राजमहल के अंधेरों में अपनी परछाई ढूंढती रहती। उसके आगे उन दोनों को भी झुकना पड़ा वह जानते थे, अम्बा को वश में करना संभव नहीं है। अंततः सत्यवती और भीष्म ने यह निर्णय लिया इसको शाल्व राज के पास भेज दिया जाए। सत्यवती बहुत चतुर थी वह जानती थी, शल्व राज उसे नहीं अपनाएगा क्योंकि भीष्म ने उसे पराजित कर दिया है। उसे हार कर फिर हस्तिनापुर आना ही पड़ेगा।

अम्बा शल्व को अपना प्रेमी मानती थी, पर उसने उसको कभी स्वयं को छूने तक नहीं दिया, क्योंकि वह विवाह तक अपने कौमार्य को भंग नहीं करना चाहती थी। इसके विपरीत सत्यवती ने विवाह पूर्व ही यौवन काल में ऋषि पराशर के साथ मिलन करके संतान प्राप्ति करली थी। सत्यवती का मुकाबला अब एक सति के साथ होने वाला था। जिस के कारण उसका सर्वस्व छिन जाने वाला था। जहाँ कभी उसका शासन चलता था। आज वर्तमान युग में उस हस्तिनापुर के नाम पर सिर्फ अवशेषों के भी अवशेष बचे हैं।

अम्बा का मन भी युद्ध का मैदान बन रहा था। अनेकों चक्रवात उसको डुला रहे थे। वह शाल्व राज के दरबार में पहुंची तो स्वयं को रोक ना पाई और अश्रुयों की गंगा जमुना के प्रवाह को जारी कर दिया। विधि ने तो कुछ और ही लिखा था। शाल्व ने कहा ! "अब तुम्हारे आंसू और तुम मेरे लिए मान्य नहीं हो। जिस कारण तुमने स्वयं को मुझ के ले लिए बचा कर रखा था। उसी को तोड़ते हुए भीष्म मेरी नज़रों के सामने कलाई से पकड़ कर खींचता हुआ हस्तिनापुर ले गया था। तुम मुझे स्वीकार्य नहीं हो।" इतना सुतने उसके हलक से एक भी शब्द नहीं निकला। वह पथराई हुई आँखों से भरी सभा में शाल्वराज को देख रही थी। अपमान उससे झेला नहीं जा रहा था। एक मासूम सी हँसती, खेलती युवती अब वज्र की एक प्रतिमा बन कर रह गई थी। जिस पर मूर्तिकार रूपी समय अपनी छैनी और हथोडी से प्रहार कर रहा था। वह न तो अब पिता के घर जा सकती थी, पति तो उसका कोई था ही नहीं। जिसके साथ उसने विवाह करने का सोचा था, वह भी अब उसे नकार चुका था। कोमल सी कन्या अब कठोर रूप

में परिवर्तित हो रही थी। क्योंकि समय का मुकाबला अब कोमलता से नहीं किया जा सकता था।

जिस लज्जा और सादगी को उसने संभाल कर रखा था, उसे हस्तिनापुर और शाल्व राज ने तार-तार कर दिया था। दो पुरुषों के अहं की लड़ाई में वो पिस कर रह गई थी। अम्बा का क्या दोष था ? न तो उसका अपहरण पूछ कर हुआ और ना ही उसका विसर्जन ।

हस्तिनापुर के राज दरबार में इस बात का हर्ष था, विचित्रवीर के लिए वधुएँ मिल गई हैं। उनकी दशा क्या थी ? क्या उन्होंने उसको मन से स्वीकार किया ? एक अंधकार को मन में लेकर अंबिका और अंबालिका मौन के साथ बैठी हुई थी। राज दरबार में अम्बा ने अपने स्थान के लिए प्रवेश किया। उसने जब सबके सामने कहा, "मेरा स्वामी विचित्रवीर नहीं स्वयं गंगा पुत्र होंगे।" सारी सभा में सन्नाटा सा छा गया, यह लड़की क्या कह रही है। गंगा पुत्र ने कहा "हे काशी राजपुत्री, यह सभी जानते हैं मैंने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करने की प्रतिज्ञा ली हुई है। इसलिए मैं आपसे विवाह नहीं कर सकता।" अम्बा ने कहा "शाल्व राज ने मुझे अपनाने से मना कर दिया, अब तुम भी मुझे अपनाने से मना नहीं कर सकते। यह असंभव है। भीष्म ने पलट कर जवाब दिया, इतना कह कर वह वापिस कक्ष में चल दिए। अम्बा को वापिस जाते भीष्म नहीं दिखे। उसे लगा अब उसकी आखिरी उम्मीद भी जा रही हैं। वह शरीर के बल में इतनी बलशाली नहीं थी, कि भीष्म का मुकाबला कर सके। भीष्म उसकी बात अनसुनी करते हुए चले गए। अम्बा बस रुदन करती हुई भरी सभा में अपनी बात करती हुई रह गई।

क्या नारी की दशा यही रही ? क्या उसका कोई नहीं हुआ ? क्या पुरुष बल का प्रतीक है और नारी निर्बल का ? यह सब प्रश्न उसके मन में गूंजते रहे। जो किसी के मन में दूर दूर तक न था, जो विधाता ने नहीं लिखा था, वह उसने लिखना चाहा। सतीत्व का तत्व उसमें भरा पड़ा था। सति वही शक्ति थी, जो यमराज से भी अपने स्वामी के प्राण वापिस लेकर आई थी। क्या एक बलशाली को अधिकार है, वह किसी निर्बल पर अत्यचार कर सके ? वह भी किसी किशोरी पर। उसने तो किसी को कुछ कहा ही नहीं था। हालातो ने उसे एक अजीब मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया था, जहां उसके पास सिर्फ प्रश्न ही थे। उनके उत्तर देने वाला कोई नहीं था। एक प्रश्नों का समूह ही आगे और पीछे था। अगर भीष्म एक क्षत्रिय थे, तो वह भी तो एक क्षत्रिय कन्या थी। हालातो ने उसे झुकने को बहुत मजबूर किया और बहुत प्रहार किए। बरगद के पेड़ की भाँति सब कुछ सहन करती चली गई। हालातों से लड़ने के लिए वह स्वयं को एक

योद्धा के रूप में श्रृंगारित करने लगी। उस श्रृंगार में उसने भाल को कंगन बनाया, तलवार को झुमके और अपने रक्त को काजल।

विभिन्न स्थानों पर उसने भ्रमण किया। लोगों को अपनी व्यथा सुनाई, मदद की गुहार भी लगाई। सब उसकी बात सुनते और मदद के लिए आगे भी आते, पर गंगा पुत्र भीष्म का नाम सुनते ही सब पीछे हट जाते। वह जानते थे उसको हराना असंभव है। दूसरा कोई भी भरतवंशियों से युद्ध मोल नहीं लेना चाहते थे। अम्बा ने अपना साहस नहीं हारा। वह बहुत शर्मिंदा होती कि उसे किसी पुरुष से सहायता मांगनी पड़ रही है। वह क्यों पुरुष नहीं है ? अगर वह पुरुष होती तो एक क्षण में भीष्म को खंड-खंड कर देती या बदला लेते वीरगति को प्राप्त कर लेती। वह एक निरपराध अपराधी बन गई थी ! यहीं से उसने भीष्म के साथ अपने शीत युद्ध की शुरुआत कर दी थी। वह हिमालय की चोटियों पर एक आश्रम में सन्यासी का जीवन यापन करने लगी। वहां के मुनियों को अपनी व्यथा सुनाई। एक दिन वहाँ नाटकीय ढंग से उसकी भेंट उसके नाना से होती है। जो भगवान परशुराम के परम मित्र थे। जिन्हों ने इस पृथ्वी को क्षत्रियों से विहीन कर दिया था। वह स्वयं भीष्म के गुरु भी थे। उसने अपने अन्दर जल रही ज्वाला को शांत होने का धूमिल दृश्य देखा। परशुराम के आश्रम में वह अपना विनय लेकर पहुंची। विशाल काय् तन, चेहरे पर लालिमा, आँखों में तेज, एक ऐसे ब्राह्मण को देख अम्बा कुछ शांत सी होने लगी। परशुराम जी ने उसकी सारी व्यथा सुनी और उसकी मदद करने का आश्वासन दिया। फिर अपने शिष्य के माध्यम से भीष्म को सन्देश भिजवा दिया कि उसको मिले। परशुराम ने भीष्म को बहुत समझाया के वह उस युवती को अपनाए। भीष्म अपनी प्रतिज्ञा पर अडिग रहा और मना कर दिया। परशुराम ने उसे युद्ध करने के लिए कहा। दोनों में 23 दिन तक भयानक युद्ध चला। इस युद्ध का कुछ भी परिणाम न निकला। सारी धरा नष्ट होने पर आ गई। अंत मे युद्ध शांत हो गया किन्तु अम्बा शांत नहीं हुई थी ।

"अम्बा कभी परास्त नहीं होगी। तुम इच्छा मृत्यु के वरदान के मालिक हो। याद रखना जब भी तुम्हारी मृत्यु होगी उसका कारण मैं ही बनुगी। जिस कुरु वंश के लिए तुमने मेरे जीवन को खंडित किया। मैं इसी कुरु वंश को तुम्हारी आँखों के सामने खंड खंड कर दूंगी।" अम्बा के मन मे ऐसा चल रहा था। आगे चल कर भगवान शिव ने उसे भीष्म की मृत्यु का कारण बनने का वरदान दे कर शांत किया। ऐसा नहीं था भीष्म उसका कठोर विरोधी था। वह अंतर मन से

उसकी शक्ति को जानता था। वह नारीत्व की शक्ति को जानता था। खुल कर अम्बा को कभी भी अपना नहीं सका न ही मन से उसे निकाल सका था।

भीष्म की इस मंशा के पीछे क्या कारण थे ? उसने ऐसा क्यों किया ? इन सब को नरेंद्र कोहली ने भी अंकित करते हुए लिखा है, "भीष्म का अम्बा के प्रति अनुराग भी बहुत सूक्ष्म रूप में ध्वनित होता है; अन्यथा वे काशी में ही यह घोषणा कर सकते थे कि वे इन राजकुमारियों का अपहरण अपने लिए नहीं, अपने भाई के लिए कर रहे हैं। वय में इतने छोटे भाई विचित्रवीर्य के लिए अम्बा का अपहरण सर्वथा असमीचीन था। तो फिर भीष्म ने उसका अपहरण क्यों किया ? वे तीन में से एक राजकुमारी भी ले आते तो विचित्रवीर्य को तो पत्नी मिल ही जाती; फिर वे विचित्रवीर्य से इतनी बड़ी अम्बा को किस मोह में हस्तिनापुर ले आए ? और फिर अम्बा के एक बार यह कहने पर कि वह विचित्रवीर्य से विवाह नहीं करेगी, उसे सममानपूर्वक शाल्व तक पहुंचाने का प्रयत्न भी उसके प्रति भीष्म के मन की कोमलता की ओर इंगित करता है। यह दूसरी बात है कि अपनी प्रतिज्ञा के कारण भीष्म अपने मन के राग को सार्वजनिक रूप से तो क्या, अपने एकांत के सम्मुख भी स्वीकार नहीं कर सकते थे।" (*महासमर-आनुषंगिक* 26)

जब अम्बा उसके दरबार से निकली तो उसने अपने गुप्तचर उसके पीछे लगा दिए, और उन्हें आदेश भी दिया कि हर छोटी से छोटी बात भी उसको आ कर बताई जाए। वह नहीं चाहता था, उस युवती अम्बा को कोई कष्ट हो। ऐसे तो भीष्म के कई शत्रु होंगे। इस शत्रु से उन्हें कुछ विशेष लगाव था। भगवान शिव से वरदान प्राप्त करने के बाद वह एक नदी में हठ योग साधना करने लगी। कभी घास फूस पर निर्भर, कभी कंद मूल पर, कभी केवल वायु पर ही, उसकी हर दशा का व्याख्यान गुप्तचरों द्वारा भीष्म तक पहुँचता रहता था। वह भी विचलित हो जाते। इतनी छोटी उम्र में इतना कठिन तप और हठ। एक दिन उनके गुप्तचरों ने उन्हें सूचना दी, जहाँ अम्बा साधना कर रही थी, उसी नदी में उसने जल समाधि ले ली है। उस रात भीष्म सो न सके। एक निर्दोष कन्या की हत्या का पाप उसने अपने सर पर महसूस किया।

नारीत्व की परिभाषा को उसने बदल कर रख दिया था। किसी के आगे झुक कर रहने से अच्छा है, संघर्ष कर अपने प्राण त्याग दो। उससे प्रेरणा लेकर कई नायिकाओं ने अपनी जीवन को रोशन किया। भीष्म भी दिन रात उसके बारे में सोचते रहते। उस किशोरी युवती ने एक विशिष्ट उदाहरण सबके सामने प्रस्तुत कर दिया। सोचने पर भी मजबूर कर दिया, ऐसा भी हो सकता है क्या ? एक चमत्कारिक व्यतितव को उसने रूपमान कर दिया था। सब पुरुषों को

यह सोचने के लिए मजबूर कर दिया के हर नारी में एक अम्बा भी होती। जो समय आने पर देवी अम्बा भी बन सकती है।

कौन थी वह ? नारी या पुरुष ? उसका व्यक्तित्व कैसा था ? वह अबला थी या योद्धा ? उसको गले का हार कहें या सर का मुकुट ? उसको अँधेरे में भटकता जुगनू कहें या फिर अग्नि युक्त सूर्य ? उसको ब्रह्मचारिणी कहें या एक रानी ? उसको एक बाण की संघ्या दें या किसी अस्त्र की ? वह तिनका जिसने एक पहाड़ का अस्तित्व ख़त्म कर दिया। वह विचार जिसने प्रतिशोध की परिभाषा ही बदल दी। धैर्य को भी अपने अस्तित्व पर सोचने को मजबूर कर दिया। स्वयं की तलाश में घूमते अनेकों प्रशनो का एक उत्तर जिसने सबको निरुतर कर दिया हो। उसका चरित्र चित्रण कैसे था ? किसी एक शब्द में उसे परिभाषित करना हो तो यह बहुत कठिन कार्य है। शिखंडी भारत में कुछ भी रहा हो, लेकिन इंडोनेशिया के जावा द्वीप पहुँचते पहुँचते शिखंडी एक औरत हो गया। जावा की महाभारत कथा उसकी मांग में अर्जुन का सिंदूर देखती है। किन्तु भारत देश में प्रचलित महाभारत कथा में उसके सौभाग्य में यह नहीं है।

समाधि लेने के बाद भी वह अपने कार्य को भूली नहीं थी। वह सदैव भीष्म को अपना आभास दिलवाती रही। अगले जन्म में भी वह अपने प्रशनो के उत्तर ढूंढ रही थी। वह सोचती रहती थी वह पुरुष क्यों नहीं है ? अपने स्वाभिमान का बदला क्यों नहीं ले सकती ? उसके स्वयंवर को उसका शमशान क्यों बना दिया गया ? उसकी छोटी बहनों को गुलाम बना कर, विवाह का अनचाहा पट्टा डाल कर आधिकारिक तौर पर बलात्कार क्यों किया ? जब विचित्रवीर उनको भी एक विचित्र स्थिति में छोड़ कर चला गया तो उनको वेदव्यास के सामने क्यों परोस दिया गया ? इन सबका समाधान उसको करना था। पौरुषत्व और स्त्रीतव की लड़ाई में वह सेनापति बन गई थी। उसका मुख्य उद्देश्य था युद्ध जीतना और केवल जीतना।

उसके साथ उसका अपना ही मन था, जिसे वह हौंसला देती रही और आगे बढ़ कर अपना उद्देश्य पूर्ण करने को कहती रही। वह भीष्म के मुकाबले बिल्कुल भी कमज़ोर नहीं थी। उसको सिर्फ इच्छा मृत्यु का वरदान प्राप्त था, अम्बा ने जब चाहा जन्म लिया और जब उसको लगा उसका उद्देश्य पूरा नहीं हो रहा, उसे समाधि लेकर अपनी देह का त्याग कर दिया। एक बार जब वासुदेव कृष्ण, भीष्म के पास बैठे कुछ वार्तालाप कर रहे थे, तब उन्हें किसी का आभास हुआ और भीष्म से पूछा कक्ष में कौन है ? तब भीष्म ने कहा अम्बा और इस जन्म में शिखंडी। उसने भीष्म का पीछा कभी नहीं छोड़ा। वह उससे प्रतिशोध लेना चाहती थी। जो

अपनी बातें समाज को कहना चाहती थी। उस बात को ना तो भीष्म ने सुना, न शाल्वराज ने और ना ही किसी अन्य व्यक्ति ने। जब भीष्म अपनी वार्तालाप सम्पूर्ण करके चले जाते हैं, तब शिखंडी उनके सामने आ दंडवत प्रणाम करता है। वासुदेव उसके मस्तिष्क पर जैसे ही सनेह भरा हाथ रखते हैं, उसकी आँखों से जल धारा प्रवाहित होने लगती है। उसने सिर्फ इतना ही कहा, "भगवान अगर आप उस समय अवतरित हुए होते, तब शायद आज मुझे इस यात्रा पर न निकलना पड़ता।" वासुदेव ने एक गहरी मुस्कराहट के साथ मानों यह कह दिया, कर्म के साथ उचित समय की प्रतीक्षा करो।

हर स्त्री के अन्दर एक पुरुष होता है, और हर पुरुष के अन्दर एक स्त्री। जिसको जगाना और पहचानना उसका स्वयं का कर्म होता है। इसीलिए उस निराकर का एक आकर अर्धनारीश्वर के रूप में भी मिलता है। अम्बा अपने उस पुरुषत्व को जगाती रही और उचित समय का इंतज़ार करती रही। भीष्म के अन्दर की स्त्री भी जाग रही थी, जो अम्बा का पल-पल ध्यान रखना चाहती थी। वह भी प्रतीक्षा कर रही थी, कब वह उसको मृत्यु द्वार तक पहुंचा कर संपूर्ण करे। मानो अम्बा अनाआधिकारिक तौर पर भीष्म की अर्धांगिनी बन गई थी। जब उसने दूसरा जन्म लिया तो उसमें भी वह भीष्म को नहीं भूली और उससे प्रतिशोध के लिए तपस्या शुरू करदी। जब महातमा जन उससे इसका कारण पूछते तो वो कहती "भीष्म ने मुझे ठुकराया है और मुझे पति की प्राप्ति एवं उसकी सेवा रूप धर्म से वंचित कर दिया है। मैं यह तपस्या भीष्म वध के लिए कर रही हूँ, उसको मार देने पर मेरे हृदय को शांति मिल जाएगी। इस लिए आप मुझे रोकें नहीं ।" भीष्म के गुप्तचर भी उसको सब बताते रहते और भीष्म चुप रह कर सुनते जाते। भीष्म उसके बारे में सोच कर रात के अंधकार में अपना अस्तित्व ढूंढती उसकी छाया को ढूंढते रहते। वह पल-पल टूटते रहते। अम्बा के जीवन को खंड खंड करने वाले वह ही थे।

यह समाज ही ऐसा है, जो दबने को तैयार रहता है, वह उसे उतना ही दबाता है"। अम्बा ने इस बात को नहीं माना था। संघर्ष का, लड़ाई का अपने अधिकारों को छीनने का और जब तक उस लक्ष्य की प्राप्ति न हो तब तक विश्राम ना करने का जो मार्ग दिखाया, वह आज भी कायम है। आज भी अनेकों अम्बा शक्तिशाली भीष्म के अत्याचार का ग्रास बनती है। उनको लड़ना होगा। वह एक क्रन्तिकारी नारी बन कर विशाल सत्ता के साथ अकेले ही भिड गई थी। दूसरे जन्म में जब उसको लगा उसका अभ्यास संपूर्ण हो रहा है। अब अगले मानव तन

को ग्रहण कर भीष्म को ढूंढना होगा, तब उसने अपनी योग साधना और पूर्व जन्म की तपस्या से एक अग्नि तख़्त बनाया और स्वयं समाधि ले ली। उसकी बढ़ती साधना, तप और विश्वास के आगे भीष्म ख़त्म हो रहे थे। वह जानते थे, जब भी कभी उसका सामना अम्बा से हुआ, वह अपने अस्त्र नहीं उठा पाएँगे। उसने अपनी साधना से भविष्य में संघर्ष हेतु नारी के लिए मार्ग बना दिया था, जो किसी चमत्कार से कम नहीं था। उसके मार्ग पर आगे उसकी बहन द्रौपदी भी चली।

कुरु वंश अब फल फूल गया था। उसके सदस्यों की संख्या बढ़ गई थी। भीष्म अब वृद्ध हो चले थे। भगवान् कहे जाने वाले विष्णु मानव बन श्री कृष्ण रूप में अवतरित हो चुके थे। जो नहीं बदला था तो वह था नीला आकाश और चंद्रमा, जिसकी रौशनी में उसने अपने सपने बुने और फिर अपने अपमान पर रोई। जो नहीं बदली स्वयं अम्बा। आज भी वह भीष्म से प्रतिशोध लेने की भीष्म प्रतिज्ञा के साथ भीष्मा बन कर पांचाल राज के घर प्रथम संतान के रूप में पैदा हुई। क्या इस बार भी वह भीष्म वध नहीं कर पाएगी ? पंचाल राज ऐसे सवालों से घिर गए। वह भी हस्तिनापुर से प्रतिशोध लेना चाहते थे। उसको यह वरदान मिला था, वह एक दिन पुरुष रूप में परिवर्तित हो जाएगी, क्या यह संभव है ?

त्याग का दूसरा नाम अम्बा बन चूका था। साहस का दूसरा नाम अम्बा बन चूका था। क्रांति का दूसरा नाम अम्बा बन चुकी थी। शक्ति का दूसरा नाम अम्बा बन चुकी थी। हठ का दूसरा नाम अम्बा बन चुकी थी । यही सब नाटकीयता के चर्म स्रोत हैं। बस जो नहीं बन पाई तो वधु, हर बार उसे अपना सर्वस्व त्याग कर आगे चलना पड़ता। आगे बड़ते चले जाने का नाम ही अम्बा हैं।

इस बार शिखंडनी ने जन्म लिया था। तन से वह नारी थी, उसका लालन पालन और जन्म संस्कार आदि सब पुरुषों वाले किए गए। वह फिर एक बार क्षत्रिय घराने में जन्म ले चुकी थी। सब को यही ज्ञात था कि पांचाल नरेश के घर एक पुत्र "शिखंडी" ने जन्म लिया है, सत्य किसी को ज्ञात नहीं था। एक भय उसके पीछे लगा रहा, वह कब पुरुष तन को प्राप्त करेगी, भीष्म का वध करेगी। इस घराने में उसने युद्ध विद्या में मुहारत हासिल करने की कोई कमी न छोड़ी। वह हर युद्ध कला को अपने अन्दर समा लेना चाहती थी। वह नहीं चाहती थी, जब उसका सामना महाबली भीष्म से हो वह एक सैनिक की तरह लगे। यौवन की और उसके कदम बढ़ते गए, तो विभिन्न राज्यों से विवाह प्रस्ताव आने लगे। पांचाल राज जानते थे, वह एक

नारी है। शिखंडी स्वयं अपने अस्तित्व की जंग में फंस गई थी। वह नारी है या पुरुष ? एक बार फिर उसकी आवाज़ को दबा कर हिरण्यवर्मा की पुत्री के साथ उसका विवाह करवा दिया गया।

पुरुष और स्त्री के भंवर में वह फंसती ही चली जा रही थी। यह वही अम्बा थी, जो अपने नारीत्व के रूप को कोसती रही। जिसमें अब तक पुरुष रूप पाने का प्रयास किया था। पिछले जन्मों में नारी के रूप में पैदा हुई। उसकी समाज में एक स्पष्ट स्थिति तो थी। वह स्थिति को अपने अनुरूप नहीं समझती थी। वह विवाह से पूर्व अपने इस रूप से संतुष्ट थी। विवाह के पश्चात् वह घबरा गई कि उसके कारण एक नारी के जीवन को बर्बाद करने का कलंक उसके माथे पर न लग जाए। उसकी पत्नी ने जब यह प्रचारित कर दिया, शिखंडी एक पुरुष नहीं स्त्री है। दबे मुह उसका उपहास होने लगा, उसकी चर्चा होने लगी। उसकी मानसिक दशा फिर वही हो गई, जो अम्बा की थी। "समय स्वयं को दोहराता है"

शिखंडी को समझने की जरुरत नहीं, जिसका शत्रु स्वयं "भीष्म" हो क्षत्रिय खून तो उसकी रगों में दौड़ ही रहा था। वह स्वयं से, समाज से लडती आ रही थी। फिर वह इस मुश्किल घडी में कैसे अपने अस्त्र छोड़ देती। एक दिन वह सब को छोड़ कर अज्ञात वास में चली गई। सारे नगर में अलग-अलग तरह की बातें होने लगी। कोई कुछ कहता, तो कोई कुछ। क्या वह इस आपदा से डर गई थी ? क्या वह पुरुषत्व का सामना नहीं कर सकती थी ? या फिर वह स्वयं से हार गई थी ?

मानसिक द्वंद्व को सहते सहते वह तन के कष्टों को भी सहने में भी सक्षम हो गई थी। उस युग का शारीरिक विज्ञानं अपने चर्म को प्राप्त होने जा रहा थी। स्थूणाकर्ण यक्षराज नाम के एक शरीरिक विज्ञानी ने लिंग तब्दील करने की विधि की खोज करली थी। जब शिखंडी की उससे वार्तालाप हुई तो उसकी आँखों में फिर चमक लौट आई। उसे लगा अब अपने अपमान का बदला ले सकेगी। यक्षराज ने उसे बताया, यह प्रक्रिया बहुत ही ज्यादा कष्टदायक और लम्बी है। तब शिखंडी ने कहाँ "यह मेरे संघर्ष और यातना से ज्यादा लंबा और ज्यादा कष्टदायक नहीं हो सकती।" फिर लंबे अंतराल तक उसका उपचार चला, काफी कष्ट सहते हुए, वह मूर्छित पड़ी रही। जब उसकी आख्रे खुली तो वह एक युवक के रूप में परिवर्तित हो चुकी थी। जिसका तन पुरुष वाला था और व्यक्तित्व भी। जिसकी कामना उसने अम्बा रूप से

की थी। स्थूणाकर्ण यक्षराज ने उसे स्थाई रूप का वरदान दिया और उपचार के लिए बीच बीच आने का कह कर उसको पांचाल देश को विदा कर दिया।

अपने पुरुष रूप के साथ शिखंडी सामान्य जीवन जी रहा था। महाभारत का तनाव भरा माहौल अपनी करवटें बदल रहा था। जब सत्यवती के डर कारण अंबिका और अंबालिका ने विचित्रवीर को स्वीकार कर लिया था। तब वह उनके बारे में, उनकी दशा और मनोस्थिति के बारे में सोच कर विचलित हो उठती थी। इस बार फिर समय उसको कुरुवंश के बीच ही ले आया। उसकी अनुजा बहन द्रौपदी का विवाह पांडू पुत्रों से हुआ। यहीं नहीं उसके साथ एक अन्याय और हुआ उसको पांच पतियों में बाँट दिया गया, जब भरे दरबार में भीष्म के पौत्र उसकी पौत्र वधु को नग्न कर रहे थे, वह सबके समक्ष लज्जा से मरी जा रही थी। भीष्म उस समय भी मौन रहे, उसकी सहायता न की। उसको लगा जैसे एक बार फिर अम्बा को कुरु दरबार में अपमानित किया जा रहा है। द्रौपदी नहीं अम्बा के वस्त्र उतार कर चीर हरण किया जा रहा है, फिर से भीष्म उसी अन्याय को देख कर चुप रहे हैं। उसी प्रकार का दृश्य उत्पन्न हो गया, जैसा किशोरी युवती अम्बा का भीष्म को चुनौती देते समय था। शिखंडी ने अपनी बहन और भाई को इतना निर्बल नहीं बनाया कि उनको भी बदला लेने के लिए जन्म लेने पड़ें। वह अपने पाँचों पतियों के साथ रह कर उनको बदला लेने को प्रेरित करती रही। उनके पीछे रह कर उनमें नई उर्जा का संचार करती रही। शिखंडी के दिल को बहुत आराम मिला था, कि अब उसकी विरासत को वंशज मिल गए है।

मानवता एक बारूद के ढेर पर बैठी थी, जहाँ एक चिंगारी उस वैज्ञानिक युग तबाह करने को व्याकुल थी। नीतियां, चालें, युद्ध, मानसिक तनाव, प्रतिशोध, द्वंद्व और सत्ता लोभ ने एक अजीब माहौल पैदा कर दिया था। हर कोई छोटी छोटी बात पर प्रतिज्ञाएँ ले रहा था। कुरुवंश को वंशज तो मिल गए थे, पर वह एक दूसरे के ही रक्त के प्यासे हो रहे थे। हस्तिनापुर की सीमाओं का विस्तार तो दूर की बात, वह तो स्वयं में बांटने के लिए लड़ रहे थे। यह विधाता का विधान था या अम्बा का शाप ?

समस्त विद्वानों का, पंडितों का, श्रेष्ट योधयों का और स्वयं श्री कृष्ण का यह प्रयास था, भविष्य में होने वाले इस महाविनाश को टाला जा सके। नक्षत्रो और ग्रहों की चाल किसी की समझ में नहीं आ रही थी। कौरवों ने पांड्वो की सब संपत्ति हड़प ली, और पांडवों को पाँच गाँव भी देने को मना कर दिया। जब श्री कृष्ण उनके पास दूत बन कर गए, उन्हें बंधी बनाकर

अपमानित करने का घोर अपराध किया। इस महायुद्ध की साक्षी बनाने के लिए कुरुक्षेत्र की भूमि को चुन लिया गया। युद्ध की तैयारी तेज गति से होने लगी। शिखंडी अब चंडी के रूप में तबदील होते जा रहा था। उसका अब एक ही लक्ष्य था, अति शीघ्र भीष्म वध। जब उसको पांडव पक्ष का सेनापति घोषित किया गया, तब कौरवों ने उसे एक स्त्री कह कर उसकी जलती वेदना पर घी डालने का कार्य किया और भीष्म फिर इस बात के साक्षी रहे और चुप रहे। श्री कृष्ण के पंचजनय की गर्जना से इस महायुद्ध का आरंभ हो गया। लाशों पर लाशें गिरती गई। भीष्म भीषण रक्त पात करते गए। किसी में साहस नहीं हो रहा था, वह उसको मार सके। युद्ध हो रहा था, पर किसी परिणाम पर नहीं पहुँच रहा था। जान माल का बहुत नुक्सान हो रहा था। अर्जुन भी भीष्म के सामने अपने अस्त्र छोड़ कर बैठ जाता। उधर शिखंडी के अन्दर भी बिना किसी परिणाम के एक महाभारत चल रहा था। महाभारत के दसवें दिन को भीष्म की मृत्यु का दिन चुना गया। उस दिन की रणनीति का केंद्र बिंदु शिखंडी को चुना गया। सभी योद्धा प्रहार और बचाव के लिए लग गए। सब जानते थे भीष्म शिखंडी के सामने अस्त्र नहीं उठाएंगे। जैसे ही शिखंडी का सामना भीष्म से हुआ उन्होंने उसके अम्बा रूप को देखा तो अपने अस्त्र शस्त्र सब छोड़ दिए, स्वयं को उसके आगे समर्पित कर दिया। भीष्म के वृद्ध तन पर बाणों की वर्षा होती रही, वह आनंद का अनुभव करते रहे। वह कन्या के शाप से मुक्त हो रहे थे। जो उसने वर्षों पूर्व कहा था आज सत्य हो रहा था। अनेकों सालों के सुलगते क्षण शिखंडी को प्रहार करने के लिए प्रेरित कर रहे थे। किसी से न हारने वाला योद्धा आज एक नारी के हाथों परास्त हो रहा था और जिस कुरुकुल की रक्षा के लिए उसका अपहरण किया गया था, वह उसकी आँखों के सामने मर रहा था। जिसका श्रेय अम्बा को जा रहा था। सब उसका जयघोष कर रहे थे। उसने प्रतिशोध ले लिया, स्वयं के अपमान का, अंबिका-अंबालिका के अपमान का, द्रौपदी के अपमान का, उन अन्य नारियों के अपमान का जिनको कुरुवंश की भेंट चढ़ना पड़ा।

जिस की मौत का कारण बनने के लिए वह तीन जन्मों तक भटकती रही, कष्ट सहती रही, स्वयं को जलाती रही। जब महाभारत के युद्ध में समय आया तो उसने भीष्म को तीरों की सेज पर छोड़ दिया, उसे उसी हालत में छोड़ कर चली गई। क्यों नहीं मारा उसको ? क्या वह सच में ही उसको अपनी पति मान बैठी थी ? या उसको उस वेदना का एहसास करवाना चाहती थी जिसको उसने झेला था ? भीष्म ने भी स्वयं को उसके हवाले कर दिया था क्यों ? क्या

वह भी स्वयं दिल से उन्हें अपनी संगिनी मान बैठे थे ? जिसे वह अपने साथ नहीं बिठा पाए ? क्या इसी का पश्चाताप करने के लिए उसके हाथों मृत्यु स्वीकार करली ?

खंड खंड होकर जीने वाली अम्बा की मृत्यु कैसे होगी यह भी किसे मालुम था। शिखंडी का क्रोध अब कहर बन कर मेंघ के भांति बरस रहा था। वह कुरु सेना का नाश कर रही थी। एक रात जब सब अपने शिविरों में शांत सोए पड़े थे तब क्रोध से ग्रस्त काल भैरव का रूप बने अश्वत्थामा ने उसके शिविर पर हमला कर दिया। इससे पहले शिखंडी स्वयं को संभाल पाता, अश्वत्थामा ने उसको अपने फरसे से दो खंड कर दिया। वह खंड होकर वीरगति को प्राप्त हो गई। खंडित मन और खंडित तन वह कभी पूर्ण हो ही नहीं पाई।

अम्बा ने वह इतिहास रच डाला था, जो किसी के लिए भी असंभव था। जिसको स्वयं भगवान् परशुराम परास्त न कर सके, उसे अम्बा ने कर दिया। यदि अम्बा शिखंडी बन उस पर प्रहार न करती तो निश्चित ही यह युद्ध चिरंकाल तक चलता रहता। वह अम्बा ही थी जिसने इस युद्ध का पृष्ट पलट कर तस्वीर को काफी हद तक स्पष्ट कर दिया था। भीष्म युग का अंत कर अम्बा ने इतिहास की धरा को भी बदल दिया। तीन जन्मों तक चुप ना बैठने वाली बालिका , उसकी इस भूमिका को कैसे नकार दिया गया ? क्या वह फिर कौरव-पांडव के युद्ध के रूप में यानी पुरुषत्व से फिर हार गई । वीर पुरुषों की जयघोष में वीर कन्या के जयघोष को क्यों दबा दिया गया ?

पर उम्मीदें कभी नहीं मरती। वह उम्मीद का दूसरा नाम बन चुकी है। अम्बा में इतने सारे नाटकीय मोड, नाटकीय घटनाएँ, नाटकीय चरित्र, नाटकीय नायिका, कितने ही नाटकीय पाश है, जो अपनी ओर खींचते है, उसको खेलने के लिए। महाभारत काल में स्त्रियाँ की स्थिति को अम्बा का चरित्र स्पष्टता से दिखाता है। इस नायिका का चुनाव इसमें छुपी नाटकीय संभावनाओं को ढूँढने के लिए किया गया है।

आज भी वह उसी इंतज़ार में है, कोई कृष्ण, अर्जुन की तरह उसको भी याद करेगा, जब किसी को क्रन्तिकारी मार्ग दर्शन की अभिलाषा होगी। श्री कृष्ण और अर्जुन की तरह शायद कोई अपनी संतान का नाम भी रखे..... अम्बा।

गांधारी

अंधकार के युग सब कुछ अंधकार में समा चुका था। मानवीय मूल्यों का पतन हो रहा था,नए मूल्यों का आगमन हो रहा था। अधर्म को धर्म की खाल पहना कर स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करने की होड़ मची हुई थी। सत्य को सत्य कहने के लिए किसी में साहस नहीं था। युगों का संताप सब भोगने के लिए आतुर थे। किसी ने कष्ट नहीं किया, उस भयंकर प्रवाह को रोक ले। सब एक दूसरे पर दोषारोपण कर रहे थे। कोई कुल वृद्धि के लिए अँधा था, तो कोई संतान के मोह में अँधा था, कोई अधर्म को धर्म बताने के लिए अँधा था, तो कोई अपने अपमान का बदला लेने के लिए अँधा था, कोई राज्य सत्ता के लिए अँधा था, कोई अपने कर्तव्य में बंधा हुआ अंधकार में डूबा जा रहा था। जो कह रहा था "जहाँ धर्म है, वहीं जय है", जब धर्म की विजय हुई तो धर्म का अववाहन करने वाले को ही शाप दे दिया।

अम्बा के भय से अभी भीष्म उभर नहीं पाए थे। उसका रुदन करता व्यक्तित्व भीष्म के साथ सारा जीवन रहा। अपने जीवन का बहुत बड़ा पाठ उन्हें मिल गया था, वह कभी फिर ऐसा कर्म नहीं करना चाहते थे। अंबिका, अंबालिका और दासी से धृतराष्ट, पांडू और विदुर के रूप में मिले थे। इनमें से भी दो संताने दिव्यांग हुई। भविष्य में वह किसी पर निर्भर न रहे, इसलिए स्वयं भीष्म ने उनकी शिक्षा का कार्यभार संभाल लिया। उन्हें हर विद्या में निपुण कर दिया, वह किसी सामान्य व्यक्ति से कम नहीं थे। एक बार फिर भीष्म उसी मोड़ पर आकर खड़ा हो गया था, जहाँ से काशिराज की पुत्रियों का अपहरण कर के लाया था। दिन रात वह एक सोच में पड़ा रहता, एक अंधे व्यक्ति को कौन अपनी पुत्री देगा ? यह सोचकर वह विचिलित हो जाते। हस्तिनापुर में अब अंबिका और अंबालिका के बाद एक नारी अगली पीड़ी को बढ़ाने के लिए वधु रूप में आने वाली थी। वह थी गांधार देश की राजकुमारी गांधारी। जिसका वरण राज कुमार धृतराष्ट के लिए किया गया था। इस बार वह उसको पराक्रम, शुल्क देकर नहीं, बल्कि उसके माँ बाप से हाथ मांग कर लाना चाहते थे। गांधारी शिव की पर्म भक्त थी। शिव ने उसे सौ-पुत्रों का वरदान भी दिया था। इस वरदान को जानते हुए भी भीष्म अधिक व्याकुल थे, कि गांधार कुमारी का हाथ मांग कर लाया जाए। इस कार्य को संपूर्ण करने के लिए वह स्वयं गांधार गए थे।

स्वयं के भाग्य को बाँध देना। किसी से दूर जाने का प्रयत्न करना , ना जाना। या यूँ कह लो सिर्फ स्वांग करना। क्या लाठी से किसी दिव्यांग का पथ प्रदर्शन करना ठीक होता है या स्वयं को तोड़ कर उसी की दशा में स्वयं को लें जाना ?

गांधारी के व्यक्तित्व के बारे में नरेंद्र कोहली लिखते हैं, "गांधारी साधारण पतिव्रता और धर्म-पारायण स्त्री नहीं थी। वह कुटिल भी हो सकती थी और क्रूर भी। उसके भीतर का विष कुछ ही अवसरों पर उफन कर बाहर आया है, जो बताता है, अपनी इच्छा के विरुद्ध हुई घटनाओं के फलस्वरूप अपने मन में उपजे कालकूट विष को वह किस प्रकार छिपाकर रख सकती थी, और उपयुक्त अवसर पर प्रहार कर सकती थी। ऐसी नारी ने अंधे धृतराष्ट्र के साथ अपने संबंध को सहज ही स्वीकार नहीं किया होगा।" (*आनुषांगिक- महासमर* 30)

उसको कोई भी किसी भी नज़रिए से देख सकता है। जिस प्रकार एक रंगकर्मी मंच पर अपने निर्देशक के आदेश बिना एक हाथ भी नहीं हिला सकता, उसी तरह इस कथा के पात्र हैं। जिस प्रकार वेदव्यास ने चाहा, उनको उस दिशा में मोड़ दिया। सब इसी प्रतीक्षा में थे, उनके घर एक वधु आएगी। यह किस के मन में था ? उनका काल भी साथ आएगा।

आज भी भारत में एक अच्छे जीवन साथी की कामना के साथ भगवान् शिव और गौरी की आराधना की जाती है। अपनी कथा में वेदव्यास ने भी गांधार नरेश सुबल की कन्या से सबका परिचय करवाया। जो भगवान् शिव और गौरी साधना में लीन रहती थी, बस उनका ही ध्यान धर्ती थी। इसी कारण उसको सौ पुत्रों का वरदान प्राप्त हुआ था। एक तपस्विनी का रूप जो उसमें छिपा था वह भी सबको ज्ञात था। उसका छोटा भाई शकुनि उस से बहुत प्रेम करता था, वह भी उसको किसी चीज की कमी नहीं आने देती थी। उसको मिले वरदान की चर्चा दूर दूर तक थी। यह चर्चा हस्तिनापुर तक भी आ पहुंची। इस बात से राज माता सत्यवती हर्ष में आ गई। उनको अपनी कुल के नष्ट होने का अंदेशा दूर होता दिख रहा था। उसने भीष्म से वार्तालाप किया और इस निर्णय पर आई कि गांधारी को वधु के रूप में वर कर लाया जाए। नीति शास्त्र कहता हैं, किसी भी कार्य को साम, दाम, दंड के भेद से किया जाना चाहिए। सीधा ही किसी अंतिम पडाव पर, निर्णय पर नहीं पहुँच जाना चाहिए। इसका परिणाम वह पहले देख भी चुके थे। गांधार देश बल और क्षेत्र में इतना बड़ा नहीं था, कि वह हस्तिनापुर का मुकाबला कर सके। इसलिए उनको आसानी से जीता जा सकता था। इस बार जीत युद्ध के रूप में अंकित नहीं की जाएगी। हाँ यह जीत "विवाह" के रूप में अंकित की जाएगी।

भीष्म अपनी सेना के साथ गांधार देश की ओर चल पड़े। जब गांधार नरेश को यह समाचार मिला के महाबली भीष्म अपनी सेना के साथ उनके देश की तरफ बढ़ रहे हैं, सारे देश में खलबली मच गई। जब भीष्म वहाँ राजा सुबल के द्वार तक पहुंचे तो सारा दृश्य ही बदल गया। उन्होंने उसके सामने अपने हाथ फैला दिए और कहा वह उनके यहाँ राजपुत्री का हाथ मांगने आए हैं। कमजोर शत्रु को मारने की जगह उसको डराकर रखना ही उत्तम होता है, यह बात भीष्म भली भाँति जानते थे। उन्होंने कहा कि वह राजकुमारी गांधारी को कुरु कुल की ज्येष्ठ वधु बनाना चाहते है। यह सौभाग्य हर कन्या को नहीं मिलता। उनका रिश्ता भरत वंशियों से जुड़ने जा रहा है।

वर्तमान स्वर्णिम इतिहास के लिए एक नया अध्याय लिखने जा रहा था। वेदव्यास भी अंतर्मन में सब देखे जा रहे थे। उसकी पुत्र वधु उसके घर आने वाली थी। जो संताप गांधारी की होने वाली सास उठा रहीं थी, क्या उसकी अगली कड़ी में अगला भाग उसको बनना था ? गांधार नगर में एक ख़ुशी की लहर छा गई। भीष्म युद्ध की बजाए रिश्ता जोड़ने आए हैं। उसकी खातिरदारी हो रही थी। क्या यह रिश्ता अपनी हार के डर के मारे जोड़ा था या दिल से जोड़ा गया ? यह तो गांधार नरेश ही जानते थे। वह सुन्दर युवती, सुडौल तन और जिसके एक इशारे पर सब उपस्थित हो जाते थे। वह भी अपने स्वामी के बारे सोचने लगी, जल्दी ही अग्नि देव को साक्षी मान कर उसका हाथ थामेंगी और उसकी नजरो से अपना संसार देखेगी। जैसे हर युवती देखती है। उसको उसकी एक सखी ने बताया, उसका होने वाला स्वामी जन्म से ही दृष्टिहीन पैदा हुआ है। इतना सुनते ही मानो उसको अपना सारा कलपित संसार धुल में उड़ता दिखा। कैसा महसूस होगा जब आपको बिन पूछे आपका रिश्ता किसी जन्मांध व्यक्ति के साथ जोड़ दिया जाए ? वह कन्या अपनी हस्त रेखा में अपना अलग भाग्य रेखांकित करवा के लाई थी। उसके जीवन की घटना उसके चरित्र और कथा में बहुत बड़ा नाटकीय मोड लेकर आती है।

सब ओर निमंत्रण भिजवा दिए गए। सब उस विवाह के भव्य समारोह की तैयारियों में लग गए, जब कुरु राज कुमार राज माँ सत्यवती, भीष्म, माँ अंबिका और अंबालिका और अपने भाइयों पांडू और विदुर के साथ गांधारी को वरण करेगा। वह दिन भी शीघ्र ही आ गया। एकाएक सब चौक गए यह क्या हो गया ? देवी गांधारी अपनी आँखों पर पट्टी बाँध कर दुल्हन के रूप में आई। वह चाहती थी, अगर उसके पति ऐसे हैं, तो वह भी उसके साथ ही उसी

अवस्था में रहेगी क्योंकि वह उसकी दशा देख नहीं सकेगी। गांधार वासियों ने बहुत विनय किया, वह इस कार्य में सफल न हो सके। कुरु जनों ने भी उसे समझाया वह आँखों से पट्टी उतार दे। गान्धारी ने एक बार जो कठोर निर्णय ले लिया था, उसको वह कैसे तोड़ सकती थी। सब उसको कह कह कर हार गए। वह अपने अडिग निर्णय पर स्थापित रही। ऐसा प्रतिज्ञा बल देख कर सब चकित हो गए, ऐसा रूप तो उसका कभी किसी ने देखा ही न था। यह हठ उसने क्यों किया ? क्या वह भीष्म को उसकी हरकत की सजा देना चाहती थी ? वह इतना ही प्रेम धृतराष्ट्र से करती थी, तो आँखों पर पट्टी बांधे बिना उसकी मार्ग दर्शिका बन सकती थी ! कुरु वंश के दायत्व को अपने कन्धों पर उठा सकती थी। एक बात का संकेत उसने कुरुवंश को दे दिया था, भीष्म प्रतिज्ञा केवल कुरु वंश ही नहीं, गांधार वंश भी कर सकता है।

ओशो लिखते हैं, "नारी के जीवन में जो प्रफुल्लता, शांति, और आनंद होना चाहिए, वह उसे उपलब्ध नहीं हो पाता है और नारी का आनंद बहुत अर्थपूर्ण है, क्योंकि वह घर का केंद्र है। अगर घर का केंद्र उदास, दीन-हीन, थका हुआ, हारा हुआ है, तो सारा घर, सारा परिवार, जो उसकी परिधि पर घूमता है, वह सब दीन हीन, उदास और हारा हुआ हो जाएगा।" (*नारी और क्रांति* कवर पेज) कुरु वंश के घरेलू हालत देख कर यह बात सत्य लगती है।

गांधारी कुरु वंश में अकेली हस्तिनापुर नहीं आई उसके साथ उसका प्रिय भाई शकुनि भी आया था। वह भी इस बात से उभर नहीं सका था कि उसकी बहन का पति जन्मांध है। संसार में हर कोई अपने तन से अपनी इन्द्रियों से प्रेम करता है। अगर कोई जन्म से दिव्यांग है, या किसी घटना वश हो गया तो बात अलग है। गांधारी ने अपनी दृष्टि का त्याग कर अपने अन्दर बैठी एक सति का परिचय दे दिया था। उसके अन्दर भी बहुत कुछ बन मिट रहा था। वह भी अब दूसरों के ऊपर निर्भर हो गई थी। धृतराष्ट्र अन्दर ही अन्दर चिंतित थे, उसे बार बार दिव्यांग होने का अनुभव क्यों दिलाया जाता है। गांधारी ने अपने मन की बात किसी से ना की, और अपने स्वामी के साथ चलती गई। वह जिसे अपने साथ लाई थी, उसका भाई नहीं वह कुरु वंश का काल था, जो धीरे धीरे उसकी जड़ों में अपना विष फैलता जा रहा था।

उसके गंभीर व्यक्तित्व को सब प्रणाम करते थे। वह ना किसी से बुरा कहती न भला। बस अपने आराध्य भगवान् शिव से बातें करती रहती, तप करती रहती। उसकी साधना में ही लींन रहती। वह अपने तप का पुंज इकत्रित करती जा रही थी, जिसको उचित समय पर प्रयोग में लाना था। स्वयं को एक आदर्श नारी के रूप में उसने प्रस्तुत कर दिया था। राज माँ,

पितामाह, सास माँ, और अपने देवर और देवरानी को कभी रुष्ट स्वाभाव से कुछ नहीं बोला। उन सब की सेवा की। जब भी कभी धृतराष्ट्र किसी गहन चिंता में फंस जाते तब वह बहुत ही प्यार और सदभाव से उसको समझाती और मार्गदर्शन करती। अपने ज्ञान की सीमा को आगे बढ़ाने के लिए वह जब भी समय मिलता तो विदुर से ज्ञान लेती और उस ज्ञान को अमल में लाती। पांडू का भी विवाह हो चूका था। कुंतीभोज नंदिनी कुंती उसकी वधु बनी थी। वह एक बहुत ही सुशील और साध्वी कन्या थी। उसके तेज की चर्चा दूर तक थी। उसके साथ वह एक छोटी बहन जैसा बर्ताव करती, उसे हर कर्म संस्कार में हर कार्य में शामिल करती। एक आदर्श नारी का रूप जो उसने सबके समक्ष प्रस्तुत किया था, वह उसके पिता राजा सुबल की झलक भी दिखाता था। मिल जुल कर ही एक दूसरे को वश में कर सकते हैं। डरा कर तो आप बस किसी से बाहरी आदर ले सकते हो आंतरिक नहीं।

उसका व्यक्तित्व और उसमें सिमटी हुई नाटकीयता एक अजीब से मोड़ पर दर्शकों को लाकर खड़ा कर देती है। जहाँ से वह उसको संदेह की नज़र से देखना शुरू कर देते है। उसका पतिव्रता और सतीत्व का रूप सब ने देखा था। राज सत्ता एक ऐसी चीज है जो भी इसके पास रहता हैं, वह अपनों से काफी दूर हो जाता है। जिसे केवल और केवल अपना स्वार्थ दिखाई देता है। गांधारी को गर्भ ठहर गया। सबकी नज़र उस समय पर लगी हुई थी, कब वह अगला उत्तराधिकारी राज सिंहासन को देंगी। जैसे पतझड़ के बाद पेड़ों पर चेत्र मास में लताएं उग आती है, ऐसा ही मौसम कुरु भवन में चल रहा था। बहुत समय बाद कुरु वंश आगे बढ़ने वाला था। उसकी डाली पर एक कली नहीं, बल्कि सौ फूल मिलने वाले थे। वह भी एक साथ सभी उस दैवीय पल के साक्षी बनना चाहते थे। उधर वन में कुंती भी धर्म तत्व की सहायता से गर्भ धारण कर चुकी थी। जब यह समाचार राज महल पहुँचा, तो गरीबों को धन धान्य मिला। नगर को बंदनवारों और तोरण से सजाया गया। गांधारी को गर्भ धारण किए सप्ताह, पाँच महीने, आठ महीने, नौ महीने और फिर एक साल भी बीत गया। संतान पैदा होने का नाम नहीं ले रही थी। सभी गांधारी को संदेह की नज़र से देखने लगे, उसके वरदान वाली बात मात्र कलपित तो नहीं थी। उसके गर्भ में एक लोहे सा कठोर एक गोल पिंड बन गया। वह चिंतित रहने लगी और महादेव से प्रार्थना करने लगी। तभी उसको सूचना मिली कि देवी कुंती ने एक पुत्र को जन्म दिया है। जिसका नाम युधिष्ठिर रखा गया है। यह समाचार मिलने के बाद उसने अपने गर्भ पर जोरदार वार किया। कहाँ गया उसका ममता रूप ? क्या वह अपने गर्भ में पल

रहे पिंड की भाँति कठोर हो गई ? या उसको इस बात की चिंता हो गई थी, उससे पहले देवरानी कुंती ने संतान को जन्म दे दिया है, जो ज्येष्ठ संतान होने के नाते राज सिंहासन पर आसीन होगी। संतान मोह सब को होता है और यह स्वाभाविक भी है। यह कैसा मोह था ? वह मोह जो नारी की ममता को कुचल दे ? वह गांधारी जो न्याय प्रिय नारी थी, क्या वह किसी की संतान के हक को नष्ट कर देना चाहती थी ? इसके पीछे कुछ और प्रश्न और कारण भी थे, जिस से उसके चरित्र की कसावट और बढ़ रही थी। अमर बेल कि तरह वो सब के मन पर फैलती जा रही थी।

कुरु वधुओं में जो स्थान गांधारी का सबसे ऊपर है। वेदव्यास ने इसको चित्रित करने में कोई कोशिश नहीं छोड़ी। "जैसा अन्न वैसा मन" अथात जैसा खाते हैं वैसा ही मन बन जाता है। भारतीय शास्त्रों में राजसिक-तामसिक-सात्विक तीन प्रकार के भोजन के बारे में बताया गया है। क्या गांधारी पर इसका असर हो रहा था ? वह एक निहित स्वार्थी राजा की धर्म पत्नी थी जो अपना राज धर्म भूल कर पुत्र मोह में फँसता चला जा रहा था और गांधारी भी उसी राह पर उसके पग पर पग रख रही थी। बात यहीं ख़तम नहीं की जा सकती वह ऐसे पुत्रों की माँ के बारे में भी जानी गई जो अपने ही भाइयों के खून के प्यासे रहे। कई बार किसी षड्यंत्र या हालात का हिस्सा न होते हुए भी उसका अंग बन जाते हैं। गांधारी भी उस वातावरण का हिस्सा बन गई। एक नाटककार अपनी रचना में रोचकता और नाटकीयता लाने लिए ऐसे प्रयोग करता ही रहता है और यह अनिवार्य भी रहता है।

एक शब्द में बहुत से अर्थ छुपे होते हैं। जिसके माध्यम से बच भी सकते हैं, और फंस भी सकते है। अक्सर रंगमंच की दुनिया में इस पंक्ति की उदाहरण बहुत दी जाती है, रुको मत जाओ। एक कुशल अभिनेता वही है, जो लेखक की रचना के सही भाव को अपने दर्शक वर्ग के सामने लाता है। हर संवाद को बहुत सोच समझ कर बोलता है। गांधारी का पुत्र मोह तो जग जाहिर है, इस पर संदेह भी नहीं है। जब भी कोई गांधारी का जिक्र करता है, तब एक बिंदु सामने आता है, उसने अपने पुत्रों का विरोध भी किया। उन्हें सत्य की राह पर चलने के लिए कहा। "जहाँ धर्म है वहीं जय है" का आशीर्वाद भी दिया। जब वह अपनी भाभी द्रौपदी को उसके केशों से पकड़ कर भरी सभा में लेकर आए और उसका चीर हरण करने की कोशिश करने लगे, तब गांधारी की आँखों से अश्रु बहे। वह उसकी दशा पर चिंतित थी, उसने धृतराष्ट्र से आग्रह किया, वह अपने पुत्रों का इस अधर्म कार्य में सहयोग न दें, नहीं तो वह इस तरह अपना

नाश कर लेंगे। उसकी बातों का उसकी संतानों और अपने स्वामी पर बिल्कुल भी प्रभाव नहीं पड़ा ? यह क्यों हुआ ? किस कारण हुआ ? बाल्य काल से लेकर यौवन काल तक या उसके अंतकाल तक जब भी दुर्योधन किसी कुटिल योजना योजना बनाते, तब उसका विरोध उसके पिता जरुर करते थे। कुछ भी हो जाए। वह उसकी बात का विरोध करते थे या मात्र विरोध का नाटक करते थे ? कि कोई उसके चरित्र पर दाग न लगा सके। वह अंतत: मान भी जाते थे। पांड्वो को लाक्षागृह भेजने की बात हो या जुआ खेलने के लिए उकसाने की बात हो, उनको राज सत्ता से विहीन करने का प्रयास ही क्यों न हो। फिर कुरुक्षेत्र के मैदान में युद्ध अभ्यास करने की बात हो। सब बातों पर पहले विरोध फिर स्वीकृति दी। उसने बल बुद्धिमता का आशीर्वाद देने का बहुत ही कमजोर स्वांग किया। अपने विद्वान भाई विदुर की एक भी सलाह न मानी। क्या गांधारी ने भी अपने स्वामी के पदचिन्हों पर चल कर अपने उपदेशों और निर्णयों में ऐसी चतुरता का प्रयोग किया ?

क्या सच में ही वेदव्यास उसके किरदार को ऐसे मोड़ में छोड़ना चाहते थे ? उनका लगाव तो अपने नारी पात्रों से बहुत दिखता है। हर विशेष और महत्त्वपूर्ण घटना में उन्हें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में जोड़े रखा। बहुत से प्रसंग यह घोषित करते हैं, उसका चरित्र बहुत श्रेष्ठ है, उस पर ऊँगली उठाना भी मंजूर नहीं। वह अपने स्वामी धृतराष्ट्र के राजप्रासाद में नैतिक सत्ता का जीवंत प्रतीक थी। उस अन्धकार और तनाव के माहौल में रौशनी के जुगनू लेकर सबको जगाने की कोशिश कर रही थी। राज दरबार प्रजा की भलाई का केंद्र कम और षड्यंत्र गृह ज्यादा बन गया था। कब किसको कैसे और कहाँ मारना हैं, किसको अपना शत्रु मानना है और किसको अपना मित्र, इसका मुख्य धुरी उसके भाई शकुनी के हाथ में था। क्या सब गतिविधयों की गांधारी मूक दर्शक बनी रही होगी ? उसके चरित्र को देख कर ऐसा नहीं लगता। वह इसके होने वाले भीषण परिणामो को जानती थी। वह उनकी समर्थक तो नहीं रही होंगी, आवश्य ही उनका विरोध भी किया होगा। प्रत्येक पात्र वेदव्यास और उसकी मण्डली बहुत रोचक ढंग से उभार कर सामने लाए । गांधारी के साथ ऐसा क्यों ? उस पर पूरा प्रकाश क्यों नहीं ? उसकी आँखों पर पट्टी बाँध कर इसका उत्तर, प्रश्न उत्पन्न होने से पहले ही दे दिया था।

न्याय का साथ जो नहीं देता, वह स्वयं किसी न किसी दिन अन्याय का शिकार हो जाता है। राजधर्म कहता है राजा का न्याय प्रिय होना आवश्यक है। जो राजा इस गुण को धारण नहीं

करता वह जल्दी ही सत्ता विहीन हो जाता है। इस गुण के बारे में गांधारी जानती थी, जहाँ तक हो सके इसका पालन भी करती थी। गांधारी के गुण ही उसको उस युग की श्रेष्ठ नारियों में लाकर खड़ा कर देते हैं। वह पांडू पुत्रों को भी उतना प्यार और सनेह करती थी, जितना वह कुरु पुत्रों को करती थी। वह नहीं चाहती थी, उन अनाथ बच्चों के साथ कुछ अन्याय हो। जिनकी माँ उन्हें बहुत कष्ट सह कर पाल रही है। जब युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उसके वैभव को देखकर आश्चर्य चकित रह गया। उसकी आँखें चक्रा सी गई। उसके अन्दर पांडवों के प्रति जो ईर्ष्या और द्वेष भरा हुआ था, उसमें और बढ़ोतरी हो गई। बचपन से ही वह पांडू पुत्रों को अपने से कम देखना चाहता था। जब यज्ञ समाप्त हुआ, वह अपने मन में द्वेष भावना को लेकर हस्तिनापुर लौट आया और अपने पिता महाराज धृतराष्ट्र के सामने अपनी सारी इच्छा व्यक्त कर दी। फिर उसी तरह कुछ विरोध करने के बाद उसके पिता ने सामने अस्त्र डाल दिए। उसे पांड्वो के साथ जुआ खेलने की आज्ञा दे दी। जब उनकी माँ गांधारी को इस बात का पता चला तब वह उसकी मनोदशा को भांप गई, वह क्या सोच रहा है। वह इस बात को देख रही थी कि उसकी कुल अनिष्ट कार्य के लिए अग्रसर हो रही है। एक माँ का दिल नहीं चाहता था, उसके पुत्र यह अनर्थ कार्य करें। वह महाराज धृतराष्ट्र के कक्ष में गई और अपने अन्दर उत्पन्न हो रहे सभी विचारों का प्रवाह उनकी ओर कर दिया और कहा, आप महात्मा विदुर की बात को क्यों नहीं मानते ? हर कार्य में उनका परामर्श क्यों नहीं लेते ? आपको ज्ञात है जब इसका जन्म हुआ था तो जन्म के कुछ समय पश्चात् इसने सियार की भांति रुदन किया था। जिसको सुनकर सबका मन सहर गया था और भी कई प्राकृतिक अपशगुन हुए थे, महात्मा जनों ने कहा कि आप अपनी इस संतान को त्याग दो नहीं तो यह तुम्हारी कुल के नाश का कारण बनेगा। अब आप स्वयं अपनी कुल के नाशक मत बनिए। जिसके मन में सिर्फ खोट का ही समावेश हुआ हो, उसे तो कोई शास्त्र भी नहीं समझा सकता। ऐसा न हो आपको बजुर्ग अवस्था में निसंतान रहना पड़े। यह पांड्वो के प्रति जो भाव रखते हैं, आप भी उससे परिचित हैं। क्या आप उनके साथ अन्याय होने देंगे ? मैं इनकी माता होते हुए भी आपको पत्थर दिल होकर कह रही हूँ आप इसको त्याग दीजिए और पांडू पुत्रों के साथ न्याय कीजिए।

एक नाटककार अपने पात्रों को अत्यंत कठोर परिस्थिति में डालता है। उनमें वह बीज अंकुरित कर देता है, जिसकी सहायता से वह स्वयं अपना मार्ग बना लेते हैं। वेदव्यास भी गांधारी को यही गुण प्रदान कर रहे थे। वह हालातो से लड़ कर कुंदन से सोना बने। ऐसा नहीं

कि गांधारी कौरवों की चालों का विरोध नहीं करती थी। वह अपने पुत्रों को ऐसे घृणित कार्य के लिए फटकार भी लगाती है और उन्हे संभल जाने की चेतावनी भी देती है। गांधारी जानती थी अगर उन्हें कोई इस भ्रष्ट पथ से मोड़ सकता है तो वह हैं कृष्ण। वह अपने स्वामी से आग्रह करती हैं अपने पुत्रों को कहों कि वह महात्मा विदुर का किसी भी प्रकार का कोई परामर्श नहीं लेना चाहते तो वह श्री कृष्ण की शरण में चले जाए। जब उन्होंने वहां जाने से भी मना कर दिया तो वह कहती हैं कि "लगता है अब इनका काल निकट आ गया है।" गांधारी अपने पुत्रों को फटकार लगाते हुए एक चेतावनी देती है, तुम लोगों ने पांडवों को जुए में लगाकर छल कपट से हराकर सब कुछ छीन लिया और प्रताड़ित होने के लिए बनवास दे दिया। निश्चित ही इन तेरह वर्षों में उनके मन में तुम्हारे प्रति क्रोध की ज्वाला और फूट गई होगी। आप उस ज्वाला को संधि रुपी नीर से शांत कर दो। तुम चाह रहे हो, उनके पास कुछ शेष नहीं छोड़ोगे उनकी सारी संपत्ति हड़प लोगे, ऐसा कदापि संभव नहीं है। ऐसा बल न कर्ण में है, और ना ही दुशासन में। उनकी तरफ स्वयं श्री कृष्ण खड़े हैं। अगर तुम सोच रहे हो बाकी वीर योद्धाओं, गुरु जनों और भीष्म के सहारे तुम इस कार्य को संपूर्ण कर लोगे तब भी यह तुम्हारी बहुत बड़ी भूल है, क्योकि ऐसा कदापि नहीं होगा।

वेदव्यास मण्डली ने गांधारी का आगमन विशेष प्रयोजन से करवाया है। जो उसकी सोच और दिशा के बारे में दर्शाता है। वह अब भी एक शांत समंदर है, जिसमें बहुत से ज्वारभाटे बल खा रहे हैं। जब युधिष्ठिर अपना सब कुछ हार चुके है, द्रौपदी का चीर हरण हो चूका है और फिर सब कुछ उनको वापिस भी दे दिया गया है। वहां वह अपने पुत्र और पति का विरोध करती है। एक नारी का अपमान इस तरह से हो तो यह अवश्य ही एक भयानक आपदा को जन्म देने वाला है।

प्रकृति की एक विशेषता है, इसने हर एक को एक विशेष गुण दिया हुआ है। जो उसके बिना किसी के पास नहीं है। वह गुण अच्छा हो या बुरा। किसी का परिणाम उसी क्षण मिल जाता है, तो किसी का कुछ क्षण बाद। गांधारी ठीक उसी की भाँति है। जिसके गुण तो सबको मालुम है, पर उनका लाभ कोई नहीं लेता। उसके विचार और प्रतिभा का सिक्का फैला हुआ था। कौरवों के पापों का घड़ा भरता ही जा रहा था। सब इसी प्रयास में लगे हुए थे, किसी तरह होने वाला विनाश रोका जा सके। कौरव भी साम, दाम, दंड भेद की नीति से अपनी सेना और साम्राज्य का विस्तार कर रहे थे। पांडू पुत्र भी किसी से कम नहीं थे, उनके ऊपर भी कृष्ण,

वेदव्यास, माँ देवी कुंती और द्रौपदी जैसी अर्धांगिनी का हाथ था। उन्होंने ने, पांचाल, काशी, असम, हिडिम्ब और अन्य राज्यों के साथ मित्रता और विवाह संबंध स्थापित करके अपनी शक्ति में अथाह गति ला दी। जो कि बढ़ती ही जा रही थी। जब सब लोगों के प्रयास विफल हो गए तो स्वयं वासुदेव श्री कृष्ण इस महायुद्ध को रोकने के लिए कुरु दरबार में दूत बन कर पहुँच गए। वासुदेव को भगवान् विष्णु का अवतार माना गया है। जिसने कंस जैसे अति शक्तिशाली राजा को अपने यौवन काल में अकेले ही अपने बल से पराजित कर दिया था। जब श्री कृष्ण ने पांडवों के लिए केवल पाँच गाँव देने का प्रस्ताव रखा तो अहंकार में ग्रसित कौरवों ने, श्री कृष्ण को सिर्फ विनय करता एक दूत समझा और वह नियम तोडा जो आज तक नहीं तोडा जाता। एक दूत को बंधी बनाने का दु:साहस किया गया। श्री कृष्ण ने वहाँ अपना विराट रूप दिखाया। जिससे सारी सभा में शांति पसर गई। किसी के कंठ से आवाज़ नहीं निकलती। युद्ध जो अब अंतिम हल बचा था उसकी चेतावनी दे कर चले गए। महाराज धृतराष्ट्र उचित सलाह के लिए गांधारी को बुलावा भेजते है। जो यह दर्शाती है उसकी सलाह कितनी महत्वपूर्ण थी। उसकी प्रतिभा का सिक्का इस तरह चलता था, कि इस महत्वपूर्ण मोड़ पर उन्हें गांधारी की जरुरत पड़ी। वह पहले ही उसकी बात मान लेते तो बात यहाँ तक ना पहुँचती। वह दुर्योधन को बुलावा भेजती है, उसको नीति वाक्यों के माध्यम से फटकार लगाती हैं। जब पांडू पुत्रों को परेशान किया गया, उनको बनवास भेजा गया, जुए में उनको फंसा लिया गया, और जब द्रौपदी का चीर हरण किया गया तब भी उसने अपने पुत्रों को फटकार लगाई थी।

महाभारत में कर्म योग की महानता को दर्शाया गया है। हर एक को कर्म करने के लिए प्रेरित किया गया है। वह कर्म जिसके उसका और सारे विश्व का कल्याण हो। श्री कृष्ण जब उज्जैन में अपने गुरु महर्षि संदीपनी के आश्रम में शिक्षा ग्रहण करने गए, तब वह उन्हें एक बात समझाते है "कर्म रेखा को भाग्य रेखा से अधिक गहरा होना चाहिए"। बहुत बड़ी बात को सरल तरीके से कह दिया और इसकी व्याख्या की जरुरत भी नहीं पड़ी। श्री कृष्ण भी अपना आखिरी कर्म कर के लौट आए, रास्ते में उनकी भेंट पांडवों के ज्येष्ठ भ्राता अंगराज कर्ण से हुई तो उसके हाथ उन्होंने युद्ध का निमंत्रण भेज दिया। दोनों पक्ष अपनी शक्ति के दम पर युद्ध जीतना चाहते थे। कुरुक्षेत्र के मैदान में दोनों सेनाएं इकत्रित हो गई और फिर श्री कृष्ण ने अपना आखिरी प्रयास किया शायद वह ग्रहों की चाल को बदल दें। वेदव्यास इस बात में बाजी मारने वाले थे। कुरु पक्ष नहीं माना और बड़ी चतुरता से वासुदेव की सारी सेना को मांग लिया।

यह सोच कर कि वह श्री कृष्ण को शक्तिविहीन कर देंगे। वह इस बात को भूल रहे थे, युद्ध अस्त्र बल से नहीं बुद्धि बल से जीते जाते हैं। पूरे विश्व की सेनाएं इस महायुद्ध की साक्षी बनने के लिए तैयार हो गई। जब पञ्च्जंय का नाद हुआ तो भाई ही भाई के रक्त का पान करने को आतुर हो गया। दोनों पक्ष के योद्धा मारे जा रहे थे। कुरु पक्ष भारी क्षति कर रहा था। जब भीष्म को शिखंडी ने गिरा दिया तो युद्ध की तस्वीर ही बदल गई।

शाम को युद्ध के पश्चात जब कुरु अपनी माँ के पास जाते, उनका आशीर्वाद लेने के लिए चरण स्पर्श करते तब गांधारी के कंठ से कोई स्वर न निकलता। वह अपने पुत्रों के चरित्र को भी जानती थी, उन्होंने पहले क्या किया था और आगे वह क्या कर सकते हैं। इसलिए वह उनको सिर्फ इतना आशीर्वाद देती "जहां धर्म है वहीं जय है"।

तपस्वी व्यक्ति की वाणी में ही इतना तेज होता है, वह जो भी बोलते हैं, सत्य हो जाता है, इसलिए वह ना तो जल्दी किसी को वरदान देते हैं और न ही शाप। गांधारी के पास भी तप और सतीत्व की शक्ति थी, जिस कारण उसकी बातें सत्य हो सकती थी। उसके अखंड बलिदान से भी उसके पास दैवीय शक्तियां आ गई थी। जिसका प्रयोग वह उचित समय पर करना चाहती थी। वह अब एक साधारण नारी गांधारी नहीं, एक तपस्विनी नारी गांधारी बन चुकी थी। दुर्योधन युद्ध हारता चला गया और अंत तक अश्वत्थामा और शकुनि के साथ अकेला बच गया। संजय के माध्यम से सारा हाल गांधारी को पता चलता रहता था। वह गांधारी जब उसने अपने बच्चो को जन्म दिया था, तब भी उनका मुख नहीं देखा था । एक एक कर सारा कुरु कुल तिनकों कि भाँति नष्ट होता चला गया, तब भी वह नहीं पिघली। एक माँ का ह्रदय कब तक कठोर रह सकता था। जब दुर्योधन अकेला बच गया तब उसने अपने पुत्र को देखने की इच्छा जताई, और बुलावा भेजा की वह उसके पास उस रूप में आए जैसा वह अपने जन्म के समय में था भाव नग्न अवस्था में। वह अपनी आँखों से पट्टी खोल कर अपनी सारी तप शक्ति से आँखों के माध्यम से उसके तन को वज्र बनाना चाहती थी। जिस पर किसी भी अस्त्र शस्त्र का प्रहार न हो। वेदव्यास ने नाटकीय मोड़ ला कर श्री कृष्ण को आगे खड़ा कर दिया। अब तक शकुनि ने युद्ध के पासे फेंके थे, पर अब पासे श्री कृष्ण के हाथ में थे। वह अपना पासा फेंकते हुए दुर्योधन को कहते हैं, इस उम्र में अपनी माँ के सामने नग्न अवस्था में जाना ठीक नहीं है। तुम अपनी जनन इंद्री के पास पत्ते बाँध लो। दुर्योधन ने वैसा ही किया। जब वह अपनी माँ के समक्ष आया तो गांधारी ने अपनी तप और दिव्य दृष्टि से उसके सारे तन पर नज़र दौड़ाई जहाँ

उसकी दृष्टि पड़ी, तन का वह भाग वज्र सा हो गया, सिवाए उसकी जाँघों के। युद्ध में वहीं भाग उसकी मृत्यु का कारण भी बना। भीम के हाथों वह भी अपनी आखरी साँसे लेकर इस संसार को विदा कह गया। गांधारी का तप पूर्णता को प्राप्त नहीं हो पाया।

गांधारी के तपो बल का मात्र यह उदाहरण नहीं है। कुरुक्षेत्र के मैदान में जब एक भरी पूरी विज्ञानं आधारित सभ्यता का अंत हो गया। चारो तरफ सिर्फ एक विरलाप गूंजता सुनाई पड़ रहा था। विधवायों के अश्रु मानो आज सब कुछ अपने साथ बहा कर ले जाएंगे। कटी फटी लाशो को चील, गीदड़, कौवे नोच नोच कर खा रहे थे। कल तक जो कुरु योद्धा हुंकारते फिरते थे, आज वह एक बेजान लाश के रूप में मांस के लोथड़े बन कर शांत अवस्था में मृत पड़े थे। कुल वधुएँ उन लाशों के पास अपना सिंदूर पोंछ कर बेसुध हो रही थी। जब यह दृश्य गांधारी ने वेदव्यास द्वारा प्रदान की गई दिव्य दृष्टि से देखा तब उसके अन्दर आंसुओं का सैलाब फूट पड़ा। पांडवों की हिम्मत न पड़ी थी, वह माँ गांधारी के सामने कैसे प्रस्तुत होंगे। वह भी उसकी शक्ति से परिचित थे। फिर भी डरते डरते वह श्री कृष्ण की ओट लेकर प्रस्तुत हो गए। वेदव्यास ने भी उनको रोकना चाहा। जब उन्होने जा कर उनको प्रणाम किया तो सबसे आगे युधिष्ठिर था। गांधारी की क्रोध दृष्टि युधिष्ठिर के पाँव के अग्रभाग पर पड़ी तो उसके गुलाबी पाँव के नख काले पड़ गए। वह भाग कर श्री कृष्ण के पीछे छुप गए। यह गांधारी द्वारा संचित तप फल का ही प्रभाव था।

श्री कृष्ण भी गांधारी के चरित्र के आगे झुकते थे। वह उनका बहुत आदर करते थे। इस लिए जब क्रोध में आकर गांधारी ने श्री कृष्ण से कहा, स्वयं को भगवान मानने वाले वासुदेव, तुम चाहते तो यह युद्ध रोक भी सकते थे। तुमने ऐसा नहीं किया, इसका परिणाम यह हुआ तुम्हारी आँखों के सामने मेरे पुत्र आपस में लड़ लड़ कर मारे गए। अगर मुझ में यदि अभी भी कुछ तपो बल बचा है, मैं तुम्हे यह शाप देती हूँ, तुम्हारी संतान भी इसी तरह आपस में लड़ झगड़कर मर जाए। तुम भी अनाथ के समान किसी वन में विचरण करते हुए किसी निंदित उपाय से मृत्यु का ग्रास बनो। श्री कृष्ण ने सत्यवचन कहते हुए, इसको सिरोधारण कर लिया। महाभारत के युद्ध के छत्तीस वर्ष बाद वह अभिशाप सत्य सिद्ध हुआ।

आखिर कैसी थी गांधारी ? इस बात पर चर्चा आज भी जारी है, जब भी कोई उसको पढ़ता है समझता है, उसके चरित्र में छुपी हुई नाटकीयता उसके चरित्र का एक और नवीन पक्ष समक्ष लाकर रख देती है। आने वाले समय में भी यह जारी रहेगा। कुछ लोग कहेंगे

वेदव्यास ने अपनी पुत्र वधू के साथ न्याय किया और कुछ कहेंगे न्याय नहीं किया। जो भी हो, अभी तक जो कुछ सामने प्रस्तुत होता है। वह इस बात को सिद्ध करता है, गांधारी का विशिष्ट चित्र लोक मानस में बना हुआ है। जिसने उसको पतिव्रता नारियों के शीर्ष पर बिठा दिया, इसमे सबसे बड़ा कारण उसका सतीतव और भक्तिभाव है।

कुंती

यह महायुद्ध की कथा किसी ले लिए पवित्र धर्म ग्रन्थ है, किसी के लिए एक अमर साहित्यक रचना, किसी के लिए कोरी कल्पना वाला झूठ, फरेब और षड्यंत्रों से युक्त युद्ध। जिसका जो दिल माना उसने इस रचना को वैसे ही मान लिया, किसी परिपूर्ण रचना की विशेषता भी यही होती है। उसमें सब गुण होते है। हज़ारों वर्ष बीत जाने पर भी महाभारत की सुन्दरता कम नहीं हुई, अभी भी इसकी कोमलता और कठोरता बरकरार है। यह रंगमंच की वह अंग बन गई है, जिसके बिना इस दुनिया का रंगमंच अधूरा सा लगता है। इसकी नाटकीय तत्वों पर मोहित होकर अनेकों देशों और उनके कलाकारों ने इसका हरण करने की कोशिश की, इसने उनको भी अपना लिया और उनकी रगों में रक्त की भाँति समां गई। उनकी अगली पीड़ियों को भी यह लगने लगा, यह कहीं बाहर से नहीं आई बल्कि उन्हीं की ही सभ्यता का अंग है।

कुमार निशांत गिरि कहते हैं, "आज भी महाभारत की नल और दमयंती की प्रेम कथा रूसी लोगों को बार बार अपनी ओर आकर्षित करती है, मन को छू लेनी वाली इस प्रेम कहानी के आधार पर 18वीं शताब्दी में एक प्रसिद्ध रूसी कवि वसीली झुकोव्स्की ने एक लम्बी कविता लिखी थी, जिसके ऊपर 19वी सदी में रूस के महान संगीतकार अंतोन आरेन ने ओपेरा तैयार किया, जिसको आज भी रूस में खेला जाता है। यह उस पक्षी की तरह है, जो हर बदलते मौसम के साथ अपना ठिकाना भी बदलता रहता है। कभी यह हिमालय की चोटियों पर दिखता है, कभी समतल मैदानों में तो कभी जल स्रोतों के पास निर्मल नील जल में अठखेलियाँ करता है।"

भारत देश को भारत माँ और इस धरती को धरती माँ की संज्ञा दी गई है। इसी धरती पर नारी कल्पना को लेकर वात्सायन द्वारा कामसूत्र जैसे ग्रन्थ लिखे गए। युग कोई भी हो सतयुग या त्रेता, द्वापर या कलयुग हर युग में नारी सर्वप्रथम रही है। महाभारत में चारों युगों की नारियों का समावेश देखने का मौका मिलता है। गंगा, सत्यवती, अम्बा-अंबिका-अंबालिका, माद्री, गांधारी, कुंती, हडिम्बा, द्रौपदी, चित्रांगदा, अलुपी, सुभद्रा, सत्यभामा, भानुमती और उत्तरा। ऐसी बहुत सी नायिकाएँ हैं। रामायण हो या महाभारत इन के गर्भ में एक ही सन्देश छुपा हुआ है, गृह कलह हो या युद्ध, यह तो होंगे ही अगर आप समाज में और अपने घर में स्त्री को नहीं समझेंगे, उसको उचित स्थान नहीं देंगे। नहीं तो एक गर्म लावे की भाँति वह एक ज्वालामुखी रूप में फटेगी, जो इस धरातल के भूगोल को बदल कर रख देगी।

विशेष स्थिति में विशेष मानसिकता वाले चरित्रों की आवश्यकता पड़ती है। जो समय को व्यर्थ किए बिना किसी परिणाम पर लेकर जा सके। वेदव्यास इस कार्य में निपुण है। हर मोड़ पर उचित पात्रों का समावेश करवा दिया। उसके पात्र इस तरह आम जन के मनों में समाए हुए है कि आज उनको भगवान का रूप या अवतार मान कर पूजन किया जाता है। उसने नायिकाओं को अलग तरीके से प्रस्तुत किया है। इस कथा की नायिकाओं में एक पात्र है कुंती। जिसका नाम सुनते ही अनेकों चिन्ह मन मस्तिष्क में उभरने लगते है। यह एक ऐसी नायिका है जो अपने सुख और दुःख का वर्णन नहीं करती, न किसी से कोई शिकायत करती है। बहुत सी समान्यतायों और विषमतायों को हल करने की क्षमता को अपने अन्दर भर के चलती है। वह हालातों और परिस्थितियों के भीषण तूफ़ान में हिमालय की तरह खड़ी रही। इस गुण के कारण वेदव्यास का लगाव कुंती से कुछ ज्यादा है।

मनोविज्ञान कहता है कि हर व्यक्ति की दो विमाएं होती हैं मानसिक और अध्यात्मिक। दोनों को समक्ष रख कर चलना आवश्यक है। भारत वर्ष में तो अध्यात्म इसकी रगों में समाया हुआ है। अध्यात्म कहता है मनुष्य के जन्म से पहले ही सब कुछ तय होता है, उसके जीवन की कहानी लिख दी जाती है। जिस प्रकार मंच पर दर्शक जिस कहानी को घटता देख रहे होते हैं वह तो बहुत समय पहले ही नाटककार ने लिख दी होती है। इसी लिए तो जिन्दगी को रंगमंच की संज्ञा दी जाती है। पड़ाव दर पड़ाव सफ़र चलता जाता है। कभी फूलों से कोमल तो कभी कांटो से चुभन भरे।

नन्ही पृथा से लेकर कुंती माँ तक का पड़ाव, मथुरा से लेकर हस्तिनपुर, फिर बनवास लेकर अज्ञात वनों का सफ़र, सब उसने तय किया। पहली बार जब भी कुंती के उपलक्ष में कुछ पढेंगे या सुनेंगे तो एक चित्र मन के कैनवस पर अंकित हो उठता है। एक दुखियारी, बेचारी, लाचार सी औरत, अपने मन के रंगों को ध्यान से देखो और वह रंग उठाओ जो अभी तक उठाया ही नहीं। जैसे सात रंगों को मिला कर एक रंग बनता है, वह रंग है सफेद। कुंती भी अनेकों रंगों का समावेश अपने अन्दर करके बैठी है। अपने जीवन काल में उसने जो भी किया या जिया, वह सोच समझ और दूरदर्शी परिणामो को विचारे बिना नहीं किया।

वर्ष दो हजार सोलह में अरबी भाषा में गीता को प्रकाशित किया गया है। दो हजार चौदह में इसका प्रकाशन मार्क्सवादी देश चीन में किया गया। आज उस विचार से सारा जगत् प्रभावित हो रहा है। इस युद्ध में श्री कृष्ण ने गीता में यह उपदेश दिया "कर्म कर फल की

इच्छा मत कर।" इस बात का पालन अगर उस युग में किसी ने किया था, उनकी बुआ कुंती थी। उसने अपनी सौत को दिल से अपना कर फिर उसकी संतानों को अपनी संतान से ज्यादा प्रिय रख कर दिया। अपने भतीजे श्री कृष्ण से कभी भी कुछ वरदान नहीं माँगा। केवल माँगा तो मुश्किलों में घिरे रहना और फिर उनमें से निकलना। कहीं वह सुख के पलों में लिप्त होकर श्री कृष्ण को भूल न जाए। जब महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया, कुछ भी शेष नहीं बचा, सिवाए एक सुनहरी अतीत के। वह नारियां जिनके हाथों पर लगी मेंहँदी एक अभिशाप बन गई थी। वह नारी जिसने पुत्रों के जन्म पर भी पट्टी नहीं खोली थी, आज उसने दो बार खोली जब वह एक संवेदनहीन मास के पिंड बन गए थे। तब वही कुंती विजय होकर उस हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठने की जगह सारे वैभव को त्याग कर अपने ज्येष्ठ जेठ जेठानी संग उनकी सेवा में उनके साथ बनवास में चली गई। वह उन्हें दुखी नहीं देख सकती थी। जिनकी संतानों ने सारा जीवन उसको चैन से बैठने नहीं दिया था। बिना किसी निजी फल की इच्छा किए उसने अपने कर्म किए। उसकी पूरी जिन्दगी अनेकों मोड़ों से उस मानसून की तरह गुजरती रही जो समंदर से शुरू होकर मैदानी क्षेत्रों तक आ पहुंची है। फिर वहां बरस कर अपने आप को संपूर्ण कर लेती है। उसके जीवन में जीवित रहने के लिए विभिन्न परिस्थितियाँ सामने आती रही। कुछ परिस्थितियाँ सावन माह की बारिश लेकर आती, तो कुछ ज्येष्ठ माह की झुलसा देने वाली गर्मी। इसमें ज्येष्ठ माह का प्रभाव अधिक रहा। दुःख और उदासीनता उसकी मानसिक मनोवृति का थोडा सा अंग जरुर बन गई थी, इसको उसने अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। उनकी लगाम को अपने वश में कर के रखा। वह अंकुश मात्र भी घबराई नहीं बल्कि उनको भी अपने अनुरूप ढाल लिया था। अपने पुत्रों को राज एवं क्षत्रिय धर्म की राह पर चलते देख वह कहीं न कहीं सुख एवं समृद्धि का कुछ अनुभव प्राप्त कर लेती थी। एक समृद जीवन जीने के लिए व्यक्ति को जिन वस्तुयों की आवश्यकता होती है, जिन वस्तुयों को मानव सक्षम मानता है। वह सब कुछ उसके पास होने पर भी, वह उनसे अनभिज्ञ रही। उसका तनिक भी अभिमान उसको नहीं था। भगत पीपा जी कहते हैं –

"जो ब्रह्मांडे सोई पिंडे" (*गुरु ग्रंथ सहिब* अंग 695)

अर्थात जो भी इस ब्रह्माण्ड में है वह सब हमारे इस मानवीय तन में है। हर मनुष्य का इस संसार के बिना एक अलग संसार होता है। जिसमें वह जीने से लेकर मरने तक रहता है। जिसका ब्रह्मा, विष्णु और महेश वही होता है। उसका शत्रु भी वही होता है और मित्र भी वही।

कुंती ने भी अपने अन्दर एक किरदार और संसार की रचना करली थी, जिसको वह जीवन भर जीती रही। उसका त्याग मथुरा से भोजपुर जाते समय शुरू हो गया था। सेवा भाव को उसने दुर्वाषा ऋषि की सेवा करके अपने किरदार का श्रृंगार बना लिया था। बचपन से ही उसने अपने उस संसार का निर्माण कार्य आरंभ कर दिया था। शेष कार्य को समय ने संपूर्ण करने में सहायता प्रदान की।

एक तितली की तरह नन्ही सी बालिका राज भवन के उपवन में तितलियों के पीछे भागती तो कभी गिर कर चोट खा कर उस पुष्प के पीछे छुप जाती जहाँ उसको लगता था की अब वह तितली यहाँ आ कर बैठेगी। उसका अंदाज़ा गलत हो जाता वहां तो वह मोटा सा एक भंवरा आ कर के बैठ जाता जिसको उसका रस पीना पसंद था। इन सब बातों से दूर वह एक संपूर्ण विदुषी कन्या अपने प्रिय पिता राजा शूरसेन की छाँव में अपने जीवन के प्रथम काल को बिना किसी कष्ट के जी रही थी। जब उसकी हंसी से पूरा राज्य महल खिलखिला उठता तो शूरसेन भी आनंदित हो उठते थे। उसके लिए भी अपने पिता की ख़ुशी अमूल्य थी। मथुरा उसका अपना था जहाँ उसको किसी का भय नहीं था। उसका अपना सपनो का राजमहल था।

प्रसिद्ध मनोवेज्ञानिक फ्रायड ने सपनों को अर्थ प्रदान करने में जिन यांत्रिक क्रियायों का सहारा लिया है। उनमें से सबसे प्रथम स्थान पर है, "नाटकीयता- स्वप्नों में नाटकीयकरण की स्थिति स्पष्ट रूप से झलकती है। स्वप्न के पात्र नाटक के पात्रों की तरह कार्य करते हैं। स्वप्न की नाटकीयता कार्टून की तरह प्रतीत होती है। जैसे कभी कभी कार्टून का सही सही अर्थ लगाना कठिन होता है, ठीक उसी तरह स्वप्न की नाटकीयता का भी अर्थ लगाना प्राय: कठिन हो जाता है।" (*व्यक्तित्व की मनोवेज्ञानिक एवं आध्यात्मिक विमाएं* 139)

वेदव्यास ने युगों पहले इसी नाटकीयता के सहारे अपनी नायिकाओं को उभारा। एक सुबह जब उस नन्ही बालिका पृथा ने अपने आँखें खोली तो देखा कुछ मेंहमान आए हुए है, जिनके स्वागत में दरबान लगे हुए थे। उसके फूफा यानी उसके पिता शूरसेन के ममेरे भाई महाराज कुंतीभोज (कहीं इन्हें महाराज कुन्तेश्वर के नाम से भी जाना गया है) आए हुए हैं। उनको देखते ही झट से उनकी गोद में जा कर बैठ गई। समय उसको सदा के लिए उसकी गोद में बिठाने के लिए आया था। जिसका विचार उस नन्हे मन मस्तिष्क में नहीं था। पर काल तो कभी आयु नहीं देखता न, वह अपना कार्य करता ही है, क्षण जो भी हो अच्छा या बुरा।

महाराज कुंतीभोज की अपनी संतान नहीं थी। जिस कारण वह बहुत उदास रहते थे। उनके फुफेरे भाई शूरसेन ने उन्हें वचन दिया था, वह अपनी संतान उसको गोद देंगे (उस काल में भी संतान गोद लेने का प्रावधान था, लड़का हो या लड़की दोनों में कोई भेद नहीं किया जाता था, यह इसी बात का प्रमाण है)। शूरसेन ने जब पृथा को बताया के आज के बाद महाराज कुंतीभोज ही उसके पिता होंगे और उसका सब कुछ। वह सहमी सी खड़ी रही। राजा कुंतिभोज ने कहाँ अब जल्दी से चलो, सूर्य अस्त होने से पहले यहाँ से निकलना होगा नहीं तो अँधेरे में सफ़र मुश्किल हो जाएगा। उसने अपनी आँखों में पृथ्वी की भाँति अपनी सतहों में आंसू छुपा लिए थे। मथुरा छोड़ अब वह भोजपुर के लिए रवाना हो गई थी, रथ में बैठी वह पीछे राजमहल, बगिया, फूल, टूटे सपने जो भी छोड़ कर जा रही थी, उसको देखे जा रही थी।

एक नए अध्याय की शुरुआत उस विदुषी ने करदी थी। एक योद्धा कभी मृत्यु या किसी के बिछुड़ जाने के भय से चिंतित नहीं होता, और न ही किसी के मिलने से अधिक खुश होताहै। उसका काम होता है लड़ना, हालात जैसे भी हों। वह तलाश कर रही थी अपने अन्दर की कमी को जिसके कारण शूरसेन ने उसको कुंतीभोज को अर्पण कर दिया। जब वह अपने पिता के ह्रदय में छुपी प्रेम भावना और कुंतीभोज के प्यार को देखती, तो वह अपने आंसुओं को मन के विशाल रेगिस्तान में एक क्षण में समा लेती। कुंतीभोज ने उसको पृथा से कुंती बना दिया था। अब मथुरा नहीं भोजपुर उसका अपना गृह बन गया था। उसके नाम को अपना कर उसने उसकी दुनिया जो वीरान हो गई थी, उसमें उस पेड़ का बीजारोपण कर दिया था, जिसके फल फूल समय की हवा के साथ उड़ उसको एक परिपूर्ण वाटिका बनाने वाले थे। दूसरों की खुशियों के लिए अपनी खुशियों को लोहे की भाँति भाग्य की अग्नि में डाल कर कोई और रूप दे दिया था। उसके त्याग और बलिदान की लम्बी गाथा इस छोटी सी उम्र में एक बड़े मील के पत्थर के रूप में स्थापित हो गई थी।

कुंतीभोज ने उसके साथ तनिक भी सौतेली संतान जैसा व्यव्हार नहीं किया। उसके बलिदान को वह भी भली जानते थे। जब थोड़ी बड़ी हुई तो शिक्षा की ओर उसका पहला कदम भी रखना अनिवार्य था। अन्य छात्रों की भाँति उसको भी गुरुकुल में दाखिल करवा दिया गया। उसके अन्दर के गुणों को उसके करुण नाम के ब्रह्मचारी गुरु जन ने सूक्ष्मता से पहचान लिया था। उस समय छात्र के व्यक्तित्व और उसकी क्षमता को देख कर ही उसका पाठ्यक्रम और शिक्षा प्रणाली तय की जाती थी। उसके अन्दर के दया भाव और दूसरों को बिना किसी द्वेष

भाव के अपनाने का गुण तभी से दिखाई देने लग गया था। उसने एक पल में ही महाराज कुंती भोज को अपने पिता के तौर पर अपना लिया था। वह अपने चुम्बकीय व्यक्तित्व से सब को प्रभावित कर लेती थी। अपने गुरु जनो के आशीर्वाद से वह सब कलाओं में मुहारत हासिल करती जा रही थी। वेदों से लेकर विज्ञानं तक, योग से लेकर गणित विज्ञानं तक, शस्त्र विद्या से लेकर शास्त्र विद्या तक, सब कुछ उसने सीख और समझ कर अपने व्यक्तित्व को संपूर्ण बना लिया। बाल्य काल में व्याकरण से उसने अपनी शिक्षा आरंभ की और यौवन काल तक आते वह सर्वगुण संपन्न तेजस्वी बरह्मचारिणी बन गई थी।

बहुत बार अनजाने में कुछ ऐसा कार्य कर बैठते हैं, जिसका परिणाम या तो अच्छा होता है या बहुत बुरा। इस बात के लिए भीष्म और अम्बा का उदाहरण सर्वोत्तम है। उस समय की बातों को अगर विज्ञानं का चश्मा पहन कर देखें तो बहुत से वहम दूर हो जाएँगे। आज जिस विज्ञानं के दम पर बहुत उछाल मार रहे हैं। वह उस समय के मुकाबले कुछ भी नहीं। डॉ रवि प्रकाश आर्य ने अपनी किताब "साइंस ऐंड टेक्नोलोजी इन महाभारता" में बहुत तत्थ सामने रखे है, जिनको पढ़ और जान कर आश्चर्यचकित होते है। कुंती शरीरिक विज्ञानं में बहुत माहिर थी, यह कला उनको दुर्वाषा ऋषि ने उसके अतिथि सेवा भाव से प्रसन्न होकर उसको सिखाई थी। विज्ञानं कहता है मानवीय तन पाँच तत्वों पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, और आकाश से बना है। कुंती ने जो कला सीखी थी, वह थी किसी एक तत्व से बिना सहवास के भ्रूण पैदा कर सकती थी। एक दिन उसको इस विद्या पर संशय हुआ तो उसने सूर्य तत्व से इसका प्रयोग किया। उस समय किसी कुंवारी कन्या द्वारा संतान उत्पति अच्छी नहीं मानी जाती था। आज भी भारतीय समाज में अच्छा नहीं माना जाता। जब यह प्रयोग सिद्ध हो गया, तो उसके दूरदर्शी दिमाग में सोच आई वह इस संतान को खुल कर अपना नहीं सकेगी और ना ही इसको छोड़ सकेगी। इसका भविष्य क्या होगा ? क्या सारा दोष इस होने वाले शिशु का है ? उसने अपनी विज्ञानं और मानसिक शक्ति से उस होने वाले शिशु को इतना सम्पन्न कर दिया कि वह बड़ा होकर किसी के अधीन न रहे। जिस प्रकार आज की साइंस कहती है कि आप गर्भ में पल रहे शिशु को जिस प्रकार के संस्कार देते हो वैसा ही वह बालक होता है, यह तो है वैज्ञानिक पक्ष। इसी को कला के रूप में बदल कर वेदव्यास ने एक कुंडल कवच धारी सूर्य पुत्र, अंगराज, दानवीर, कर्ण को प्रस्तुत किया है। कई बार कोई भी रचनाकार किसी बात को मिथ्या और कहानी को बताने के लिए कला का रूप दे देता है। जिस तरह कुनीन की दवा को एक लड्डू में भर कर

देते हैं। वह अपने आत्म सम्मान को खोना नहीं चाहती थी। यौवन काल में अनजाने में हुई इस भूल का प्राश्चित उसने कर्ण का त्याग गंगा को जलांजलि देकर किया। वह अपनी शिक्षा समाप्त होने के बाद अपने राज्य में एक कन्या के रूप में वापिस जाना चाहती थी न की एक माँ के रूप में। जो नारी स्वयं के अंश यानि अपनी संतान को कठोर बन कर त्याग सकती है वह क्या नहीं कर सकती। त्याग का बीज तभी उत्पन्न हो गया था, जब उसने अपने पिता का घर छोड़ा था। वह बीज अब बड़ा होकर अंकुरित होकर एक पेड़ बनने की और अग्रसर था। बाद में इसमें राजपाट का त्याग, कभी निजी खुशियों का त्याग और कभी ब्राह्मण रूप में जीवन गुजारने त्याग जुड़ता गया।

महाभारत में और भी बहुत सी घटनाएं हैं, जो उसके व्यक्तित्व को उभार कर सामने लाती हैं। शिक्षा काल को ब्रह्मचर्य आश्रम में रह कर पूर्ण कर लिया था। आगे उसको गृहस्थ आश्रम का पालन करना था। इस आश्रम में विवाह करना अनिवार्य है। वह अपनी चाल में समय के साथ बहती गई। अब उसको कोहिनूर हीरा बनने के लिए कोयले की खदान में दबना आवश्यक था। ऐसे ही कोई कोयला हीरा नहीं बन जाता।

जीवन की शतरंज उसे उस जगह लेकर आना चाहती थी, जहाँ हाथी, घोड़े, प्यादे, शह-मात, सब असली है। उस शतरंज को हस्तिनापुर राज दरबार कहते थे। वह महाराज पांडू के साथ महारानी के रूप में आ खड़ी हुई। राजदरबार में उसका परिचय और संबंध उस वक्त की विशिष्ट नारियों से हुआ। वह अपना सर ऊपर और अहं नीचे रख कर चलना जानती थी। उसकी जेठानी गांधारी कभी उस पर संदेह और संशय भी करती। कुंती उसको अपने प्यार और सनेह के साथ मिटा देती थी। वह कोई भी कार्य करने से पहले बहुत बार सोचती थी। इतने विशाल प्रतिभा वाली नारी ऐसे ही कोई कार्य नहीं कर सकती थी। विवाहित जीवन आनंदमय हो, हर दंपत्ति की चाह होती है। अपने पति महाराज पांडू के साथ वह अपना मधुर समय व्यतीत करने लगी। एक दिन महाराज पांडू युद्ध से लौट कर आए तो अपनी दूसरी रानी माद्री का कुंती के साथ परिचय करवाया। माद्री बड़े ही विनम्र भाव से उसके पाँव में झुकी और उस से आशीर्वाद ग्रहण किया। बस इतनी सी बात थी, उसका ह्रदय जो पत्थर की भाँति कठोर बन गया था, वह माँ की भाँति पिघल गया। हस्तिनापुर राज इस बात का साक्षी है, जब तक माद्री जीवित रही, उसके प्रति कुंती का स्नेह तनिक भी कम नहीं हुआ। माद्री के साथ उसके संबंध सदैव मधुर ही रहे। वह महाराज पांडू से भी खुल कर कहती है, “हे महाराज मुझे किसी बात

की आपत्ति नहीं है, वह मेरी छोटी बहन की तरह है। मैं उसे यह दर्जा देते हुए स्वीकार भी करती हूँ।"

जब उसको यह समाचार मिला कि महारानी गांधारी को गर्भ धारण हो गया है। तभी उसी क्षण वह उनके पास गई और स्वस्थ शिशु की मंगल कामना की। सब कुछ ठीक चल रहा था। सब उस आने वाले शुभ समय की प्रतीक्षा कर रहे थे। उधर पांडू महाराज विचलित से रहने लगे थे। जब वह कुछ समय पहले वनगमन के लिए गए थे, तब शिकार खेलते खेलते दूर चले गए। वहां झाड़ियों के पीछे कुछ आवाज़ सुनाई दी, उन्हें लगा की शायद कोई हिरन उन झाड़ियों के पीछे छुपा हुआ है। उन्होंने अपना शब्द भेदी बाण चलाया। यह बाण उनकी मृत्यु का बाण था। वह बाण वहां प्रेम क्रीडा में मगन एक ऋषि दंपत्ति के सीने में लगा, वह दोनों मृत्यु की और बढ गए। जब उनकी चीख महारह पांडू के कानों तक पहुंची तो वह भाग कर वहां गए। एक ऋषि की हत्या ! यह देख उनके पाँव तले की ज़मीन खिसक गई। ऋषि ने अपनी रूकती हुई साँसों से पांडू को देखा और कहा, "हे पांडू हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ? जिस प्रकार तुमने हमें इस अवस्था में मारा है। जब कभी तुम भी अपनी पत्नी के साथ प्रेम क्रीडा में मगन होगे, उसी क्षण तुम्हारी मृत्यु हो जायगी।" उन्होंने अपनी दोनों अर्धांगिनियों को इस बारे में बताया और इच्छा व्यक्त की वह अपना राज पाट कुछ समय के लिए त्याग कर वन गमन करना चाहते हैं। कुंती और माद्री ने एक शर्त पर उनको आज्ञा दी कि वह दोनों भी राज महल का त्याग कर उसके साथ जाएंगी। वह अपना सिंहासन अपने बड़े भाई को सौंप कर चले गए। अब उनके समक्ष ऋषि का शाप था। एक समस्या थी कि वह अपने वंश की वृद्धि कैसे करेंगे ? यह चिंता उनको अन्दर ही अन्दर खाए जा रही थी। तभी देवी कुंती को अपनी उस विद्या का स्मरण आया जो ऋषि दुर्वाषा ने उन्हें प्रदान की थी। उसके प्रयोग से सूर्य पुत्र का जन्म हुआ था। इस विद्या के बारे में उन्होंने महाराज पांडू से चर्चा की, बताया वह एक ऐसी विद्या के बारे में जानती हैं, जिस से वह किसी भी एक देवता (तत्व) की सहायता से गर्भ धारण कर सकती हैं। यह बात सुनते ही मानो उनकी उमीदों का सूरज फिर चमक उठा था। उन्होंने उसे आज्ञा दी, वह संतान की उत्पति करे। उसने ख़ास शक्तियों के साथ सम्पन्न तीन पुत्रों को जन्म दिया। पहली संतान जिसको धर्म के गुणों से संपन्न किया, उसका नाम युधिष्ठिर रखा, जो बड़े होकर एक ऐसा राजा बने, जो धर्म के गुणों से परिपूर्ण होकर एक सिंह की भाँति अपनी प्रजा की रक्षा करे। वायु की शक्ति से भीम को और इंद्र की शक्तियों से उसने अर्जुन को जन्म दिया। जो

अपने राजा भाई की राज्य चलने में सहायता करे, समय आने पर उसकी रक्षा के लिए भी आगे आए। यह सब उसकी दूरदर्शी सोच को प्रस्तुत करता है। उसके साथ उसकी छोटी बहन के समान माद्री भी थी। कौन औरत नहीं चाहती कि वह माँ बने। अगर कुंती स्वार्थी होती तो वह उसको वह विद्या ना देती, उसने अपनी विद्या का ज्ञान उसे भी दिया। जिस से उसने अश्विनीकुमार की सहायता से नकुल और सहदेव नामक दो पुत्रों की प्राप्ति की। कुंती ने अपने पति की लम्बी आयु के लिए कुछ समय के लिए ब्रह्मचर्य अपना लिया था। अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए बहुत से सवालों को हल कर दिया। विवाह के पश्चात् कुछ समय तक वह अपने विवाहित जीवन का आनंद उठा सकी। काम भाव से कोई भी व्यक्ति नहीं बच सकता। जब भी वह कभी अकेला होता है, काम भाव उसके मन में अचानक आ जाते हैं। इतिहास बताता है ऋषि विशवामित्र भी इसके प्रभाव से बच नहीं पाए थे तो फिर पांडू क्या थे। वह एक दिन अकेले में माद्री के साथ बैठे थे, तब वह उसके साथ काम क्रीडा में मगन होने लगे तो ऋषि का शाप उसके सामने आ गया और यमलोक ले गया।

उसने हर हालत में जीना और लड़ना सीखा था, इस बात से कैसे हार सकती थी। पति की मौत का कारण स्वयं को मानते हुए माद्री गहन सदमें में चली गई, जिस कारण उसने भी वहीं जाने का निश्चय किया जहां महाराज पांडु गए थे। उसने कुंती से कहा "हे कुंती मैं पक्षपात से बचकर अपने और तुम्हारे पुत्रों का पालन सही ढंग से न कर सकूंगी। इस कठिन कार्य को बिना भेद के केवल तुम ही पूर्ण कर सकती हो, और मुझे इस बात पर संपूर्ण भरोसा है।" उसकी दृढ़ता और भावना से परिचित उसकी दूरदर्शी सौत भी अपने पुत्रों को उसके हाथ में समर्पित कर महाराज पांडू के साथ सती हो गई थी।

पति के बिना अपनी संतानों के साथ जीवन यापन करना एक स्त्री के लिए कितना कठिन होता है। महाराज पांडू और माद्री की मृत्यु की खबर से एक बार फिर हस्तिनापुर में सन्नाटा छा गया था। ब्राह्मण रूप में सज्जित कुंती अपने पांच पुत्रों के साथ राज दरबार में आ रही थी। कोई भी स्त्री अपने गर्भ से जन्मे बच्चों के बगैर किसी और को इतनी सनेह भाव से नहीं रखती। आज तक कई लोगों को यह भी नहीं पता उनके पाँचों पुत्र में से दो माद्री के थे। उसने युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव में रंच मात्र भी भेदभाव नहीं किया। कहीं न कहीं अपना न सही महाराज पांडू का अक्स तो उनमें देखती थी। जीवन के हर मोड़ पर एक आदर्श माँ बन कर उनका मार्गदर्शन किया। परिस्थितियों में लड़ने की क्षमता और साहस की उसमें

कमी न थी। दुःख को दुःख के रूप में उसने कभी देखा ही नहीं था। नहीं तो वह अपने पुत्रों को कभी मानसिक सहारा कभी न दे पाती।

किसी भी देश का परचम तब तक लहराता है, जब तक उसका राजा या नेता अपनी प्रजा के हित्तों का ध्यान रखता है। उनकी बातों को सुनता है, उनपर विचार भी करता है। जब उस देश में शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते है। भाव सब को एक समान स्थान पर रखा जाता है। उथल पुथल और कठिनाइयाँ विकास और बदलाव का प्रतीक होती है। जब कोई ऐसा न हो तो समझ लेना सब कुछ सही नहीं चल रहा है। आगे बढ़ने की गति थमी हुई है। कुछ परिवर्तन नहीं हो रहा है। यह परिवर्तन व्यक्ति के निजी जीवन में आए या किसी राष्ट्र में, यह आवश्यक जरुर है। पंजाबी रंगमंच के प्रसिद्ध रंगकर्मी भाई गुरशरन सिंह ने भी कहा था, "कुछ न कुछ घटित होते रहना ज़रूरी है, शांत जल भी अगर न बहे तो वह गन्दा हो जाता है। यह खालीपन और शांति कहो या सन्नाटा बहुत खतरनाक है। यह समय समय पर आभास लगा सकते हैं।"(21 दिसम्बर 2007, पंजाबी युनिवर्सिटी पटियाला)

अपने अन्दर की कोमल नारी को वह उस कठोर तत्व में तब्दील करना चाहती थी, जो कभी किसी दौर में उसके लिए कमजोरी न बन जाए। कुछ वर्ष तक वह अपने राज्य को सँभालने की कोशिश करती रही। दुर्योधन कहाँ शांत बैठने वाला था, राज सिंहासन पर वह स्वयं को बैठा देखना चाहता था। यह पड़ाव उसे बल से पार करना पड़े या छल से। बल से वह यह कार्य कर नहीं सकता था, इसलिए उसने छल का मार्ग अपनाया। कौरवों ने छल से उनका राजपाट और उनके राज्य अधिकार सब छीन लिया। जिस लिए उन्हें कुछ लोग बुरा मानते हैं। वह इस पटकथा के किरदार है, जिनकी इस क्रिया बिना कथा अंतिम फल को प्राप्त नहीं कर पायगी और उनका यह स्वाभाव कथा के लिए आवश्यक है।

महाराज पांडू के जाने के बाद उसके सामने एक विशाल जिम्मेदारी आन खड़ी हुई थी। उसके पुत्र आयु और बुद्धि में इतने बड़े नहीं हुए थे कि वह अपने पिता के विशाल साम्राज्य का भार अपने कंधों पर उठा सके। धृतराष्ट नेत्रांध के कारण राज सत्ता से परे थे। भीष्म अपनी प्रतिज्ञा में बंधे हुए थे। राज माता सत्यवती, अंबिका और अम्ब्लिका अब वृद्ध अवस्था में प्रवेश कर चुकी थी। आरंभ से ही उन्होंने राज सत्ता में दिलचस्पी नहीं दिखाई थी। अब घूम फिर कर सारा दायित्व कुंती के कंधो पर आ गया था। वह एक राजसी कन्या थी, अपितु अब हस्तिनापुर की महारानी भी थी। राज धर्म और राजनीती शास्त्र का ज्ञान उसने अपने बाल्य काल में ही गुरु

आश्रम में पा लिया था। इस बात को वह भली भाँति जानती थी, उनके स्वर्गीय महाराज पांडू जिन्होंने अपनी शक्ति से अनेकों राजाओं को अपनी बुद्धिमता और सेना के बल से पराजित कर के हस्तिनापुर की सीमाओं को निमल आकाश की भाँति विशाल कर दिया था, उनकी पत्नी को ऐसी राजनितिक समझ होना कोई आश्चर्यजनक नहीं है। राष्ट्र भक्ति और सेवा की भावना उसके रक्त में रमाई हुई थी। जितना विशाल भार कंधों पर होता है, उतनी ही विशाल विपरीत शक्तियां अथवा समस्याएँ दामन में स्वयं बंध जाती है। दुर्योधन भी यौवन को प्राप्त हो रहा था, उसके पीछे उसका मामा शकुनि था, जो उसको इस बात के लिए उकसाता रहता था,कि हस्तिनापुर के राज सिंहासन पर उसका अधिकार है। वह बचपन से ही पांडवों के प्रति द्वेष भाव रखता था। एक बार उसने भीम को ज़हर देकर नदी में बहा दिया। भीम नाग वंशियों की सहायता के कारण अधिक बलशाली और सक्षम हो कर बाहर आ गया। कुंती सदैव हर चुनौती के लिए तैयार रहती थी। वह महाराज धृतराष्ट्र, गांधारी और कुरु पुत्रों से भी उतना ही स्नेह रखती थी, जितना वह अपने पुत्रों से। यही गुण उसने अपने पुत्रों को दिया था। हर बलवान क्षत्रिय का धर्म होता है वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र की रक्षा बिना किसी भेद भाव के करे। कुंती राज महल के सभी सदस्यों का सम्मान करती थी। समस्त हस्तिनापुर में कोई ऐसा नहीं था, जो उससे प्रभावित न हो। सभी लोग उस से योग्य आदर पाते थे। इस बात से उसके स्वाभाव का पता चलता है। कोई भी उच्च पद पा लेना विशेष बात नहीं होती। विशेष तो यह होता है उस पद को पा कर भी आप कितने लोगों के ह्रदय में स्थान ग्रहण करते हैं, अहं भाव से कितना मुक्त रहते हैं। यही विचार उसके पुत्रों ने भी अपनाया।

समय बीतता गया और महाराज धृतराष्ट्र अब हस्तिनापुर के राज्य सिंहासन पर बिराजमान हो गए। दुर्योधन के लिए अपनी गद्दी का रास्ता साफ़ बन गया था। पांडवों को एक बार उसने जुए के लिए आमंत्रित किया जिसमें वह हार गए। अब उसके मन में एक बात घर कर गई, अगर इनको अपमानित करना या हराना है, तो जुए के खेल में इनको फंसाना ज़रूरी है। वह इसी चाल में कामयाब भी हुए। जिनके दिल में आशा और विश्वास होता है, वह कभी हार नहीं सकते। कुरु पुत्र यह बात भूल रहे थे, उनके पीछे माँ कुंती का हाथ है। राज राजा, राजनीती इन तीनों का आपसी बहुत गहरा संबंध है। राजनीती तो एक राजा और रानी के खून में होती है। वह किसी महल में रहे, किसी झोंपड़ी में , किसी जंगल में या जहां उन्हें उनका भाग्य ले जाए। अब पांडवों के पास कुछ भी नहीं था। न राजपाट, न कोई जायदाद, जो था वो

स्वयं का तन। एक चीज उनके पास थी, तो वह थी कुंती की राजनीती में गहरी समझ। अपने सम्मान को वापिस कैसे पाया जाए ? जब आपके पास न कोई सैनिक बल है, न रहने को छत। कौरवो ने लाक्षाग्रह को उनका शमशान बनाने की कोशिश की, पर विदुर की चेतावनी से युधिष्ठिर ने उस बात को भांप लिया। माद्री पुत्रों ने अपनी बुद्धि का परिचय देते हुए सब परिवार को आने वाली घटना का अनुमान दे दिया। वहाँ से बच कर जब वह आगे बड़े तो वनों में गमन कर रहे थे, तब चलते चलते वह उस वन में पहुँच गए, जहाँ हिडिम्ब नाम का एक राक्षस रहता था। वहां से गुजरने वाले सभी मानवों को वह मार देता था। रात के समय में जब पांडव वहाँ उस वन में विश्राम कर रहे थे, तब भीम उनकी रक्षा के लिए खड़ा हो गया। बाकी सब गहन निद्रा में सो गए। वहाँ उनके वध के लिए हिडिम्ब राक्षस की बहन हिडिम्बा अपना रूप बदल कर उनको मृत्यु के घाट उतारने के लिए आई। जब उसने विशालकाय भीम को देखा तो उसके रूप पर मोहित हो गई। उसको अपने भाई के बारे में बताया और वहां से शीघ्र जाने को कहा। हिडिम्ब को इस बात का पता चला तो वह उनके वध के लिए स्वयं आ गया। फिर सौ गजराजों सी शक्ति वाले भीम अपने परिवार की रक्षा ले लिए आगे आ गए और युद्ध में उसको मौत के घाट उतार दिया। यह देख हिडिम्बा की आँखों में आंसू आ गए, आखिर था तो वह उसका ही भाई। उसने माँ कुंती के चरणों में विनय किया, अब इस दुनिया में उसका कोई नहीं है, वह उसको भी अपने साथ लेकर चलें। वह भीम से विवाह करना चाहती है। अब समस्या थी, वह राक्षसी कुल से थी(जिसके गुण मानवीय थे) और भीम क्षत्रिय कुल से। राजपरिवारों में आयु क्रम और श्रेष्ठ कुल को विचार कर ही विवाह तय किए जाते है। पर हिडिम्बा के लिए कुंती उसी क्षण भीम को विवाह की स्वीकृति दे देती है। इसके पीछे भी उसकी दूरदर्शी और कूटनीतिक चाल नज़र आती है। उसे ज्ञात था, आपात काल में युद्ध के समय राक्षस जाति के बल का उपयोग होने वाला है। वैसे भी वनों ने रहते इनसे शत्रुता मोल लेनी उचित नहीं है। कुरुक्षेत्र के मैदान में इसका फल घटोत्कच और बर्बरीक के रूप में देखते भी हैं। मात्र एक पुत्र उत्पति के लिए हिडिंबा को स्वीकृत कर कुंती क्षत्रु बनने वाले राज्य के वीरों को मैत्री भाव में बाँध देती है। कुंती स्पष्ट रूप में भीम के कह भी देती हैं, "दुर्योधन ने जो भी हमारे साथ किया है, उस से बदला लेने का मार्ग यही है। मैं चाहती हूँ तुम इस विवाह को स्वीकार करो, मैं तुम्हारे मुंह से न सुनना पसंद नहीं करुँगी। मैं जानती हूँ यह लोग हमारे बहुत बड़े सहायक होंगे।" उस समय राक्षस जाति कई वैज्ञानिक शक्तियों से संपन्न थी। इसलिए इनसे लड़ने के स्थान पर इन्हें अपना

बनाना ही ठीक है। कौरवों ने अपने जिस सबसे विषैली और घातक शक्ति को अर्जुन पर प्रयोग करने के लिए रखा था, युद्ध में उस शक्ति के आगे हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच ही जा पाए कोई और नहीं। अनेकों उदाहरण है, किस प्रकार लाखों मुसीबतों में भी कुंती ने अपनी दूरदर्शिता को कभी धूमिल नहीं होने दिया। इसी दूरदर्शिता से वह पांड्वो के मार्ग को रौशन करती रही। यही दूरदर्शिता उसने दौपदी को प्राथमिकता में दी ।

कुंती पांडवों के साथ अपने राह पर आगे बढ़ती जा रही थी। विशाल मुसीबतों को कुंती अपनी बुद्धिमता से छोटा करती जा रही थी।

मानव की वृति है कि वह बिना किसी बात के तह तक गए, बिना उसका निरिक्षण के सीधा निर्णय तक पहंच जाता है। स्वयं कितने भी कुकर्म किए हुए हों, किसी और के चरित्र का फैसला करते समय वह गिरगिट की भाँति ऐसे रूप बदलता है, जैसे वह माँ गंगा में दैनिक स्नान करता है । आज भी लोग ऐसा ही कुछ करते हैं, केवल सुनी सुनाई बातों के आधार पर ही कुंती के चरित्र पर लांछन लगा देते हैं। उसने द्रौपदी को बिना देखे ही अपने पुत्रों से कह दिया, भिक्षा को आपस में बाँट लो। क्या एक विदुषी और दूरदर्शी नारी ऐसा कह सकती है ? जो स्वयं नारी है, नारी की गरिमा का ख्याल रखती है। द्रौपदी की सुन्दरता किसी अप्सरा को भी मात पाती थी। उसकी सुन्दरता को देख कर कहीं पांच भाइयों में फूट न पड़ जाए जिनको अब तक उसने एक करके रखा है। समय और स्थान के साथ शब्दों के अर्थ भी बदल जाते है, पुरातन काल को देखें तो पति शब्द का अर्थ होता था पत की रक्षा करने वाला। कभी कोई ऐसा समय न आए कि अकेला अर्जुन उसकी रक्षा ना कर सके, इस लिए उसने उन सबको एक पति की तरह रहने के लिए कहा ताकि वह सब भी उसकी रक्षा के लिए तत्पर रहें। भारत में बड़े भाई की वधु को "माँ" और छोटे भाई की वधु को "बेटी" माना जाता है। एक बात सपष्ट थी, वह अपने बेटों की एकता के महल को खंडित होते हुए नहीं देख सकती थी। लोग कहते हैं कुंती डरती थी उसके वचन असत्य न हो जाए। उसको अपनाने के पीछे भी एक कूटनीतिक चाल थी। काशी नरेश भी भीष्म पितामह और हस्तिनापुर से बैर रखते थे। भीष्म का काल शिखंडी द्रौपदी की बड़ी बहन थी। उसने इनको भी विवाह जाल में अपने साथ जोड़ लिया था। कुंती को अपने वचनों से ज्यादा हस्तिनापुर में धर्म की रक्षा की चिंता थी। वह महाभारत में कहतीं है, "मुझसे मेरा राज्य छीन लिया गया, जो मेरे पुत्रों के साथ धोखा हुआ है, बनवास मिला, मुझे इन सबने इतना कष्ट नहीं दिया, जितना द्रौपदी के भरी सभी में अपमान से हुआ । उसे जिस प्रकार से अपमानित

किया गया है, मैं उसे कदापि नहीं भूल सकती"। द्रौपदी के लिए ऐसे वचन कहने वाली कुंती क्या उसे स्वयं अनैतिक मार्ग पर चलने के लिए कहेंगी ? कदापि नहीं। नारी की पीड़ा को इतना जानने वाली कुंती, द्रौपदी को उस मार्ग पर नहीं चला सकती। जिस पर उसे कभी वंश बढ़ोतरी के लिए चलना पड़ा था। जिस पर आगे चल कर भविष्य में उसे गणिका जैसा शब्द सुनना पड़े।

जब दूसरी बार पांडवों को फिर बनवास मिला तो कुंती ने यह कहते उनके साथ जाने के लिए माना कर दिया, अब मैं वृद्ध हो चली हूँ, मेरा तन इतनी क्षमता नहीं रखता कि वह वन जीवन को जी सके। इस लिए वह अब हस्तिनापुर राज दरबार में ही रुकेंगी। इस बार भी उसकी बुद्धि को पकड़ना आसान नहीं था। ऐसा नहीं था की वह सच में कुछ ज्यादा ही वृद्ध हो गई थी। यदि यह कारण होता तो वह फिर कभी वनों में नहीं जाती। महाभारत के युद्ध के बाद वह अपने जेठ जेठानी के साथ वन में क्यों गई ? उसकी बुद्धि को पकड़ना इतना आसान नहीं है। वह एक बहुत दूरदर्शी कुशल राजनितज्ञ नारी थी। वह क्या सोच रही है, इसे साधारण मानवीय बुद्धि से नहीं आँका जा सकता। अब पांडवों के साथ वन में गुप्त रूप से द्रौपदी की रक्षा के लिए पांचाल की राज सत्ता भी थी, ब्राह्मणों की एक मण्डली भी उनके साथ रहती थी। दूसरा अब कौरवों के मन में पांडवों के लिए शत्रुता और बढ़ चुकी थी। ऐसे में राज महल में अपने गुप्तचरों के समाचारों से उनकी आगे की रणनीति को जितना राजमहल में रह कर जाना और समझा जा सकता था, उतना वनों में भटकते हुए नहीं। कुंती ने इस कार्य को किसी और को देने के जगह स्वयं के हाथों में रखा। हस्तिनापुर में रह कर हर घटना की बारीकी को बहुत अच्छे से समझ कर किसी विपत्ति में पांचाल की राज सत्ता और हिडिम्बा की सहायता ले सकती थी। पांडवों को सावधान कर सकती थी। उस साजिश को भंग कर सकती थी। वह द्रौपदी पर इतना विश्वास कर चुकी थी, कि उसको लेकर उसकी संतानों में कोई मनभेद होगा।

मानवीय मनोदशा एवं कार्य पर सदैव किसी न किसी का प्रभाव रहता है। भागवत पुराण में भी कुंती का ज़िक्र आता है। (कुंती रिश्ते में श्री कृष्ण की बुआ थी, वह इस बात से परिचित थी कि श्री कृष्ण इस युग के विष्णु अवतार है) कुंती अक्रूर से श्री कृष्ण के विषय में बात करती है। वह जानती थी, अक्रूर कंस के द्वारा मथुरा में हुए अत्यचारों का साक्षी है, यह भी जानता है, किस प्रकार श्री कृष्ण ने वहाँ कंस जैसे शक्तिशाली राजा का वध कर राज्य व्यवस्था को ठीक कर उसे महाराज उग्रसेन को सौंप दिया था। इसलिए वह श्री कृष्ण को कहती है "क्या श्री कृष्ण और बलराम को अपनी बुआ की संतान अपनी नहीं लगती ? क्या उनको उनसे

कुछ मोह नहीं है। वह इतने कष्टों में से गुजर रहे हैं। जो वह इनकी रक्षा की ओर ध्यान नहीं दे रहे। उनको सच में अनाथ समझ कर छोड़ रखा है। जैसे एक हिरन शेरों में फस जाता है, ऐसे ही इनकी हालत है। दुखों के सागर में घिरी हुई पिता विहीन संतानों को अब किस के सहारे है ?" कुंती जानती थी, अगर एक बार बलराम और श्री कृष्ण उनकी सहायता के लिए आगे आ गए, तो दुनिया की कोई ताकत उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। यह सन्देश वास्तव में कुंती के ह्रदय में श्री कृष्ण और बलराम के प्रति विश्वास को बता रहा है। उसे विश्वास है, श्री कृष्ण और बलराम के रहते उसकी संतानों की रक्षा निश्चित रूप से हो सकती है। राज दरबार के भारी षड्यंत्रों और उत्तम अस्त्र शाश्त्रो को जानने वाले हस्तिनापुर के महाराथिओं को एकमात्र श्री कृष्ण और बलराम ही टक्कर दे सकते हैं। इस प्रकार कुंती के मातृ प्रेम से भरा ह्रदय अपनी संतान को श्री कृष्ण के चरणों में समर्पित करने को उचित जता रहा है। कुंती का श्री कृष्ण पर कितना भरोसा था, इस बात को एक और घटना बताती है। सूर्य ग्रहण के समय कुंती कुरुक्षेत्र में श्री कृष्ण को कहती "मेरी पुत्र वधु का जब अनादर हुआ, तब कोई भी आगे नहीं आया। मेरे बलवान पुत्रो के होते ही भी उसका खतरे में पड़ जाना ठीक नहीं था और यह केवल द्रौपदी का नहीं बल्कि संपूर्ण नारी जाती का अपमान था"।

कुंती सत्य मार्ग पर चलने वाली नारी थी। वह जानती थी, राज दरबार के दूषित माहोल में रहकर वह स्वयं को बचा नहीं पाएगी। उसका कुछ न कुछ असर उस पर भी जाएगा। किसी न किसी तरह वह भी उस पाप की भागी बन जाएगी, जिस तरह भीष्म बन गए है। इसलिए जब उनके पुत्रों को बनवास मिलता है, तो अधर्म से भरी सोच वाले राज महल को त्याग कर भाई और पिता के समान उसकी रक्षा करने में तत्पर विधुर जी के घर में रहना उचित समझती है। स्वयं श्री कृष्ण भी युद्ध से पहले दुर्योधन के राज महल के पकवान और वैभव को त्याग कर विदुर के घर का ही अन्न जल स्वीकार कर, वहां विश्राम करते है। भीषम तो हस्तिनापुर के सिंहासन के खूँटे से बंधे हुए हैं। वह उनके पक्ष को नकारने की कोशिश करेंगे। कुछ भी हो विदुर तो धर्म का ही पक्ष लेंगे। यहाँ कुंती की उच्च विवेक बुद्धि की समझ दिखाई पड़ती है। युद्ध कभी समाप्त नहीं होते। सदैव चलते हैं, कभी तन से तो कभी मन से। आंतरिक युद्ध में स्वयं को मार कर ही इस युद्ध को जीता जा सकता है। हर व्यक्ति के अंतर्मन में एक योद्धा होता है, जो अच्छे और बुरे हालातों में युद्ध लड़ता है। कुंती जान चुकी थी अब शान्ति के सभी द्वार बंद होते जा रहे हैं। युद्ध होकर ही रहेगा और यह निश्चय है। इसलिए जब विदुर पाडवों को

लाक्षाग्रह के बारे में मलेश भाषा में संकेत देते हैं, कुंती युधिष्ठिर और अन्य पंडू पुत्रों को साफ़ साफ़ कहती है, विदुर की बात किसी षड्यंत्र को समझा रही है। इसे समझ कर अपना मार्ग सुरक्षित करो। विदुषी कुंती अपने पुत्रों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से युद्ध से निपटने के लिए तैयार करती रहती थी। कुंती की ही विशेष बुद्धि और सजगता का परिणाम था, जो पांडवों ने विदुर की बात पर विचार कर समय रहते ही काम किया। लाक्षाग्रह से जीवित बच कर निकल आए। हस्तिनापुर के भविष्य को देखते हुए कुंती अपने पुत्रों के लिए लाक्षाग्रह में एक ऐसा त्योहार आयोजित करवाती है। जिसके द्वारा उसको दुर्योधन की कुटिल चाल का उत्तर मिलता है। इस आयोजन में वह सब को भोजन ग्रहण करवाती है, संयोग वश एक नारी और पांच पुरुष मदिरा पी कर अपनी होश गंवा कर वहीं लेट जाते है। भोज होने के बाद जब लाक्षाग्रह को आग लग जाती है, उसमें पांच पुरुषों के साथ वह निषाद नारी भी जल जाती है। कुंती अपने पुत्रों सहित वहाँ से सुरक्षित निकल जाती है। समय को देखते हुए ऐसा करना आवश्यक भी था। कौरव, कुंती और पांडवों को जल गया मान कर यह समझते हैं कि उन्हें सब मिल गया हैं। इधर उसकी सोच और दृष्टि में अनेकों पुत्र और नारिया थी। जिनको निषाद नारी और उनके पुरुषों के बलिदान पर बचाना आवश्यक था। इसलिए वह रात्रि में ही गुप्त सुरंग से पार हो गए।

कुंती युद्ध में स्वयं नहीं लड़ी। उसके जीवन की प्रत्येक घटना किसी युद्ध से कम नहीं थी। यह वीरांगना भले ही सच में महलों में सोने योग्य थी, फिर भी खुली धरती पर, धुल में, वन में, प्रसन्नचित ह्रदय से विश्राम करती रही। उसके मन में निरंतर कौरवों के अधर्म पर चिंतन चल रहा था। यह सोचते हुए कहती है, "हे द्रौपदी ! मैं पांच बलवान पुत्रों की माता होकर भी आज इस प्रकार वन में प्यासी पड़ी हुई हूँ"। वह अपने पुत्रों को कहना चाह रही थी, यदि मेरे जैसी माता का यह हाल है तो बाकी माताओं की क्या दुर्दशा करेंगे कौरव, उसका अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। युद्ध से पहले कुंती श्री कृष्ण के हाथों युधिष्ठिर के लिए एक संदेश भेजती है, कि तुम इस रानी विदुला और उसके पुत्र संजय की कहानी सुनो, जब संजय के पिता युद्ध में मारे गए तो इसने अपने राज्य को पाने के लिए कोई युद्ध नहीं किया और कहा, माँ यदि मैं युद्ध में मर गया तो आपको कौन देखेगा। इसलिए मैं युद्ध नहीं करूँगा। लेकिन मैं ऐसे पुत्र की माँ के स्थान पर उस पुत्र की माँ कहलाना पसंद करुँगी जिसने अपने पिता के राज्य को पाने के लिए अपने प्राण दे दिए हो। इस तरह कुंती अपनी संतान में अपने अधिकार के लिए सतत संघर्ष की भावना भरती है। उसके पुत्रो ने युद्ध न केवल लड़ा बल्कि जीता भी, जो अब तक के महत्वपूर्ण

युद्धों में से एक है, जिसको कहीं न कहीं प्रथम विश्व युद्ध के रूप भी देखा जाता है। जो धर्म और अधर्म के युद्ध के रूप में लड़ा गया। इस युद्ध में बहुत सारे वैज्ञानिको, राजाओं, धर्म योद्धाओं, और अनेको विशेष समुदाओं का सर्वनाश हो गया। 18 दिन तक यह विश्व युद्ध चलता रहा। अनेको उतार चढाव बनते बिगड़ते रहे, अनेकों नीतिया बनी और प्रयोग की गई। अंत कुंती ने अपने पांच पुत्रों की सहायता से श्री कृष्ण को सार्थी बना कर, इस युद्ध को विजय कर लिया। युद्ध के बाद गांधारी और धृतराष्ट्र के साथ वन में चली जाती है।

जो बदले का बीज अंकुरित हो कर महाभारत के युद्ध रूपी विशाल वृक्ष के रूप में खड़ा हो गया था, जिसको नष्ट करने के लिए अनेको वीरों ने रणभूमि में बलिदान दिया था, उसकी जड़ें रहते समय तक कहीं न कहीं किसी रूप में विद्यमान रहेंगी। युद्ध समाप्ति के बाद जो कुछ कौरव बचे थे, वह किसी अज्ञात देश की और चले गए थे। इस बात में उसकी बहुत अधिक दूरदर्शिता दिखाई पड़ती है। कुंती के उच्च-संस्कार, उसकी विनम्रता, शहनशीलता और राज्य परम्पराओं का निर्वाह, स्यमं को इनकी सेवा में समर्पित कर कुंती ने पंडू पुत्रों के गुप्त रूप से बैठे शत्रुओं को भी बदल दिया। सब लोग यह जान गए थे पांडवों का युद्ध गलत राज्य व्यवस्था से था न कि व्यक्तिगत। शोधार्थी कहना चाहता है यदि महांभारत को समझना चाहते है, तो कुंती को समझना अति आवश्यक है, अगर सत्यवती को महाभारत की जड़ माना जाता है, तो कुंती एक तना है। जिसके ऊपर महाभारत का निर्माण पनपा।

जिस प्रकार एक नदी के जल के गुण इस बात पर निर्भर करते हैं, वह नदी किन भूमि, पहाड़ों और पत्थरों को स्पर्श करते चली आ रही है। ऐसे ही आत्मा सहज स्वभाव से निर्मल है, अनेको जन्मों में अनेकों लोगों का अनेको परिस्थितिओं का संग करती हुई, वह कई गुणों अवगुणों को धारण करती हुई प्रतीत होती है। किसी भी व्यक्ति को समझने के लिए उसकी मानसिकता को समझना आवश्यक है। वह किन हालातों में पला बड़ा हुआ है। किस प्रकार उसने अपने जीवन के पड़ाव दर पड़ाव पार किए हैं। कुंती के पूर्व जन्म संस्कार जो भी रहे हों, इस जन्म में उसने अपने पूर्व के पुण्य संस्कारों से जो उच्च स्थान हासिल किया है, उसे कोई साधारण नारी सहजता से प्राप्त नहीं कर सकती है। कुंती ने माद्री के पुत्रों का पालन कर मातृत्व को गरिमा प्रदान की। श्री कृष्ण पर अपना विश्वास बनाए रख कर भक्ति मार्ग में सिद्धि पाई। अपने निज धर्म क्षत्रिय धर्म का पालन कर सभी क्षत्रिय वीरों और वीरांगनाओं को एक दिशा दिखा दी। दया भगवान का ही नहीं उनके भक्तो का भी आभूषण होती है, कुंती ने

गांधारी, धृतराष्ट्र और भीष्म पितामह का सम्मान कर के इस बात को सही सिद्ध कर दिया। कौन कहता है, मानव में मानवीय दुर्बलताएं नहीं होती, उस दुर्बलताओं से हार जाना और बात है, इन्हें अपने जीवन के श्रृंगार पथ की नींव बना कर ऊँची उड़ान भरना और बात है। महाराज पांडु से कुंती अत्यधिक स्नेह करती थी। उसने माद्री के साथ उनका विवाह होने पर भी अपनी निजी दुर्बलताओं पर विजय पाकर नारी की दृड संकल्पों की पताका और ऊँची उठा दी। क्या नारी कोई शोभा की वास्तु होती है ? कदापि नहीं ! नारी यदि किसी राज पद पर बैठती है तो नीति शस्त्र कहता है उसका ममतामय हृदय अपने परिवार की सीमाओं को तोड़ कर "वासुदेव कूटम्भ्कम:" की घोषणा करता हुआ सुनाई देना चाहिए। राज माता राज परिवार की ही नहीं, इस पृथ्वी की माता होती है। महारानी कुंती राज माता होने के नाते अपने इस धर्म को बहुत गहराई से समझती थी। अपनी प्रजा द्वारा की गई पुकार को अनदेखा नहीं कर सकी। श्री कृष्ण के सहयोग से उसने अपने पुत्रों को जन कल्याण की वेदी पर चढाने में तनिक भर संकोच नहीं किया। नारी की गरिमा, कुलों में सदाचार का रक्षण और न्याय व्यवस्था की स्थापना के लिए वह महाभारत के युद्ध में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में वह विदुर और द्वारकाधीश के स्वरुप से अंतिम स्वास तक सक्रिय रही।

हिडिम्बा

महाभारत में ऐसा बहुत कुछ रचित किया या कह लो उस काल में घटित हुआ, जिस पर भरोसा करने से मना कर दें या हो सकता है, कुछ संदेह से मन भर जाए। जो केवल प्रश्न चिन्ह को स्थापित कर देगा। ऐसा बहुत कुछ नाटकीय घटित हुआ, जिसको मानवीय बुद्धि कभी सत्य नहीं मान सकती या वह छोटी सी बुद्धि में समा नहीं सकते। इसलिए अगर उसको सत्य नहीं मान सकते, तो कला की उगली पकड़ के उसके पीछे-पीछे चलना होगा। बहुत सी कठिन बातों के सरल भाव समझ में आने लगेंगे।

जिस तरह कोई कडवा अनुभव त्रस्त कर देता है, जिससे कुछ लाभ नहीं होता, उसका शुक्रिया सदैव करते हैं, क्योंकि अगले पथ के लिए एक शिक्षा जरुर दे जाता है। इस कथा में बहुत कुछ सोच के दाएरे के अन्दर लिखा गया है। कुछ ऐसा भी है जो अकल्पनीय और अद्‌भुत है। जिसको जब पढ़ते हैं, तो वह मानवीय बुद्धि पर एक चोट करता है। बिना सोचे "वाह" शब्द निकल आता है। सतयुग और त्रेता में युद्ध देव और दानव जाति के बीच हुआ। द्वापर का युद्ध धर्म और अधर्म के बीच हुआ। इस युद्ध में भी कुछ पात्र देव थे और कुछ दानव। उनकी पहचान करना कठिन है, कुछ देव पात्र दानवीय रूप में परिवर्तित हो गए और दानवीय पात्र देवों में परिवर्तित हो गए।

लोक रंगमंच में कला की एक विधा है कठपुतली, जो राजस्थान में मुख्य तौर पर खेली जाती है, यह कला विश्व विख्यात है। इसमें लकड़ी या चमड़े की कठपुतलियां बना कर उनका खेल खेला जाता हैं। पर्दे के पीछे एक आदमी इस सब को खेल खिलाता है। सब को वह कठपुतलियां दिखती हैं, वह निर्देशक नहीं जिसके हाथों से सब खेल हो रहा है। इसी तरह हर कथा में कुछ पात्र होते हैं, जो प्रत्यक्ष रूप में सामने नहीं आते, उनका योगदान महत्वपूर्ण होता है। वेदव्यास स्वयं एक ऐसे ही किरदार थे जिन्होंने सारी महाभारत में अपना किरदार निभाया। जिस प्रकार हर रचनाकार का प्रभाव उसके पात्रों में दिखाई पड़ता है। उसी तरह वेदव्यास ने भी इस कला के माध्यम से बहुत से ऐसे पात्रों को महाभारत की कथा में फैला रखा है, जिनके बिना कथा के प्रवाह को आगे नहीं लेकर जा सकते। वह अधिक समय के लिए कथा में नहीं आते पर उनका प्रभाव इतना है, कि अगर वह ना होते तो कथा की निरंतरता को रुका हुआ महसूस करेंगे। किसी भी मोटर गैरेज में या किसी सड़क के किनारे आपने एक प्रयोग बहुत बार देखा होगा। जब भी कोई गाडी किसी ढलान से नीचे खिसक रही होती है या किसी मैदान

पर खराब होकर रुक जाती है। उसका चालक उसके टायर के नीचे कोई छोटा सा पत्थर लगा देता है, वह गाडी पीछे की तरफ नहीं जाती। है तो वह छोटा सा पत्थर, पर उसकी ताकत क्या है ? यह देखने को मिलता है। उसी तरह यह छोटे छोटे पात्र, इनकी महत्वता आगे वाली घटनाओं में महसूस की जा सकती है ।

असत्य कितना भी बलशाली क्यों न हो, वह सत्य को परास्त नहीं कर सकता। अंत में सत्य ही विजय रहता है। आदि काल से दोनों का मुकाबला निरंतर जारी है, कभी सत्य भारी रहता है और कभी असत्य। हिरण्यकश्यप ने नर सिंह की ताकत को माना, रावण ने श्री राम की ताकत को। द्वापर में वर्तमान स्वयं वही इतिहास लिख रहा था। कौरव अपने पांडव भाइयों के खिलाफ थे। जिनके साथ नीति नायक श्री कृष्ण था। वह श्री कृष्ण की शक्ति को जानते तो थे, खुल के उसको अपना न सके। अगर असत्य की शक्ति में से बुराई का तत्व निकाल दिया जाए, तो दोनों शक्तियां मिल कर जिस शक्ति का निर्माण करेंगे वह शक्ति कैसे होगी ?

इन दो शक्तियों का टकराव वेदव्यास मण्डली ने दिखाया है। वही बीच बीच में इनका मिलन भी दिखाया है। लक्षग्रह की घटना के पश्चात पांडव वनों में गमन कर रहे थे। चलते चलते और हालातों से लड़ते वह टूट चुके थे, फिर भी माँ कुंती के मार्गदशन से वह बढ़ते जा रहे थे। सूर्य अस्त होता जा रहा था, उनका हौंसला उदय होता जा रहा था। रास्ते में उन्हें गहन वन में रात्रि पड गई। गहरा सन्नाटा चारों तरफ फैला हुआ था। किसी जंगली जीव की आवाज़ उसको चीर जाती। छोटे छोटे जुगनू बड़ी बड़ी उमीदों की रौशनी लेकर जलते और फिर कहीं अलोप जाते थे। दिन भर की थकान के बाद सभी पांड्वो ने वहीं एक जगह पर विश्राम करने का निर्णय लिया। सभी गहन निद्रा में चले गए। भीम ने उनकी रक्षा के लिया जागने का निर्णय लिया। यह रात उनके भाग्य में एक और रेखा अंकित करने वाली थी। जिस जगह वह आज विश्राम कर रहे थे, वहाँ हिडिंब नमक राक्षस राजा का राज्य था। उसके बारे में कहा जाता था, वह राज्य से गुजरने वाले सभी मानवीय और दैवीय जाति वाले लोगों को मार देता था। उनकी गंध उस तक पहुँच जाती थी। वह विशाल काय् तन, अनंत शक्तियों, का मालिक था। दानव राजा हिडिम्ब की एक बहन थी जिसका नाम था हडिम्बा। वह भी विशाल तन और असंख्य वैज्ञानिक शक्तियों की मालिक थी। जब उनको पता चला कि आज उनके राज्य के जंगल में कुछ मानव आए हुए हैं, उसका मन खुश हो गया। उसने उन लोगों को मारने के लिए अपनी बहन हिडिम्बा का चुनाव किया। वह स्त्री रूप में थी, उसकी शक्ति और इरादे किसी वीर पुरुष से कम नहीं थे। उसके

भाई को अपनी बहन पर बहुत विशवास था, वह इस कार्य को कुशलता से पूर्ण कर सकती है। उनकी गंध के माध्यम से वह उस जगह पहुँच गई, जिस जगह विश्राम कर रहे थे। उसने देखा चार पुरुष और एक नारी गहरी निद्रा में लीन हैं। वह उनको अपना ग्रास बनाने के लिए आगे बढ़ी ही थी, उसकी नज़र एक और पुरुष पर पड़ी, जो शिला पर बैठा आसमान की ओर देख रहा था। जब हिडिम्बा ने अपने जैसे उस विशालकाय पुरुष को देखा तो वह उसको देखते ही रह गई। वह यह भूल गई थी, कि उनको मृत्यु का ग्रास बनाने के लिए आई थी। बस वह उसको निहारती रह गई। किसी भी राक्षसी का ऐसा रूप किसी ने देखा नहीं होगा, इसकी कल्पना भी नहीं की होगी। यह महाभारत की कथा है। जो पूरे संसार में कहीं नहीं मिलता वह यहीं मिलता है, जो इसमें नहीं है वह पूरे संसार में कहीं नहीं है। हिडिम्बा मानव पर मोहित हो गई थी। जिसका परिणाम कुछ भी हो सकता था। वह भूल ही गई वह किस कार्य के लिए आई है।

उस पेड़ के पीछे जहाँ वह छुपी हुई थी, उस पेड़ पर सोए हुए पक्षी उड़ने लगे, उनकी फड-फडाहट से वह घबरा गई और एक कदम पीछे हट गई। इस आहट को सुन कर भीम भी कुछ सतर्क हो गया और उसका हाथ अपनी गदा पर गया। शिला से उतरता हुआ वह उसी ओर चल पड़ा और जहाँ हिडिम्बा छिप कर खड़ी हुई थी। जब वह उसके सामने गया तो उसके मन में एक संदेह आ गया, इतनी रात को अकेली कन्या इस जंगल में क्या कर रही है ? उसने यही सवाल उसके सामने दाग दिया। हिडिम्बा तो बस उसकी सुध में सम्मोहित हुई पड़ी थी। बिना किसी क्षण की देरी के उसने अपना सत्य उसको बता दिया, "मैं एक राक्षसी कन्या हिडिम्बा हूँ और यहाँ मेरे भाई राक्षस राज हिडिंब का राज है। उसकी आज्ञा से मैं आप सब को मारने आई हूँ।" भीम भी अजीब सी मनोदशा में घिर गया। शत्रु कैसे स्वयं सारा षड्यंत्र बता रहा है। तभी हिडिम्बा ने उससे विनय करते हुए कहा, मुझे काफी समय हो गया है यहाँ आए हुए, अब तक मैं वापिस नहीं गई। मेरा भाई मुझसे बहुत सनेह करता है। वह भी मुझे ढूंढता हुआ यहीं आ रहा होगा। ऐसा न हो वह आप पर हमला कर दे। वह उनको शीघ्र ही उस जगह से चले जाने को कह रही थी। कुछ देर पहले वह केवल उसका शत्रु था पर अब तो जैसे उसका अपना बन गया। एक अजब सी चमक उसकी आँखों में थी जो भीम भी समझ नहीं पा रहा था। तभी उसकी वार्तालाप सुन कर, पास में सोए हुए पांडू पुत्र और माँ कुंती भी जाग गए और हिडिम्बा को देख चकित हो गए।

अजनबी कन्या को देख बाकी पांडू पुत्र भी चौकन्ने हो गए। अपने अपने शस्त्रों पर सभी के हाथ चले गए। माँ कुंती ने उनको इशारे से चौकन रहते हुए धैर्य रखने के लिए कहा। तभी भीम ने उसका परिचय माँ कुंती से करवाया। सभी के मुख अब बंद थे, कोई किसी को कुछ नहीं बोल रहा था। एक प्रश्न अब उनकी सभा में गूंज रहा था। क्या कोई राक्षसी कन्या मानवीय गुणों से भरपूर हो सकती है ? क्या उसके मन में भी दया भाव आ सकता है ? यह सब सत्य था और इसका सबूत उनके समक्ष खड़ा था। वह चाहती तो सोते हुए पांड्वो और भीम के साथ माँ कुंती को धोखे से मार भी सकती थी। उसके पास इतनी शक्ति थी। उसने ऐसा कार्य नहीं किया। उसके मन में जरा सी भी मैल या द्वेष होता, तो उनको सारी बात ना बताती। वह हाथ जोड़कर माँ कुंती के सामने खड़ी हो गई। वह स्त्री जिसने अपनी सौत के बच्चों को अपनाया हो, जिसने कुरु पुत्रों को भी अपने पुत्रों से ज्यादा सनेह दिया हो, जिसने माद्री को भी खुले दिल से अपनाया हो, जिसका दिल सदैव प्रेम से भरा रहता हो, जिसकी नज़र भविष्य की दीवार के आर पार भी देख सकती हो क्या वह ऐसी स्त्री को पहचानने में भूल कर सकती है ? जिस बात के कारण उसने इन सभी को चौकस किया, वह बात अभी तक उसने कहीं नहीं थी। कहीं यह तो नहीं, वह डर रही थी, कि क्या वह मानव इस दानवीय कन्या को अपनाएंगे ? एक सवाल उसने सबके मन में अंकुरित कर दिया, हिडिम्बा मानवीय कन्या है या दानवीय कन्या ?

हिडिम्बा खुश थी कि उसके कहने से सभी पांडव आने वाली विपत्ति से चौकस हो गए हैं। तभी उन सब के मौन को एक शोर ने फिर तोड़ दिया। घोंसलों में सोए पक्षी फिर से उड़ने लगे थे। जंगली जानवरों का रुदन शुरू हो गया था। पेड़ों के गिरने की आवाज़े आने लगी। जब तक वह कुछ समझ पाते, इतने में एक विशालकाय राक्षस उनके सामने आ कर खड़ा हो गया। आते ही उसने पहले अपनी बहन को अपनी ओट में लेकर सुरक्षित किया। हिडिम्बा नज़रों को चुरा कर भीम को देख रही थी। हिडिम्ब ने उन सब को अपना परिचय दिया और युद्ध के लिए ललकारा। भीम ने अपने भाइयों को एक तरफ करके हिडिम्ब के प्रस्ताव को स्वीकार किया। दोनों वीरों को अपनी शक्ति और बल पर बहुत अभिमान था। एक नए अध्याय के लिए दोनों का युद्ध शुरू हो गया। कभी लगता भीम युद्ध जीत रहे हैं, कभी लगता हिडिम्ब अपनी जय का ध्वज लहराएंगे। काफी समय तक युद्ध बिना किसी परिणाम के चलता रहा। दोनों पक्षों में किसी एक ने जीतना था। जीत किसी की भी हो हार हिडिम्बा की होनी थी। इसलिए वह बिना उनके युद्ध को देखे आँखें मूँद लेना चाहती थी। इतने में भीम ने अपनी गज शक्ति के साथ

उसके सर पर प्रहार किया और हिडिम्ब वहीं शांत हो गया। हिडिम्बा की अश्रु धारा निरंतर बहने लगी। इस दुनिया में उसके भाई के बिना उसका कोई नहीं था। अब वह अनाथ हो गई थी। अनाथ की दशा क्या होती है यह कुंती जानती थी, क्योंकि उसके बच्चों ने इस पीड़ा को सहन किया हुआ है। हिडिंबा भीम के अन्दर अपना अगला सहारा देख रही थी। वह महसूस कर रही थी हिडिम्ब के बाद वह सिर्फ भीम की ओट में सुरक्षित रह सकती है। इस बात को उसने कुंती के सामने रखा और कहा वह भीम से विवाह करना चाहती है, कुंती की दया कहलो या कूटनीति, उसने इस बात के लिए हाँ कह दी। इसी के साथ शर्त भी रख दी, केवल एक संतान की उत्पत्ति तक वह उसके साथ रहेगा। दिन में वह उसके साथ रहेगा और रात्रि को अपने भाइयों के साथ।

कैसा किरदार था वह ? कुंती को अपने जैसे कुछ गुण उसमें नज़र आए थे। उसने भी किसी से कुछ शिकायत नहीं की। बस जो जीवन में आया उसको अपने ढंग से हल करने का सोचा। उसने तो नहीं कहा वह भी उनके साथ रहना चाहती हैं। उसने कभी अपनी उस मानसिक पीड़ा को व्यक्त नहीं किया। जब आपको अपने जीवन साथी के साथ न रहने को मिले, कहीं न कहीं उसमें छोटी कुंती का अक्स दिखाई पड़ता है। कुंती का स्वामी इस दुनिया को छोड़ कर चला गया था जो कभी वापिस नहीं आयगा, इस बात का उसको पता था। पर भीम तो इसी धरती पर है और जीवित भी, फिर भी वह हिडिम्बा के पास लौट के नहीं आएगा यह उसको पता था। पांडव पिता के न होते अनाथ हो कर जीवन बिता रहे थे। भीम और हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच ने तो पिता के होते हुए ऐसा जीवन बिताया। शायद प्रेम कथाओं के पात्र इसी बात के लिए अमर हैं। सिया और राम, राधा और कृष्ण, हिडिम्बा और भीम।

कैसी नारी थी वह ? क्या उसका कोई एक रूप था ? क्या कह कर उसको पुकारा जाए ? शोधकरता को ऐसा महसूस होता है, जैसे इस महाकथा की सभी नायिकाओं के गुण वेद व्यास ने इस नायिका में वेद डाल दिए हों। अथाह पीड़ा, न ख़त्म होने वाला इंतज़ार, मानव और दानव जाति के बीच का सेतु, बिरहा की स्वामिनी, त्याग की मूर्ति या देवी। दूसरों के सुखों के लिए सब कुछ त्याग दिया, अपना भाई, अपना पति, अपना पुत्र और अपना पौत्र भी, यही नहीं बल्कि अपना राज्य भी। क्या कुछ लिखा जाए उसके चरित्र को चमकाते रत्नों के बारे में ? असंख्य नाटकीय भाव, नाटकीयता के स्रोत, जो उसके चरित्र में बहुत कुछ है जिन पर बहुत

कुछ लिखना और खेलना अभी भी बाकी है। आवश्यकता है भूल के कारण इस नायिका पर पड़ी धूल को साफ करके इसको समझने की।

उस घटना के बाद कुंती ने उसका विवाह भीम से करवा दिया। अब भीम राक्षस राज्य के राजा बन गए थे। जो बहुत शक्तिशाली राज्य था। हिडिम्बा, कुंती की इस कृपा की ऋणी हो गई और भीम के साथ अपने जीवन का निर्वाह करने लगी। फूलों पर खेलने वाली एक तितली जिसके द्वारा तैयार किए रेशम की कीमत बहुत महंगी होती है, लेकिन उसका जीवन बहुत छोटा होता है, हिडिम्बा भी वही तितली है जो पांडू वंश के लिए उस कठोर और अत्यधिक अनमोल रेशम को बना रही थी, जिसने कुरुक्षेत्र के मैदान पर अपनी कीमत पानी थी। एक चिंता में उसका मन लगा रहता था। उसको यह ज्ञात नहीं था, वह विवाहिता है या विधवा ? एक दिन जब सबको यह समाचार मिला, कि राज्य को एक नया उत्तराधिकारी मिल गया है। सारे राज्य में ख़ुशी की लहर दौड़ गई, पर इसी लहर में हिडिम्बा के लिए एक दुःख की लहर छुपी हुई थी, जिसमें वह डूबी जा रही थी। कैसे तैरना है और कैसे दिल के तट से निकल कर वास्तविकता के तट तक आना है, कुछ ज्ञात नहीं पड रहा था।

श्री राम ने अपनी पत्नी के साथ बनवास किया। पांडव भाई अपनी माँ के साथ बनवास काट रहे थे। हिडिम्बा अपने घर में ही बनवास काट रही थी। बिना किसी साथी के अपने छोटे से पुत्र के साथ जो अपनी हाथों की लकीरों में इतिहास को बदलने वाली रेखा अंकित करवा कर आया था। जो था तो अपनी माँ की भाँति दानव, पर था वह मानव घटोत्कच। कई बार ऐसा लगता है, नाटककार भी अपने किरदारों के साथ अन्याय करते दिखते हैं। उनके पीछे क्या मंतव्य होता है, वह उनके मन के बादलों के पीछे कहीं छुपा होता है। अपनी प्रतिज्ञा अनुसार अब भीम को पत्नी और पुत्र का साथ छोड़ कर भाइयों और माँ के साथ आगे बढ़ना था। नम आँखों के साथ बिना कुछ कहे, अपने अंश को पालने का वादा कर हिडिम्बा ने उसे विदा कर दिया। कई किरदार वह अपनी सास माँ कुंती की भांति निभा रही थी। एक रानी, एक माँ, एक मार्गदर्शक, एक त्याग की देवी, सब कुछ उसी की तरह। अगर किसी को कुंती के बारे में कम शब्दों में समझाना हो तो उसका प्रतिरूप हिडिम्बा है। अब आगे जीवन के लिए उसे मकसद मिल गया था। अपने पुत्र को मानवीय और दानवीय शक्तियों से इतना संपूर्ण कर देना कि कोई भी उसका मुकाबला न कर सके। वह जानती थी उसके कुरु भाई उनके खून के प्यासे बने हुए हैं, वह समय समय पर उनके खिलाफ षड्यंत्र रचते रहते हैं। अब उनको हिडिम्बा का साथ

मिल चुका था। उसके गुप्तचर और सेना गुप्त रूप में उनका पीछा करती रहती थी, किसी भी विपत्ति में वह उनकी सहायता करने को तत्पर रहते थे। जिस विश्वास को लेकर हिडिम्ब अपनी बहन पर अभिमान करता था, उस अभिमान को उसने उसकी मृत्यु के बाद भी तोडा नहीं। एक अच्छी शासिका बन कर अपने राज्य को चला रही थी। यही नहीं वह अपने घर को भी यानि ग्रहस्थ की भी पालना कर रही थी। फिर क्या हुआ वह तन से उनके साथ नहीं रह रही थी। पर पर्दे के पीछे उस निर्देशक की तरह अपनी कठपुतलियों की सहायता से उनकी रक्षा कवच बनी हुई थी।

अपने पुत्र और पौत्र में भी उसने यही गुण भरने का साहस किया। वेदव्यास कथा में चर्चा भी करते हैं, भीम और उसका पुत्र घटोत्कच काफी बार आपस में मिलते हैं, उनसे दिशा निर्देश भी पाते रहते हैं। हिडिम्बा पुत्र ने अपने प्राणों की प्रवाह न करते हुए धर्मक्षेत्र में अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी। कौरवों ने जिस अति घातक और विशेले बाण को अर्जुन के लिए संभाल कर रखा था, उसका सामना भीम पुत्र ने किया। अपनी माँ के वचनों और शिक्षा को उसने व्यर्थ नहीं गंवाया। इसकी गुरु दक्षिणा अपने प्राणों की आहुति देकर की। उसके नाम को इतना महत्वपूर्ण बना दिया, जब भी कोई उस अठारह दिन के युद्ध की कथा को पढ़ेगा तो हिडिम्बा पुत्र के बलिदान के पुष्ट को पड़े बिना वह पुष्ट पलट नहीं सकेगा।

बड़ी बड़ी इमारतों ने उस मजदुर की झोपड़ी को क्या विलुप कर दिया जिसने उसका निर्माण किया था। शक्तिशाली योद्धाओं की लड़ाई के बीच उन सैनिकों के बलिदान को क्यों भुला दिया गया जो अपने परिवार के अकेले दीपक थे। उन बच्चों के भविष्य का निर्माता कौन बनेगा जिनके पिता घर से तो निकले थे पैसे कमाने, व्यापारी के कहने पर छोटी मछली की भाँति जाल में फँस गए और मगरमच्छ खुले पानी में अठखेलियाँ कर रहे हैं। क्या अस्तित्व केवल शक्तिशाली व्यक्ति का ही है ? बड़ी कहानियों को आगे बढ़ाने के लिए उन छोटी कहानियों का प्रयोग क्यों किया जाता है। जो कथा के अंत में किसी के मन में वापिस नहीं आएंगी ? क्या इसी तरह हिडिम्बा को भी अम्बा की भाँति हमारे समाज ने धूमिल कर दिया ? जो आने वाले समय में स्वयं किसी बड़े से संग्राहलय के कोने में पड़ी किताब की तरह पीला पड़ रहा होगा।

द्रौपदी

न तो उसका जन्म साधारण था और न ही जीवन, न प्रेम और न ही उसका क्रोध फिर उसका व्यक्तित्व कैसे साधारण तरीके से सोच और लिख सकते हैं। मानो द्रौपदी स्वयं कहना चाहती हो, कोई चाहता था मैं उसका उद्देश्य पूरा करूं। कोई मुझे वर्ण करना चाहता था, क्योंकि मेरा रूप माँ लक्ष्मी की तरह अत्यंत आकर्षित था। कोई मुझे अपनी हवस की लालसा हेतु अपनी जांघ पर बैठाना चाहता था। जिनके लिए मैंने अपने जीवन के समस्त सुखों को त्याग कर कठिन पथ को अपनाया उन्होंने भी मुझे संताप की अग्नि में जलने को छोड़ दिया। जिन की विद्वता का सिक्का पूरे भारत में चलता था, जिनकी कुल में मैं कुल वधु बन कर आई, उन विद्वानों ने भी मेरी सहायता के लिए एक पग नहीं बढाया। सब मुझ से कुछ न कुछ चाहते थे, पर मैं क्या चाहती हूँ..... यह किसी ने जानने की कोशिश की ? मैं किस से शिकायत कर सकती हूँ। हे गोबिंद मैं भी तो तुम्हारी ही थी न ? फिर तुमने क्यों मुझे किसी और की अर्धांगिनी बना दिया ? अगर मुझे हर बार विपत्ति में फंसा कर हाथ पकड़ना ही था फिर क्यों मुझे द्रौपदी बनाया ? अगर द्रौपदी ही बनाना था तो फिर कृष्णा क्यों बनाया ?

सनातन धर्म में अग्नि का बहुत अहम् स्थान है। इसके बिना कोई भी धर्म कार्य संपन्न नहीं हो सकते। यज्ञ हो या आरती, हवन हो या दाह संस्कार,अग्नि किसी चीज को पवित्र भी कर देती है और किसी को स्वाह भी कर देती है। प्रह्लाद भी होलिका की गोद में बैठ कर अग्नि से खेलता हुआ बाहर आ गया था। जिस कारण वह प्रह्लाद से भक्त प्रह्लाद बना। माँ सीता ने भी अग्नि परीक्षा दी थी, अम्बा ने अग्नि स्नान करके अपनी जीवन लीला समाप्त की थी। यह अग्नि ही है, जिस को अम्बा ने अपने अन्दर जलाए रखा, भीष्म के वध के लिए स्वयं को तैयार करती रही। इस यज्ञ की अग्नि से ही द्रौपदी पैदा हुई।

द्रौपदी के किरदार की रचना कैसे हुई ? जब व्यक्ति भ्रूण रूप में माता के गर्भ में उत्पन्न होता है, उस से पहले ही उसकी भाग्य रचना कर दी जाती है। पर उसका भाग्य, उसका किरदार तो जन्म लेने के पश्चात् लिखा गया और निरंतर इसमें फेर बदल गोबिंद करते गए। किसी से प्रतिशोध लेने के लिए किसी जीव को अस्त्र की तरह इस्तेमाल करना, कहाँ तक उचित है। किसी के भाग्य में दुखों का भण्डार लिख देना, जो आपकी इच्छा से इस धरा पर आया हो न की स्वयं की इच्छा से।

अनादर, दुःख और परित्याग उसके जन्म से ही उसका अंग बन गए थे। उस दिन बड़ा सा पंडाल लगा हुआ था। महागुणी विद्वान पंडित लोग उस जगह पर इकत्रित हुए थे। राजसी सेवक उनके आगे पीछे घूम रहे थे। यज्ञ भूमि तैयार की गई, यज्ञ सामग्री के भण्डार लगे हुए थे। गाय का गोबर और अन्य चीजें सब लाकर रखी ता जो एक पवित्र और शुद्ध माहौल बन सके। एक ओर देवी शिखंडिनी का आसन लगा हुआ था, एक और राजा द्रुपद अपने आसन पर बैठे हुए थे। इसी सभा में श्री कृष्ण भी अपने सिंहासन पर बिराजमान थे। आज वह भी इस महान घटना का साक्षी बनने आए थे। जिसके बारे में कोई नहीं जानता था। शंख नाद की ध्वनि से यज्ञ शुरू हुआ। वेदों के उचारण से सारा वातावरण गूँज उठा। द्रुपद ने इस यज्ञ का आयोजन केवल इसलिए करवाया था कि वह अपने अपमान का बदला ले सके। यज्ञ की अवधि लम्बी होती जा रही थी, द्रुपद की साँसे भी उतनी ही तेज होती जा रही थी। तभी अग्नि की लपटों ने विराट रूप लेना शुरू कर दिया इसी के साथ मंत्रौचारण भी और तेज होता गया, तभी वेदी से एक युवक बाहर निकल कर आया जिसको देख द्रुपद का सीना चौड़ा हो गया। उसका मकसद अब पूरा हो चूका था। पंडितों ने नक्षत्रो और ग्रहों की चाल को देख कर उसका नामकरण किया, उसका नाम धृष्टधुम्न रखा गया। गाथा यही ख़तम नहीं होने वाली थी। यह यज्ञ दरअसल वेदव्यास की मण्डली का यज्ञ था। जिसमें से उनकी कथा को संपूर्ण करने वाली नायिका का जन्म होने वाला था। द्रुपद ने यज्ञ को विराम देने का आग्रह किया, पंडितों ने कहा अभी कुछ विधियाँ रहती है, जिनके पूर्ण होने के बाद ही यह समाप्त किया जा सकेगा। कुछ समय बाद एक और घटना हुई जिसका किसी को अंदेशा नहीं था। यह महा काव्य बहुत सी रोचक घटनाओं और नाटकीय तत्वों से भरा पड़ा है, जो बार बार अपनी और आकर्षित करता है। वह अपनी कथा के अत्यंत महत्वपूर्ण पात्र को पाठकों से परिचित करवाना चाहते थे। जिसने इस कथा की गति को और तीव्र करना था। फिर भला वह साधारण तरीके से थोडा प्रस्तुत करते। उन्होंने बहुत ही अद्भुत, अविश्वसनीय तरीके को अपनाया। अग्नि की ज्वाला फिर एक बार विशाल रूप लेने लगी सभी आश्चर्य चकित होने लगे इसका तो किसी को कोई अनुमान नहीं था। द्रुपद ने पंडितों से पूछा इस बार क्या उत्पन्न होगा। उन्होंने घोषणा की इस बार कन्या उत्पन्न होगी।

अग्नि की लपटें देखते देखते नारी के रूप में परिवर्तित होती गई, एक अति सुन्दर कन्या बाहर आ कर खड़ी हो गई। श्याम वर्ण, बड़ी बड़ी आँखें, आकर्षित नयन नक्श, देखने वाला बस देखता ही रह जाए। हुआ भी ऐसा ही, सभी उसे देखते ही रह गए। श्री कृष्ण ने राजा द्रुपद

को बताया यह तुम्हारे दुखों का नाश करने आई है। उसका नामकरण किया गया, इसका वर्ण श्री कृष्ण सा है इसलिए इसका नाम "कृष्णा" है। भरी सभा में जब सब पंडित मुनि वीर चुप बैठे थे, उस सुंदर कन्या की रक्षा और उसके आत्म सम्मान के लिए श्री कृष्ण ही आगे आए। यह प्रथा यहीं ख़त्म नहीं हुई सारी कथा में जब भी वह कष्ट में पड़ी, श्री कृष्ण वहां उसे निकालने के लिए स्वयं वहां गए। उन्होंने द्रौपदी को अपना नाम दिया था "कृष्णा"। सिर्फ नाम ही नहीं उसे ऐसी दोस्ती का वचन भी दिया था जो और किसी के भाग्य में नहीं था।

बिना मानवीय औरस के जन्मी वह सीधे अपने यौवन काल में पैदा हुई। उसके जन्म पर खुशियों की जगह एक कलह पैदा हो गई। किसी तरह वह शांत हुई। व्यथा यहीं ख़त्म नहीं होने वाली थी। जिनके कंधों पर इतिहास रचने की जिम्मेदारी होती है, उनके भाग्य में हिमालय जैसे विशाल कठिन पथ लिखे होते हैं।

जब से वह यज्ञ वेदी से निकली तब से उसके कानो और मन में यही बात थी, वह श्री कृष्ण के लिए ही बनी है। उसके प्रेम में ही उसकी दुनिया थी। कब कृष्णा का मिलन श्री कृष्ण से होगा इसी प्रतीक्षा में वह खोई रहती। जब उसके पिता राजा द्रुपद ने उसका हाथ श्री कृष्ण के हाथ में थमाने की बात की तो उसका दिल किसी चक्रवात की तरह दौड़ने लगा, कितने ही भंवर बनते चले गए। , श्री कृष्ण ने उसको अपनाने से मना कर दिया और उसे अर्जुन के लिए सुरक्षित रख लिया, जिसको वह अपने रूप समान मानते थे। उसने अपने आप को टूटने नहीं दिया बल्कि उस पीड़ा को अपने जीने का सहारा बना लिया, जो सदा उसके साथ रहा। पीड़ा तब तक पीड़ा देती है, जब तक उसे आप पीड़ा समझते हैं, जब आप उस पीड़ा का आनंद लेने लगते हैं तब वह भी अमृत धारा बन जाती है।

बचपन के बिना यौवन काल, प्रेम का बिछोड़ा, जीवन का उद्देश्य जीवन से पहले ही तय हो गया था। किस तरह उसके जीवन की शुरुआत हो रही थी, क्या होने वाला था, यह किसी को पता नहीं चल रहा था। कभी भाग्य उस पर हावी हो रहा था, कभी वह भाग्य पर हावी हो रही थी। उसकी पहचान क्या थी ? वह याज्ञसेनी, कृष्णा, द्रौपदी के चक्र में फँसी हुई थी। कुछ समझ नहीं आ रहा था। वह पवित्र थी क्योंकि वह अग्नि की बेटी थी। जो वेदों के औरस से वेदी के गर्भ से पैदा हुई थी। नरेंद्र कोहली उसके बारे में कहते हैं - "द्रौपदी का अग्नि तत्व अपने शत्रुओं को क्षमा नहीं करता। उसने न अपने पिता का अपमान करने वाले द्रोण को क्षमा किया, न अपना अपमान करने वाले दुर्योधन, दुःशासन तथा कीचक को, न जयद्रथ को और न ही

अपने पुत्रों के हत्यारे अश्वत्थामा को, ऐसी कोई भी घटना हो जाने पर अपने समर्थ पतियों से उसकी एक ही मांग होती थी, अपने उन शत्रुओं से प्रतिशोध लिया जाए। युधिष्ठिर के समान वह क्षमा नहीं कर सकती थी, यही कारण है वह प्राय: क्षमा का विरोध करती दिखाई पड़ती है।"

आखिर वह समय आ गया, भरी सभा में बहुत से राजा और विद्वान बैठे थे। सबके मन में एक चाह थी, वह उस द्रौपदी को अपने साथ वर्ण करके ले जाएं। क्या इस स्वयंवर में श्री कृष्ण की बात असत्य पड़ेगी या फिर एक अनचाहा फैसला उसके ऊपर थोप दिया जाएगा ? पांडवों का किसी को कुछ अता पता नहीं था। द्रौपदी का स्वयंवर उसके पिता द्वारा आयोजित किया गया। जिसमें उसके पिता द्वारा दिए गए लक्ष्य को कोई भी योद्धा या धनुरधर भेद नहीं पार रहा था। स्वयं श्री कृष्ण भी सभा में एक और बैठे यह सब देख रहे थे। तभी वहाँ पर सूर्य से तेज वाला एक युवक आया, जिसके मुख की शोभा देखा कर सब चकित रह गए। ऐसे लग रहा था मानो स्वयं सूर्यदेव धरा पर उतर कर आ गए हो। लगता था वह एक झटके में लक्ष्य भेद कर द्रौपदी को अपने साथ ले जाएगा। जैसे ही उसने अपनी कमान पर तीर को चढ़ाया तो एक आवाज़ ने उसका हाथ रोक दिया, इस सभा में केवल क्षत्रिय ही भाग ले सकते हैं। क्या तुम क्षत्रिय कुल से हो ? इस बात का उत्तर वह युवक जिसको कर्ण के नाम से जाना जाता है, न दे सका। क्योंकि वह एक सूत पुत्र था। इस घटना को बहुत से लोग इस बात से जोड़ते हैं, द्रौपदी ने कर्ण का अपमान किया था। एक सन्दर्भ और भी सामने आता है। द्रौपदी वह नारी थी जिसने साधारण महिलाओं की तरह बंध कर जीना नहीं सीखा, उसने जिसको चाहा खुल के व्यक्त किया, जिस से घृणा की खुल के की। पुरुषों की भीड़ के अन्दर अपनी इच्छा नहीं दबाई, अन्दर ही अन्दर वह अर्जुन की प्रतीक्षा कर रही थी। उसे स्वामी रूप में वरण भी करना चाहती थी। जिसके बारे में श्री कृष्ण ने उसको बारे में पहले ही बता दिया था, उसका वर्ण उसके साथ होगा। कोई भी क्षत्रिय लक्ष्य भेद नहीं कर पाया था। सारी सभा में सन्नाटा छा गया, अब क्या होगा ? क्या इस धरा में कोई भी ऐसा क्षत्रिय योद्धा नहीं है जो उसे भेद सके ? उस सभा में कुछ ब्राह्मण वहाँ उपस्थित थे, उनमें से एक ब्राह्मण ने भाग लेने के लिए आग्रह किया। जब उस ब्राह्मण (अर्जुन) ने बाण चढ़ाया तो लगा एक बार फिर जैसे क्षत्रियों के ऊपर भगवान् परशुराम सवार हो गए हो। द्रौपदी भी अपना विरोध करने के लिए व्याकुल हुई तो श्री कृष्ण के इशारे से शांत हो गई। उस ब्राह्मण (अर्जुन) ने लक्ष्य भेद किया तो उसके साथ द्रौपदी को प्रणय सूत्र में बाँध दिया गया। एक बार फिर सब क्षत्रिय उस तरह लज्जित महसूस कर रहे थे, जैसे भगवान्

परशुराम के हाथों परास्त होकर हुए थे। संभवत वह इस बात के विरोध में उतर आए। भीम के बल और श्री कृष्ण की नीति के आगे कौन टिक पाया है। श्री कृष्ण ने सब को समझाया कि नीति कहती है, जब कोई भी क्षत्रिय असफल रहे तो उस कार्य को ब्राह्मण कर सकता है।

उसके चरित्र की विशेषता थी कि हर स्थिति के साथ उसने अपने किरदार को ढाल लिया। वैसे भी जिसका जन्म अति नाटकीय ढंग से हुआ हो, उसका जीवन कैसे साधारण हो सकता है ? यह भी एक नाटकीयता की चरम सीमा थी, क्षत्रिय कन्या का विवाह ब्राह्मण से। सीधा एक राज कन्या को कुटिया में ला दिया। न जाने किस कोहिनूर रूप में लाने के लिए उसको इस अग्नि में तपाया जा रहा था। अब उसका अगला पड़ाव गृहणि के रूप में था, उसने इस किरदार को बहुत अच्छे ढंग से निभाया।

राजा द्रुपद ने श्री कृष्ण की आज्ञा पाकर अपनी पुत्री को ब्राह्मण रूप धरे अर्जुन के साथ प्रणय सूत्र में बाँध कर बाकी पांड्वो के साथ जो ब्राह्मण वेश में थे, विदा कर दिया। राज महल में पली बड़ी राजकुमारी उन ब्राह्मणों के साथ नव जीवन की शुरुआत के लिए निकल पड़ी। आगे चार पांडव और पीछे वह अपने स्वामी अर्जुन के साथ चली आ रही थी। कठिन मार्ग को पार करने के पश्चात् वह जब दूर जंगल में स्थित उनकी कुटिया में पहुंचे तो पांड्वो ने अपनी कुंती माँ को आवाज़ लगाई "देखो वह किसी अनमोल वस्तु को लेकर आए हैं।" माँ कुंती ने अंदर से आवाज़ लगाई, उसको आप पांचो लोग आपस में समभाग में बाँट लो। इस बात को सुनने की देरी थी, सभी भाइयों सन्न हो गए। जब माँ कुंती ने उसको देखा तो उसको भी अपनी बात पर पछतावा हो रहा था। द्रौपदी ने अपनी सहनशीलता और दूरदर्शिता का सुन्दर परिचय दिया। उसने पांचो को पति रूप में वर्ण कर लिया। चाहती तो वह इस बात का भी खुल कर विरोध कर सकती थी। उसने ऐसा नहीं किया। शायद वह ऐसा करती तो उसके घर में कलह पड सकती थी। जो प्रेम उन भाइयों का था, उसमें फूट पड सकती थी। उसकी सुंदरता किसी विवाद को जन्म दे सकती थी। उसने स्वयं को मार के उन सब की खुशियों को जीवित रखा।

शोध करता को मानना है वेदव्यास ने अपनी कथा में नायिकाओं को प्रमुख रखा है, जितनी नाटकीयता इनके चरित्र में पाई जाती है, वह किसी अन्य पात्र में नहीं। अगर किसी पुरुष पात्र को द्रौपदी जैसी स्थिति, परिस्थिति, अथवा मनोस्थिति से गुजरना पड़ता तो अवश्य ही वह टूट जाता। एक मुख्य बात जो द्रौपदी के चरित्र में देखने को मिलती है, उसने सब का भला चाहा। आज भी कुछ पुरुषों की विशेष जमात उसके चरित्र पर आरोप लगाने का मौका कभी

नहीं छोडती। क्या कभी इतिहास ने यह आरोप उसपर लगाया है ? नहीं कभी नहीं। उसे तो सती की संज्ञा दी गई है। जब कुंती और पांडव इस बात से चिंतित थे, वह पांच पांड्वो की पत्नी हो या न हो। द्रौपदी उस समय भी शांत थी। उसके व्यव्हार में कोई असमान्यता देखने को नहीं मिलती। इसी गुण के कारण पांच पतियों की अकेली पत्नी होने के बावजूद उसके चरित्र को आदर्श माना गया है, कि उसको दैवीय गरिमा प्रदान कर दी गई। रंगमंचीय भाषा में कहे तो कला के लेप ने नाटकीयता भर के उसे सही सिद्ध कर दिया । एक नाटकीय भरपूर घटना सामने आती है कि पूर्व जन्म में शिव की उपासना में मिले पांच पतियों के वरदान के कारण उसके पांच पति हैं। हाँ यह बात मानने वाली है, पांचो पतियों में से उसे अर्जुन से अधिक लगाव था। क्योंकि अर्जुन के कारण ही वह बाकी चारों की पत्नी बनी थी।

आदर्श गृहणी और विशाल हृदयता तब देखने को मिलती है, जब पांडव उसे जीत कर कुम्हार के घर ले जाते हैं, जहा वह रह रहे होते हैं। भोजन कर लेने के पश्चात् जब सब विश्राम करने लगते हैं, तब माता कुंती पांडवों के सिरहाने की ओर विश्राम कर रही होती है, तो द्रौपदी उनके पैरों की और सो जाती है। मानो वह इस बात को निश्चित कर देती है, हे माँ ! कुंती पांड्वो की रक्षा में जो दूसरा छोर खाली था उसे मैं भरुंगी"। एक राजकुमारी जो कल तक मखमली बिस्तर पर सोती थी, वह आज एक कुटिया में कुशासन पर विश्राम कर रही है। उसने इस बात का ज़रा भी दुःख नहीं जताया। कल वह एक रानी थी और आज एक ब्राह्मणी भिक्षुणी। वह एक मिसाल पैदा करती है। जीवन भर पांडवों को उसके चरित्र पर तनिक मात्र भी संशय नहीं हुआ। उसका चरित्र इतना पावन था कोई भी उस पर लांछन लगाने से पहले सौ बार सोचता था। एक बार सत्यभामा जब उनसे मिलने आई, उसने भी द्रौपदी के चरित्र और पतिव्रता धर्म की तारीफ की। बनवास के दौरान भगवान सूर्य देव की कृपा से उसको एक ऐसा पात्र मिला , जिसमें से भोजन तब तक समाप्त नहीं होता था, जब तक द्रौपदी नहीं खा लेती थी। उसकी दया भावना की और क्या उदाहरण होगी, जब तक माँ कुंती और पांडव सहित, सभी स्नातक, साधु, सन्यासी, गरीब, बेघर और दिव्यांग लोग भोजन नहीं कर लेते थे, तब तक वह अनाज का एक दाना तक मुह में नहीं डालती थी। सारा दिन उनकी सेवा में लगी रहती। स्वयं भोजन करने से पहले भी वह इसी बात की प्रतीक्षा करती कहीं कोई अतिथि न आ जाए। जब तक उसे यह विश्वाश न हो जाता सब ने भोजन ग्रहण कर लिया है तब तक वह खाना न खाती।

जहाँ शिव की उपासना होगी वहां शक्ति की भी होगी। जहा गणपति की उपासना होगी वहां रिद्धि सिद्धि की भी होगी। जहाँ श्री कृष्ण की उपासना होगी वहां राधा की भी होगी। जब जब पांडवों का ज़िक्र आएगा तब तब द्रौपदी भी आएगी इसके बिना पांडव अधूरे हैं। पांडवों के मार्गदर्शन और विजय में जितना अहम् स्थान माँ कुंती का है, उससे कहीं अधिक स्थान द्रौपदी का है। उसने अपना अर्धांगिनी धर्म बहुत कुशलता से निभाया है। जहाँ उन्हें सहारे की जरुरत पड़ी वह सहारा बनी और जब उसे शक्ति की जरुरत पड़ी तो वह शक्ति भी बनी। बनवास के बाद पांडव जब राजमहल वापिस गए तो भी कहानी समाप्त नहीं हुई। कौरव किसी न किसी तरह इस बात का बहाना ढूंढ लेते किस तरह उनकी शक्ति को नष्ट किया जाए। उनको कष्टों के पहाड़ के तले दबा दिया जाए। वह यह भूल रहे थे उनके साथ अब श्री कृष्ण की सखा कृष्णा है जो अग्नि देव की पुत्री द्रौपदी थी। जो अपनी ज्वाला की रौशनी से उनका मार्गदर्शन कर रही थी, माँ कुंती के साथ पांडव भी यह बात जानते और मानते थे कि द्रौपदी अधिक बुद्धिवान है। वह कोई भी कार्य करने से पहले उसकी सलाह लेते थे। जितनी रूप से धनवान थी, उससे कहीं अधिक वह बुद्धि की धनि थी। जब भी पांडव कमजोर पड़े या किसी फैसले को लेने में वह डगमगाए, द्रौपदी ने उनको सकारात्मक उर्जा देते हुए आदर्श पत्नी का परिचय दिया। वह बहुत अच्छे से जानती थी कहाँ बोलना है, कहाँ नहीं बोलना है, अगर कहीं बोलना है तो कितनी मात्रा में बोलना है। किसी भी विद्वान की यही निशानी होती है। विश्वास के आधार पर ही पांडवों और द्रौपदी का रिश्ता खड़ा रहा। वह आपस में बहुत विश्वास रखते थे। उसके विश्वास पर मोहर स्वयं श्री कृष्ण लगाते हैं। जब भी वह किसी आपदा में फँसी तो उसने श्री कृष्ण को याद किया। उनको स्वयं उसी क्षण उस की सहायता के लिए आना पड़ा।

कौरव अपने षड्यंत्रों और चालों से पांडवों को परास्त नहीं कर पा रहे थे। उनके बैर का घेरा बढ़ता ही चला जा रहा था। वह कौरव भी उनके भाई ही थे, वह इतनी जल्दी हार कहाँ मानने वाले थे। बहुत विचार विमर्श के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे, पांडवों को फिर जुए के लिए उकसाया जाए। वह इस खेल में निपुण नहीं, उनको आसानी से बड़ी चतुरता और छल से हरा सकते हैं। इस बात का बीड़ा उठाया इस खेल में माहिर शकुनि ने। उसको विश्वास था वह अपने पासों से पासा पलट देगा। पर उसे क्या पता था इस बार इस खेल में ऐसा पासा पलटेगा कि युग पलट जाएगा। पांडवों को फिर जुआ खेलने के लिए निमंत्रण भेजा गया। द्रौपदी और माँ कुंती भांप गई, इस बार फिर वह किसी चाल में उन्हें फंसा कर कष्ट देना चाहते हैं। द्रौपदी ने

उन्हें इस खेल में जाने से मना किया। वह इसमें मत जाएं, उनकी हानि होगी। जब काल किसी के सर पर सवार होता है, तब वह किसी लाभ या हानि को नहीं देखता ना ही उसके बारे में सोचता है, पांडवों के साथ भी ऐसा हुआ। कौरवों का निमंत्रण स्वीकार कर लिया। निश्चित दिन और स्थान पर कौरव और पांडव इकत्रित हो गए। खेल शुरू हुआ, असल परिणाम क्या होना था यह सबको ज्ञात था, हुआ भी वही पांडव हारते चले गए और सब कुछ दांव पर लगा दिया। स्वयं को, राजपाट को, प्रजा को और जब कुछ नहीं बचा तो कौरवों के उकसावे में आकर स्वयं के साथ द्रौपदी को भी दांव पर लगा दिया। सब कुछ हार कर वह अपने ही भाइयों के सामने सर झुकाए बैठे थे।

एक कुशल रचनाकार अपने पात्रों से जितना माँ की तरह स्नेह करता है। पिता की भाँति एक झटके में उन्हें डांट कर सही मार्ग पर लाने की कोशिश भी करता है। वेदव्यास भी कुछ ऐसे ही थे, अपने पात्रों को जिस प्यार से सींच कर बड़ा किया था। जिस सावन के आनंद में उन्हें रखा था, आज पतझड़ के मौसम में सब को नंगा करने वाले थे। चेहरों पर मुखौटा लिए बहुत से किरदार उलझे हुए थे। सबके असली चेहरे को अपने पाठकों के समक्ष लाना था, वही हुआ। वेदव्यास की सुनामी आने वाली थी, जिसमें बहुत कुछ उजड़ जाना था, और बहुत कुछ बस जाना था। जिसके पाँव स्थिर होंगे वह जीता रहेगा। जिस प्रकार तूफ़ान से पहले एक शान्ति होती है। ठीक उस तरह की शान्ति हस्तिनापुर के दरबार में बनी हुई थी। पांडव सर और कंधे झुकाए हुए हार कर बैठे थे। वहीं कौरव छल से जीत कर शान से गर्दन अकड़ा कर बैठे थे। तरह तरह के कटाक्ष उन पर कसे जा रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो माँ कलिका तांडव कर रही हो। इस भयंकर मौसम में भी जो स्थिर था, वह थी द्रौपदी।

द्रौपदी भी कोई ऐसी स्त्री नहीं थी, जो स्वयं को पुरुषों के आगे परोस दे। वह अपने सम्मान के लिए जी और लड़ी। उस अधूरी राह को आगे बढाया जिसको अम्बा छोड़ कर गई थी। एक आदर्श नारीवाद की जन्मदाता के रूप में वह जानी गई। हालातों से जूझना और उनको अनुकूल बनाना उसे आता था। ऐसे ही उसको कृष्णा नहीं कहा जाता।

सभा में युधिष्ठिर चुप चाप खड़े थे। अपनी गलती का एहसास हो चूका था, वह क्या कर बैठे है, उनकी हिम्मत नहीं हो रही थी, वह आँख उठा कर द्रौपदी को देख भी लें। धृतराष्ट के सिंहासन के खूंटे के साथ बंधे भीष्म पितामह आज मौन थे। कौरवों ने अपनी कुल वधु द्रौपदी को जीत लिया था, इस शर्मनाक कार्य पर वह और भी अहंकार में आ गए। वह यह भूल गए वह उनकी

कुल की वधु है। उनकी बेटी के समान है। जब दुर्योधन ने विदुर को द्रौपदी को राजसभा में लाने का आदेश दिया। तब उसने एक जबरदसत फटकार लगाते हुए एक सवाल खड़ा कर दिया – "अनिशेन हि राज्ञाषा पणे न्यस्तेती में मति :।" अर्थात युधिष्ठिर स्वयं जुए में हार चुके है और उन्होंने द्रौपदी को भी दांव पर लगाया है। क्या एक हारा हुआ व्यक्ति किसी को दांव पर लगा सकता है ?

नरेंद्र कोहली अपने उपन्यास द्रौपदी में कहते है, "वह दीना नहीं थी। जब कभी उसने आँसू बहाए भी है, वह आक्रोश तथा फटकार के साथ बहे हैं। उसकी तेजस्विता उसे दीन होने ही नहीं देती थी। यही कारण है जब उसको कुरु सभा में लाया गया, उसने दया की भिक्षा नहीं मांगी, वह असहाय होकर रोई-चिल्लाई नहीं, उसने सभासदों को धिक्कारा और धर्म के विषय में प्रश्न पूछे।"

यह प्रश्न केवल विदुर का नहीं था। द्रौपदी का भी यही प्रश्न था, क्या हारा हुआ व्यक्ति किसी और को दांव पर लगा सकता है ? उसे यह ज्ञात नही था, कि यह प्रश्न तो विदुर पहले ही कर चुके हैं। जब दुर्योधन ने अपने प्रतिकामी को द्रौपदी को लेने भेजा, तब उसने पहले एक प्रश्न उससे पूछा, जाओ और जाकर अपने धर्मराज महाराज से पुछो, जुए में पहले स्वयं हारे थे या मुझे ? धर्मराज कुछ उत्तर नहीं दे पाए। दूसरी बार फिर जब वो गया तो द्रौपदी ने एक सुलघता हुआ सवाल दाग दिया। इस बार सवाल भीष्म पितामह और उसके शिष्य कुरु-वंशियों के लिए था, "उनसे पूछो मुझे क्या करना चाहिए ? वह जैसा आदेश देंगे मैं वैसा ही करुँगी। इस बार भी कोई भी उत्तर नहीं आया। इसी बीच एक सन्देश युधिष्ठिर का गया, अगर तुम रजस्वला और एकवस्त्रा होने के बावजूद राजसभा में आयोगी तो सभी सभासद मन ही मन दुर्योधन की निंदा करेंगे। जब तीसरी बार प्रतिकामी द्रौपदी के पास गया तो दुर्योधन ने पीछे ही दुशासन को भेज दिया। दुशासन द्रौपदी के कक्ष में बिना आज्ञा लिए चला गया और उसको भरी सभा में हुई सारी घटना का हाल बताया और अपने साथ चलने के लिए कहा। जब द्रौपदी ने कहा, हारे वह हैं मैं नहीं। वह उसके शब्दों के बाणों को सहन नहीं कर पाया उसके अंदर का अहंकारी पुरुष जागृत हो गया, जो उसको केशों से पकड़ कर घसीटते हुए सभासदों के समक्ष ले आया।

द्रौपदी सब के सामने निर्भय होकर अपने तर्क रखती गई। भीष्म पितामह, विदुर, गुरु द्रोण, कौरव सभी पांडव कोई उसकी मदद के लिए आगे नहीं आया। सब के चेहरों से वेद वेदव्यास ओढे हुए मुखौटा उतार रहे थे। वह पुरुष समाज को निर्वस्त्र करते हुए आइना दिखाते

कहती है, इस सभा में गुरु जन, विद्वान और धर्मात्मा, योद्धा वीर बैठे हुए है। उनके सामने एक स्त्री के साथ अन्याय किया जा रहा है। मदद के लिए आगे आना तो दूर, किसी के मुख से एक शब्द भी नहीं निकल रहा। क्या सभी दुर्योधन की संगति में आँखों पर पट्टी बांध कर बैठे हैं ? धिक्कार है सब पर। अब भरत वंशियों का सदाचार नष्ट हो चूका है, जिसका गुणगान सारा विश्व करता था। ऐसा लगता है भीष्म पितामह, विदुर और द्रोण सभी सत्वहीन हो चुके हैं। जिनको यह अन्याय और पापाचार दिख ही नहीं रहा। कोई भी द्रौपदी की बात का उत्तर नहीं दे पाया, वह बिलख उठी। कौरवों को पता है महाराज युधिष्ठिर जुआ खेलने में निपुण नहीं है, फिर भी उनके मन में लालसा भर दी। उनको इस खेल का तनिक भी अभ्यास नहीं है। शकुनि और दुर्योधन की चालों में फँस कर पांडव अपना सब कुछ हार चुके हैं और फिर मुझे भी दांव पर लगा दिया। कर्ण के कहने पर, उसकी बातों को अनसुना कर के उसको निर्वस्त्र करने का यतन किया गया। दुर्योधन उसे अपनी जांघ पर बिठाने को आतुर था।

नाटकीयता की चरम सीमा तो इस कथा में कूट कर भरी हुई है। कभी यह मन पर ऐसी चोट करती है, कि मन-मस्तिष्क शून्य कर के रख देती है। सोचने-बोलने और कुछ भी करने का समय ही नहीं देती। यही कारण है आज भी महाभारत केवल भारत वासियों ही नहीं, बल्कि समस्त विश्व की रगों में समाया हुआ है। द्रौपदी का पात्र तो सब के हृदय में है। महाभारत की सभी नायिकाओं के मन में बहता लावा द्रौपदी के माध्यम से विस्फोट करता है। जो सारी पुरुष जमात को चुप करवा देती है।

आज भरत वंशियों की सभा में वह अनर्थ होने जा रहा था। जिसका परिणाम मानवीय बुद्धि में भी नहीं था। द्रौपदी के सामने उसके पांच पति, गुरु जन, ससुर, देवर सब बैठे थे। उन्ही के सामने उसका चीर हरण करने की कोशिश की जा रही थी। जब सब रास्ते बंद हो गए। तब उसने आँखें बंद करके अपने सखा माधव, गोबिंद, हरी, श्री कृष्ण का स्मरण किया। वह उसी क्षण वस्त्र रूप धारण कर के उसकी रक्षा के लिए आ गए। उन्होंने द्रौपदी को वचन दिया था, जब भी उसको रक्षा की जरुरत पड़ेगी वह आवश्य आएंगे। दुशासन उसकी साडी उतारते उतारते हांफ कर थक गया। वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पाया। कुछ लोग इस घटना को कपोल झूठ कहते हैं तो कोई कुछ। इसको सत्य या असत्य की कसौटी पर नहीं परख रहे, यह देख रहें हैं कैसे वेदव्यास ने अपने इस पात्र को किस नाटकीय ढंग से बाहर निकाला है। जिसका किसी के मन में ख्याल भी नहीं था, कि ऐसे भी हो सकता है ? यही तत्व है जिसने शोध

करता को अपनी ओर आकर्षित किया है। जब यह घटना घटी तो सब चकित रह गए। हुआ क्या ? कैसे हुई यह घटना ? किसी को कुछ पता नहीं लग रहा था।

इस घटना के गर्भ में होने वाले महायुद्ध का बीज पनप रहा था, जिस से भारत की दशा और दिशा दोनों बदल जाने वाली थी। इस दरबार में बहुत सी नारियों का अपमान हुआ, पर इस बार जिसका अपमान हुआ, वह कोई साधारण नारी नहीं थी। जिसको साधारण समझने की भूल राज सत्ता कर बैठी थी। वह एक सती, अग्नि कि पुत्री और श्री कृष्ण की सखा कृष्णा थी। जिस के साथ वो स्वयं सदैव रहते थे।

इस घटना के बाद धृतराष्ट बहुत सदमें में आ गए थे। उन्हें भी द्रौपदी से डर लगने लगा था कहीं वह उसको कुल नष्ट होने का शाप न दे दे। दूसरा जिस प्रकार श्री कृष्ण ने उसकी रक्षा की थी, वह उनके खिलाफ न खड़े हो जाएं। पर वह ऐसी नहीं थी। उसने इस युद्ध को टालने की बहुत कोशिश की। उन्होंने ने उसे कोई भी दो वरदान मांगने को कहा। तब द्रौपदी ने उनसे जो वरदान मांगे वह भी उसके चरित्र को माणिक की तरह और चमका गए। वह वरदान थे पांड्वो की दास्तव से मुक्ति और स्वतंत्रता। इस बात पर धृतराष्ट्र बहुत खुश हो गए और कहा तुम एक और तीसरा वरदान मांग सकती हो। उसने अपने ससुर को संबोधन करते कहा, पिता श्री जहाँ लोभ है वहाँ धर्म नहीं रह सकता। इसलिए मैं तीसरे वरदान में कोई भी दिलचस्पी नहीं रखती और ना ही मुझे इसका कोई भी अधिकार है। शास्त्रों के अनुसार वैश्य एक, क्षत्रिय स्त्री दो और पुरुष तीन, और ब्राह्मण सौ वरदान का अधिकारी होता है। मेरे पति दासभाव से मुक्त हो गए हैं, अब यह अपने पूण्य कर्मों से स्वयं अपना कल्याण कर सकते है"। द्रौपदी का यह उत्तर सुन दुर्योधन और कर्ण चकित रह गए। उन्हें ऐसा लगा था वह पांडवों छोड़ कर चली जाएगी। यहाँ तो तस्वीर ही बदल गई है। इस दृश्य को देख कर्ण भी कृष्णा के लिए कहता है, लगता था अब पांडव जिस स्थिति में फंसे है उस हालात की नदी में डूब कर मर जाएंगे। पर उनकी पत्नी इतना अपमान सह कर भी उनके लिए नौका बन गई है।

वह एक बहुत ही कुशल राजनेता भी थी। अपने पतियों को छोड़ने की जगह अपने साथ रखा। उन्हें खुल कर अपनाया भी नहीं। एक विधवा की तरह वह रहने लग गई थी। उसने ब्रह्मचर्य को अपना लिया, इसका प्रमाण है उसके जितने भी पुत्र हुए वह सब राजमहल में हुए थे। जब वह बनवास पर गए उन बारह सालों में उसकी एक भी संतान नहीं हुई। अब वह सारा जीवन उसके मार्गदर्शन में रहे। बिना किसी से युद्ध लडे, उसने द्रुपद, निषाद, और अन्य भी जितने

राजे और राज सत्ता थी सबको अपने व्यहार, नीति और कूटनीति से अपने साथ कर लिया। वह श्री कृष्ण के प्रति अपना विशेष स्नेह भाव रखती थी। वह जानती थी अगर श्री कृष्ण उसके साथ हैं तो कोई उसका बाल भी बांका नहीं कर सकता ।

किसी को मारना हो तो उसको बाहर से नहीं अन्दर से मारो। अगर उसको किसी प्रकार की चोट लगेगी, तो वह चोट से उभर कर ठीक हो सकता है। जब आप उसको भीतर से चोट मारोगे, वह जीवन भर उठ नहीं पाएगा। द्रौपदी तो जन्म से ही लडती आ रही थी। चीर हरण की घटना के बाद तो वह बिल्कुल भी शांत नहीं बैठी और श्री कृष्ण की भाँति अन्दर ही अन्दर नीतियां बनाती रही। मानसिक युद्ध लडती रही और पांड्वो को भी समय समय पर युद्ध के लिए प्रेरित करती रही। वह पांड्वो की शक्तियों को कब और किस तरह इस्तेमाल करना है सब जानती थी। रचनाकार जिसको सबसे मुख्य बनाना चाहता है। उसे उतने ही ज्यादा कष्ट देता है। इस कथा में द्रौपदी से ज्यादा कष्ट किसने सहे होंगे ? गहन अध्ययन किया जाए तो इस सारी कथा का मुख्य केद्र बिंदु द्रौपदी ही है। जिसके ऊपर सारा ताना बाना बुना गया। विभिन्न घटनाओं के माध्यम से सभी पात्र उसके साथ जुड़ते चले गए। उसी तरह जैसे एक चुंबक पर लोहे के कण चिपक जाते हैं। एक क्षण के लिए जरा द्रौपदी को अदृश्य करके देखें तो इस महाकाव्य और इसकी सुन्दरता की कल्पना अधूरी सी लगेगी। जैसे एक सुहागन स्त्री की कल्पना सिंदूर के बिना नहीं कर सकते, उसी तरह द्रौपदी इस महाकथा का सिंदूर है।

पांडव एक बार फिर वनों की और निकल पड़े थे। उनका मार्गदर्शन करने के लिए इस बार भी उनके साथ एक नारी थी। वह माँ कुंती नहीं द्रौपदी थी। इस बार बहुत कुछ बदलने वाला था। चित्रपट लाल रंग का था, बाकी के रंग भी उसी में जा कर मिलने वाले थे। द्रौपदी ने अपने आंसुओं को आँखों के किसी कोने में दबा कर रख दिया। श्री कृष्ण भी इस घटना के बाद उसके लिए चिंतित थे। जब उन्हें पता चला वह वनों में रह रहे हैं, वह भी उनको सहानुभूति देने चल पड़े। कहीं द्रौपदी और पांडव स्वयं को अकेला न समझ बैठे। श्री कृष्ण ही नहीं उनके साथ सात्यिक और अंधक वंश के अन्य राजा भी चल पड़े थे। जब श्री कृष्ण पांड्वो की कुटिया में पहुंचे तो उनके दर्शन करते ही द्रौपदी के नयन मानो सावन के काले मेंघों के जैसे बरस उठे, पीड़ा और संवेदना की बाड़ ला दी। जो द्रौपदी चट्टान की तरह कठोर बनी हुई थी, वह मोम की भांति पिघल कर अपना अस्तित्व श्री कृष्ण के चरणों में अर्पण करने को व्याकुल थी। अपनी पीड़ा की अभिवयक्ति वह खुल कर करती हुई कहती है- मेरे गोबिंद अब आप ही मेरे सब कुछ

है। मेरी दुःख की घडी में जब मेरे पतियों ने भी मेरी रक्षा नहीं की, तब आप ही मेरे रक्षा कवच बन कर आए। द्रुपद की बेटी और आपकी सखी यानी मुझे, केशों से पकड़कर घसीट कर राज सभा में लाया गया, इससे अधिक निंदनीय कार्य क्या हो सकता है ? मैं रजस्वला थी और मेरे वस्त्र रक्त से भरे पड़े थे। मैं दुःख और शर्मिंदगी के मारे मरे जा रही थी। कौरव मुझ पर हंस रहे थे। वह दासी भाव से मेरा भोग करना चाहते थे। हे गोविद ! मैं महाराज भीष्म और धृतराष्ट दोनों की बहु हूँ, उनके ही सामने मुझे दासी कह कर अपमानित किया। उन्हीं के सामने नहीं बल्कि महाबली कहलाने वाले पांडवों के सामने उनकी पत्नी का अपमान किया गया, और वह चुप रहे। मैं उनकी भी निंदा करती हूँ। उस समय कर्ण ने जो मुझे दासी कह कर मेरा उपहास उड़ाया था। उसकी व्यंग वाली हंसी की आवाज़ मेरे कानो से जा ही नहीं रही वो अभी तक गूँजती है। उस अपमान के कांटे की चीस रह रह कर मुझे महसूस हो रही है। हे प्रभु ! आप मेरे रक्षणीय है। एक तो आप मेरे सम्बन्धी है, दूसरा दिव्य जन्म होने से मैं गौरावशालिनी हूँ, आपकी सखी हूँ और आप ही मेरे रक्षक हैं।

वह वीर क्षत्राणी थी 13 वर्ष कि प्रतीक्षा में नहीं बैठना चाहती थी। उसने कौरवों से बदला लेने के लिए नीति का सहारा लिया। सबसे पहले श्री कृष्ण के चरणों में अपनी व्यथा सुना कर उनके पक्ष को अपनी और करा। केवल श्री कृष्ण के माध्यम से ही वह उन पर विजय नहीं पा सकती थी। वह इस बात को भी समझती और जानती थी। इसी लिए उसने बाकी राज्यों और कौरवों के शत्रुओं को भी अपने साथ जोड़ने का कार्य आरंभ कर दिया।

वह भी एक माँ थी और ममता क्या होती है, वह जानती थी। एक बार एक निषाद नारी अपने पुत्र को जन्म देने के कुछ समय पश्चात् देह त्याग कर चली गई। जब द्रौपदी ने देखा तो उसका हृदय पिघल गया, उसने उस बालक को माँ का प्यार देकर पाला। इस बात को देख निषाद जाति, जो उनके विरोध में थी, वह भी उनके मित्र बन गए और कंधे से कन्धा मिला कर खड़े हो गए। वह एक समाज सेविका के रूप में भी विख्यात थी। सूर्य देव ने उसको खाने का पात्र दिया, जिसमें से तब तक भोजन ख़तम नहीं होता था, जब तक द्रौपदी नहीं खा लेती थी। निषादों को भी वह पहले भोजन करवाती थी। जिस कारण उनका भी पांड्वो के प्रति हृदय परिवर्तन हो गया। नीति, कूटनीति और प्रीति इनके बल पर वह सब को अपने साथ मिला रही थी।

वह चाहती थी पांडव जल्दी ही अपनी ताकत में वृद्धि कर के उन पर हमला कर अपना अधिकार छीन लें और उसके अपमान का बदला ले। इसी भाव के साथ वह उनको प्रेरित करती रहती थी। वह उनके हृदय में छुपे पुरुषत्व को कुरेदती रहती, जिसके साथ वह उठें और आगे बढ़े।

वह उन्हें कहती- "महाराज मैंने आपको राजमहल के सिंहासन पर आसीन देखा है, अब जब आपको नीचे कुश पर बैठे देखती हूँ, मन दुखी होता है। जहाँ आपके राजमहल में आप सभी भाई सोने की थालियों में खाना खाते थे, अब जब आपको पत्तलों में खाना परोस के देती हूँ, मेरा मन रोने लगता है। महाबली भीम जिसमें दस हजार गजों सी शक्ति है। जिसने अनेकों राजाओं और दैत्यों को परास्त किया है, आपकी आज्ञा में रहता है। उसको यूँ लाचार घूमता देख क्या आपका मन क्रोध से नहीं भरता ? गांडीवधारी अर्जुन आज लोगों का रसोइया बन के घूमता है, जिसके प्रताप से इस धरा के जितने भी राजा है, वह आपके राजसूय यज्ञ में परोसने का कार्य करते थे। उस अर्जुन की शक्ति को आप नष्ट क्यों कर रहे हो ? क्या छोटे भाइयों नकुल और सहदेव की करुण दशा पर आपको तनिक भी दया नहीं आती ? वह आपके दास बन कर घूमते रहते हैं ?"

वेदव्यास की सोच विशाल थी, उसका एक छोटा सा रूप देखने को मिलता है। किस प्रकार वह द्रौपदी के रूप में इस यज्ञ की अग्नि में घी डालने का प्रयत्न करते रहते है। द्रौपदी बहुत होशियारी से सब कुछ लेकर चल रही थी। उसके साथ उसका पिता, पडोसी राज्य, और अन्य जन जातियाँ भी उसके साथ जुड़ चुकी थीं। राजा द्रुपद में यानि उसके पिता में क्षमता थी वह अकेले कौरवों को हरा सकते थे। वह यह कार्य एक बार कर भी चुके थे। जब कौरव गुरु द्रौनाचार्य के कहने पर उसका बदला लेने के लिए आए थे।

उधर जांघ पर बैठने की बात, भरी सभा में सब के सामने अपनी लज्जा बचाने के लिए सब के सामने हाथ फैलता उसको अपना अतीत अक्सर दिखाई देता रहता था। परिणाम स्वरुप युद्ध के मैदान में आ पहुंची, जहाँ वह आत्म सम्मान की लड़ाई के मोड़ पर खड़ी थी। वह सत्कार करना नहीं भुली थी। महाभारत के मैदान में अश्वत्थामा द्रौपदी के पुत्रों को सोते हुए काल का ग्रास बना देता है, तो अर्जुन उसको मारने की शपथ लेता है। उन दोनों के ब्रह्मास्त्र युद्ध के पश्चात् वह उसको बाँध कर द्रौपदी के सामने ला फेंकता है, वह वहाँ भी उदारता का परिचय देती हुई कहती है, "हे आर्यपुत्र यह गुरुपुत्र है और साथ में ब्राह्मण भी है। एक ब्राह्मण

की हत्या पाप है, इसका वध कर के मैं गुरु माँ कृपी को दुखी नहीं देख सकती, जब वह मेरी तरह पुत्रहीन हो कर प्रलाप करेगी। इसका दुःख बस मैं ही जानती हूँ। इसके मोह के कारण ही अपने पति के मरणोपरांत भी जीवित है , अतः आप इसको मुक्त कर दीजिए।"

द्रौपदी का चरित्र अपने आप में विलक्षण है, इसकी खान से बहुत से अनमोल रतन निकल चुके है और आज भी निकल रहे है। इतिहास की वीर नायिकाओं में से एक स्थान उसका है। क्या इतिहास ने उसके साथ न्याय किया ? यह प्रश्न सहसा मन में आ जाता है। ऐसे लगता है वह अपने पुरूषत्व गुण के कारण सामाजिक व्यवस्था से तालमेंल नहीं बिठा सकी। इस युद्ध की जिम्मेदार वह अकेली ही नहीं थी, बल्कि राज सत्ता, शक्तियों का दुरूपयोग तथा अन्य कारण थे। बस उसको तो मोहरा बना दिया गया था। अगर द्रौपदी के साथ अभद्र व्यव्हार ना भी हुआ होता तब भी यह युद्ध होना ही था।

बच्चन सिंह द्रौपदी के बारे में बात करते हुए लिखते हैं, "पांचाली महाभारत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्त्री पात्र है। महाभारत का युद्ध तो इसके कारण नहीं हुआ। वह तो सत्ता संघर्ष था। युद्ध के अनेक कारणों में एक कारण उसका अपमान अवश्य था। वह पारिस की प्रेमिका हेलेन नहीं थी, जिसके मुख सौन्दर्य के कारण ट्राय का विध्वंस हो गया।"(*महाभारत की संरचना* 89)

अपने अस्तित्व की तलाश में वह इधर उधर भटकती रही निरंतर इसके लिए जूझती रही। किसी ऐसे मोड़ पर खड़ी थी, जहाँ से आगे कोई रास्ता नहीं जाता था। मानो आगे विशाल हिमालय सीना तान के खड़ा हो और पीछे उसके मन की गहरी खाई जिसको भरने के लिए उसने अपना संपूर्ण जीवन लगा दिया। वह युद्ध के बाद भी नहीं भरी। युद्ध के अंत में वह अपने पाँचों पतियों के साथ पृथ्वी से प्रस्थान करती है, तो हिमालय पर चढ़ती हुई, इसी खाई में सबसे पहले गिर जाती है। सच में सांकेतिक तौर पर नाटकीय रूप में वेदव्यास बहुत कुछ कह गया है।

उत्तरा

कभी जिस तिनके को मात्र तिनका ही समझते हैं, वह ही तपते थार में हमारा सहारा बन जाता है। जीवन की नदी कभी रूकती नहीं, वह अपना रास्ता बना ही लेती है। उसे कोई रास्ता दे या न दे, बस पीछे वह अपने निशाँ छोडती जाती है।

महाभारत का दानव सबको अपना ग्रास बना चुका था। अजीब सा वातावरण बना हुआ था, जिसका चित्रण करना भी नामुमकिन हैं। धर्म क्षेत्र की भूमि के बीचों बीच वह पेड़ लगा था, जिसके नीचे धर्म का ज्ञान करवाया गया। उस पेड़ के पत्ते भी उस शाम को बिना शोर के शोक अवस्था में स्थिर थे। मैदान की सारी सुखी घास गीली हुई पड़ी थी। वह नदी जिसके जल का प्रयोग दैनिक कार्यों के लिए किया जाता था, वह कितने दिनों से लाल रंग में तब्दील हो गई थी। आखरी साँसों को गिनते हुए कोई उस ओस की बूंदों को पीने की नाकाम कोशिश कर रहा था। चितायों का धुंआ, विधवायों के प्रलाप, बूढों की पथरा गई आँखे और कभी न पूरा होने वाला घाटा बच गया था। शाम के समय किसी विधवा का प्रलाप सीना चीर जाता था। जो भी लोग जीवित बचे थे वह भी बेजुबान हो गए थे। मानो समय, इस कुरुक्षेत्र की भूमि पर आकर रुक गया। धर्म क्षेत्र अब बहुत से सवालों का क्षेत्र बन चूका था। इस युद्ध में वृद्धों से लेकर बच्चों तक की आहुति दे दी गई।

हवाओं से ज्यादा शांत होती साँसों की आवाज़ सुनाई देती थी। मर मिटने और मार मिटाने का जनून मन पर भारी था। नक्षत्र भी अपनी चाल पर, इस नरसंहार को देखते हुए धीमी गति में चलने लगे, मानो वह इस बात का बोझ स्वयं पर नहीं लेना चाहते थे। कौरव वंश मिट चूका था, उनकी विधवाएं धूमिल भविष्य की धुंध में अपना अक्स ढूँढ रहीं थी। पांडवों के पुत्र भी मारे जा चुके थे, हडिम्बा, द्रौपदी, सुभद्रा सब उस भगवान् की इस लीला को मानते हुए पत्थर बन कर खड़ी थी। युद्ध अभी ख़त्म नहीं हुआ था, कोई पांडवों का शत्रु था जो उसकी पीड़ियों को सदा सदा के लिए ख़त्म कर देना चाहता था। कोई था इस युग का किरदार जिसको भीष्म पितामह से भी अधिक लम्बी आयु तक जीना था। वह ऐसी पहेली के रूप में परिवर्तित होने वाला था, जिसको सुलझाने के लिए बस कहानियां रह जाएंगी।

इस युद्ध के बाद सभी किसी न किसी दुविधा या दुःख में फंसे हुए थे। आज श्री कृष्ण कि हंसी में वह बात नहीं थी। उसकी बांसुरी आज बजती तो अवश्य रुदन करती। इसलिए उसने उस रुदन को अपने तन पर बने सुराखों में से नीचे गिरा दिया। वह तो व्यस्त था, आगे

आने वाले भविष्य को तय करने में। इसके लिए किसको चुना जाए ? सब तो उसके काल चक्र का भोजन बन चुके थे। तभी एक खबर उनके कानों में पड़ी और वह सीधा दौड़ पड़े, एक नए भविष्य की रचना करने।

आसमान में फैले काले बादलों की तरह वेद व्यास का मन भी साहित्य के सीने पर घूमता रहता है। कभी उसमें से शीतलता निकलती है, तो कभी बारिश की बूंदे तो कभी कभी चमकती बिजली,जो जहाँ भी गिरती है सब कुछ राख कर देती है। दुनिया के हर वाद, संवाद, भावों को इस कथा में पिरो देने वाले वेदव्यास अपने दर्शकों के मन को अपनी बिजली से बहुत बार राख के ढेर में तब्दील भी कर देते हैं, कभी उसको स्वयं बादल बना देते हैं। इतनी लंबी कथा को वह समाप्ति पर ले जाकर नहीं छोड़ना चाहते थे।

जर्मन के एक प्रसिद्ध रंगकर्मी हुए हैं, बेर्टोल्ट ब्रेकथ उनका कहना था, दर्शकों को कहानी से कभी नहीं जोड़ा जाना चाहिए। बल्कि उन्हें उस भाव से जोड़ा जाना चाहिए जो वह कहना चाहते हैं। यह बात महाभारत में बहुत बार देखने को मिलती है

पांडव जब वनों में रहे तो उनका मार्ग दर्शन कृष्ण, वेद व्यास, ब्राह्मणों की टोली, और इंद्र इत्यादि करते रहते थे। पांडवों ने देवताओं से बहुत से दिव्य अस्त्र लिए, जिनका प्रयोग महाभारत के मैदान में हुआ। एक दिन अर्जुन अपने पिता देवराज इंद्र के पास उनके लोक में गए। जहाँ उन्होंने उनसे शस्त्र शिक्षा ग्रहण की। वहां वह कुछ दिन रहे। एक दिन जब वह विश्राम कर रहे थे, तब उनके पास देवराज इंद्र की अप्सरा उर्वशी आई, उसे कहा की वह उसकी सेवा के लिए आई है। अर्जुन उसके सामने हाथ जोड़ कर खड़े हो गए और कहा, मैं तो आपको माँ कुंती की तरह देखता हूँ। आप ही हमारे वंश की जीवन दाता हो। मैं यह कृत्यन कार्य के बारे में सोच भी नहीं सकता। बस इतनी सी बात थी, उर्वशी को लज्जा और अपमान बेइजती महसूस हुआ। उसने उसी क्षण अर्जुन को शाप दिया, "जिस पौरुषत्व का अभिमान है, एक क्षण ऐसा आएगा जब यह तेरे पास नहीं रहेगा। तु हिजड़ा बन जाएगा। जिस अप्सरा का तुमने अपमान किया है। उसी की तरह तुम भी नाचोगे।" अर्जुन ने हाथ जोड़ कर उसे स्वीकार तो कर लिया पर अन्दर से वह बहुत चिंतित था। अगले दिन वह अपने पिता देवराज इंद्र से मिले और सारी घटना की जानकारी दी। तब उन्होंने कहा चिंतित होने की कोई बात नहीं, यह भी तुम्हारे ही लाभ के लिए है।

समय अपनी चाल चलता है। पांडव अज्ञातवास में अपना रूप और नाम बदल विराट नगर में रहने लगे। विराट नगर का नाम उसके राजा विराट के नाम पर पड़ा था। वह राज महल में कार्य करने लगे, अर्जुन एक हिजड़े के रूप में नृतक का कार्य करने लगा और वृहनल्ला के नाम से जाना जाने लगा। राजा विराट की पुत्री उत्तरा को नृत्य सिखाने का कार्य उसको मिला।

उत्तरा एक छोटा सा मोती थी, जिसका माला में कोई प्रथम स्थान नहीं होता, पर इसके बिना माला की कल्पना भी नहीं कर सकते। महाभारत रुपी जंगल में बहुत से बड़े बड़े पेड़ उगे हुए हैं, जिनकी छाया में छोटे पौधे बढ़ नहीं सकते। वह बिना धूप और हवा के अपना विकास नहीं कर सकते। इसकी उत्तम उदाहरण अर्जुन पुत्र अभिमन्यु की वधु उत्तरा है, जिसको सास के रूप में द्रौपदी का प्यार भी मिला और पिता रुपी श्री कृष्ण भगवान् का आसरा भी। भले ही वह पीपल के पेड़ जैसे विशाल न थी, किन्तु वह घर के आँगन में लगी तुलसी से कम भी न थी, जिसके आगे स्वयं हमारा मस्तिष्क नतमस्तक हो जाता है।

उस अपसरा का शाप अर्जुन के लिए वरदान साबित होने वाला था। इसी शाप में कथा का एक और अध्याय छुपा था जिसको कोई नहीं जानता था। राजा विराट की स्त्री सेविकाओं ने अपनी जांच में अर्जुन को हिजड़ा पाया और उसको उत्तरा की सेवा में लगा दिया। उत्तरा ने कभी भी किसी इच्छा को व्यक्त नहीं किया था। अर्जुन उसको नृत्य और संगीत की शिक्षा देने लगा। धीरे धीरे वह इस कला में निपुण हो गई। जब भी उसके पाँव धरती पर नाचने के लिए पड़ते तो इतनी लगन से नृत्य करती मानो भगवान् नटराज स्वयं उसका साथ देने के लिए आ गए हों। खुले केशों में बहता पसीना मानो गंगा की बूंदे पड़ी हों। इस रूप को देखने वाले बस देखते रह जाते। राजा विराट अपनी पुत्री की इस परिपक्व कला को देखते तो आनंद विभोर हो उठते। होते भी क्यों न, इस कला के पीछे एक अप्सरा का हाथ जो था।

चाव और लाड से पली उत्तरा को कहाँ ज्ञात था, भविष्य उसको कहाँ लेकर जाने वाला है। अभी तो वह बस राज महल के सुखों को भोग रही थी। अभी तो उसे काँटों पर चलकर अग्नि स्नान करना था। अब उसे भी पांडवों के हर सुख दुःख का भागीदार बनना था। भरत वंशीयों के वंश को आगे बढ़ाना था।

कौरवों ने एक दिन राजा विराट के गौ वंश को चोरी कर लिया, इस बात से रुष्ट होकर रूप परिवर्तित कर रह रहे, पांडवों ने उसके पुत्र उत्तर को युद्ध करने के लिए कहा। वह इतना

शक्तिशाली नहीं था कि कौरवों से मुकाबला कर सके। उसका सारथी भी कुछ दिन पूर्व मर गया था, किन्तु सैरंध्री उत्तरा को बताती है कि वृहनल्ला किसी समय अर्जुन की प्रिय सारथी रह चुकी है, इस लिए उसको प्रार्थना करे कि वह उत्तर की सारथी बन कर कौरवों से उसकी गायों को छुडवा कर लाने में सहायता करे। वृहनल्ला उत्तरा की प्रार्थना स्वीकार करती है और गौ वंश को छुडवा कर लाती है।

तब तक पांडवों का अज्ञातवास समाप्त हो चुका था, जब राजा विराट को पांडवों और द्रौपदी के बारे में सच्चाई पता चलती है, तब वह पांडवों से अपने रिश्ते को और गहरा करने के लिए अपनी पुत्री उत्तरा का हाथ अर्जुन के हाथ में देना की इच्छा व्यक्त करता है। उत्तरा अपने पिता से कहती है, "मैंने कभी इनमें कोई और रूप नहीं देखा है। सदैव अपने गुरु और पिता का रूप ही देखा है। मेरा विवाह इनके साथ हुआ तो यह अवश्य ही गुरु शिष्य के रिश्ते पर कलंक होगा और दोनों कुलों पर लोग शंकित होंगे।" एक निर्भया की तरह उसने अपनी बात को पिता के सामने रखा। उसका अपने गुरु के प्रति प्रेम भाव भी स्पष्ट रूप में दिखता है। जिस रिश्ते को उसने अपनाया तो स्वच्छ हृदय से खुल कर अपनाया। उत्तरा के इस उत्तर को सुन कर अर्जुन भी चकित रह गए, उसने तो उसके मूंह की बात कह दी थी। अर्जुन ने भी उसकी बात पर मोहर लगा दी। वह राजा विराट को कहते है, "जो उत्तरा ने कहा वह सत्य बात है। मैं इसे अपनी पुत्री की तरह ही मानता हूँ और सदा यह इसी स्थान पर रहेंगी, मैं इसको कोई और स्थान नहीं दे सकता। हाँ अगर आप चाहते हो कि आप पांडवों के साथ रिश्ता जोड़ें तो मैं अपने पुत्र सुभद्रा नंदन अभिमन्यु के लिए वधु रूप में चुनने के लिए तैयार हूँ।"

अब वह पांडवों की पुत्र वधु बन गई। पांडू पुत्रों के प्रति उसकी श्रद्धा तब से ही बन गई थी, जब वह उनके राज महल में कार्य करते थे। सैरंध्री(द्रौपदी) से वह ख़ास सनेह रखती थी। उसके साथ बातें करना उसको बहुत अच्छा लगता था। जब भी खाली समय होता तो उसके साथ वह अपने मन की बात करती थी। द्रौपदी ने भी उसको अपने बच्चों की तरह रखा, पग पग पर उसका मार्गदर्शन किया। उत्तरा और द्रौपदी की जोड़ी किसी सास बहु की तरह नहीं रही वह हमेंशा एक सखी और माँ बेटी की तरह रही। विराट नगर को त्याग कर अभिमन्यु कि वधू के रूप में पांडवों के गृह में आ गई थी।

जब कौरवों ने भरी सभा में द्रौपदी का चीर हरण करने की कोशिश की तो कोई भी पांडव और धर्मात्मा आगे नहीं आया, इस बात से उत्तरा भी आहात हुई । वह दिल से द्रौपदी का

सनेह करती थी। वह पत्थर सी बन कर रह गई। द्रौपदी का रूप बदल गया था। किसी से कोई उम्मीद नहीं रह गई थी। उत्तरा को भी वह यही समझाती हैं, स्वयं को कठोर बना कर रखना है किसी भी स्थिति में टूटने नहीं देना, कुछ भी हो जाए। मेरे पांच पति हैं, उनके होते हुए मेरे साथ ऐसा हुआ है, तो कल को यह तुम्हारे साथ या किसी और के साथ भी हो सकता है। उत्तरा ने उसकी हार बात को माना।

सतीत्व और पतिव्रता का जो आशीर्वाद उसको द्रौपदी से मिला था, उसे उसने दिल में समां कर रखा था। नृत्य शिक्षा से आरंभ हुआ उसका सफ़र उसको युद्ध के मैदान तक ले आया। अन्दर ही अन्दर स्वयं से लडती वह योद्धा बन गई थी। अभिमन्यु के साथ वह हमेंशा ही रही उसको सदैव सत्य के मार्ग पर चलने के लिए कहा। कभी भी कोई ऐसा उदाहरण देखने को नहीं मिलता जब उसके कारण वह निराश हुआ हो।

समय का ज्वालामुखी उस दिन फूट गया था। उसमें से निकला लावा सब को जला रहा था। राख ने सारे आसमान में अँधेरे को फैला दिया। इस दृश्य में जिसे जो ठीक लग रहा था, वह वही कर रहा था। नालों में अब लावा बह रहा था। बागों में जहाँ पक्षी चहका करते थे, वहां आज मानवीय आवाज़े प्रलाप कर रहीं थी। फलों की जगह अस्त्र शस्त्र पेडों पर लटके हुए थे। आँखों में अश्रु नहीं रक्त दौड़ रहा था। काफी दिन तक ऐसा ही चलता रहा। एक दिन वह अपने कक्ष में बैठी हार श्रृंगार कर रही थी। हाथ में कंगन आज शोर नहीं कर रहे थे और न ही झुमके कानों के साथ अठखेलिया कर। मांग भरने के लिए उसने जैसे ही सिंदूर उठाया, दरवाजे पर आहट हुई। पीछे मुड कर देखा एक छोटी सी आयु वाला एक युवक खड़ा था। जिसके बालों में कुंडल पड़े हुए थे, वह कोई और नहीं बल्कि हाथों में शस्त्र पकडे हुए सुभद्रा नन्दन अभिमन्यु खड़ा था। उत्तरा ने आईने में देखते हुए उसे कहा, अर्जुन पुत्र विजय होना। हे उत्तरा के धन उत्तरा के पास ही रहना। वह पीछे मुड़ी और जैसे ही उसके चरण स्पर्श किए जल की दो बूंदों से उसका अभिषेक भी कर दिया। अपने पति को युद्ध में भेजने के लिए उसने स्वयं को मार दिया था। सिर्फ विजय भाव उसकी जुबान से निकली थी। लौटना या न लौटना ऐसा कुछ नहीं कहा उसने। क्षत्रिय कन्या का रूप उस समय देखने वाला।

आज गुरु द्रोणाचार्य ने स्वयं चक्रव्यूह की रचना की थी। जिसको तोड़ता हुआ अभिमन्यु उसमें घुस गया। काल को कुछ और मंजूर था, उसको भी अभिमन्यु से प्यार हो गया था। वह अपने साथ लेकर जाने वाला था। जयद्रथ ने अपनी सेना के साथ उसको घेर लिया। इसको देख

कौरव सेना का मनोबल और मजबूत हो गया। अभिमन्यु ने अपने बल से सारी सेना को पछाड़ दिया, फिर उसका सामना दुर्योधन के पुत्र लक्ष्मण से हुआ। लक्ष्मण ने उसे मारने के लिए दम लगा दिया, किन्तु अभिमन्यु के एक वार से वह यमराज का भोजन बन गया। इसको देख दुर्योधन का खून खौल उठा और उसके अव्वहान पर कर्ण, द्रौण, अश्व्थामा, वृह्दबल, कृतवर्मा आदि जैसे महारथियों ने उसे घेर लिया। सब मानदंड तोड़ दिए गए, युद्ध के नियम भुला कर उस बालक पर सब एकसाथ टूट पड़े। वह बालक खून से नहा कर भूमि पर विश्राम कर रहा था। उसका कर्तव्य अब पूर्ण हो चूका था। किसी के कहने पर भी अब वह उठ कर प्रहार नहीं करेगा। उसने अपना किरदार बहुत बाखूबी निभाया था।

जब यह खबर उत्तरा तक पहुंची तो उसकी दशा क्या हुई होगी। अभी उसने जीवन की शुरुआत की ही थी। उसका जीवन साथी उसे छोड़ कर अकेला अगले सफ़र पर निकल गया । पांडवों के पास कुछ शब्द नहीं थे कि वह उसको शांत करवा सकें। अब विधवा बन कर रह गई। द्रौपदी की गोद में पड़ी वह ढलते हुए सूर्य को देख रही थी। बढ़ता अँधेरा उसको अब जैसे अच्छा लगने लगा था। बस अब और कुछ बाकी ही नहीं था। उसने अपनी इच्छा जाहिर की वह भी अपने स्वामी के साथ इस धरती को छोड़ना चाहती है। मधुसुदन ने उसको समझाया कि नहीं, अभी उसकी यह इच्छा पूरी नहीं हो सकती। एक नया युग एक नए जीव का इंतजार कर रहा है।

युद्ध में खून सब के सर चढ़ कर बोल रहा था। बस मरने मारने के बिना कुछ नज़र नहीं आ रहा था। अशवाथामा ने द्रौपदी के पुत्रों को सोते हुए मार डाला और वहां से भाग गया। जब अर्जुन उसे पकड़ कर ले आया तो साध्वी द्रौपदी ने उसे क्षमा करके छोड़ दिया। वह कहाँ रुकने वाला था। उसने पांड्वो को ख़तम करने का संकल्प लिया था। जब उसे पता चला पांडवों का बीज उत्तरा के गर्भ में है तो उसने उसके गर्भ पर ब्रह्म अस्त्र का प्रयोग किया। जिस कारण उसके गर्भ में पल रहा बालक मर गया। गांधारी भी संतानहीन हो गई थी, द्रौपदी भी, और हस्तिनापुर की छोटी महारानी उत्तरा भी। सबको भविष्य की अंधेरी कालिख दिखने लगी। इस कथा के प्रवाह को जारी रखने के लिए वेद व्यास ने श्री कृष्ण के माध्यम से उत्तरा के गर्भ में पल रहे राजा परीक्षित को जीवित करवा लिया और फिर सबको आगे बढ्ने की एक आस की किरण दे दी।

चतुर्थ अध्याय 18

नाटकीयता एवं नाटकीय तत्व

किसी भी रचना का श्रृंगार नाटकीयता ही होती है, जो उसको आकर्षक और चुम्बकीय बनाती है। इसमें से नाटकीयता को निकाल दें तो यह मात्र शब्दों का संग्रह ही रह जाती है। जितनी ज्यादा इसमें रोचकता होगी भाव नाटकीयता होगी, रचनाउतनी ही उम्दा और वजनदार होगी।

नाटकीयता शब्द परिपूर्ण रौचक तत्व को प्रस्तुत करता है। भारतीय वेद पुराण इस रोचकता से भली भांति पहले से ही परिचित थे। निसंदेह नाटकीय शब्द बहुत देर बाद उत्पन्न हुआ होगा, परंतु साहित्यक संदर्भों में रोचकता बहुत पहले से ही विद्यमान थी। भारतीय साहित्य में देव, दानव, शाप, पूर्व जन्म और इच्छाधारी रूप इत्यादि के माध्यमों से नाटकीयता का समावेश पाया जाता है । इंग्लैंड में शेक्सपिअर जहाँ भूतों का सहारा लेता है, वहीं यूरोपीडीज़ अपने पात्र रचना के लिए नज़ोमी द्वारा पहले से ही भविष्य बताते हुए नाटकीयता का प्रवेश करवाता है। यद्यपि नाटकीयता कहानी का प्राथमिक तत्व कथानक है, पर वह तब तक अभिव्यक्त नहीं हो सकता, जब तक कि चरित्र चित्रण वाला तत्व न हो । पात्रों के द्वारा ही कहानी गतिशील होती है। दूसरे, चरित्र चित्रण कथन से भी ऊंचा कार्य है।

पात्र ही किसी भी मूल कथानक के वाहक होते हैं इसलिए किसी भी रचना के पात्रों, चरित्र चित्रण में नाटकीयता महत्वपूर्ण तत्व है। स्वराजबीर के अनुसार, "मिथिहासिक प्रसंगों के साथ सृजनातमक और नाटकीय छूट (आज़ादी) का इस्तेमाल करके ही नाटक में अलग-अलग किरदारों का निर्माण होता है, नाटकीय और साहित्यक छूट (आज़ादी) के बिना इतिहास और मिथिहास के बारे में नाटक लिखना संभव नहीं है, पुराने यूनानी नाटकों से लेकर शेक्सपियर तक और उससे लेकर अब तक ऐसा ही होता आया है।" (*कृष्ण* मुख्यबंद)

जीवन की तरह साहित्य भी रोचकता से भरपूर रहा है। रामायण हो या महाभारत सब में रौचकता भरपूर मात्रा में देखने को मिलती है। एक पक्षी जटायु का सीता को बचाना, सीता का जन्म, स्वर्ण मृग, नल-नील का राम नाम लिखे हुए पत्थरों से सेतु बनाना और वानर सेना का युद्ध लड़ना। महाभारात में वेदव्यास भी इसको और प्रखरता से प्रयोग किया है तथा इसके साथ जुड़ी कहानियों में भी इसका समावेश देखने को मिलता है। श्री कृष्ण का जन्म, कंस की

मृत्यु की भविष्यवाणी, गंगा का एक औरत रूप, अम्बा के पुनर्जन्म, गांधारी का सौ संतानों को जन्म देना, द्रौपदी का यज्ञ वेदी से जन्म, यह सब नाटकीयता की उत्कृष्ट उदाहरण है।

चाहे आज के नाटकों/उपन्यासों के पात्र उच्च वंश से संबन्धित न होकर आम आदमी हैं । इन पात्रों को अपने अस्तित्व के अभिमान को बनाए रखने के लिए अपने परिवेश, सामाजिक-आर्थिक-धार्मिक-राजनीतिक परिस्थितियों से जूझना पड़ता है, टकराना पड़ता है। अहं की पूर्ति तथा लक्ष्य-सिद्धि के लिए यह पात्र विभिन्न मानसिक विकारों से ग्रस्त, निराश और तनावयुक्त रहते हैं। सीमित साधनों और बढ़ती हुई आकांक्षाओं के कारण उन्के दिल में खीझ , घुटन, बेबसी, विवशता इत्यादि के भाव उत्पन्न होते हैं। जिस कारण आक्रोश, अनिश्चितता, अकेलापन आदि स्थितियाँ पैदा होती हैं जो तनाव को और गहरा करती हैं। पात्र तनाव में जीते, घुटते और मरते हैं।

रचना का विषय या आधार चाहे पौराणिक, राजनीतिक, सामाजिक, व्यक्तिक, मनोवैज्ञानिक कोई भी हो, उसमें तनाव की उपस्थिति अनिवार्य है। तनाव द्वारा ही किसी भी पात्र के जीवन की सूक्ष्म परतें खुलती जाती हैं, उसके पूरे व्यक्तित्व और चारित्र की विशेषताएँ उद्घाटित होती हैं। डबलिउ एच हडसन का मानना है, "यदि किसी नाटक में द्वंद की कमी है तो उसमे और चाहे कितने भी गुण हों वह उच्च कोटी का नाटक नहीं है।" (*एन इंटरोंडकशन टू द स्टडी ऑफ लिट्रेचर* 199)

विरोध की परिकल्पना को महत्वपूर्ण मानते हुए जे°एल स्तायन ने यहाँ तक स्वीकार किया है कि, "प्रमुख पात्रों, उनके संभाषण तथा गति, विचार और प्रतिक्रिया के बीच किसी भी प्रकार का विरोध होना, किसी एक दृश्य के सैद्धांतिक निर्माण का आवश्यक तत्व है।" (*ड्रमैटिक एक्सपिरियन्स* 76) यही संघर्ष, द्वंध, विरोध सभी मिलकर पात्रों में तनावग्रस्त मानसिकता को निर्मत करते हैं और सारी रचना में तनाव का वातावरण बनाए रखते हैं। सत्यवती के साथ घटित होती घटनाएँ ऐसी ही उदाहरण हैं।

रचनाकार अपने पात्रों में तनाव का चरित्रांकन करने के लिए अनेक प्रकार की नाटकीय युक्तियों का सहारा लेता है। वह जटिल व चुस्त संवादों की रचना करता है। नाटकीय भाषा में अनघड़ शब्दों, वाचिक अवरोधों, पुनरावृत्तियों, आधे-अधूरे, टूटे-फूटे वाक्यों, अव्याकरणिक प्रयोगों और उच्चारण की विकृतियों के द्वारा पात्रों के मानसिक तनाव आदि का संचार करता है। मौन, चुप्पी, विराम पात्रों के मानसिक संघात तथा तनावमय वातावरण को

गहराता है। स्वगत कथन या एकालाप की योजना अंतर्द्वंद की अभिव्यक्ति का अच्छा साधन है। रंग-संकेत, प्रकाश योजना, ध्वनि-बिम्ब, प्रतीकों आदि रंग-युक्तियों द्वारा नाटककार पात्रों के तनाव को उधेड़कर सामने रख देता है।

वेदव्यास महाभारत मे रोचकता जैसे तत्व का इसमें समावेश करना बहुत भले से जानते थे। महाभारत में अनेकों पूर्व जन्म की घटनाएँ, अविश्वसनीय कार्य, भविष्यवाणियाँ, देव लोक, दानव लोक, विज्ञान संबन्धित कार्य, क्षेत्रीय वर्णन, संवाद और भगवान का अवतार कितने ही नाटकीय माध्यम जो इस कथा को जन चेतना की जड़ों से जोड़ने का कार्य करते हैं, उनका समावेश इस कथा में किया। इसके रचना काल से अब तक इसमें कुछ घटनायों अथवा कथायो का इसमें मिलन हो जाना और इसको अलग अलग विधायों में खेला जाना इसी नाटकीयता की वजह से ही है । "नाटकीयता" शब्द स्वयं में संघर्ष, द्वंद, आकस्मिकता, कौतूहल, रहस्यात्मकता, विडम्बना, नाट्य-भ्रांति, व्यंग आदि तत्वों को सँजोये हुए है। इन सब तत्वों से उत्पन्न तनाव नाटकीय तनाव अथवा नाटकीयता ही कहलाता है।

नाटक की संरचना अथवा रूपबंध एक प्रकार की तकनीक है, जिसके द्वारा कोई भी रचनाकर विभिन्न दृश्यों अथवा अंकों को एक दूसरे से जोड़ता है। इस तरह वह पाठकों अथवा दर्शकों का ध्यान कार्य-व्यापार की मुख्य संवेदना की ओर आकर्षित करता है । नाटकीयता को उसके भीतर अंकित कर, आकर्षक बनाने मे "तनाव" एक महत्वपूर्ण कारक है। एस° डबलिउ के अनुसार, "नाटक के विवेचन मे "तनाव" शब्द अनिवार्य रूप से बार बार आता है। जब हम तनावपूर्ण स्थिति कहते हैं तब हमारा अभिप्राय : एक ऐसी परिस्थिति से होता है जो किसी भी क्षण अपनी वर्तमान स्थिति से बिलकुल भिन्न हो जाती है। किसी भी प्रकार की कला को हम पूरी तरह तभी समझ पाते हैं जब हमें उसके विभिन्न शौलिप्क तत्वों के अन्तःसंबंध का बोध हो और नाटक में विभिन्न शौलिप्क तत्वों का संबंध तनाव होता है।" (*ड्रामा एंड द ड्रमैटिक* 30)

इससे स्पष्ट है कि नाट्य-कृति की सम्पूर्ण संरचना को एक सूत्र मे बांधने का कार्य तनाव करता है । कथावस्तु का कसाव भी नाटकीय तनाव पर निर्भर करता है । नाटकीय दृश्यों को बढ़ता हुआ तनाव आपस मे जोड़ता है। आर्चर के अनुसार, "नाट्य-शिल्प के रहस्य का एक महत्वपूर्ण भाग एक ही शब्द मे सन्निहित है, तनाव; तनाव की स्थिति उत्पन्न करना, उसे बनाए रखना, कम करना, फिर बढ़ाना और अंत में तनावपूर्ण स्थिति को हल करना।" (*थियरि एंड टेक्निक ऑफ प्ले राइटिंग एंड स्क्रीन राइटिंग* 175)

यहाँ "तनाव" शब्द पर विचार करना भी आवश्यक है। कालिका प्रसाद के शब्द-कोष में तनाव की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, "तनने का भाव या क्रिया, खींचतान, द्वेष या विकर्षण की स्थिति।"(*बृहत हिन्दी कोष*)

रामचन्द्र वर्मा ने तनाव की परिभाषा इन शब्दों में की है, "राग-द्वेष आदि के कारण उत्पन्न होने वाली वह स्थिति जिसमें दोनों पक्ष एक दूसरे को ओर प्रवृत्त नहीं होते।" (*मानक हिन्दी कोष, दूसरा खंड हिन्दी साहित्य सम्मेलन* 403)

वास्तव में तनने की क्रिया या भाव ही तनाव है। जेम्स ड्रेवर ने डिक्शनरी ऑफ साइकोलोजी में तनाव की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, "खिंचाव की अनुभूति, संतुलन के बिगड़ने की अनुभूति, स्थिति के किसी एक तत्व का सामना करने के लिए तैयारी का भाव।" (*अ डिक्शनरी ऑफ साइकोलोजी* 236) इस प्रकार तनाव एक प्रकार का मानसिक संपीडन है, जो उन विरोधी मनुष्य, स्थितियों, मनःस्थितियों, नियति के संसर्ग का परिणाम है जिनके विरुद्ध व्यक्ति स्वयं को "अप-अगेन्स्ट" पाता है।

नाटकीय तनाव से अभिप्राय नाटक में तनाव की नियोजना से है। यह नाटकीयता द्वारा पैदा हुए तनाव को भी व्यक्त करता है। अगर नाटक जीवन के कार्य का अनुकरण है तथा नाटक का संघर्ष, जीवन का भी संघर्ष है, पर यह अनिवार्य नहीं है कि जीवन का संघर्ष नाटकीय भी हो । इच्छाएं, जरूरतें, आकांक्षाएँ, संकल्प इत्यादि पूरे हो जाने के कारण नाटकीय तत्व से रहित होते हैं। जबकि विरोध जीवन मे एक तनाव की स्थिति पैदा कर देता है। दो इच्छाओं, संवेगों, स्थितियों के बीच विरोध के कारण तनाव उत्पन्न करने वाली इच्छाएं और संवेग कहीं अधिक नाटकीय स्थिति को जन्म देते हैं । कूपर के अनुसार, " तनाव के अभाव में कितना भी आश्चर्यजनक, भयानक, आकस्मिक या निराशाजनक अंत वाला नाटक नाटकीय नहीं हो सकता क्योंकि तनाव और द्वंद ही नाटकीय स्थिति के मूल तत्व है।" (*प्रीफेस टू ड्रामा* 40)

पीकॉक के अनुसार संभवत, "नाटकीयता" शब्द का अर्थ किसी भी आकस्मिकता, आश्चर्यजनक, उत्तेजित अथवा हिंसक घटनाओं से संबंधित तनाव का चित्रण करना है। " वह आगे कहता है "साधारणतया यह माना जाता है कि नाटक द्वंद से ही जन्म लेता है किन्तु कौतूहल और विशेष रूप से तनाव इसके वास्तविक लक्षण हैं। निःसंदेह यह दोनों द्वंद से उत्पन्न होते हैं परंतु सदैव नहीं और द्वंद तभी नाटकीय होता है जब उसमे कौतूहल और तनाव की स्थिति बनी रहती है ।" उदाहरण देते हुए वह बताता है कि क्रिकेट मैच मे द्वंद हो सकता है

किन्तु तनाव और कौतूहल नहीं । वह स्थिति केवल उसी विशेष क्षण मे प्रकट होती है जब खेल बराबर पर चल रहा हो । एक आध गेंद पर ही खेल का निर्णय होने वाला हो, अतः वही नाटकीय स्थिति होगी। दूसरी ओर एक रेलगाड़ी एक टूटे हुए पुल की ओर अपने पूरे वेग से चली आ रही है। इसमे द्वंद नहीं है किन्तु तनाव की अपेक्षा है। पीकॉक मानता है कि चरित्र तथा कार्य उत्तेजक या व्यग्र रूप मे प्रस्तुत किए जाने पर ही नाटकीय अर्थ को सार्थ करते हैं। (*द आर्ट ऑफ ड्रामा* 159-60)

नाटकीय कार्य से तात्पर्य केवल "कुछ करना" नहीं है किन्तु किसी नियतिबद्ध परिणाम की महत्वता को स्वीकार कर उसे पाने के लिए क्रियाशील होना है। क्लीन्थ ब्रुक्स के अनुसार, "कार्य विकसित और अग्रसरित होता है, किन्तु तनाव और संघर्ष के अनुभव मे अग्रसरित होता है, सपाट अनुभव मे नहीं। कार्य केवल सार्थक कार्य-व्यापार नहीं सक्रिय संघर्ष का तनाव भी इसमें अंतर्निहित है।" (*अंडरस्टेंडिंग ड्रामा* 12)

ए॰निक्कल के अनुसार, "नाटकीयता का संपृक्तार्थ अर्थ अप्रत्याशित है, जिसमें किसी आश्चर्यजनक संयोग से या प्रतिदिन वे जीवंगत भय से वर्णित किसी घटना से प्रस्थान से उत्पन्न स्तब्धता का वर्णन रहता है। नाटकीयता मे विस्मय, आकस्मिकता तथा जड़ता का विधान होना चाहिए।" (*द थियरि ऑफ ड्रामा* 36)

विलियम आर्चर नाटक को "संक्रांतियों की कला" मानते हुए कहता है, " नाटकीय दृश्य चरमसीमा की ओर बढ़ता हुआ क्राइसिस है। "साथ ही नाटकीय सामग्री के लिए आकस्मिकता तथा क्षिम्रता को वह अनिवार्य तत्व मानता है।" (*थियरि एंड टेक्निक ऑफ प्ले राइटिंग एंड स्क्रीन राइटिंग* 1975)

कृष्ण सिंहल के मत में, "विचार, परिस्थिति आदि की द्वंदात्मक स्थिति से नाटकीय चरित्रों एवं परिस्थितियों के उद्गम-स्थल समझे जा सकते हैं। वे क्रियाएँ जो दुरूह एवं तनाव प्रद हों, वे कथोपकथन, जो व्यक्तियों के मन की दुविधा एवं भ्रम की स्थिति के परिचायक हों, वे आकस्मिकताएँ, जो किसी नई चीज़ का रहस्योदघाटन, खोज, स्थिति-परिवर्तन अथवा विरोधी प्रवृति का स्पस्टिकरण करते हो "नाटकीयता" के उपकरण के रूप मे चित्रित मिलते हैं।" (*हिन्दी गीति नाट्य* 42)

हेन्री आर्थर लोन्स का यह कथन भी नाटकीयता ही व्याख्यायित करता है कि, "नाटक तब उत्पन्न होता है, जब कोई भी एक व्यक्ति या अनेक व्यक्ति चेतन अथवा अचेतन रूप से

किसी भी प्रतिद्वंधी व्यक्ति परिस्थिति या भाग्य के विरुद्ध "अप अगेन्स्ट" है। यह प्रायः तब और तीव्र होता है जब जैसा कि आडियन्स में दर्शक बाधाओं के प्रति सावधान है किन्तु अभिनेता स्वयं इन बाधाओं से अनभिज्ञ है।" (*द थियरि ऑफ ड्रामा* 29)

नाटकीयता से अभिप्राय: नाट्यवस्तु अथवा चरित्र के संदर्भ मे उन महत्वपूर्ण एवं निर्णायक क्षणों से हैं जिनमे तनाव, आश्चर्य, असंभावित उथल पुथल, कौतूहल, आकस्मिकता तथा स्तब्धता का योग रहता है। नीति द्वारा निर्धारित परिणाम के लिए संघर्षरत कार्य नाटकीयता को तीव्र बनाता है तथा जीवन की वह समस्त स्थितियाँ, आवेग, संवेग, आकांक्षाएँ, अभिलाषाएँ, जो किसी निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति तथा संघर्ष के बीच के अंतराल को तनाव मे भोगती है, नाटकीय स्थिति के तहत उल्लेख किया जा सकता है।

नाटकीय तनाव के संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि तनाव को किस प्रकार एक लंबे समय तक असहय बनाए बिना जारी रखा जा सकता है और कैसे इसे अधिक प्रभाव के साथ तोड़ा जा सकता है। बीच बीच में तनाव की शिथिलता बनाए रखने की योजना भी प्रभावी सिद्ध हो सकती है। किसी भी रचना में अनावश्यक प्रसंग, विस्तार, कारण-कार्य संबंध का आभाव, बढ़ा चढ़ा कर प्रस्तुत की स्थितियाँ और अनेकार्थता नाटकीयता के शत्रु हैं।

इस प्रकार नाटकीय तनाव रचना का मुख्य तत्व सिद्ध होता है। यह तनाव नाटकीय स्थितियों, परिस्थितियों और समूचे कार्य-व्यापार के मध्य उत्पन्न होता है। नाटक की संघटनात्मक सुंदरता नाटकीय तनाव में ही छुपी हुई है।

चेनी शेल्डान कहते हैं, "नाटक में उन्हीं घटनायों का समावेश होता है, जिनका सीधा और स्पष्ट संबंध जीवन से होता है। मनुष्य के व्यक्तित्व की गम्भीरतम धाराओं से, उसके निजी अन्तद्वंन्द्व तथा अनुभवों के गहनतम क्षणों से उसका लगाव होता है, परंतु स्यात सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि रंगमंचीय क्ला वही निखरती है जहां आध्यात्मिक ज्योति मानव जीवन को उज्ज्वल बनाती है।" (*रंगमंच- नाटक अभिनय और मंच शिल्प* 2)

इस बात को लेकर विभिन्न विद्वानों ने अपने मत प्रस्तुत किए है और उनका प्रस्तुतीकरण अपनी रचनाओं में भी किया है। जिसमें से आज तक वर्तमान समय में और भविष्य में आने वाले रचनाकार इसमें से अनंत नदियाँ बना कर साहित्य को अमीर करते रहेंगे। इस बात का यह प्रमाण भी है। भारत ही नहीं अपितु विदेशी रंगमंच की विधाएँ और उनका साहित्य इसके प्रभाव से विहीन नहीं है।

इस संदर्भ मे डॉ कृष्णदेव शर्मा ने लिखा है, " महाकाव्यों में घटनायों का व्यापक चित्रण होता है, उस पर देशकाल की सीमा का कोई प्रभाव नहीं होता । पाश्चात्य विद्वान वाकिवलिन लिखते है : "An Epic is the mirror of this world and contains all in itself" यद्यपि महाकाव्य में एक ही विशेष घटना का नियोजन होता है, फिर भी, उस विशेष घटना से संबंध अनेक उप-कथाएँ और अवतार कथाएँ होती हैं, जिनसे मुख्य कथा को गति तथा प्रवाह मिलता है और कथानक में रौचकता तथा आकर्षण की उत्पत्ति होती है ।" (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 207-210)

नाटकीयता क्या है ? महाभारत में यह कैसे देखने को मिलती है ? नाटकीयता शब्दों में, प्रस्तुति में देखने को मिलती है। किस प्रकार घटना का व्याख्यान किया गया है। किस प्रकार उसके पात्रों को प्रस्तुत कर लिखा गया है, उनके प्रभाव को कम आंक ही नहीं सकते। लिखने के बाद बारी आती है रंगकर्मी की, किस प्रकार से वह अपने अभिनय से, निर्देशन से उस घटना को मंच पर दर्शक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत करता है। अगर वह उसको ठीक ढंग से व्यक्त कर देता है तो दर्शक भी उसको हाथों हाथ प्रमाण पत्र दे देते हैं, कि वह एक अमर रचना है या नहीं।

प्रत्येक बात के तीन पक्ष होते हैं, या वह सत्य होती है या अर्ध सत्य अथवा कपोल कोरी कल्पना। भाव उसमें तीनों में से एक अंश अवश्य होता है। साहित्य की विशेषता यही है वह किसी एक तथ्य पर निर्भर नहीं रहता, तीनो का समावेश करके स्वयं को अमीर बना लेता है। अपने आप को कठिन परिस्थिति में डाल कर बहुत सरलता और चतुरता से बाहर भी निकाल लेता है। उसके लिए तीनो तत्वों में से किसी का भी सहारा क्यों न लेना पडे। कभी कुछ ऐसे घटनाओं-पात्रों और स्थानों का सहारा भी ले लेता है, जो अस्तित्व में तो दूर किसी मानवीय बुद्धि में भी नहीं होती। महर्षि बाल्मीकि, वेदव्यास, महाकवि भास्, कालिदास, सोफोक्लिस, शेक्सपियर, ब्रेकथ, सेमुअल बेक्केत्त, पीटर ब्रूक, इब्सन, धर्मवीर भारती जैसे अन्य नाटककारों, निर्देशकों, अभिनेताओं ने इसका इस्तेमाल भरपूर किया है।

श्रोत्रिय प्रभाकर कहते हैं, "महाभारत में विलक्षण बहुकोणीय पात्र-सुष्टि, रौचक आख्यानता,नाटकीय स्थितियाँ, वृत्तकथन, मिथकीयता, फेंटेसी, अलंकृति और कहीं सहज कला, यानि कुल मिलकर विरत, बहुस्तरीय और चमत्कारिक स्थापत्य है। धर्म नैतिकता, तत्व-मीमांसा, लौकिक अनुशासनों की अभिव्यक्ति और व्यंजना है, विरोध विसंगति और विद्रूप के

सहिष्णुता है। यह चीजे सृजन की वस्तु और प्रेरणा देती है।" (*भारतीय साहित्य पर महाभारत का प्रभाव* 14)

जितने ज्यादा नाटकीय तत्व किसी रचना में होते हैं, उतनी ही ज्यादा उसको और रोचक ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता बढ़ जाती है। यही कारण है कि आज से 5000 वर्ष पूर्व की लिखित घटना जिसका पंजाब की तक्षिला (वर्तमान समय पाकिस्तान में) भूमि पर प्रथम पाठ्य किया गया था, आज भी वह साहित्य जगत मे अपना वर्चस्व बनाए हुए है। यह किसी और चीज ने नहीं बल्कि इसके अंदर समाए हुए नाटकीय तत्वों ने किया है।

16 अगस्त 2017 को आज तक नाम के न्यूज़ चेनल के वेब पेज पर एक खबर प्रसारित हुई, इसके इलवा बहुत से अखबार और टीवी चेनल पर भी यह ख़बर प्रसारित हुई थी कि विश्व की प्रसिद्ध हार्वर्ड यूनिवरसिटी में INDIA RELIGIONS THROUGH THEIR NARRATIVE LITERATURES कोर्स के तहत अब वहाँ महाभारत को पढ़ाया जाएगा, किस तरह महाभारत हमारे जीवन में विशेष भूमिका निभाता है। इसके मुख्य माध्यम में से रंगमंच भी रहेगा। इस कोर्स को साउथ एशियन रिलीज्न कि प्रोफेसर एन इ मोनियस पढ़ाएंगी। इस कोर्स में नृत्य प्रस्तुति, शेडो पपेट नाटक, मौड्रेन फिक्षनल रीटेलिंग आदि भी करवाई जाएगी।

आज भी महाभारत सारे विश्व की प्रथम पसंद क्यों बना हुआ है ? क्यों यह सबको आकर्षित करता है ? इसमें कितनी नाटकीयता समाई हुई है ? इसी बात ने शोधकरता को शोध प्रबंध के लिए विवश किया।

मानवीय विकास के साथ-साथ रंगमंच की विद्या का विकास भी होता आया है। आदि मानव की गुफायों से पहाड़ों तक, फिर मंदिरों के प्रांगण से निकल कर चौपाल तक, और अब बंद सभागार से निकल कर हाई टेक रूप के साथ रुपहले पर्दे तक के सफ़र को तय कर आज अपने यौवन काल में प्रवेश कर गई है। इसके हर पक्ष की जरुरत का ख्याल रखना आवश्यक हो गया है। इस विकास के केंद्र बिंदु में एक संघर्ष और कशमकश का तत्व निरंतर बहता रहा है, इसी को नाटकीयता का तत्व भी कहा जाता है ।

शोधकर्ता का मानना है महाभारत को देखने-सुनने और पढने के बाद एक ही बात निकल कर सामने आती है, सारी कथा को आगे बढ़ाने के लिए वेदव्यास ने नारी पात्रों को मुख्य स्तम्भ के स्थान पर रख कर सारी कथा का भवन निर्माण किया है। किसी भी भवन का आधार स्तम्भ जब तक मजबूत नहीं होता, तब तक उसका निर्माण सफल नहीं माना जाता अथवा

उसका अवधि काल बहुत कम होता है। इसलिए उन्होंने उन नारी पात्रों में नाटकीयता का समावेश इतना भर दिया, कि रंगकर्म से जुड़े लोग इनको अनदेखा नहीं कर सकते। इन नायिकाओं पर अनेकों ग्रन्थ लिखे जा चुके है, प्रस्तुतियां की जा चुकीं है और बदलते जमाने के साथ यह कार्य निरंतर चल रहा है।

इस संदर्भ में रीतरानी पालीवाल लिखती हैं, "महभारत के हरिवंश पर्व, विराट पर्व, वन पर्व, उद्वेग पर्व में नाट्य, नृत्य तथा संगीत का उल्लेख मिलता है। हरिवंश पर्व में वज्रनाथ-वध तथा प्रध्युम्न विवाह के प्रसंग में 'रामायण नाटक' और 'कौवेररम्भभिसार' नाटक खेले जाने का प्रमाण मिलता है। इन नाटकों का निर्देशन भद्र नामक नट ने किया था। नायक की भूमिका में प्रद्यम्न तथा विदूषक के रूप में यादव अभिनय कर रहे थे। नाटकों में शूर ने रावण का, मनोगती ने रम्भा का तथा शाम्ब ने विदूषक का अभिनय किया था। यह अभिनय अत्यंत ही सफल रहा तथा स्त्री दर्शकों ने अपने आभूषण उतार कर अभिनेतायों को उपहारस्वरूप भेंट दिए।" (*रंगमंच : नया परिदृश्य* 112)

महाभारत के आख्यानों, उपख्यानों अथवा अन्य कहानियों में इन नायिकाओं ने स्वयं को मजबूत प्रस्तुत किया है। इनको उभारने में जो प्रथम नाटकीय तत्व है, वह है इनका जीवन और चरित्र। चुनी गई प्रत्येक नायिका के जीवन में अद्भुत और चकित करने वाली घटनायों का समावेश है। उनके द्वारा बोले गए संवाद, मानसिक द्वंध और जिस तरह श्लोकों के माध्यम से उनका चित्रण किया गया है यही तो नाटकीयता है ।

अरस्तू महाकाव्य के लिए नाटकीय शैली को आवश्यक मानते हैं, "क्योंकि इसमें दृश्यत्म्क्ता के साथ-साथ पात्रों के व्यक्तित्व से उत्पन्न सहज वैचित्र्य का भी समावेश होता है। इसमें रचना मनोरंजक तथा आलाहदायक बन जाती है।" (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 211)

भारत देश में महाभारत काल से ही रंगमंच चला आ रहा है। कोई व्यक्ति ऐसा नहीं होगा जिसे महाभारत के बारे में न पता हो या जिसने कभी कुछ पढ़ा सुना न हो। यह दादी और नानी माँ की बातों और कहानियों के रूप में आम जन तक पहुँचती रही है। बहुत सारे नाटक इस पर आधारित खेले जा रहे है। बहुत सारे धार्मिक और सामाजिक पर्व इसके साथ जुड़े हुए हैं। 1980 के टेलीविज़न के दौर में बलदेव राज चोपड़ा ने इसको टीवी धारावाहिक रूप में परिवर्तित करके सबके सामने प्रस्तुत किया। आज भी इसे विभिन्न निर्देशक एनिमेंशन फिल्मो और नाटकों के रूप में आधुनिक युवाओं के सामने प्रस्तुत कर रहे है।

एरिक बेंटले का लिखते है, "नाटकीयता घटनाओं में नहीं, दर्शकों की संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं में है। कोई भी घटना अपने में नाटकीय नहीं होती, वह तभी नाटकीय होती है, जब दर्शकों के अंतर में कोई प्रतिक्रिया जगा पाने में सक्षम होती है। केवल बाह्य जीवन के कार्यव्यापारों और लक्ष्यप्राप्ति में की दौड़ धूप एवं संघर्षों में ही नाटकीयता नहीं, किसी की प्रतीक्षा में, चिंताओं और आकांक्षाओं में भी नाटकीयता है। मुक्ति के संघर्ष में ही नहीं उसकी आकांक्षा और स्वप्नों में भी नाटकीयता होती है। वास्तव में नाटकीयता कहीं नहीं होती। उसकी सृष्टि की जाती है। उसमें ऐसी क्षमता उत्पन्न की जाती है, जो दर्शकों को उनके स्व से बाहर निकाल कर अपने में संलग्न कर सके, कुछ देर के लिए ही सही, बांध कर रख सके।" (*नाटकलोचन के सिद्धान्त* 105)

अक्सर यह देखा जाता है कि कोई व्यक्ति किन हालातों से निकल कर, कैसे निकल कर, किसी स्थिति में पहुंचा है। मान लीजिए एक वाक्य लेते हैं "सुरेन्द्र ने हिमालय पर चढ़ने का फैसला किया, वह बहुत विरोध और ३ महीनों की मेहनत के बाद हिमालय पर चढ़ने में सफल हुआ" इसमें नाटकीयता कहीं नहीं दिखती है। अब इसको दोबारा लिखते है "जब सुरेन्द्र ने हिमालय पर चढ़ने का फैसला किया तो बहुत लोगों ने उसका उपहास उड़ाया, उसका मनोबल बिलकुल गिर गया। लेकिन वह हारा नहीं, उसने फैसला किया वो हिमालय को विजय करेगा और वो गिरता, हारता और थकता हुआ चल पड़ा। हिमालय पर चढ़ने के दौरान वह कई बार नीचे भी गिरा, उसका एक हाथ भी टूट गया, कई लोगों ने कहा लौट जा, लेकिन वह आगे बढ़ा, एक दिन वह बर्फीले तूफ़ान में फस गया, उसका पाँव बर्फ में धस गया, जिस कारण उसको अपने पाँव की एक ऊँगली भी गंवानी पड़ी, लेकिन हिम्मत नहीं गंवाई। एक दिन वह हिमालय की चोटी पर पहुँच ही गया, उसकी थकान कहीं दूर उड चुकी थी, उसके सपनों ने एक नया इतिहास लिख दिया था" दोनों को पढ़ते वक्त अंतर साफ़ महसूस होता है। यही कला है, नाटकीयता है, जिसके सहारे सभी रंगकर्मी नमन करने में सफल रहते हैं। यह तो थी इसके लेखन में नाटकीयता, जब इसको पर्दे या मंच पर प्रस्तुत किया जाएगा तो उसमें और भी बहुत कुछ निकल कर सामने आएगा, जो लिखित में है वो सब चलचित्र से और उभरेंगी।

किसी भी कथा के जो रोचक तथ्य, घटनाएँ और उसके पात्रों के स्वाभाव में जो रोचकता होती है, उन सब का एक दूसरे से टकराव, इत्यादि सब मिल कर नाटकीयता को जन्म देते हैं। आज पूरे विश्व में जितने भी देश हैं उनमें अधिकांश देशों में महाभारत का जो

अनेकानेक विधाओं में प्रस्तुतिकरण किया जाता है, अकारण नहीं है। इसकी रोचकता निर्देशक तथा दर्शक वर्ग का ध्यान अपनी और आकर्षित करती है। टकराव, संघर्ष, तनाव, उलझन, जटिलता, मोड, और सरलता इन शब्दों में बहुत कुछ समाया हुआ है। यह मात्र शब्द नहीं है, यह वह अमृत है, अगर कोई रचना इनका पान कर लेती है तो स्थिर और अमर हो जाती है। इन सबके कारण ही रचना में नाटकीयता पनपती है, जो सबको बांध कर रखती है।

यहाँ आगे बढ्ने से पहले यह बात समझनी बहुत आवश्यक है किस तरह से नाटकीय पात्रों को आगे बढ़ाया जाता है उनमें किन गुणो को और कैसे बोया जाता है। किस प्रकार से नाटकीय पात्रों का निर्माण किया जाता है। TYLER MOWERY अपनी एक विडियो में समझाते हुए कहते हैं।

HOW TO BUILD DRAMATIC CHARACTERS:

“Fundamentals of creating characters:

Want:-The character’s visible goal(creates plot),want is external usually the audience knows what a character wants,the want is opposed by external forces of antagonism.For example the protagonist wants to be a musician, wants to heal the pain of past relationship, the want is opposed by the antagonist, this adds major dramatic element to the story.This is extremely difficult if not impossible to create a drama without a character who wants something.You can create a story what brings emotional response without character’s want , but you can’t create a dramatic story.

Why does a character want something?:- We need to look at “NEED” what the character must discover about themselves or the world to become complete, balanced or whole.Author K.M Weiland the author writes that the character would work to achieve outer goal, But the story is into a deeper level in his growth into place where he, first subconsciously and then consciously recognizes and pursues his inner goal the thing he needs.This need comes from the lie the character

believes.This lie truly stops him to achieve what he truly wants to be complete.In order to evolve his character in a positive way he has to start out with something lacking in his life, some reason that makes the change necessary, he is incomplete in some way, but not because he is lacking something external.The external goals make the character as a whole he believes.Their need can only be fulfilled by learning the truth.The protagonist's silent war is always between his want and need, if in a story these two things are present (want and need) then you can have plot and character in a story and in perfect harmony. The protagonist works on smaller goals step by step to achieve the goal. The characters sometimes also make ultimate changes , as in the story "eternal sunshine of the spotless mind".Initailly the character wants to forget his past love and undergoes memory alteration to do so but ends up falling for the same woman.Need and want are the two fundamentals for making the perfect plot.

How to get an audience engaged with the character:-

"Likable" has been used since ages, but now it has been substituted by the word engaging. A character is engaging when we are interested in their struggle and want to know what will happen next.One way to engage with the character is to give personality traits to them like, friendly , helpful, positive.If you are working on traditional protagonist's character, then this idea works well, the audience will easily engage with the character.In some cases why do the audience engage with the character who are not nice?, they actually get engaged with the negative characters because the audience wants to say what the negative character does, this is called empathy.To empathize with someone means to care about and understand them. The audience gets emotionally attached through

distance.The audience wishes that they could be the same as negative character. The lifestyle of the negative character to stay away from people may not be healthy, but engages the audience with it.Sometimes the power and control of the negative character over the materialistic attracts the audience to be one with the character.This engages audiences with the character.Sometimes the character bonds with the audience due to philosophical reasons, maybe sometimes due to the darker elements of their psyche.The character want to prove to the "bad world " that his way of treating people is correct.The character maybe sharp and intelligent that is why what he says resonates the inner feelings of the audience."

इस महाकाव्य की मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाओं को ढूँढने के लिए शोधकर्ता ने जिनको चुना है, उनमें ऐसे ही बहुत से असंख्य नाटकीय तत्व भरे पडे है। जिस कारण इनको पढने, सुनने और देखने को दर्शक और पाठ्य वर्ग आतुर रहता है। यह आज तक चल रहा है और आगे भी चलेगा। वेदव्यास ने अपना कुबेर धन इनको दे दिया। यह आज भी अनंत लेखको-निर्देशकों और कलाकारों को अपनी और आकर्षित करती है।

डॉ मधु धवन कहती हैं, "पात्र के चरित्र का विश्लेषण स्वयं पाठक के समक्ष उपस्थित होकर करे। इसके साथ साथ वह नाटकीय परोक्ष शैली का सहारा ले सकता है। वह पात्रों के वार्तालाप, पात्रों के विचारों द्वारा चरित्र चित्रण कर सकता है।" (*साहित्यक विधाएँ : सैद्धान्तिक पक्ष* 29-30)

इसी बात का संकेत श्यामसुंदर दास के शब्दों में मिलता है, "जब वह कहानी को नाटकीय आख्यान कहते हैं। तब उनका अभिप्राय यही है कि इसमें कहानीकार अपनी ओर से कुछ न कहे। इसमें जो कुछ कहा जाए वह नाटकीय प्रणाली से ही कहा जाए। यही बात चरित्र चित्रण पर भी लागू होती है ।" (*साहित्यक विधाएँ : सैद्धान्तिक पक्ष* 30)

डॉ रांगा ने चरित्र चित्रण की तीन विधियाँ स्वीकार की है, "बहिरंग, अंतरंग तथा नाटकीय। बहिरंग विधि के अंतर्गत उपन्यासकार स्वयं पात्रों की आकृति, वेषभूषा, स्वभाव, अनुभव आदि का वर्णन करता है। अंतरंग विधि या प्रणाली का प्रयोग पात्रों के आंतरिक चरित्र को प्रकाश में लाने के लिए किया जाता है। नाटकीय विधि में उपन्यासकार स्वयं किसी पात्र के

संबंध में कुछ नहीं कहता। पात्र अपने क्रिया-कलापों, वार्तालापों आदि के द्वारा चरित्र चित्रण को अनावृत करता है ।" (*रही मासूम रज़ा और उनके औपन्यासिक पात्र* 70-71)

राजमणि शर्मा का मानना है, "लंबी कविता नाटकीय तत्वों से संयुक्त होती है। यद्यपि 'अंधेरे में' नाटक नहीं पर उसमें नाटकीय तत्वों-खासकर मंचीय तत्वों- का प्रायप्त समावेश है । यह तत्व इस रचना को और संप्रेषणीय, चोट करने वाला बना देता है। क्षण-क्षण में घटना परिवर्तन, कभी कोई दृश्य, तुरंत दूसरा दृश्य प्रभावन्विति के पर्याय हैं और इन्हीं में नाटकीयता के तत्व समाहित हैं।" (*काव्यभाषा : रचनात्मक सरोकार* 149)

प्रेमचंद जी का पात्र चित्रण और उनकी नाटकीयता को लेकर अपना मत है उनका मानना है, "चरित्र-चित्रण को पाश्चात्य समीक्षकों ने अधिक महत्व दिया। पात्रों की विशेषताओं के उदघाटन द्वारा एक उत्कंठा जागृत की जाती है। किसी भी निर्माण मे पात्रों को पृथक व्यक्तित्व प्रदान किया जाता है। उनके प्रति सहानुभूति जगायी जाती है। पात्र अपने व्यक्तित्व द्वारा स्वयं आकर्षण का केंद्र बन जाते है। शेक्सपियर के पात्रों में उनकी विशेषताएँ निकाल लेने पर शेष ही क्या रहेगा । हेमलेट का मानसिक अंतर्द्वंध, शाइलाक का लोभ, रोमियो-जूलियट का प्रेम, कैसियस का छल सभी विशिष्ट हैं। चरित्र-चित्रण द्वारा नाटककार ने उनमे प्राण-प्रतिष्ठा की है। पश्चिम मे प्रचलित चरित्र-चित्रण की प्रणाली को व्यापक प्रसार प्राप्त हुआ। होमर के हैलेन का सौन्दर्य आज भी प्रसिद्ध है। भारत मे चरित्र-सुष्टि रस सिद्धान्त के अंतर्गत आ जाती है। सत और असत दोनों प्रकार से पात्र आनन्द-सृजन में सहायक होते हैं। एक आदर्श बनकर आता है, तो अन्य से चेतना मिलती है। राम का अनुकरण और रावण का त्याग एक ही उद्देश्य तक ले जाते हैं। साहित्य के लक्ष्य को रस अथवा आनन्द मान लेने से भारतीय साहित्य-शास्त्रियों ने एक व्यापक क्षेत्र को चुना। साधारणीकरण में पात्रों की व्यक्तिगत विशेषताओं को अधिक स्थान नहीं प्राप्त हो सकता; वे केवल प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। पश्चिम के व्यक्तिवाद से प्रभाव चरित्र-चित्रण तथा भारतीय रस सिद्धान्त पर स्वयं ने विचार किया। उनके अनुसार चरित्र-चित्रण की प्रधानता का रस से प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता। "भारतीय दृष्टिकोण रस के लिए इस चरित्र और व्यक्ति-वैचित्रयों को रस का साधन मानता है, साध्य नहीं। रस मे चमत्कार ले आने के लिए इनको बीच का माध्यम-सा ही मानता आया।" (*कामायनी का रचना संसार* 118)

नाटकीयता की इस स्वयंसिद्ध आत्मा को एक स्वरूप देने वाले विभिन्न तत्वों को भी जानना अतिजरूरी है जो किसी भी पात्र, उसके चरित्र और जीवन मे छुपी हुई नाटकीयता को

देखने और समझने के लिए अति आवश्यक है। जिसके माध्यम से प्रस्तुति अथवा रचना उभर कर सामने आती है। जो कि निम्नलिखित हैं।

संघर्ष : नाटकीयता मे यह तत्व सबसे आवश्यक है। निजी जीवन हो या मंचीय जीवन इसके बिना नाटकीयता निकल कर समक्ष नहीं आती। किसी भी सफलता की सिद्धि से, चाहे वह जिस भी स्तर की हो, उसमे अधिक से अधिक संघर्ष की आवश्यकता होती है। संघर्ष अपने विस्तृत आयाम में नाटकीयता और संतुलन जैसी सीमाओं मे आबद्ध है। इनके प्रभाव में ही नाटकीय प्रखरता और प्रभावकारिता आती है।

पात्र ही संघर्ष का निर्माण करता है और उसी संघर्ष से पात्र के व्यक्तित्व का उसकी चारित्रिक विशेषताओं का उदघाटन होता है। अम्बा इसकी वशिष्ठ उदाहरण है। इस बात पर प्रकाश डालते हुए लोगस ईगरी कहते हैं, "We think that no character can reveal himself without conflict and no conflict matters without character." (*द आर्ट ऑफ ड्रमैटिक राइटिंग* 186)

इसी संदर्भ मे पं सीताराम चतुर्वेदी का मत है, "नाटकीय कथा प्रारम्भ करने के अनन्तर नाटककार को कई परस्पर-विरोधी घटनाएँ या शक्तिया इस प्रकार इकट्ठी कर लेनी चाहिए कि ज्यों ज्यों नाटक के पात्र उस संघर्ष के लिए परस्पर उलझते जायें त्यों त्यों कथा वस्तु की उलझने भी बढ़ती चलें। नाटक में कौतूहल की स्थापना और वृद्धि के लिए इस प्रकार की उलझन उत्पन्न करना अत्यंत आवश्यक है।" (*भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच* 32)

संघर्ष नाटक का प्राण तत्व है। जो मूल रूप से तनाव का निर्माण करता है। अरस्तू ने ट्रेजडी की कथावस्तु के अन्तर्गत संघर्ष को महत्वपूर्ण का स्थान दिया है। इंगलैंड के विख्यात नाटककार बर्नार्ड शॉ ने भी नाटक मे संघर्ष के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है – " संघर्ष नहीं तो नाटक नहीं।" संघर्ष के अभाव मे तनाव की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती।

महाभारत की कथा मे नायिकाओं का संघर्ष ही इनके चयन के आधार के कारणों मे से एक है। कथा में मनुष्य का संघर्ष अनेक प्रकार का हो सकता है- स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए अपनी भावनाओं पर नियंत्रण पाने के लिए, सर्वोच्च्ता के लिए, अपनी अस्थिरता पर नियंत्रण पाने के लिए, प्रकृतिक शक्तियों के विरुद्ध, ज़िंदगी के कठोर अनुभवों के साथ। मुख्यतः संघर्ष दो प्रकार ही है – बाह्य संघर्ष और अन्तः संघर्ष। एक मे वह शारीरिक स्तर पर क्रियाशील होता है, दूसरे में मानसिक स्तर पर। जीवन और परिस्थितियों के संघात को वह

शारीरिक एवं मानसिक दोनों स्तरों पर वहन करता है। इस प्रकार एक तरफ वह सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक, राजनीतिक, धार्मिक स्थितियों, शक्तियों से अपने अधिकारों तथा अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है, दूसरी तरफ अपनी आंतरिक विरोधी इच्छाओं, आकांक्षाओं, मान्यताओं, आवेगों, संवेगों, विचारों से संघर्षरत होता है। ब्रुनेत्यार कहते है, "नाटक मानव की इच्छा का संघर्ष मे प्रस्तुतीकरण है।" (*द थियरि ऑफ ड्रामा* 29)

यह संघर्ष ही चरित्रों के उदघाटन, उनके विकास के लिए मूल तत्व है। संघर्ष ही वस्तु के विकास में, उसे चरमसीमा तक पहुँचाने के मूल में स्थापना रूपी तत्व के रूप में स्वीकृत है। तेज संघर्ष तनाव को गहराता है। अंदरूनी संघर्ष और बाहरी संघर्ष दोनों स्तरों पर संघर्ष तनाव की सुष्टि करता हुआ, मूल केंद्री निर्णायक तत्व सिद्ध होता है जो नाटक की वस्तु, पात्रों, संवादों, भाषा में तनाव को निर्मित करते हैं। अब यहाँ यह समझना और भी जरूरी है कि वह कौन से तत्व हैं ? इनमे जो तत्व आते हैं और नाटकीयता के निर्माण में सहायी सिद्ध होते हैं ।

कौतूहल - नाटक में तनाव केवल इस बात पर ही निर्भर नहीं करता कि क्या घटित हो रहा है, बल्कि इस बात पर भी निर्भर करता है कि क्या घटित होने जा रहा है ? विलियम आर्थर ने इस, "आकर्षण" को तनाव का " क्षणिक परस्पर संबंधी" कहा है। जब पाठक/दर्शक किसी होने जा रहे के प्रति उत्सुक होते हैं तब हाँ वहाँ घटित हो रहे के प्रति सचेत होते हैं।" (*उदरित, राइटिंग फॉर द थिएटर* 132)

दूसरे शब्दों में तनाव के बिना एकाग्रता केंदित नहीं होती। नाटककार आरंभ में ही किसी ऐसी स्थिति का निर्माण कर देता जो सबका ध्यान आकर्षित कर लेती है। जो मन में अनेक उम्मीदें पैदा कर देती है और तनाव को जन्म देती है। चरमसीमा कौतूहल का अखंड भाग है। उस दृश्य, अंक अथवा घटना का वह क्षण चरमसीमा का होता है जहां तीव्र कौतूहल पैदा होता है। यह वह स्थल है जहां दर्शक किसी भी कार्य व्यापार, कथोपकथन, मूकाभिनय या विचारों में प्रबल संवेग की अनुभूति करते हैं।

डॉ नगेन्द्र कहते है, "नाटक के कथानक में कौतूहल वृति का परितोष करने की शक्ति होनी चाहिए। इसके लिए यह आवशयक है कि घटनाएँ हमारे समक्ष अचानक ही उपस्थित हों।" (*अरस्तू का काव्यशास्त्र* 74)

कौतूहल के साथ साथ मानसिक तनाव भी बढ़ जाता है। रमेश बक्शी का मत है, "जब हमारी उत्सुकता बढ़ती है तो हम अपने लिए उसका अंत सोच लेते हैं। कल्पना और जिज्ञासा

के साथ ही हम फिर अपने कल्पित हल को अंतिम निर्णय से मिलाकर देखना चाहते हैं। इससे जिज्ञासा दुहरी हो जाती है और खिंचाव भी अधिक तीव्र हो जाता है।" (*कहानी में औतुक्य का अनुतत्व* 16)

इसलिए कौतूहल वृत्ति भी नाटकीय तनाव को बनाए रखने में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। पात्रों के साथ साथ दर्शक वर्ग को भी तनाव में जकड़ने में सहायक सिद्ध होती है ।

अलगाव बोध : अकेलेपन के अहसास का सीधा सा अर्थ है दूसरों के साथ सार्थक संबंध को खो देना है। उन सम्बन्धों में तनाव या बिखराव उत्पन्न होता है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, "अलगाव से अभिप्राय भावना तथा स्नेह संबंधों में उत्पन्न तनाव और अवसाद से है।" (*ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी* 219)

इन्साइक्लोपेडिया ब्रिटेनिका के अनुसार, "यह अलगाव एक ऐसा पारिभाषिक शब्द है जिसका दर्शन , अध्यात्मशास्त्र, मनोविज्ञान और समाजविज्ञान में भिन्न अर्थों में प्रयोग हुआ है। जिनमे व्यक्तिक सामर्थ्यहीनता, अर्थशून्यता सिद्धान्तहीनता, सांस्कृतिक अवसाद, सामाजिक कटाव और कैयक्तिक अवसाद पर बल दिया गया है।" (*इन्साइक्लोपेडिया ब्रिटेनिका* 243)

आधुनिक दौर व्यक्ति का जीवन बहुत सिमट सा गया है। हर व्यक्ति स्वयं में सिमट कर तथा बाहरी दुनिया अथवा लोगों से दूर होकर रह गया है। आज कल घरों में यह हालत आम देखने को मिल रहे हैं। किन्तु इससे भी अधिक भयंकर और त्रासदिक पड़ाव है व्यक्ति का स्वयं से भी अलग-थलग हो जाना है ।

कारेन हार्नि के अनुसार, "स्व-अलगावग्रस्त मनुष्य वही हैं, जिसके वैयक्तिक स्व का सहज प्रतिक्रियात्मक रूप बाधित, आच्छादित अथवा अभिव्यक्ति-विमुख कर दिया जाता है या हो जाता है।" (*नैरोसिस एंड ह्यूमन ग्रोथ* 160) हार्नि की मान्यता है कि स्व-अलगाव कि स्थिति तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति अपने यथार्थ-स्व से भिन्न अपना कोई "आदर्श-रूप" अपने मन में निर्मित कर लेता है। जब व्यक्ति के यथार्थ-स्व और कल्पनागत आदर्श-स्व में खाई उत्पन्न हो जाती है तो व्यक्ति स्व-अलगावग्रस्त हो जाता है क्योंकि वह अपने स्व भाव यथार्थ से दूर जा पड़ता है।"

इसलिए व्यक्ति का सभी और स्वयं के साथ गैर आलोचनात्मक होना जहां उसमें सृजनात्मक प्रतिभा जगाकर उसके जीवन में गति लाता है। वहाँ दूसरी ओर उसमें सहज

शक्तिस्रोत को सुखाकर अविश्वास, असंतोष, अशांति, उदासीनता, उत्पन्न कर उसे निष्क्रिय बनाकर जीवन ढोने के लिए भी विवश करता है।

आकस्मिकता - कौतूहल के साथ साथ आकस्मिकता भी तनाव के सृजन मे सहायक है। हालांकि कौतूहल और आकस्मिकता अन्तःसंबंधित है फिर भी आकस्मिकता पर अलग से विचार करना अपेक्षित है । इसका मतलब है स्थापित की गई स्थिति में एक नए तत्व का आकस्मिक प्रयोग ताकि स्थिति को एक निर्णायक मोड दिया जा सके । आकस्मिकता की स्थिति नाटक मे किसी नई चीज के रहस्योद्घाटन, खोज, स्थिति परिवर्तन, आकस्मिक आक्रमण, व्यवहार, पात्रों के आकस्मिक प्रवेश द्वारा उत्पन्न की जा सकती है। आकस्मिकता अभिनेताओं के साथ साथ प्रेक्षक वर्ग को भी तनाव की स्थिति में ले आती है।

कथानक मे स्थिति के पुनर्निर्माण और पहचान द्वारा आकस्मिकता की स्थिति उत्पन्न की जा सकती है। अरस्तू के अनुसार, "स्थिति- विपर्यय सेवा परिवर्तन है जिसमे व्यापार व्यंघ्य हो जाता है।" (*अरस्तू का काव्यशास्त्र* 75)

रहस्य के उदघाटन से स्थिति में परिवर्तन होता है, कथानक एक मोड लेता है। जो अनुकूल या प्रतिकूल- सुखद या दुखद कैसा भी हो सकता है। इस प्रकार कथानक के दोनों अंगों – स्थिति- पुनर्निर्माण और मान्यता में आकस्मिकता का आधार रहता है । आकस्मिकता नाटकीय तनाव को आयाम देती हुई वस्तु को एक "अंतहीन अंत" की तरफ अग्रसरित करती है।

विडम्बना- नाटकीय विडम्बना अँग्रेजी के शब्द "ड्रमैटिक आयरनी" का हिन्दी समानार्थक है। "यूनानी शब्द "इरोनिया" से व्युत्पन्न आयरनी का अर्थ है अपेक्षित भाव अथवा स्थिति से विपरीत विधि अथवा भाग्य का आकस्मिक विधान। इरोनिया का प्रयोग प्राचीन यूनानी कामदी में दीन हीन दिखाई देने वाले ईरोन नामक एक पात्र के बोलने के विशिष्ट ढंग के लिए किया जाता था। जिसके द्वारा वह "एलेजान" शोखीखोर पात्र के खोखले का अपनी नैसर्गिक चतुराई से पर्दाफाश कर देता है। अतः एक प्रकार से दिखावे और झूठेपन के भीतर छिपी वास्तविकता का नाटकीय उदघाटन था।"(*भारतीय साहित्य कोश* 82) भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्यलोचना में विडम्बना के अनेक प्रकारों का उल्लेख मिलता है, जिनमे सुकरातीय विडम्बना, शाब्दिक विडम्बना, त्रासदीय विडम्बना, नाटकीय रोमानी विडम्बना, भाग्य विडम्बना, संवाद स्तरीय विडम्बना, स्थितिगत विडम्बना, व्यक्तित्व विघटन की विडम्बना इत्यादि।

नाटकीय विडम्बना एक वैज्ञानिक एवं कलात्मक दृष्टि है, जिसके विभिन्न रंगों के प्रयोग से नाटककर अपनी नाट्य-सुष्टि में तनाव को "आंतरिक काव्य" के धरातल पर लाता है।

द्वंद – द्वंद मनुष्य के दिल और दिमाग में, दो पात्रों के बीच में, प्रेम और कर्तव्य के बीच हो सकता है। निर्णय करने तक पात्र असहनीय मानसिक तनाव को झेलता है। बाहरी द्वंद कार्य को गतिशील और प्रभावशाली बनाता है और अंदरूनी द्वंद व्यक्ति के मन की गुत्थियों का उद्घटन करता है।

व्यक्ति का मस्तिष्क ही द्वंद की उत्पत्ति का मुख्य स्रोत है। द्वंद प्रधान जीवन स्थितियाँ ही नाटकीयता के सृजन के लिए उपजाऊ भूमि प्रदान करती हैं। जेम्स ड्रेवर द्वंद की परिभाषा देते हुए कहते हैं, "opposition between contradictory impulse or wishes, as a rule producing emotional tentions, often highly disagreeable, reading according to psychoanalytic, theories to repression of one of the impulse." (अ डिक्शनरी आफ साइकोलोजी)

गणेशदत्त गौड़ इस संदर्भ में कहते, "अवचेतन मन की असामान्य कार्यविधियों से प्रेरित नाटकों मे ही आंतरिक अंतर्द्वंद और मनोग्रस्तता मिल सकती है जो कि नाटकों का प्राणतत्व कहलाती है।" (*आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन* 163)

जयदेव तनेजा लिखते है, "चरित्र-सृष्टि करते समय नाटककार की मूल समस्या वास्तव में किसी चरित्र में उसके मूल द्वंद की तलाश ही होती है।" तथा "नाटकीय चरित्र की आत्मा अथवा जीवन शक्ति है-द्वंद।"(*समसामयिक हिन्दी नाटकों में चरित्र सृष्टि* 34) महाभारत में अनेकों पात्र हैं जो अपने अपने द्वंद को लेकर साथ चलते हैं और कथानक को आगे बढ़ाते हैं। सत्यवती हो या अम्बा , द्रौपदी हो या उत्तरा सबका एक द्वंद है जिसका वहन वह करते हैं।

निर्मल सिंह लिखते हैं, "चित्र में विवरण होता है, रंग और रेखाएँ होती हैं। मूर्ति में घनत्व होता है, और नाटकीयता एक से अधिक पात्रों की चेष्टायों में, जो किसी द्वंद्ध पर आधारित होती है। जहां द्वंद्धतमकता का वहन करने वाले पात्रों की चेष्टाएँ विस्तार से चित्रित होती हैं, वहाँ नाटकीयता का रंग गहरा हो जाता है। दृश्यता और रचनाकार की अनुपस्थिति चित्रण के लिए अनिवार्य है। चित्रण में तटस्थता भी रचनात्म्क छल ही है क्योंकि तटस्थता या अनुपस्थिति के बावजूद जिन स्थितियों को जुटाया जाता है, वे रचनाकार के बोध से गहरे तौर पर जुड़ी होती हैं लेकिन इस छल की भी रचनात्मक उपयोगिता और सार्थकता होती है । नाटकीय कौशल पात्र

के अंतब्रहय को स्वचं चित्रित कर देता है, वहाँ रचनाकार को अपनी ओर से कुछ कहने की जरूरत नहीं पड़ती। पात्रों की चेष्टाएँ शब्दों की अपेक्षा बहुत कुछ प्रकट कर जाती हैं क्योंकि नाटकीय तत्व कहता नहीं, दिखा देता है। उसका लक्षण दृश्यता है, कथन नहीं। कथन में भी नाटकीयता होती है, यह अलग बात है।" (*नई कहानी और अमरकांत* 149)

अजय तिवारी का मत है, "आत्मगत या वस्तुगत द्वंद और संघर्ष नाटकीय संरचना का सबसे दृढ़ आधार होता है। दो विरोधी पक्षों के टकराव के बिना नाटकीयता रूपायित नहीं हो सकती।" (प्रगतिशील कविता के सौन्दर्य-मूल्य 199)

डॉ विश्व नाथ त्रिपाठी इस संदर्भ मे लिखते हैं, "द्वंद और संघर्ष ही नाटकीयता और व्यंग उत्पन्न करते हैं।" आगे वह लिखते है "रचना मे गति आती है द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया से। द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया का कलात्मक रूपायन नाटकीयता है। नाटकीयता का आधार द्वंद्व है। एक भी दो हो जाए, आत्मविभाजन हो जाए तब भी नाटकीयता समझिए।" (हिन्दी आलोचना 222, 223)

द्वंद के ख़त्म होते ही तनाव भी बिखर हो जाता है और इसके साथ ही नाटक समाप्त हो जाता है। नाटक को स्वरूप और गति देने वाले नाटकीय कार्य-व्यापार का मूल भी द्वंद है।

नाट्य भ्रांति - नाटकीय तनाव नाटकीय स्थितियों के बीच स्थित रहता है। नाटकीय तनाव मूल तौर पर "जो है" और "जो होगा" के बीच होता है। सूजन° के° लैंगर इसे अतीत और भविष्य के बीच का तनाव मानती है जो कार्य-व्यापारों, स्थितियों और यहाँ ताल कि चेष्टाओं, दृष्टिकोणों और स्वरों को भी विशिष्ट सघनता प्रदान करता है। इस बारे मे लिखती हैं, "This tention between past and future the theatrical present moment is what gives to act, situations and even such constituent elements as gestures and attitudes and tones, the peculiar intensity known as dramatic quality." (*फीलिंग एंड फोरम* 307)

नाट्य भ्रांति एक प्रकार से " फोरम इन सस्पेंस" है। नाट्य व्यापार के आरंभ में ही नाटककार अतीति की किसी घटना को सुनियोजित कर दर्शकों अथवा पाठकों के मन में उसके उपयुक्त परिणाम भविष्य की भ्रांति की स्थिति बनाए रखता है। नाटक मुख्य तौर पर नायक की नीति की व्यथा को प्रस्तुत करता है । नाट्य भ्रांति की योजना भी नाट्य में तनाव की उद्भावना करती है ।

काव्यात्मक भाषा - नाटक के पात्रों को महाकाव्य अथवा उपन्यास के पात्रों की तरह अधिक बोलने का मौका नहीं मिलता, क्योंकि महाकाव्य और उपन्यास सम्पूर्ण जीवन की

झांकी प्रस्तुत करता है। एक नाटक क्योंकि स्थितियों का नाटक होता है, मनःस्थितियों का नाटक होता है अतः पात्र एक प्रकार से अत्यधिक संकोचन के साथ खेलते हैं। नाटकीय प्रभाव का एक पक्ष नाटककार की उस क्षमता में, उस सावधानी पर भी निर्भर करता है जिसके द्वारा नाटककार संवाद को नाटक से संबंधित विचारवस्तु तक सीमित रखता है । जब नाटकीय स्थिति अथवा परिस्थिति भावात्मक तीव्रता से ऐसे बिन्दु पर पहुँच जाए कि कविता प्रकृतिक अभिव्यक्ति बन जाए, तब यही एक भाषा है, जिसमे मनोभावों को व्यक्त किया जा सकता है। भाव वेगमयी नाटकीय स्थितियों को कविता में ही व्यक्त किया जा सकता है। इस संबंध मे टी॰एस॰ईलियट कहते हैं, "मानव आत्मा तीव्र भावावेग में स्वयं को कविता में व्यक्त करने को आतुर हो उठती है।" (*सेलेक्टेड एससेज़* 46)

यह सत्य है कि जीवन की सामान्य स्थितियों में हम कविता में नहीं बोलते किन्तु विशेष परिस्थितियों में हम काव्यात्मक भाषा की ओर प्रवृत्त होते हैं। भावनायों की तीव्रता और मानसिक जगत की उथल पुथल की प्रभावशाली अभिव्यक्ति काव्यत्मक भाषा में ही संभव है। यूं भी कह सकते हैं कि भावावेग में लोग लयात्मक एवं बिंबात्मक भाषा का प्रयोग करते हैं । इसलिए काव्यात्मक भाषा नाटक में प्रकृतिक बन जाती है।

अरस्तू ने भी त्रासदी के भव्य वातावरण के लिए "शब्दो का छंदबद्ध विन्यास" को उपयुक्त माना है। यह भी तर्क दिया जाता रहा है कि महान नाटक को अवश्य ही काव्य- रूप ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार काव्यात्मकता समूचे नाटकीय विधान में तनाव के भाव को अच्छी तरह से व्यक्त करती है।

रहसयात्म्क्ता - नाटककार विभिन्न माध्यमों से तनाव को स्वरूप देता है। रहस्यात्मकता भी तनाव को और गहरा करने के लिए महत्वपूर्ण माध्यम है। नाटककार रहस्यमयी स्थितियों की नियोजना द्वारा तनाव की सृष्टि करता है जो जिज्ञासा को और बढ़ाती है। अतिप्रकृतिक तत्वों के माध्यम से भी रहस्यमय वातावरण की सृष्टि करता है।

सुज़ैन के लंगेर के अनुसार, "यथार्थ जीवन में इच्छाओं और आशाओं का विघात होने पर मनुष्य एक काल्पनिक संसार में उनकी क्षतिपूर्ति का यत्न करता है। ये विश्वास उसे प्राकृतिक बंधनों से उन्मुक्ति प्रदान कर उसकी कल्पना को निर्विथ का अवसर देते है।" (*फीलिंग अँड फोरम* 311)

नाटककार अतिप्राकृत तत्वों का प्रयोग नाटकीय प्रभाव को रौचक और कौतूहल्य बनाए रखने के लिए करता है। कई बार वह सपने, आशंका आदि को दोहराकर रहस्यात्मकता पैदा करता है। इसमें वह एक सूत्र को छिपाकर उसे धीरे धीरे खोलता है, जिससे तनाव धीरे धीरे बढ़ता है और किसी क्षण एक दम ठहर जाने के बाद फिर से बढ्ने लगता है। इस प्रकार रहस्य रचना के अंदर उसके अंगों में समाकर पाठकों व दर्शकों में तनाव पैदा करता है ।

व्यंग - मनुष्य और उसके परिवेश में लगातार एक संघर्ष चलता रहता है। अभिव्यक्ति के क्षेत्र में यह संघर्ष व्यंग के रूप मे व्यक्त होता है। शेरजंग गर्ग के शब्दों मे, "व्यंग की साहित्यक आधारशिला भाव और भाषा के सुदृढ स्तंभों पर खड़ी होती है। मन में उत्पन्न होने वाले ऐसे विचार, प्रवृतियाँ अथवा ख्याल को या किसी सामाजिक, व्यक्तिक दोष को पकड़ते हैं, कुछ ऐसे अभिप्राय को किसी उत्पीड़न की अभिव्यक्ति को आतुर रहते हैं, कुछ ऐसी भावनाएँ जिन्हें रचनाकार बहुत आसान किन्तु व्यंजक अर्थों में सम्प्रेक्षिक करना चाहता है, व्यंग का भाव-आधार होते हैं।" (*स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग* 96)

रचनाकार व्यंग के माध्यम से अपने वर्तमान युग की विकृतियों, विदूषताओं को उघाड़ता हुआ तनाव की सृष्टि करता है । इसके साथ कटु सत्य से व्यंग की सृष्टि घोर निराशा, पीड़ा और पराजय की मानसिक दशा में होती है। उन स्थितियों में जबकि पात्र अपना सब कुछ हार चुका होता है तब व्यंग के द्वारा ही वह अपने मानसिक तनाव को कम करता है। व्यंग में शब्द-आक्रमण की उपस्थिति आवश्यक है। इन आक्रमणों में एक सहज-भाव और एक जीवंत काव्य मूर्तमान हो उठता है। यह संघर्ष प्रधान काव्य सृष्टि ही तनाव का सृजन करती है। इस प्रकार व्यंग भी तनाव को गहन तीव्र और प्रखर करने में सहायक सिद्ध होता है।

प्रवेग और लय - रोनाल्ड पीकॉक के अनुसार, "भावावेग के क्षणों में भाषयों और विचारों को उनके तीव्रतम रूप मे प्रकट करने के लिए कविता की वाणी लयात्मक भाषा ही सर्वोत्कृष्ट माध्यम होती है।"(*द आर्ट ऑफ ड्रामा* 203)

प्रवेग और लय न केवल प्रतिबिम्बों को ही समक्ष प्रस्तुत करते है बल्कि सारे दृश्य को भी नियमित करते हैं जिसमे नाटकीय अर्थों को भी गहराई मिलती है। यह पूर्ण नाटकीय विरोधों को गहनीय अर्थ दे सकने वाले तत्व हैं। यह स्वयं भी एक प्रकार के विरोधी तत्वों पर आधारित हैं। नाटक के पूरे संघर्ष तथा विरोध को भी विशेषता प्रदान करते हैं । इस प्रकार प्रवेग और लय नाटकीय तनाव को घना अर्थ देते हैं ।

मौन और विराम - नाटकीयता को उभार कर लाने वाले साधनों में मौन की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। मौन का सर्वप्रथम नाटकीय एवं सृजनात्मक प्रयोग सैमुयल बैकेट ने किया। मंच पर मौन भी एक नाटकीय क्षण होता है। इस मौन से नाटक का दृश्य भी प्रारम्भ किया जा सकता है। संवाद रोक कर, केवल पात्रों की विशेष मुखाकृतियों, चेष्टाओं, कार्य व्यापारों द्वारा भी बहुत से अर्थ साफ किए जा सकते हैं। मौन से दर्शकों के मन में तनाव पैदा हो जाता है और साथ ही कौतूहल भी, कि अब आगे क्या होने वाला है ? नाटककार शब्दों, वाक्यों अथवा संवादों के बीच ठहराव, विराम का प्रयोग भी करता है । बैटेले कहता है, " Pauses can only occur when they are equivalent to dialogue, when their silence is more eloquent and packed with meaning than words would be."

दो संवादों के बीच मौन तनाव को रूप देने, गहरने में सहायक होता है। मोहन राकेश अपने लेख में लिखते हैं, " शब्दों के बीच की निशाब्द्ता अपने में बहुत सार्थक हो सकती है- उसका अनुपात पहले आए और बाद में आने वाले शब्दों पर निर्भर करता है। वह अपने शब्दों की यात्रा का पड़ाव है- दोनों ओर के शब्दों को जोड़ने का अंतराल।" (मोहन राकेश, रंगमंच और शब्द (लेख नेमिचन्द्र जैन , नतरंग,खंड-5, अंक 18, जनवरी-मार्च 1972,27)

मौन तनाव को गहराता है, उसका समय शब्दों में स्थापित तनाव पर आधारित होता है और दोनों संवादों को एक दूसरे से जोड़ता भी है। दो संवादों के बीच पहले बोले गए शब्दों की प्रतिध्वनि ही दर्शकों के मन में होती है और तनाव गहरा हो जाता है।

पात्रों के अंतर्द्वंध को मुखरित करने के लिए मौन की योजना की जाती है। तनाव की चरम सीमा ही मौन है। मौन दर्शकों के मन को भी आंदोलित कर तनाव को इतना गहरा देता है कि सन्नाटा ही शोर करने लगता है। संवादों में विराम की महत्ता को जे॰फरनाइल्ड ने भी स्वीकारते हुए कहा है, " एक प्रभाव के प्रति उस पूर्ण प्रभाव पर विचार कर सके, इसके लिए उसे समय मिलना चाहिए, जिससे कि वह उस पूर्ण प्रभाव पर विचार कर सके। व्यवहार में इसका तात्पर्य है कि कोई भी पंक्ति जो एक विशिष्ट प्रभाव डालना चाहती है और जो कि नाटकीय महत्व के कारण विशिष्ट दबाव की अपेक्षा करती है, को नाटकीय विराम का अनुसरण करना होगा जिससे कि वह विशेष प्रभाव प्रेक्षकों की चेतना में विलय हो जाए, का समय प सके।" (*भूपेन्द्र कलसी, उदरित, प्रसादोत्तर कालीन नाटक* 344)

अतः मानसिक उथल-पुथल और उलझे हुए मानव के अंतर मे डसने वाली पीड़ा, तनावपूर्ण स्थितियों की विकटता को दर्शाने में और दर्शक को अधिक आंदोलित करने में मौन व विराम महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संवाद - निर्मला हेमंत का मत है, "नाट्य पूर्णत: संवाद-प्रधान साहित्य विधा है जिसमे विषय वस्तु का हर पक्ष कथानक, विचार-तत्व, चरित्र, भाव-जगत, कार्य-व्यापार इत्यादि सभी कुछ संवादों के माध्यम से व्यक्त होता है।" (*आधुनिक हिन्दी नाटककारों के नाट्य सिद्धान्त* 375) अर्थात नाटक की भाववस्तु, उसकी आत्मा संवादों के रूप में ही अभिव्यक्ति होती है। नाटकीय संवाद में दृश्य-तत्व, अभिनय-तत्व और शब्द-तत्व रहते हैं। इसलिए संवाद कथोपकथन की सीमाओं का अतिक्रमण कर अनुभूति की गहराई और रंगमंचीय बोध का भी आभास करा देता है।

संवादों में द्वंदपूर्ण स्थितियाँ अर्थ को व्यापकता देती हैं तथा नाटकीय स्थितियों में क्रिया को प्रेरणा देती हैं। परिस्थितियों एवं पात्रों के द्वंद को कम से कम शब्दों में प्रक्षालित करना, जीवंत, प्रचलित एवं घिसे-पिटे शब्दों को प्रयुक्त करना मोहन राकेश आवश्यक मानते हैं । (द वर्ड एंड द प्ले – ऐसे, टाइम्स वीकली, 27 फरवरी 1972, पू°9)

द्वंदपूर्ण, विरोधपूर्ण स्थितियाँ पात्रों में शारीरिक एवं बौद्धिक तनाव उत्पन्न करती हैं। उनके भावों को अभिव्यक्ति विशिष्ट संवादों का रूप धारण करती है। संवादों में तीव्रता एवं प्रखरता आ जाती है। छोटे व चुस्त संवाद तनाव की गंभीरता को व्यंजित करते हैं। लंबे संवाद भी मानसिक तनाव, उद्वेग और क्षोभ को व्यक्त कर वस्तु में तनाव पैदा करते हैं। क्रोध, स्पर्धा या ईर्षा के कारण घात प्रत्याघात व्यंग कसते हुए संवाद औजपूर्ण शैली का रूप भी धरण कर लेते हैं। आंतरिक तनाव की तीव्रता में वे संकेतात्म्क और प्रतीकात्मक भी बन जाते हैं। इस की पुष्टि करते हुए गायकवाड का भी मत है, "बाह्य और आंतरिक संघर्ष के कारण भावों में जो तीव्रता आ जाती है, उससे संवाद भावात्मक काव्यात्मक, प्रतीकात्मक, सांकेतिक, लाक्षणिक, औजपूर्ण तथा व्यंगतमक के रूप धारण करते हैं।" (*आधुनिक हिन्दी नाटकों में संघर्षतत्व* 37)

महाभारत को पढे तो 'मतस्यगंधा और ऋषि पराशर' का जब समागम होता है, भीष्म अम्बा को हर कर ले जा रहा होता है, गांधार नरेश की पुत्री जब अपने उदर पर प्रहार करती है, पृथा अपने पुत्र कर्ण को नदी की जल धारा में बहा रही होती है, हिडिंबा भीम को लेकर हिमालय भ्रमण पर निकल जाती है, भरी सभा में राजस्वला पीड़ित द्रौपदी का चीर हरण होता

है और छोटी सी कन्या उत्तरा, रक्त में नहाए अपने स्वामी अभिमन्यु के शव से लिपटकर रोती है, इन घटनायों को जब पढ़ते हैं तो यह पाठक को स्वयं में समा लेती हैं। इसका मुख्य कारण है इनका नाटकीय वर्णन, नाटकीय संवाद है।

नाटकीय संवादों को लेकर पं॰सीताराम चतुर्वेदी का कथन है, "नाटकीय संवादों में भी पात्रों की मनोस्थिति, परिस्थिति और योग्यता के अनुसार श्रेष्ठ जनों की भाषा के विभिन्न रूपों का प्रयोग किया जाए किन्तु विभिन्न प्रकृति के पात्रों के सरोकार के अनुसार उनकी भाषा में उच्चारण दोष या अशुद्ध प्रयोग आदि का संयोजन करके पात्रों के चरित्र का स्पष्टीकरण भी कर दिया जाए। उससे नाटक में स्वाभाविकता के कारण रस आता है।" (*भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच* 28)

एस॰ टी॰ नरसिम्हाचारी कहते हैं, "संवाद नाटक का बहिर्मुखी रूप है, जिसके द्वारा कथानक की गतिशीलता तथा पात्रों के व्यक्तित्व एवं चरित्र का उन्मीलन होता है। उनमे वाक्य छोटे और चुस्त होकर जीवन की यथार्थता का आभास देने वाले होने चाहिए। नाटक की नाटकीयता जीवन की यथार्थता का विभ्रम उत्पन्न करने में है। विश्वनाथ जी के विषादान्त नाटक इन विशेषताओं के द्वारा सफल नाटकीयता के उदाहरण है। नाटक का प्रभावशाली होने के लिए नाटकीयता के साथ कला का योग आवश्यक हो जाता है। उसके लिए नाटक मे नाटकीय व्यंग्य (आइरनी), व्यंजकता और भावी सूचना आदि प्रयुक्त होती हैं।" (*सौंदर्य तत्व विमर्श* 242)

पात्रों की मानसिक उथलपुथल, अतःकरण की अछूती भावनाओं को दिखाने के लिए नाटककार स्वगत कथनों की योजना भी करता है। आंतरिक संघर्ष को दिखाने के लिए विशिष्ट संवाद शैली को प्रयोग में लाता है। यह संवाद शैली स्व कथन से भिन्न होती है। अंतर्द्वंद से ग्रस्त पात्र एकांत में स्वयं ही बोलने लगता है। उस समय अचानक उसे अज्ञात आवाज़ सुनने को मिलती है जो उसके विरोधी मन की आवाज़ होती है।

संवादों में संदिग्धता का प्रयोग भी तनाव की सृष्टि करता है। गोविद चातक के शब्दों में, "आज का नाटककार संवादों में संदिग्धता पैदा करने के लिए सत्य का जितना प्रयोग करता है, उतना ही झूठ का भी। वह प्रेक्षक को झूठ और सत्य के बीच उलझा देता है और उसी में उसे सत्य की तलाश के लिए जागरूक करता है। इस प्रकार की संदिग्धता से एक लाभ यह होता है कि संवाद में व्याख्यात्मक अनेकार्थता के सन्निवेश के साथ अर्थ के दुहरे स्तर उद्घाटित होने

लगते हैं और उसी से प्रेक्षक /पाठक के मन में प्रश्नों की शुरुआत होती है।" (*आधुनिक हिन्दी नाट्य: भाषिक और संवादीय संरचना* 31)

डॉ कृष्णदेव शर्मा का मानना है कि, "संवाद – पाश्चात्य नाट्यकला का तीसरा प्रमुख तत्व संवाद अथवा कथोपकथन है। संवादों का महत्व कथा-विकास और चरित्र-चित्रण – दोनों दृष्टियों से है। नाटक में संवाद के निम्नलिखित चार कार्य होते है :

1, कथावस्तु को अग्रसर करना

2, चरित्र चित्रण में समहायक होना

3, वातावरण की सृष्टि करना

4 लेखक के उद्देश्य की अभिव्यक्ति करना (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 313)

डॉ गोविंद त्रिगुणायत के अनुसार, "नाटकीय संवादों में दस विशेषताएँ होनी चाहिए- (1) देश पात्र और परिस्थित की अनुकूलता, (2)वाग्वैदग्ध्य (3)संक्षिप्तता, (4)त्वरा बुद्धिमूलकता, (5) सजीवता, (6)रसात्मकता और चमत्कारकता, (7) तर्क-संगतता, (8) पूर्वापर सम्बद्धता, (9) सार्थकता (10)प्रसाद गुण की संपन्नता।" (*पाश्चात्य काव्यशास्त्र* 313)

इस प्रकार नाटककार विभिन्न युक्तियों को अपनाकर संवाद के धरातल पर अनेकस्तरीय नाटकीयता व तनाव की निर्मिति करता है। इन सभी नाटकीय तत्वों का समावेश महाभारत मे देखने को मिलता है।

ऐसे ही महाभारत मे छुपी नाटकीयता के संदर्भ मे बात करते हुए डॉ एस टी नरसिंहचारी लिखते है, "हस्तिनापुर के मैदान मे क्षत्रिय कुमारों की अस्त्र-शस्त्र परीक्षा मे रंगस्थल की साजसज्जा की ओर संकेत के साथ अचानक कर्ण के प्रवेश से हलचल मच जाती है। कर्ण, अर्जुन और अन्य पात्रों के सवंदों मे स्पर्धा और संघर्ष की अभिव्यक्ति है। कर्ण के अपमान मे कथानक का विषादांत ही नहीं, उसके परिणामों की सूचना है। द्रौपदी वस्त्रापहरण प्रसंग में संवाद, कार्य और संघर्ष चरमसीमा पर पहुँचते हैं। सभा मे वयोवृद्धों एवं धर्मज्ञों का असमंजस मे मौन रहना अंतर्द्वंध का सूचक है। नाटकीय सन्निवेश आशातीत अद्भुत घटना मे समाप्त होता है। द्रौपदी के मान-संरक्षण के बावजूद कथानक तीव्र स्पर्धा और प्रतिहिंसा से भर कर कार्यक्षेत्र की भूमिका तैयार करता है। इन दोनों सन्निवेशों मे अधिक नाटकीय शिशुपाल वध है। उसमें रंगस्थल की भूमिका है, वाद-विवादग्रस्त संवाद है, आक्षेप और क्रियाशीलता में पात्रों के स्वभाव एवं चरित्र का उन्मीलन है तथा चरमसीमा के बाद विश्वरूप के अद्भुत दृश्य की

योजना है। इन तीनों सन्निवेशों मे और भी अनेक नाटकीय विशेषतायों का समावेश है। व्यास की रचना मे यह नाटकीयता न हो, ऐसी बात नहीं है।" (तेलगु साहित्य संदर्भ और समीक्षा 274)

जितनी भी मुख्य नायिकाएँ है, किसी को भी उठा कर देख लो उन सब के चरित्र में इनकी बहुतात मिलेगी। नायिकाओं का संघर्ष और उनकी नाटकीयता शकुंतला के जन्म से ही आरंभ हो जाती है। किस प्रकार वह अपने पुत्र "भरत" को बिना पिता के पालती है और फिर उसको पिता का अधिकार दिलवाने के लिए संघर्ष करती है। सारी कथा बहुत दिलचस्प है, इसी महाकथा में से एक छोटी कथा को लेकर कालिदास ने अपनी शाहकार रचना अभिज्ञान शकुंतलम को जन्म दिया था। संघर्ष का जो बीज नायिकाओं में वेदव्यास ने बो दिया था, उत्तरा ने अपने बेटे को अकेले संघर्ष करते हुए इसको पानी दिया।

इस महाकथा के आरंभ में वेदव्यास ने अपनी एक नायिका को परिचित करवाया है। वह भी अति नाटकीय ढंग से जो एक नदी नुमा औरत गंगा है। उसका गृहस्थ में प्रवेश कर बच्चों को जन्म देना, जन्म के पश्चात् अपने ही बच्चों को नदी में बहा देना, अंतिम बच्चे पर शांतनु के रोकने पर स्वयं उसको साथ लेकर, शांतनु के जीवन से चले जाना। निर्देशक तथा दर्शक को एक पार की दुनिया में प्रवेश करवा देते है। नाटकीय स्थिति वही है, जो संलग्न व्यक्ति या व्यक्तियों के भावी सुख के संबंध में प्रश्न उठाती है। यही नाटक की नाटकीयता की अनिवार्य शर्त है। संघर्ष, संक्रांति और द्वंद की स्थितियों में दर्शकों को आकृष्ट करने की विशेष क्षमता होती है। उनके अतिरिक्त भी जीवन की बहुत सारी स्थितियाँ हैं, जो देखने वालों को आकृष्ट कर सकती है, करती है। विश्व नाट्य-साहित्य में परिलक्षित वैविध्य इसका प्रमाण है। हर कथा कहानी का एक केंद्र बिंदु होता है, जिसके आधार से सारा तंत्र जुड़ा हुआ होता है। उस बिंदु को नहीं ढूंढ पाए तो पूरी कथा समझ नहीं आती। इस लिए इन नायिकाओं में छुपी नाटकीय संभावनाओं को ढूँढने के लिए पहले नाटकीयता को समझना अतिआवश्यक है।

मुख्य नायिकाओं में नाटकीय संभावनाएं

सत्यवती

सत्यवती इस विशाल महाकथा की प्रथम केंद्र बिंदु है। सत्यवती न होती तो देवव्रत कभी भी भीष्म न बनता, न कभी सत्ता के लिए भाइयों में संघर्ष होता। आदि पर्व में गंगा शांतनु के विवाह और देवव्रत के भीष्म बनने की कथा के बाद वैशम्पायन, जनमेंजय को आगे सत्यवती की कथा के बारे में बताते हुए कथा आरंभ करते हैं। यह वह पात्र है, जिससे सारी कथा का आधार बनता है। इस पात्र के आगमन से प्रस्थान तक बहुत कुछ अति नाटकीयता के साथ प्रस्तुत किया गया। जिस कारण शोध कर्ता को इस पात्र ने अपनी और आकर्षित किया। एक मतस्य कन्या से राजमाता और फिर एक वनवासी। बहुत उतार चढाव भरा है इस नायिका का। वेद व्यास उसके रूप की चर्चा करते हुए लिखते है"स ददर्श तदा कन्या दाशनां देवरूपिणीम।" राजा शांतनु नदी के तट पर घूम रहे थे, तब घूमते घूमते मल्लाहों की एक कन्या देखी, जो देवताओं के समान रूप रखती थी। वह रूप और सत्व से सम्पन्न होने के कारण "सत्यवती" नाम से प्रसिद्ध हुई। मछेरों के आश्रम में रहने वाली वह पवित्र मुस्कान वाली कन्या कुछ काल तक म्तस्यगंधा नाम से भी विख्यात रही। पिता की सेवा के लिए यमुना के जल में नाव चलाया करती थी। उसके रूप को देख कर सिद्धों के हृदय में भी उसे पाने की अभिलाषा जाग उठती थी। इसके भीतर की नाटकीय संभावनाओं को ढूंढने की कोशिश करते है, तो इसकी अंदर तक बसी सतहों में घुसते चले जाते हैं। इसके जीवन से लेकर वृद्ध अवस्था तक, जहाँ वेदव्यास इसको वनों में साधना के लिए ले जाता है। वहां तक इसका अध्ययन करेंगे।

इसकी ओर आकर्षित करने वाला जो सबसे पहला नाटकीय तत्व है वह इसके जन्म की घटना है। जो बहुत अद्‌भुत और नाटकीय तत्वों से भरपूर है। इसका जन्म पुरुष के औरस द्वारा एक मछ्ली के गर्भ से हुआ। इसके बारे में पता चलते ही बहुत से ख्याल आते हैं और मन में एक लहर सी उठती है। अच्छा यह कैसे हुआ ? क्या कोई व्यक्ति इस तरह जन्म ले सकता है ? यह नाटकीयता भरी घटना का वह भंवर है, जिसमें से निकले बिना आगे बढ़ ही नहीं सकते। वेदव्यास ने इस घटना को आगे जा के निर्णायक सिद्ध किया है। इस सबको अगर मंच पर या पर्दे पर दिखाना हो तो कैसे दिखाया जाए, यह रंगकर्मी और निर्देशक के लिए चुनौती पूर्ण कार्य है।

अब सारी घटना को जानते है और चर्चा करते हैं, सत्यवती के माता पिता कौन थे ? वह मछली कौन थी और किसने इसको बचाया। महाभारत के आदि पर्व में सत्यवती के जन्म की घटना इस प्रकार आती है। छेदिराज़ वसु आकाश में रहते थे, जिन्हे राजा उपरिचर भी कहा जाता था। उसकी पत्नी का नाम गिरिका था। एक बार शिकार करने के लिए वसु जंगल में गए जहां उद्दीपन सामाग्री पाकर वह कामाग्नि से संतप्त हो गए। फलत: उसका वीर्य स्खलित हो गया। राजा ने अपने वीर्य को व्यर्थ होने से बचाने के लिए उसे पुत्र उत्पत्ति कारक मंत्रों से अभिमंत्रित कर श्येन पक्षी के द्वारा अपनी पत्नी गिरिका के पास भेजा। सुनने में कुछ अजीब सा लगे पर यह बात सत्य है कि एक बार तो सोचने पर मजबूर करती है। एक पक्षी द्वारा वीर्य को भेजना। इस नाटकीयता में आगे वह एक और मोड़ लाता है। जब वह पक्षी उस वीर्य को लेकर जा रहा होता है, तब उसका सामना दूसरे पक्षी से हो जाता है, वह दोनों आपस में लड़ने लगते हैं। इसी बीच वह पात्र नीचे बह रही जमुना नदी में गिर जाता है। दूसरा झटका फिर दर्शक/पाठक वर्ग के मन में पैदा होता है, अब क्या होगा ? वह पात्र जिसमें वीर्य था, वह तो नदी में बह गया है। अब रानी क्या करेगी ? क्या राजा निसंतान ही रहेगा ? जहाँ बात बुद्धि से परे हो जाती है, वहां से रचनाकार की कलम शुरू होती है, अच्छे रचनाकार की यही पहचान होती है।

डॉ नामवर सिंह के अनुसार, "कल्पना के संसार में इस दुनिया के कायदे-कानून लागू नहीं होते, दुनिया के नियमों को तोड़ने के लिए लेखक अपनी दुनिया को दूसरे नियमों से बनाता है, फिर भी वह हमारी अतिपरिचित दुनिया से अधिक वास्तविक होती है, जबकि अभ्यासवास अतिपरिचित को ही वास्तविक मानकर चलते हैं। अंतर्दर्शी लेखक असली दुनिया को सहसा देखकर हमारे सामने उद्घाटित कर देता है, जिसे अपरिचय और अनभ्यासवास 'फेंटस्टिक' कह उठते हैं"।

यह आकस्मिक बोध ही कल्पना को जन्म देता है। वेदव्यास किसी और घटना को साथ जोड़ने वाला था जिसकी कल्पना हमारी बुद्धि में भी नहीं थी। सत्यवती के पात्र आगमन के लिए यह बेहद आवश्यक था। जब वह पात्र नदी में गिर जाता है तो उस वीर्य को नदी में रह रही एक मछली निगल लेती है। एक से एक मोड़ों पर गिरते और संभालते हुए वेदव्यास नाटकीयता की धार से एक नायिका के निर्माण में लगे हुए थे, जिसके साक्षी उसके पाठक बन रहे हैं। एक और कथा उस मछ्ली में छिपी पड़ी है। वह मछली असल में अद्रिका नाम की अप्सरा थी, जो भगवान ब्रह्मा के शाप के कारण इस रूप में थी। वीर्य निगलने से उस के पेट में दो शिशु उत्पन्न

होते है एक लड़का और एक लड़की। मछली के पेट में मानवीय शिशुयों का जन्म....? यह बात और भी झकोरती है। यही तो वह सुन्दरता और नाटकीयता है जो इस कहानी में रोचकता का प्रवाह बनाए रखती है। बाँध के रखती है कि अब आगे क्या होगा ? उनका जन्म कैसे होगा ? क्या वह भी नदी में ही रहेंगे ? उसी क्षण वेदव्यास अचानक प्रहार करते हैं। वह मछली निषादराज के हाथ में आ जाती है। उस मोटी ताज़ी और बड़ी मछली को देख कर उसका मन खुश हो जाता है। जब उसको चीर के देखता है, तो उसमें से एक बालक और बालिका निकलती है। संयोगवश वह उनको उसी राजा के पास लेकर जाता है। वह उसको बताता है कि यह दो शिशु उसे मछली के पेट से मिले है। तब राजा सारी बात सुनने के बाद वह भी अचंभित होता है।

सा कन्या दुहिता तस्या मत्स्या म्तस्यगंधिनी ।

राज्ञा दत्ता च दासाय कन्येयं ते भवतिवति || (*महाभारत* आदिपर्वणि 176)

अर्थात- मछेरो की बात सुन कर उन दोनों में से जो बालक पुरुष था राजा ने स्वयं ग्रहण कर लिया, वही मतस्य नामक धर्मात्मा एवं सत्यप्रतिज्ञ राजा हुआ। उन जुड़वा संतानों में जो कन्या थी, मछ्ली की कन्या होने के कारण उसके तन से मछ्ली की गंध आती थी। राजा ने उसे मल्लाह को सौंप दिया और कहा, यह तेरी पुत्री होकर रहे।

राजा उस लड़के को अपने पास रख लेता है और उस निसंतान निषादराज को भी वह लड़की उपहार के रूप में दे देता है। एक कड़ी उसके जीवन के रंगों में जुड़ जाती है जिसमें संघर्ष छिपा है। वो कन्या जिसको राज महल में पलना और बड़ा होना था, मखमली गद्दों पर जिसने अपने यौवन में प्रवेश करना था। वह अपना जीवन नदी के किनारे काष्ट के आसन पर बिताएगी। इस पूरी घटना में नाटकीयता कूट कूट के भरी पड़ी है। किस तरह से उसका जन्म हुआ और किस तरह वह निषादराज के आंगन में खिल रही है। जिस पात्र का आरंभ ही इतना नाटकीय है उसका अंत कैसे होगा ? एक मछली के पेट में से जन्म लेने के कारण उसके तन में से मछली की गंध आती थी। दूसरी बात यह कि वह मछली एक अप्सरा थी, गंध के साथ उसका रूप गुण भी उसमें आ गया। इस कारण अत्यधिक रूपवती कन्या, मतस्यकन्या भी कहलाई।

बाल्यकाल में ही वह अपने पिता के साथ धर्मार्थ के लिए नौका चलाने और मछलियाँ पकड़ने जाती थी। जब अपने यौवन काल में प्रवेश करती है, उसकी सुंदरता के साथ-साथ

उसका दूसरा गुण यानि गंध भी बढ़ती जाती है। उसके रूप का तेज इतना था कि हर कोई देखता रह जाता, कोई राजा हो या रंक या फिर कोई साधु। यौवन जिस तरह चढ़ता गया उसका रूप और गंध दोनों ही उसके लिए समस्या बनते गए। निषादराज भी इसी चिंता में लगा रहता इसकी शादी किस से करूँगा ? इसके रूप पर सब सम्मोहित होते थे, पर इसकी गंध के कारण दूर भाग जाते थे। अजीब से चक्र में सत्यवती, उसका पिता और दर्शक/पाठक वर्ग खड़ा था। कोई अचानक चमत्कार हो और वह इनसे बाहर आ जाए। एक जवान लड़की जिसके तन से गंध आती हो उसकी मनो दशा क्या होगी ? उसका भविष्य क्या होगा ? सब कुछ वेदव्यास की कलम में कहीं दबा पड़ा था। रोचक बात है इसी पड़ाव में आगे इस महाकाव्य के रचनाकर वेदव्यास का जन्म भी उसी "मतस्य कन्या" के गर्भ से अति नाटकीय ढंग से होगा।

सबको रंगमंच के रंगों में रंगने वाला वेदव्यास, भला स्वयं के जीवन और पालन को कैसे एक सीधी रेखा की तरह खींच सकता है। अगर वह ऐसा करता तो बाकी पात्र उसकी कलम के आगे पन्नों पर सत्याग्रह कर देते और कथा आगे ही न बढ़ पाती। उसने ऐसे नहीं किया, और कथा की पतंग को एक झटका नीचे की तरफ देते हुए, उसे आसमन की गोद में और ऊँचा ले गया।

कथा आगे बढ़ती है। जहां वह अपने पिता के साथ धर्मार्थ के लिए यमुना के तट पर नाव चलाया करती थी। एक दिन महा ऋषि पाराशर उसकी नाव पर बैठ जाते है। वह उसकी मुस्कान और रूप दोनों को देख कर मोहित हो जाते है। उसको अपने साथ समागम करने के लिए कहते हैं। नाटकीयता का शिखर जो उसके जीवन में बहुत बड़ी तबदीली लाने वाला है, वह उसकी शर्तो में बसा हुआ था। उसने उनके सामने अपनी शर्तें रखीं जो बहुत ही रोचक सी हैं। पहली शर्त, नदी के दोनों ओर तट पर बहुत से ऋषि खड़े हैं, जो उनको देख रहे हैं, जब भी उनका मिलन हो तब उनके इस मिलन को कोई भी देख न सके। दूसरी शर्त, वह अपने पिता की इज्जत का बहुत ख्याल रखती है, इसलिए यदि उसका कौमार्य भंग हो गया तो वह कैसे अपने पिता के घर जाएगी। इसलिए उसका कौमार्य भंग ना हो उसको कोई क्षति ना हो क्योकि उस युग में तो ब्रह्मचर्य को बहुत बड़ा दर्जा हासिल था। तीसरी शर्त, उस से उत्पन्न होने वाली संतान गुणी और विद्वान हो (यहाँ इस शर्त में सत्यवती की विद्वता देखने को मिलती है) वह जानती है स्वतंत्रा से इसका पालन नहीं कर सकती। रोचक और रोमांच से भरपूर घटना आगे होती है कि उसकी तीनो शर्तो मान ली जाती है। यहाँ आगमन होता है, एक आलौकिकता के

लेप में नाटकीयता का, नदी के उस छोटे से द्वीप पर घना कोहरा छा जाता है, जिसके अन्दर बाहर कोई किसी को नहीं देख सकता, यही स्थान उनके मिलन का तय होता है। सहवास के बाद पुत्र को जन्म देने के पश्चात वह अपने कौमार्य को दोबारा प्राप्त कर लेती है, हैं न एक अद्भुत नाटकीय घटना। इसके पीछे धार्मिक तथ्य है या वैज्ञानिक या कोरी कपोल कल्पना, यह सबकी निजी बुद्धि पर है, वह इस सारे घटना क्रम को कैसे देखता है। वही उसकी संतान भविष्य में इस ग्रन्थ के रचनाकार वेदव्यास बन के उपस्थित होती

जैसे छोटी छोटी दिखने वाली मात्राएँ शब्दों के साथ जुड़ कर उनको एक रचना बनाते हैं, अर्थ देते हैं, इसी तरह यह छोटी छोटी घटनाएं किसी रचना और प्रस्तुति को अजर अमर बनाती है। महर्षि पराशर उसकी बुद्धि और ज्ञानता से अधिक प्रसन्न होते है। वह अपने वरदान से उसके तन से आने वाली दुर्गन्ध को एक दिव्य सी सुगंध में बदल देते हैं। जिस कारण वह अधिक अकर्शिता बन जाती है। सोचने वाली बात फिर आती है, यह कैसे कर दिया ? यह पात्र मात्र एक नारी पात्र नहीं था। यह तो इस कथा की नीवं थी, जिसने अपने कंधों पर हस्तिनापुर का भार संभालना था।

एचमुक्ता वरं व्ब्रे गात्रसौगन्धमुत्तमम।

स चास्ये भगवान प्रदानमन्सकाद्वित: भुवि॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 176)

अर्थात- महाऋषि के ऐसा कहने पर सत्यवती ने अपने शरीर में उत्तम सुगन्ध होने का वरदान मांगा। भगवान पराशर ने इस भूतल पर उसे वह मनचाहा वरदान दे दिया। उसके तन से आने वाली दिव्य गंध एक योजन तक लोग महसूस कर सकते थे। इसी कारण उसका दूसरा नाम योजनगंधा भी हो गया था।

उसके तन से आती दिव्य सी सुगंध ने उसके रूप को अधिक अमूल्य बना दिया था। वह अपने यौवन काल के में शिखर में अकेली आ पहुंची थी। उसका पुत्र अपने पिता की भाँति उसको वचन देकर चला गया "जब भी भविष्य में उसकी जरुरत उसको पड़ेगी तो वह उपस्थित हो जायगा"। होगा कैसे ? क्या वह उसको बता के जायगा की वह कहाँ रहता है ? वह उसको बुलाएगी कैसे ? क्या उस युग में भी वर्तमान युग की भाँति इंटरनेट और मोबाइल फ़ोन की भाँति संपर्क का कोई साधन था ? इन्ही सब कारणों ने ही शोध करता को इन सबको ढूंढने पर मजबूर किया है। जिन के कंधों पर आज तक रंगमंच की धरती पर महाभारत रुपी सभ्यता जीवित है।

सुंदर काया और पावन अलोकिक गंध से परिपूर्ण सत्यवती रूपवती सुन्दरी बन गई थी। जिसके सौन्दर्य, माधुर्य और सुगंध के आगे सभी स्तब्ध हो जाते थे। उसकी खुशबु ठीक उसी तरह सारे वातावर्ण में फैल जाती थी, जैसे किसी पुष्प की सुगंध पूरी पुष्प वाटिका को आनंदमय बना देती है। सत्यवती एक दिन यमुना के तट पर नौका चला रही थी और सारा वातावरण मधुर सी सुगंध से भरा हुआ था। उसी समय राजश्री शांतनु उसी वन में से गुजर रहे थे। उनकी नासिका तक जब यह सुगंध पढ़ी, वह इसकी तलाश में यमुना तट पर आ पहुंचे जहाँ सत्यवती खड़ी थी। हस्तिनापुर का महाराज शांतनु उसके रूप पर मोहित होकर रह जाता है। वेदव्यास ने एक नाटकीय ढंग से उस समय की विश्व शक्ति के मालिक को एक मच्छवारे की लड़की के प्रेम में बाँध दिया। एक तरफ साधारण मच्छवारे की कन्या और दूसरी ओर राजा भरत के वंशज, राजा का प्रेम सब को सोचने पर मजबूर कर देता है लगता है, जैसे की बस अब कहानी यहाँ ख़त्म ! नहीं पर अभी तो शुरुआत है। फिर एक तीव्र झटका इस प्रवाह को आगे लेकर बढ़ चलता है। राजा शांतनु उससे विवाह सूत्र में बंधने की इच्छा जताता है। आगे से सत्यवती कहती है, उसके पिता निषादराज से जा के बात करले और वह उसकी बात मान कर उसके पास चला भी जाता है। यहाँ उसका पिता, राजा शांतनु के समक्ष बड़ी ही चालाकी से कुछ शर्ते रख देता है कि

अस्या जायेत य: पुत्र: स राजा पृथिवीपते ।

त्वदूध्वर्मभिषेक्त्व्यो नान्य: कश्न्न पार्थिव ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 308)

अर्थात : निषाद बोला, इसके गर्भ से जो भी पुत्र पैदा होगा,आपके बाद उसी का राजा के पद पर अभिषेक किया जाए, अन्य किसी राज कुमार का नहीं। सत्यवती की संतान भारत वर्ष की राज सत्ता को संभालती हुई हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठेगी।

जिस राजा के आगे पूरा विश्व मस्तिष्क झुकाता हो, जिसने अपनी पहली पत्नी के प्रस्थान के बाद 36 वर्ष तक पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन किया हो ! क्या वह अब एक निषाद कन्या के सामने अपना तपोबल सब हार जायगा ? यही संघर्ष है जो नाटकीयता का औरस है। वह बिना कुछ बोले राज भवन में वापिस आ जाते है। उसका रूप और उसकी गंध जो उसके मन की दीवारों पर किसी शिलालेख की तरह अंकित हो चुकी थी उसको मिटा न सका। उसने स्वयं को सिर्फ अपने विश्राम कक्ष तक सीमित कर लिया और सूर्य की रौशनी को तन पर न पड़ने दिया।

इस घटना का कारण जब उसके बेटे देवव्रत ने शांतनु के हितेशी बूढ़े मंत्री से जाना, उसके बाद।

ततो देवव्रतो वृद्धे: क्षत्रिये: सहितस्त्दा ।

अभिगम्य दाशराजं कन्या वव्रे पितु: स्वयम ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 310)

अर्थात: शांतनु के पुत्र देवव्रत ने अपने मंत्रियों के साथ निषाद राज के पास जाकर अपने पिता के लिए उसकी कन्या मांगी।

कथा के वट वृक्ष रुपी पात्र भीष्म का जन्म इस घटना के माध्यम से होने वाला था। भविष्य में होने वाला महासंग्राम जिसने द्वापरयुग को इसके अंत तक लेकर जाना था, उसके बीज को यहाँ सत्यवती बोने वाली थी। बस सब इसी ताक में थे, अब क्या होगा ? क्या सत्यवती शांतनु की होगी ? या उन सबका वध होगा ? जिन्होंने उसके पिता को किसी शर्तों में बाँधने की कोशिश की थी, जिसके सामने किसी की सांस नहीं निकलती थी। देवव्रत को क्या पता था, यह सफ़र उसके जीवन में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण मोड़ लेकर आने वाला है। निषाद राज ने जब वही शर्ते देवव्रत को बताई, कि सत्यवती की संतान ही हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठेगी, तो देवव्रत इसके लिए हां भर देते हैं। निषादराज अपने मन से एक और दागता हुआ प्रश्न उसके सामने खड़ा कर देते है "अगर भविष्य में तुम्हारी संतान अपना हक़ सिंहासन पर जताने लगे तो ?" उस मछवारों की बस्ती में फिर शून्य छा जाता है। अब क्या होगा ? जिन योद्धायों के साथ वह आया है, वह इस बस्ती को खत्म कर देंगे ? यही वेदव्यास की विशेषता है, वह एक नन्ही सी चिड़िया को विशाल गरुड़ से लडवा देता है सिर्फ लड़वाता ही नहीं बल्कि उस पर विजय भी देता है। लोक कला कोई भी हो, उसमें हर काम बहुर बारीकी और कुशलता से किया जाता है। सत्यवती के जीवन में ऐसे बहुत से कारण है, जिनमें नाटकीय संभावनाए कूट कूट के भरी पड़ी है। देवव्रत उसकी इस शर्त को अपने शिरोधर कर लेते हैं, सभी स्तब्ध रह जाते है यह क्या हो गया ? भीष्म उसकी बात सुन कर कहते हैं

अद्यप्रभृति में दाश ब्रह्मचर्ये भविष्यति ।

अपुत्रस्यापि में लोका भविष्यन्त्यक्षया दिवि॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 312)

अर्थात : हे निषादराज ! आज से मेरा आजीवन अखंड ब्रह्मचर्य व्रत चलता रहेगा, मेरे पुत्र न होने पर भी स्वर्ग में मुझे अक्षय लोक प्राप्त होंगे। मैंने जन्म से लेकर अब तक कोई झूठ बात नहीं कही है। जब तक मेरे शरीर में प्राण रहेंगे, तब तक मैं संतान नहीं उत्पन्न करूंगा। तुम पिता जी

के लिए अपनी कन्या दे दो। मैं राज्य तथा मैथुन का सर्वथा परित्याग करूंगा और नैष्ठिक ब्रह्मचारी होकर रहूँगा, यह मैं तुमसे सत्य कहता हूँ।

हमारी कथाओं में कितनी जगह नाटकीय तत्त्व है जिन्हें ढूँढना पड़ता है। महाभारत में जिक्र आता है, महाराज शांतनु के तप कारण उनके पास शक्ति थी, यदि वह किसी बजुर्ग को छू देते तो उसके सारे कष्ट दूर हो जाते थे, वह फिर से युवा अवस्था में आ जाता। यह एक बहुत ही नाटकीय शक्ति है। जब उनको अपने पुत्र की इस प्रतिज्ञा का पता चलता है, तब वह उसके इस त्याग से प्रसन्न होकर उसको वरदान देते हैं, जिस प्रकार गंगा ने तुझे अपनी पावनता दी है और भगवान परशुराम ने अपना बल दिया है, दैत्य गुरु शुक्रचार्य और देव गुरु ब्रहस्पति ने जो अपना ज्ञान तुम्हे दिया है। उसमें बढ़ोतरी करते हुए मैं तुम्हें चिरंकाल जीवित रहने का वरदान देता हूँ, मौत भी तुम्हें तुम्हारी मर्जी के बिना छू नहीं सकती। यह सुन के सबकी आँखें खड़ी रह जाती हैं। ऐसे कैसे हो सकता है ? क्या यह युगों तक जीवित रहेगा ? ऐसा तो सतयुग में भी नहीं हुआ ? सब हो सकता है क्योंकि यह महाभारत है।

कहीं न कहीं सत्यवती के मन के किसी कोने में मलाल तो होगा कि उसका भाई राज महल में पला बढ़ा और वह..... आज वह उस सिंहासन की महारानी बन गई थी, जिसके ध्वज के तले सब के ध्वज आ जाते हैं। महारानी सत्यवती के रूप में उसका नया दूसरा पड़ाव शुरू होता है। जिसने बिना लडे एक महाराजा को परास्त कर दिया था। अपराजय महाबलशाली योद्धा उसके सिंहासन के खूंटे से रक्षा के लिए बंध गया था। यही तत्व रौचकता और नाटकीयता पैदा करते हैं।

रचनाकार की कलम में वो ताकत होती है, वो वह कर जाती है, जो ब्रह्मा की कलम भी नहीं कर पाती। किसी को समंदर पर चलने लगा देता है, तो किसी को पहाड़ों में तैरने। वास्तव में संभव न लगे पर रंगमच के सौर मंडल में सब संभव है। एक मतस्य कन्या जो कभी पहले राज घराने में न पली बड़ी न कोई अनुभव, फिर भी वह लम्बे अन्तराल तक महारानी रही। उसमें यह अनुभव कहाँ से आया ? इस बात ने शोधकर्ता को सोचने पर मजबूर किया। पूर्व में इसके जन्म की जो घटना का जिक्र किया था, उसको फिर एक बार मन के रुपहले पर्दे पर दोबारा दोहराएँ तो फल स्वरूप पता चलेगा, असल में वह एक राजा सुन्ध्वा की संतान है जिसके वीर्य से उसका जन्म एक मछली के पेट से हुआ और वह मछली अद्रिका नाम की एक अप्सरा थी, जो भगवान ब्रह्मा के शाप के कारण मछली बनी हुई थी। राज सत्ता को चलाने का

गुण उसके रक्त में ही था, जिसको वह पहले धर्म पिता के घर उसका अभ्यास करती आई थी। अब वह अपने पति के घर में वास्तविक रूप में पालन कर रही थी।

विपत्तियों और सत्यवती का चोली दामन का साथ था। दो पुत्रों का सुख तो अवश्य प्राप्त हुआ, पर पति का साथ और सुख अधिक समय तक न मिला। कुछ समय पश्चात् शांतनु काल का ग्रास बन गया और फिर वह अकेली रह गई। जिसके कंधों पर दो पुत्रों और विश्व गुरु कहे जाने वाले भारत की सत्ता का भार आ गया। सत्यवती उस चौराहे पर खड़ी हो गई, जहाँ उसे इस कथा को आगे बढ़ाना था, अपना अस्तित्व सिद्ध करना था, कि वह एक महारानी है।

सत्यवती के साहस के बारे में नरेंद्र कोहली लिखते है, "जिस स्त्री के पति तथा दो पुत्रो की मृत्यु हो चुकी हो, उसका यह व्यवहार सिद्ध करता है कि अपने पति तथा पुत्रों की मृत्यु से वह टूटी नहीं, असहाय नहीं हुई, वरन उनकी सत्ता पाकर अधिक सक्षम, कठोर तथा कभी कभी क्रूर भी हो गई। इसमें वह सफल होगी या असफल यह भविष्य के गर्भ में था। यही गुण है जो किसी पात्र को कुंदन बना देते है, कथा को और गहरा बना देते हैं। यही नाटकीयता है जो लेखन कार्य को और समृद्ध बनाती है।" (*आनुषांगिक- महासमर* 28)

पहले पति का काल का ग्रास बन जाना, फिर बड़े पुत्र का अपने नाम के एक गंधर्व राजा से युद्ध करते हुए मर जाना, उसको तोड़ गया था। उसका दूसरा पुत्र विचित्रवीर्य शारीरक तौर पर इतना कुशल नहीं था कि उसको कोई अपनी पुत्री दे। उसके लिए भीष्म अपने बल से अम्बा-अंबिका और अंबालिका हर लाते हैं। उसका विवाह अंबिका और अंबालिका से होता है। लेकिन भाग्य अभी भी उसको विपत्तियों से छुटकारा नहीं देने वाला था। कथा और सत्यवती के चरित्र में ऐसा मोड आता है जो सत्यवती और दर्शकों को नाटकीय अंधकार में ले जाता है, जहां से आगे कहाँ जाना है किसी को नहीं पता।

ताभ्या सह समा: सप्त विहरन पृथिवीपति: ।

विचित्रवीर्यस्तरुणो यक्ष्मणा समगृहंत ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 318)

अर्थात : राजा विचित्रवीर्य ने अपनी दोनों पत्नियों के साथ सात वर्षों तक निरंतर विहार किया, अत: उस असंयम के परिणाम स्वरूप वह युवावस्था में ही राज्यक्षमा के शिकार हो गए।

सत्यवती के छोटे पुत्र का विवाह के पश्चात् बिना किसी संतान की उत्पत्ति किए बिना मर जाना उसको संपूर्ण तौर पर दिव्यांग सा कर गया था। जिस सिंहासन के लिए उसने यह सब किया। वह सपना उसकी आँखों के सामने टूट गया था। गंगा पुत्र भीष्म भी अपने ब्रह्मचर्य

जीवन तथा राज सेवा के वचन में बंधे थे। ऐसे में सत्यवती का पहले देवव्रत से वचन लेकर राज विहीन करना और फिर इस संकट की घडी में अगर वह उसे राज्य और गृहस्थ में प्रवेश करने को कहती तो सत्यवती का चरित्र बिल्कुल फीका तथा कमजोर और हास्यप्रद बन जाता। ऐसी स्थिति से उभरना तथा भारत जैसी विशाल राज्य सत्ता को संभालना एक मतस्य कन्या का काम तो कदापि नहीं हो सकता। वह अन्दर से भले टूटी थी बाहर से नहीं। यह बहुत बड़ा नाटकीय मोड़ है जहां दर्शक सोचने को मजबूर हो जाते है। क्या भारत अब यहीं समाप्त हो जायगा ? क्या भीष्म अपना वचन तोड़ेगा ? यह नाटकीयता की चरम सीमा है।

प्रतिभा बसु लिखती हैं, "पति की मृत्यु से सत्यवती अत्यंत कातर हो गई थी, ऐसा नहीं लगता। महाभारत के नियमानुसार किसी सुदीर्घ विलाप से पूर्ण कोई शोकचित्र सत्यवती आचरण में नहीं दिखाया गया है। यहाँ तक की दो पुत्रों को खोकर उनका मातृ हृदय विदीर्ण हो गया था, ऐसा चित्र भी रचयिता वेदव्यास ने हमारे सामने नहीं रखा। वह जिस कारण से विचलित हुई, वह है अपने वंश की रक्षा। दो पुत्रों में एक तो विवाह पूर्व ही मारा गया। छोटा पुत्र दो रानियों का पति होकर भी किसी के गर्भ में कोई बीज वपन न कर सका।" (*महाभारत के महारण्य में* 23)

उसके राज्य काल के दौरान काशिराज की पुत्रियों को स्वयंवर से हस्तिनापुर लाने का आदेश भीष्म को देना और फिर उन्हें बलपूर्वक रखना। अम्बा से द्वंद्ध, उसके जीवन में चल रहे भूकंप को तीव्रता प्रदान करते रहते है। उसके दोनों बेटे निसंतान काल का ग्रास बन जाते हैं तो अब वह क्या करे ? क्या वह भीष्म को विवाह की आज्ञा देगी उस प्रतिज्ञा को तोड़ के जिसने उसको देवव्रत से भीष्म बनाया था ? या भीष्म नियोग प्रथा का सहारा लेकर सत्यवती को उत्तराधिकारी देगा ?

भीष्म स्पष्ट मना कर देता है कि न तो वह अपनी प्रतिज्ञा तोड़ेगा और ना ही नियोग प्रथा का पालन करेगा। द्वंध में फंसी सत्यवती अपने ब्राह्मण पुत्र वेदव्यास को स्मरण करती है। इस कथा में अनेक स्थानों पर जहां ऐसा लगता है कहानी किसी मोड पर फंस सी गई है, उसे राह नहीं मिल रहा, वहाँ वेदव्यास स्वयं हस्तक्षेप करते है। खुद कथा को आगे बढ़ाते है। सत्यवती उसे आज्ञा देती है, नियोग प्रथा का पालन करके वह उसे उत्तराधिकारी दे। वेद व्यास अपनी माँ की आज्ञा का पालन करता है। साथ-साथ वह यह भी बता देता है कि उसके एक पुत्र अँधा होगा, दूसरा पुत्र शरीरक तौर पर कमजोर रहेगा और तीसरा पुत्र अति विद्वान होगा। पहले दो

पुत्र अंबिका और अंबालिका के गर्भ से करवाए हैं वहीं तीसरा पुत्र उनकी एक दासी के गर्भ से, एक दासी को उच्च स्थान और उसके पुत्र को राज परिवार का सदस्य बना कर अपनी कथा से गहन संदेश देने की कोशिश की है। दासी पुत्र को राज्य परिवार का हिस्सा बना देना यह सब सत्यवती के चरित्र को बड़ी सरलता और मजबूत तरीके से आगे बढ़ाता है। धृतराष्ट, पांडू और विदुर के रूप में वह अपने सिंहासन के लिए उत्तराधिकारी पा लेती हैं। एक पुत्र अँधा, एक शरीरक रूप से कमजोर और तीसरा दासी पुत्र होने के कारण सिंहासन पर बैठने के योग्य नहीं है। यह सब भी उसको नहीं तोड़ पाते, वह समय के प्रहार को अपने जज्बे की ढाल से रोकती रहती है। पहले पति, फिर दो पुत्रों और फिर अपने पौत्र की मृत्यु के बाद वह थोड़ी सी कमजोर भी पड़ती है क्योंकि अब वह वृद्ध हो गई है। उसके प्रशिक्षण और तजुर्बे की छत्रछाया के नीचे अब भी सब कुछ ठीक चल रहा है। उसकी रक्षा के लिए स्वयं गंगा नंदन भीष्म भी तो हैं। अपने हक़ के लिए लड़ना और मन से लड़ना बिना विश्वास खोए और कंधों को झुकाए। हस्तिनापुर और महाभारत की जड़ों को उसने अपने खून से सींचा था, जिसको कभी भूला नहीं जा सकता।

उसको नहीं पता था कि उसके पुत्र और पौत्र किस भयंकर स्थिति में चले जाएंगे, जिस राज्य का सपना उसने देखा था, उसकी नीव उसकी आँखों के सामने ही कमजोर पड़ने लग गई थी। एक दिन उसके पुत्र वेदव्यास उसके राज भवन में आते हैं और उसको कहते हैं " माँ अब ऐसा भयंकर समय आएगा, जिसमें सब ओर छल-कपट और माया का बोल बाला होगा। संसार में अनेक प्रकार के दोष प्रकट होंगे और धर्म कर्म तथा सदाचार का लोप हो जाएगा। अति नाटकीय शब्दों से अपनी माता को संबोधित होते है।

करुणामनयाश्चापी पृथिवी न भविष्यति।

गच्छ त्वं योगमास्थाय युक्ता वस तपोवने॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 380)

अर्थात: दुर्योधन आदि कौरवों के अन्याय से सारी पृथ्वी वीरों से शून्य हो जायगी। अत: तुम योग का आश्रय लेकर यहाँ से चली जाओ और योगपरायण हो तपो वन में निवास करो।

सत्यवती को बहुत बड़ा झटका लगता है, जो उसको अंदर तक हिला कर रख देता है। आगे वह सत्यवती को कहते हैं कि तुम अपनी आँखों से इस कुल का भयंकर संहार न देखो। इसके बाद वह अपनी दोनों पुत्र वधुओं अंबिका और अंबलिका के साथ सब कुछ त्याग कर वेद व्यास के साथ वनो में निकाल जाती।

इस घटना को केन्द्रित कर शोभा निगम लिखती है, "दोनों ने मानो कुंती और गांधारी के लिए राह दिखाई कि ऐसे ही एक साथ अंतिम समय में तुम भी जाना..... राजधर्म बहुत कठोर होता है किन्तु स्त्री मन को कोमल और द्वेषहीन होना चाहिए..... और सचमुच आगे ऐसा ही हुआ था।" (*व्यास कथा* 48)

महाराज पांडू की ऋषि किन्दम के शाप से हुई मृत्यु के बाद वेदव्यास उसको आदिपर्व के मध्य में बड़ी चतुरता से वन में भेज के उसका अध्याय ख़त्म कर देते हैं। वैसे ही जैसे सावन के आने के पश्चात पुराने पत्तों को अपना स्थान छोड़ना पड़ता है। इसका मतलब यह नहीं उनका कोई योगदान नहीं। वह भी पूर्व वर्ष के सावन के साक्षात्कार है। कब युवा कंधों पर सारा बोझ डाल के चुपके से वनों में साधना और देह त्याग के लिए ले जाना, यह सब ही तो नाटकीयता की चरम सीमा बिंदु है।

जिस प्रकार एक पेड़ की लकड़ी जितनी मजबूत होगी, उसके द्वारा बनाए गई वस्तुएं उतनी ही मजबूती से अधिक देर तक चलेंगी। उसी प्रकार महाभारत है, इतने वर्ष बीत जाने पर भी इसकी ताजगी अब तक बनी हुई है। इसकी महक सिर्फ भारत ही नहीं अपितु विश्व के दूसरे देशों में भी जा पहुंची है। इस कथा की विशेषता यह है कि निर्माता, निर्देशक, लेखक, अदाकार और साधारण जन, जिस की कल्पना करता है, वह इसमें मिल जाता है ।

अम्बा

शोभा निगम कहती है, "किसी भी देश की संस्कृति और सभ्यता की श्रेष्ठता का मापदंड उसके द्वारा नारी को दिया गया सम्मान होता है, और किसी भी देश का साहित्य इस बात का प्रमाण होता है कि वहाँ नारी की स्थिति क्या रही है।" (*व्यास कथा* 50)

चींटी का हाथी से टकरा जाना, चिड़िया का गरुड़ से युद्ध और तिनके का पहाड़ के सामने सीना तान कर खड़ा हो जाना, एक बार पढने या सुनने में भले यह अचंभित लगे, पर जब यह घटित होता है, तो इसको देखने सुनने वाला व्यक्ति स्तब्ध रह जाता है। महाभारत ऐसी ही अनेकों घटनाओं से लिप्त है।

गंभीरता, रोचकता, संक्षिप्तता, विश्वसनीयता, उद्देश्यपूर्णता, मौलिकता, सत्यता, मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति, आदि विविध गुणों के कारण ही कोई भी रचना पाठकों को प्रभावित करती है। सरल, सहज, सुन्दर, आकर्षक, और सुभावनी भाषा शैली के कारण कोई भी किरदार उभर कर सामने आता है। हर व्यक्ति अपने आप में एक योद्धा होता है, जो अपनी जिंदगी, हालातों और परिस्थितियों से जूझता है, लड़ता है, लड़ कर वह उभर कर सामने आता है या कहीं गुमनाम हो कर रह जाता है, यह उसके लड़ने के ढंग से तय होता है।

विद्यानिवास मिश्र इस पर लिखते है, "लड़ाई झगड़े की और उसमें प्राप्त जय को महत्वपूर्ण मानना ही तो अमंगल है और अपने भीतर के तनावों पर विजय को जय मान कर छोटे और बड़े जय-पराजय का अर्थ समझना ही मंगल है।" (*महाभारत का काव्यर्थ* 24)

सुख वा यदि वा दु:खं प्रियं वा यदि वाऽप्रियम ।
प्राप्त प्राप्तमुपासीत हृदयेनापराजित: ॥ (*महाभारत* शांतिपर्वणि 154)

अर्थात : वास्तविक अपराजय महाभारत के अनुसार यह है कि सुख हो, दु:ख हो, प्रिय हो, अप्रिय हो, जो मिले उसे सहज रूप में स्वीकार करो, कभी भी हृदय में पराजय स्वीकार न करो, न सुख में, न दु:ख में, न अनुकूल से न प्रतिकूल से।

श्रीकृष्ण के बाद यदि कोई अत्यधिक बलशाली किरदार आता है तो उनके शीर्ष में भीष्म पितामह का नाम आता है। जो कौरवों और पांडवों दोनों के पूजनीय है, श्री कृष्ण भी उनका सम्मान करते हैं। इस किरदार का अम्बा को अम्बा बनाने में बहुत बड़ा योगदान है। जो उसकी दशा और दिशा दोनों बदल कर रख देता है। जिसने अम्बा के पात्र में अनेकों नाटकीय मोड़ भर दिए। रंगमंच की धरा पर किरदार का जीवन यापन, स्थितियाँ और परिस्थितियां उसमें

छुपी हुई नाटकीयता को प्रस्तुत करती हैं। जिस प्रकार कोई भी प्राकृतिक आपदा या संकट बिना किसी आगामी सूचना के आता है और सारा धरातल बदल कर चला जाता है। कभी कभी बंजर भूमि बाढ़ के बाद उपजाऊ हो जाती है और उपजाऊ भूमि बंजर हो जाती है।

अम्बा का किरदार धीरे धीरे अपनी चर्म सीमा की ओर अग्रसर होता है। ना ही उसके पास कोई दैवीय शक्ति है, न ही कोई चमत्कारिक वरदान, न ही वह किसी गण, देवी, देवता अथवा किसी अन्य का अवतार है। वह बस मानव है, एक कन्या है, जो अपने बल पर अपनी निष्ठां और पराक्रम से दैवीय पात्रों से लोहा लेती है। यही उसके किरदार की सबसे बड़ी शक्ति है। काशीराज की तीन कन्याएँ थी, अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका, जिसमें अम्बा सबसे बड़ी थी। उसके चरित्र की विशेषता जो देखने को मिलती है, वह प्यार और आज़ादी है। जिसके लिए उसने अंत तक संघर्ष किया। अपने यौवन में उसने अभी पांव रखा ही था और हर दम अपने माँ पिता की छाया में वह हँसती खेलती रहती है। वह शाल्व राज से प्यार करती है, वह अपने एक अलग संसार की कल्पना कर के बैठी है। अपने उस प्रेम के बारे में वह अपनी माता-पिता के साथ दिल की बातें करती है। रंगमंच पर ज्यादातर इस बात का प्रदर्शन किया जाता है, जिस किसी भी पात्र का संघर्ष, या उसकी मार्मिक हालत दिखानी हो प्रस्तुति की शुरुयात में उसको उतना ही हँसता खेलता, सुखी जीवन यापन दिखाया जाता है। हर निर्देशक का किसी किरदार के प्रति अपनी सोच और अपना नजरिया होता है, उसके मुताबिक वह प्रस्तुति करता है। अम्बा वह नायिका है, जिसने अपने सम्मान, प्यार, आज़ादी के लिए केवल एक नहीं बल्कि तीन जन्मों तक संघर्ष किया है। अम्बा के किरदार की नाटकीयता में स्त्री सी कोमलता भी है और पुरुषत्व की कठोरता भी है। मंच या पर्दे पर उसका प्रवेश हर निर्देशक ने अपने तौर पर किया। बी-आर चोपड़ा ने अपने धारावाहिक में उसके प्रवेश और बाकी अंक (अंबोपख्यान) को कम दिखाया है, वहीं सिद्धार्थ आनंद कुमार ने स्टार प्लस पर प्रसारित होने वाले अपने महाभारत धारावाहिक में खुल के खेला और दिखाया है। उसके प्रवेश अंक में जहाँ उसका आगमन होता है, एक वीरांगना के रूप में प्रस्तुत किया है। उसके बाकी जीवन के बारे में भी खूब दिखाया है। उसका जीवन, कार्य और चरित्रता उसके प्रवेश अंक में एक उर्जा का आधार बनते है।

हर व्यक्ति के जीवन में ऐसी घटना या मोड़ आता है, जो उसके जीवन को बदल कर रख देता है। अम्बा के जीवन में भी ऐसा मोड़ आया, जिसने उसके जीवन को ही बदल कर रख दिया। वो शाल्व राज के राज्य में जीवन के सपने सजाई बैठे थी। समय ने उसको कुरु वंश और

शलव राज के अहं के बीच लाकर खड़ा कर दिया। उस काल के मुताबिक उनके वैवाहिक जीवन की शुरूयात के लिए स्वयंवर तय कर दिया गया। जिसमें अम्बा ने शाल्व को अपना स्वामी चुनना था और उसकी बहनों ने भी अपने स्वामी का चुनाव करना था। यह स्वयंवर उनके जीवन में एक बहुत बड़ा बदलाव लेकर आया। जिसने अम्बा, भीष्म, कुरुराज्य, शाल्व राज और काशिराज सब को हिला के रख दिया। सबसे ज्यादा जो चीज हिली वह थी अम्बा के पाँव के नीचे से धरती जो अंत तक स्थिर नहीं हुई। उसके चरित्र और उसके जीवन में यही नाटकीय तत्व भरा पड़ा पड़ा है। यह दशा बिलकुल वैसे ही थी, जैसे कोई चिड़िया अपने घोंसले में नर चिड़िया का इंतजार कर रही हो, और वह उसकी नज़रों के सामने हो तभी उसे कोई बड़ा गरुड जैसा पक्षी अपने पंजों में जकड़ कर कहीं दूर ले जाए।

अम्बा और उसकी दोनों बहनों की आयु में कोई ज्यादा फर्क नहीं था, इसी लिए तीनों का स्वयंवर एक साथ रखा गया । अम्बा पहले से ही निश्चय कर आई थी, उसने शाल्व राज को अपनी वर माला में क़ैद करना है। शांत चल रहे वातावरणमें नाट्य अंश डालने के लिए वेदव्यास, भीष्म का आगमन करवाते हैं। उस भरी सभा में जब भीष्म पहुँचते है, तो सभी के मुख से हंसी छूट जाती है, एक ब्रह्मचारी कैसे आ गया ? जब भीष्म के मुख से यह शब्द निकलते है, "वह यहाँ स्वयं के लिए नहीं, बल्कि वह यहां इन तीनों राज कुमारियों का चयन कुरु वंश की वधुओं के रूप में करने आया है, जो उसके छोटे भाई की वधु बनेगी" यह सुन कर सभा में एक सन्नाटा और फुसफुसाहट शुरू हो जाती है। अंकित हो रहे सभी प्रश्नो का उत्तर वेदव्यास नाटकीय संवाद से देते है,

ता इमा: पृथिवीपाला जिहीर्षामि बलादित: ।

ते यतध्वं परं शक्त्या विजयायेतराय वा ।। (*महाभारत* सम्भवपर्व 315)

अर्थात: "हे भूमिपालो ! मैं इन कन्यायों को यहाँ से बलपूर्वक हर ले जाना चाहता हूँ। तुम लोग अपनी सारी शक्ति लगाकर विजय अथवा पराजय से मुझे रोकने का प्रयत्न करो।

अब क्या होगा ? क्या भीष्म अब युद्ध करेंगे? क्या तीनों बहने जाएंगी ? क्या शाल्व राज अम्बा के साथ साथ उसकी बहनों को बचाने के लिए आगे आयगा ? यह कैसा समय आ गया, जब हस्तिनापुर के राज्य को अपने राजा के विवाह के लिए कन्या हरण की आवश्यकता पड गई। ऐसे ही नाटकीयता भरपूर किरदार और हलातो को देखते हुए "चित्रा चतुर्वेदी" ने अपना उपन्यास "अम्बा नहीं मैं भीष्मा" में उसकी जिंदगी को और नाटकीय अंशो से भरपूर

कर पाठक वर्ग को समर्पित कर दिया। जब भीष्म उस भरी सभा से तीनों को ले जाने लगे तो शाल्व राज आगे आकार भीष्म से युद्ध करने लगा किन्तु वह भीष्म बल के आगे कहाँ टिक पाया। बस वह देखता रह गया, उसका जो भावी जीवन साथी था वह कुरु राज्य की जकड़ में जा रहा है। उधर अम्बा भी कुछ बात समझ न पाई, हो क्या रहा है। दोनों के बीच भीषण युद्ध शुरू हो गया अस्त्रों और शास्त्रों का प्रयोग शुरू हुआ, भीष्म सबको परस्त करते चले गए, अंत में शाल्व राज ललकारते हुए आगे आए, जिसको देख कर अम्बा की आँखों में एक चमक आ गई, शाल्व राज ने अपने अस्त्रों से शुरूयात में ही भीष्म पितामह को घायल कर दिया, इसे देख कर बाकी राजा उसकी प्रसंशा करने लगे। इस अंक और घटना को जिस प्रकार लिखित रूप में वर्णन किया गया है, उसमें भी कितनी नाटकीयता समाई हुई है। इसको पढ़ते समय मन के पट पर चलचित्र चलने लग जाते है और जब वह चित्र मंच या बड़े पर्दे पर चलते हैं तो दर्शक रोमांचित हो उठते हैं। सबसे पहले भीष्म ने वायु अस्त्र का संधान किया, जिसने शाल्व राज के चारों घोड़ो को रौंद डाला, फिर अपने अस्त्रों से राजा शाल्व के अस्त्रों का निवारण करके उसके सारथियों को भी मार डाला। उसके पश्चात् एन्द्रस्त्र के द्वारा उसके उत्तम अश्वों को यमलोक पहुंचा दिया और शाल्व के पास केवल प्राण ही छोड़े। यह सब नाटकीयता भरपूर श्लोकों के माध्यम से दिखाया व सुनाया गया है। जिस विधा से यह सब लिखा गया है, उससे पढने वाले की कल्पना को अत्यधिक बल मिलता है, वह उन पात्रों को महसूस करता है और जीता भी है।

अम्बा ने अपने सम्मान को खंड खंड होते देखा। बस वह उसे देखते ही रह गई। महाभारत में कहा गया है, भीष्म उन तीनों को पुत्र वधु, छोटी बहन और पुत्री के समान कुरु देश ले आए और उनको अपने भाई विचित्रवीर्य के हाथ में दे दिया। यह देख कर अम्बा अचंभित रह गई, यह क्या हो रहा है। इस कथा में कहा गया है, "काशिराज की उन कन्यायों में जो सबसे बड़ी थी, वह बड़ी सती-साध्वी थी। जब उसने सुना की भीष्म मेरा विवाह अपने छोटे भाई के साथ करेंगे, तब वह अपनी बात कहने के लिए भीष्म के समक्ष आ गई। जिस भीष्म के सामने किसी की आवाज़ नहीं निकलती थी, उसके सामने अम्बा खड़ी हो कहती है।

मया सौभपति: पूर्वे मनसा हि वृत: पति: ।
तेन चासिम वृता पूर्वमेंष कामश्च में पितु: ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 318)

अर्थात : मैंने पहले से ही मन ही मन सौभ नमक विमान के अधिपति राजा शाल्व को पति रूप में वरण कर लिया था। उन्होने भी पूर्वकाल मेरा वर्ण किया था। मेरे पिता जी की भी यही इच्छा थी कि मेरा विवाह शाल्व के साथ हो। किन्तु भीष्म आप मुझे हरण कर के ले आए आपने एक बार भी मेरी इच्छा नहीं पूछी"।

भीष्म अपनी राज माता सत्यवती से आज्ञा लेकर उसको शाल्वराज के पास जाने की आज्ञा दे देते है। इस घटना के बारे में शोभा निगम लिखती है, "तब अम्बा सहसा विश्वास न कर सकी कि वह भीष्म के बंधन से छूट चुकी है, पर सत्य यही था। शीघ्र ही पिया मिलन की कल्पना से अम्बा रोमांचित हो उठी। पर उस बेचारी को यह कहाँ मालूम था, उसका रथ उसे शाल्वराज की बाहों में नहीं, एक ऐसे अंधेरे गर्त में धकेलने ले जा रहा है, जहां अपमान का दलदल लबालब भरा है, फिर जन्म जन्मांतर की तपस्या करनी पड़ेगी, उसे इस दलदल से निकालने के लिए।" (*व्यास कथा* 51)

इस घटना क्रम में बहुत सी नाटकीयता निकल कर आती है। किस प्रकार अम्बा एक छोटी सी बालिका, भीष्म और सत्यवती के समक्ष विशाल हिमालय की तरह शीश तान कर खड़ी हो गई और अपना निर्णय सुना दिया। जिसको सुन कर सभी एक दूसरे के मुख की ओर देखने लगे। भरी सभा के साथ साथ दर्शकों के मन में भी यही नाटकीय भाव उभरने लगते हैं। अम्बा कुरु वंश की रानी बनेगी या फिर शाल्व राज की ? यह नाटकीयता ही उसके किरदार के साथ कथा को एक तीव्र गति प्रदान करता है। भीष्म उसको राक्षस विवाह के अंतर्गत हर कर लाया था। गंगा पुत्र उसकी बात सुन अपनी सूझ का परिचय देते हुए आज्ञा देते हैं, वह जा कर शाल्व राज के साथ रह सकती है। अपने सैनिको को कहते हैं कि अम्बा को शाल्व राज के पास सम्मान के साथ छोड़ कर आएं।

अम्बा के चरित्र में जो नाटकीयता के बीज भरे थे, वह अंकुरित होकर पेड़ का रूप लेने लगे थे। वेदव्यास ने बहुत ही तीव्र और तीखे मोड़ इसके किरदार में अंकित कर दिए थे। इसके द्वारा वह अपने बहुत से विचारों को सामने लाना चाहता था। आगे की सब घटनाएँ बहुत ही विशेष और महत्वपूर्ण है, जिसमें नाटकीयता का समावेश है। जिनको निकाल कर जीवित रूप में लाना हर कलाकार पर निर्भर करता है। किरदार में नाटकीयता के साथ कार्य करती है कल्पना, जिसको निकाल दें तो सोचे हुए परिणाम तक पहुँच पाना कठिन है। इस नायिका को चुने जाने का एक विशेष कारण ही यही है। अम्बा के बिना महाभारत का अंत नहीं सोच पाते

क्योंकि भीष्म तो अपराजय थे। अम्बा के चरित्र के नाटकीय तत्वों के बिना भीष्म जैसे वट वृक्ष का गिरना असंभव था। इसकी यही नाटकीयता इसको पन्नो में, मंच पर और पर्दे पर हर जगह एक उभार कर लाती है।

जब अम्बा शाल्व राज के पास पहुँचती है, कई देर तक बिना बात किए बातें होती हैं। भीष्म द्वारा छोड़े बाण अब भी वह अपने सीने पर महसूस कर रहा था। उसके सार्थियों के शव, जडित आँखों से उसके मन के कोने में झाँक रहे थे। उसके सबसे प्यारे अश्वों की टापे उसके कानों में अब भी गूँज रही थी। वह सारा दृश्य उसकी आँखों के सामने था। जब भीष्म ने उसे परास्त कर दिया और कुछ देर पहले उसके साहस की प्रसंशा करने वाले बाकि राज कुमार उसका उपहास उड़ा रहे थे, शाल्व के पास केवल प्राण मात्र ही बचे थे। अपनी आँखों के सामने वह अपनी प्रिय को नहीं बचा सका। अम्बा भी इस सारे घटना क्रम की साक्षी थी। वेदव्यास ने यहाँ मन, समाज, प्यार, पुरुषत्व और एक राज कुमार कई तरह के भावों के भंवर में अम्बा और शाल्व को छोड़ दिया के जुझो और स्वयं ही निकलो। इसको मंचित करने में नाटकीयता निकल कर आती है। वह शाल्व से कहती है।

भजस्व मां शाल्वपते भत्का बालामनागसम।

भक्तानां हि परित्यागो न धर्मेपु प्रशस्यते॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2496)

अर्थात : हे शाल्वराज ! मैं निरपराध अबला हूँ। तुम्हारे प्रति अनुरक्त हूँ ! मुझे स्वीकार करो, क्योंकि भक्तों का परित्याग किसी भी धर्म में अच्छा नहीं बताया गया। फिर वह उसे कहती है मैं भीष्म से पूछकर, उसकी आज्ञा लेकर अत्यंत उत्कंठा के साथ यहाँ आई हूँ।

अब कौन जीतेगा दो राहों के बीच खड़ा मन, यह समाज, या एक दूसरे के प्रति हृदय में पनपने वाला प्रेम जो अब दोनों छोर में जीवित है भी या नहीं ? कुछ नहीं पता, या फिर पुरुषत्व का अहं अथवा एक राज कुमार योद्धा जो अन्य राज कुमारों के समक्ष एक दूसरे योद्धा से पराजित हो गया। इन सब परिस्थितियों में क्या अम्बा भी परास्त होगी या फिर अपने सम्मान और प्यार को प्राप्त कर लेगी। इतने वेग, इतनी कठिन परीक्षा, यह सब ही तो अम्बा को विशेष रूप देता है। उसके मन में यह आस होती है, शाल्व फिर उसको अपना लेगा और वह उसके साथ अपनी आगे की जिंदगी शुरू करेगी। पर वह नहीं जानती थी, वेदव्यास के मन में तो कुछ और ही चल रहा था। वह उसको इसी जन्म में तो क्या अगले जन्म में भी नहीं पाने देगा। अम्बा अपनी सारी दशा उसके सामने व्यक्त कर देती है। शाल्व के मन में ज़रा सा भी प्यार का वेग

उत्पन्न नहीं होता। वह कितनी बातें शाल्व को कहती है, पर उसे कोई फर्क नहीं पड़ता और वह उसका त्याग कर देता है। वह उसे कहता है, तुम जाओ, मैं भीष्म से डरता हूँ , भीष्म के हाथों परास्त होकर तुम्हें खो चूका हूँ, एक योद्धा युद्ध में खोई होई वस्तु को अगर बिना किसी परिश्रम के स्वीकार करेगा तो यह उसके लिए उचित नहीं होगा। भीष्म से पराजय एक प्रेमी की नहीं, एक राजा के अहं की हुई थी। जिस आशा और स्नेह के साथ वह अपने प्रेमी के पास भीष्म से वापिस आई थी, सब कहीं बह गया था। उसके बनाए हुए सपनों के महल किसी मरुस्थल में विलुप्त होकर रह गए। भीष्म से लड़ कर वह अपने प्यार के पास वापिस आई थी, उसने भी उसका हाथ थामने की जगह बेसहारा छोड़ दिया, अब वह क्या करे ?

अपने नायक नायिका से लेकर गौण पात्रों तक से अपनी बात कहलवाने वाले वेदव्यास उनके साथ एक ऐसा खेल खेलते है, कि खेलते खेलते वह अपने दर्शकों को भी अदृश्य अभेदी पाश में बाँध देते हैं, जिसका उन्हें पता ही नहीं चलता। उन्हें भी उस पाश में बंधे रहने में आनंद आने लगता है। समय के साथ साथ उस पाश की खिंचाई और बढती जाती है।

राक्षस विवाह विधि के साथ भीष्म उसका हरण करके ले गया था। जिसके साथ वह गंधर्व विवाह करना चाहती थी, अब उसने भी उसको अपनाने से मना कर दिया। बल और पुरुषत्व में अम्बा हार गई। कोई भी उसका साथ देने वाला नहीं है। भरी सभा के साथ साथ उसके मन में सन्नाटा सा छा जाता है। यह कोई साधारण सन्नाटा नहीं है। यह वह सन्नाटा है जो किसी भयंकर सुनामी से पहले आता है। अब वह अपने घर वापिस जाए या हस्तिनापुर ? वह एक मंझदार में फ़स गई थी।

सनातन धर्म में सति को सदा ही पावन माना है। जिस के आगे सभी अपना शीश झुकाते है। उसके आगे न कोई टिका है और ही टिकने की कोशिश कर पाया है। अम्बा को न तो शाल्व ने अपनाया, ना ही वह पीहर पास वापिस जा सकती थी। उसकी इस दशा के लिए उसका पिता जिम्मेदार है, जिसने प्राक्रम शुल्क लगा कर उसे बाजारू स्त्री कि भांति जाने दिया ? या शाल्व राज, जो उसकी बात नहीं समझ रहा ? या भीष्म ही जिम्मेदार है ? अंतत: अम्बा अपने विवेक से सोचती हुई निर्णय करती है, उसके साथ हुए इस अन्याय के लिए भीष्म ही मुख्य कारण है।

सा भीष्मे प्रतिकर्तव्यमहँ पश्यामि साम्प्रत्म ।

तपसा वा युधा वापि दु:खहेतु: स में मत: ॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2497)

अर्थात : इस समय तपस्या अथवा युद्ध के द्वारा भीष्म से बदला लेना मुझे उचित दिखायी देता है, क्योंकि मेरे दुख के प्रधान कारण वह ही है।

जब भी कोई नाटककार अपने किसी किरदार को बलशाली बनाना चाहता है तो उसे कोई न कोई ऐसी छुपी हुई शक्ति देता है जो आने वाले समय में उभर कर सामने आती है। अम्बा के पास जो शक्ति थी, वह था उसका सतीत्व जिसके आगे कहीं न कहीं भीष्म भी नमन करता था। जब उनको कुरु राज्य भवन में लाया जाता है, तब इस बात का ज़िक्र आता है।

ज्येष्ठा तासामिदं वाक्यमब्रवीद्ध सती तदा । (*महाभारत* आदिपर्वणि 318)

अर्थात- काशीराज की उन कन्यायों में जो सबसे बड़ी थी, वह बहुत "सती साध्वी" थी।

अम्बा और भीष्म का टकराव उन दोनों का नहीं बल्कि, सतीत्व और ब्रह्मचार्य का टकराव था। एक ओर अम्बा है, जिसके पास केवल प्यार, स्नेह, दर्द, अकेलापन और सतीत्व है। जिसके साथ ना तो घर वाले हैं और ना ही बाहर वाले। दूसरी तरफ गंगा पुत्र, परशुराम शिष्य, हस्तिनापुर का रक्षक और बलशाली भीष्म जिस से सारी दुनिया डरती है। अब इन दोनों के टकराव से क्या निकल कर आयगा ? कैसे निकल कर आएगा ? सब तथ्य इस नायिका के किरदार को एक गतिशीलता प्रदान करते है, एक कलाकार के मन को कल्पनाशीलता, जिससे वह नाटकीयता के नए आयाम निकाल कर सामने लाता है। वह लेखक हो या चित्रकार, अभिनेता और रंगकर्मी।

भीष्म अम्बा को साफ़ और स्पष्ट शब्दों में मना कर देते हैं कि वह उसकी बात नहीं मान सकते। अम्बा भी एक दम लाचार और बेबस हो जाती है, अब वह अपना स्थान कैसे ग्रहण करे। क्योंकि शारीरिक तौर भी वह इतनी बलशाली नहीं है, कि सीधा भीष्म से पंगा ले सके। बात यहाँ आकर रूकती है, वह बदला कैसे लेगी ? किस तरह लेगी ? क्या गंगा पुत्र को प्रास्त करने का बल किसी की भुजाओं में हैं ? फिर एक बार वह दोराहे मोड़ पर है। अम्बा उस व्यक्ति की खोज के लिए निकल पड़ी जो उसको अधिकार दिला सके। अनेकों राज्यों, योद्धाओं के सामने वह अपनी मदद के लिए प्रार्थना करती, एक बार तो सब मान जाते किन्तु हस्तिनापुर और भीष्म का नाम सुनने से ही वह पीछे हट जाते, क्योंकि वह उनकी शक्ति और सत्ताप्रभुत्व के बारे में जानते थे। लम्बे अन्तराल तक वह सब के सामने झोली फैलाती रही, पर निराशा के बिना उसकी झोली में कुछ नही पड़ा। एक बालिका की बेबसी के आगे योद्धयों की बेबसी और काला वातावरण नाटकीयता के चर्म बिन्दुयों को दरसा रहे थे। थक हार कर वह तपस्या के

माध्यम से अपना प्रतिशोध लेने का सोचती है। जिस के लिए वह हिमालय की वादियों में ऋषियों के आश्रम में पहुँचती है। वह उनको रो कर अपनी सारी व्यथा सुनाती है। साधु गण सारी बात को ध्यान पूर्वक सुनते हैं। उस आश्रम में कठोर व्रत का पालन करने वाले शैखावत्य नाम से प्रसिद्ध एक तपोवृद्ध श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते थे, जो शाश्त्र और आरण्यक आदि की शिक्षा देने वाले सद्गुरु थे। वह सारी बात पर विचार करते हुए कहते हैं, किस तरह वह उसकी सहायता कर सकते है। तब अम्बा कहती है, हे भगवान मुझ पर अनुग्रह कीजिए, मैं सन्यासियों का धर्म पालन करना चाहती हूँ, यहाँ रहकर दुष्कर तपस्या करूँगी। पहले वह सोचते हैं, शाल्व को दोबारा समझा कर उसके पास छोड़ दिया जाए, पर वह तो भीष्म से भयभीत था। वह भी अम्बा के आगे चुप रह जाते है, अम्बा कहती है, वह अपने कष्टों को मिटाने के लिए अब तपस्विनी का जीवन जीना चाहती है। वेदव्यास की नाटकीयता उसके जीवन को उलट देती है, अब वह राजकुमारी से सन्यासी जीवन जीना शुरू कर देती है। किसी की गलती जाने अनजाने में किसी के जीवन में कितना परिवर्तन कर देती है, अम्बा का जीवन इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।

एक दिन उस आश्रम में तपस्वी राजऋषि होत्रवाहन आ जाते हैं। जिनकी सेवा में सारा आश्रम उपस्थित हो जाता है। संध्या को जब लोग धर्म चर्चा कर रहे होते हैं तो शैखावत्य जी उनको काशीराज की राजकुमारी अम्बा की सारी व्यथा बताते हैं। होत्रवाहन जी सुन कर उदास हो जाते हैं और कहते हैं अम्बा को उनके सामने प्रस्तुत किया जाए। जब अम्बा उनके पास आती है, तो वह उनको अपनी पुत्री की भाँति बहुत स्नेह करते हैं। असल में वह अम्बा के नाना हैं। यह एक नाटकीय मोड़ ही तो है। वह अम्बा को कहते हैं, अगर उसने वापिस अपने पिता के पास नहीं जाना तो कोई बात नहीं वह उनके आश्रम में रह सकती है। लेकिन अम्बा के सीने में धधक रही प्रतिशोध की ज्वाला अभी शांत कहाँ हुई थी। उधर अम्बा आश्रम में रह कर शास्त्रों का ज्ञान और तप विद्या ग्रहण करने लग जाती है। उसके नाना उसकी सारी बात सुनने के बाद इस निर्णय पर पहुँचते है, भीष्म से मुकाबला करने वाला बस एक ही व्यक्ति है, जिसने इस धरा को क्षत्रियों से विहीन कर दिया था। उनके फरसे के आगे किसी की भी नहीं चलती वह हैं "भगवान परशुराम"। तू मेरे कहने से तपस्यापरायण जमदग्निनन्दन परशुराम के पास जा। वह तेरे महान दुख और शोक को अवश्य दूर कर देंगे।

हनिष्यति रणे भीष्म न करिष्यति चेद वचः ।

तं गच्छ भार्गवश्रेष्ठ कालाग्निसमतेजसम ॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2500)

अर्थात : यदि भीष्म उनकी बात नहीं मानेगा तो वह युद्ध में उसे मार डालेंगे। भार्गवश्रेष्ठ परशुराम प्रलय काल की अग्नि के समान तेजस्वी हैं। तू उन्हीं की शरण में जा।

इसको सुनके अम्बा की आँखों में आशा की किरण वापिस आ जाती है। जिस से उसको लगता है, अब वह अपना स्थान प्राप्त कर सकेगी। अब आगे चकार नाटकीय तत्व अपने उच्च स्थान पर आ जाते हैं, जिस प्रकार दोपहर के समय सूर्य धरती के सीने पर आ जाता है। भगवान् परशुराम ही भीष्म पितामह के गुरु है, जिन्होंने उसको सारी दीक्षा दी और उसे वह बल प्रदान किया जिसके आगे कोई नहीं टिक पाता। जिसका अभिमान भीष्म को है। क्या भीष्म अपने गुरु की बात मानेगा ? या फिर वह अपने ब्रह्म अस्त्र के साथ उनके साथ युद्ध करने के लिए तैयार हो जाएगा ? जरा सोच कर देखा जाए, दुनिया के दो सबसे शक्तिशाली योद्धा आपस में टकरा जाएं तो क्या होगा ? एक रोमांच भी होगा, डर भी, पूरी धरा में किस तरह का माहोल पैदा हो जाएगा।

भगवान परशुराम उसके नाना के पर्म मित्र थे। संयोग वश वह उनके आश्रम में उनसे मिलने आते है। अम्बा भीष्म के उस सारे कार्य के बारे में बताती हैं। सारी बात ध्यान पूर्वक सुनकर वह उसे आश्वासन देते हैं, वह अपने शिष्य को बोलेंगे कि वह तुम्हें तुम्हारा स्थान अवश्य दें। अब रोचकता तब पैदा होती है, जब गंगा पुत्र अपने गुरु की बात मानने से मना कर देता है और उनसे युद्ध करने का निर्णय लेता है। गुरु और शिष्य का युद्ध नाटकीयता का चर्म बिन्दु है। दोनों में निरंतर २३ दिन तक बिना किसी निर्णय पर पहुंचे युद्ध चलता रहता है। एक समय ऐसा आता है, जब दोनों अपने ब्रह्म अस्त्रों का प्रयोग एक दूसरे पर करने के लिए निकाल लेते है। हर तरफ हाहाकार मच जाती है। इसको मंच या पर्दे पर जब प्रस्तुत किया जाएगा, तो यह दृश्य बहुत ही सुंदर ढंग से उभर कर आएगा। उन के वस्त्र, मंच सज्जा, युद्ध का ढंग, स्थल, संगीत, स्पेशल इफ़ेक्ट जिसकी कल्पना मात्र से विभोर हो जाते हैं। यही तो नाटकीयता है।

जब युद्ध किसी भी निर्णय पर आकर समाप्त नहीं हुआ, तो वह और भी निराशा के अँधेरे में धंस गई। सब दरवाज़े उसे बंद मालुम हो गए लगे। एक सती इतनी जल्दी हार सकती है क्या ? जो एक क्षत्रिय जाति में पैदा हुई थी। एक क्षत्रिय तब ही अपनी पराजय स्वीकार करता है, जब उसके प्राण पखेरू हो जाएं। अंत में अम्बा भीष्म को उसकी आँखों के सामने ही कुरु वंश और साम्राज्य को खंड खंड करने का फैसला सुनाती हुई हठ योग से अपनी देह का त्याग

कर देने का प्रण करती हुई वनों में तपस्या के लिए चली जाती है। अम्बोपख्यान में भीष्म कहते हैं।

यदैव हि वनं प्रयाप्त सा कन्या तपसे धृता ।

तदैव व्यथितो दीनो गतचेता इवाभावम ॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2524)

अर्थात : जिस दिन वह कन्या तपस्या का निश्चय करके वन में गई, उसी दिन मैं व्यथित दीन और अचेत सा हो गया।

यहाँ जो सुंदर मोड़ आता है, वह यह है किसी की बात से ना डरने वाला, कभी ना हारने वाला योद्धा उस कन्या के प्रण मात्र से अचेत हो गया। एक नए नारीवाद का उदय, एक अलग ही नाटकीय लिबास में लिपटे हुए सामने आता है। जो बार बार अम्बा के बारे में सोचने पर \मजबूर करता है। वह सब को त्याग कर गहन वणों में घोर तपस्या के लिए चली जाती है। भीष्म अपने दो गुप्तचर उसके पीछे लगा देते हैं, जो अम्बा की सारी खबर भीष्म को देते रहते हैं। कहीं न कहीं ब्रह्मचारी भीष्म उसके साथ किसी अदृश्य सूत्र से बंध जाता है। यह सब नाटकीयता नहीं तो और क्या है। वनों में घोर तपस्या करते करते अम्बा आधे तन से नदी बन जाती है और आधे तन से वह दोबारा बालिका के रूप में वत्स देश में जन्म लेती है।

इन नायिकाओं के खेले जाने और इतना प्रसिद्ध होने में यही नाटकीयता बड़ा कारण है। कितनी सुंदर और अलग बात है, जो कुछ समय पूर्व एक राजसी कन्या थी, अब तपस्विनी बन गई और फिर अपने तन को दो रूपों में परिवर्तित कर दिया, आधी नदी और आधी कन्या। वह फिर पुनर जन्म ले कर आ गई। अब इसकी परिभाषा सबके लिए अलग अलग है। निश्चित ही यह कल्पना और नाटकीयता का अद्भुत मिश्रण।

वत्स देश में जन्म लेने के बाद भी वह अपने पूर्व जन्म के प्रण को नहीं भूलती। वह उस जन्म में भी भीष्म से प्रतिशोध लेने के लिए अपनी तपस्या जारी रखती है। भीष्म नाम उसके मन मस्तिष्क पर अंकित हो चूका था और भीष्म के मन पर अम्बा का नाम। वह फिर वनों में तपस्या के लिए चली जाती है। नाटकीयता की उत्कृष्ट उदाहरण है कि पहले जन्म में जो इच्छा पूर्ण नहीं हुई, क्या वह अब दूसरे जन्म में पूर्ण होगी या अब भी वह अपूर्ण रह जाएगी ? प्रश्न चिन्हों में खड़ी नायिका, खड़ा भीष्म और खड़ा दर्शक। यही बात रचनाकार को बेहतर बनाती है, कि एक पहेली अभी सुलझी नहीं, अगली पहेली तैयार है। एक के बाद एक नाटकीय

संभावनाएं किसी को भी हिलने नहीं देती, जड़ बना कर रख देती हैं। अम्बा अब बहुत बदल चुकी थी। उसके धार्मिक तप और निष्ठां ने उसको अलग ही रूप दे दिया था। बाहर से हीरे की तरह मजबूत भीष्म अब अंदर से कोइले की तरह बहुत कमजोर होता जा रहा था। उसकी निष्ठा उसके प्रति बढती जा रही थी। महाभारत में जब भी भीष्म को पढ़ते हैं, तो वह अम्बा के लिए साध्वी, तपस्विनी, मनस्विनी आदि शब्दों का इस्तेमाल करता है, जो उसके हृदय पट्टी को दर्शाता है। अम्बा भी अपने स्त्री तन से नफरत सी करने लगी थी। इसी कारण उसकी यह दशा हुई, जिस कारण सबके सामने हाथ फैलाने पड़े। पुरुषवादी सोच के प्रति उसकी जंग अभी जारी थी। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शिव प्रकट होकर उसे वरदान मांगने के लिए कहते है। वह उनको अपने लक्ष्य के बारे में बताती हैं और कहती है, वह पुरुष तन चाहती है। उसकी बात सुन भगवान शिव ने उसको वरदान दिया "तू रणक्षेत्र में भीष्म को अवश्य मारेगी और इसके लिए आवश्यकतानुसार पुरुषत्व भी प्राप्त कर लेगी। दूसरे शरीर में जाने पर तुझे इन सब बातों का स्मरण भी बना रहेगा। क्या अब अम्बा को फिर जन्म लेना पड़ेगा ? क्या उसका प्रतिशोध तीसरे जन्म में पूरा होगा या और भी लम्बा सफ़र चलेगा यह ? नाटकीयता के अंबार उसके चरित्र में भरे पडे है ।

उधर हस्तिनापुर में गुप्तचर भीष्म को यह समाचार देते हैं, भगवान शिव के वरदान के बाद अम्बा ने सूखी लकड़ियों की बहुत बड़ी चिखा बनाई और उसको आग लगादी, जब आग भड़क गई, तो उसमें बैठ कर अग्नि स्नान करके समाधि ले ली। एक और बोझ भीष्म में मन पर सवार हो गया था।

अम्बा के जीवन की कथा नई कहानी से आगे बढती है। अब वह राजा द्रुपद के घर लड़की रूप में पैदा होती है, जिसका नाम शिखंडी रखा जाता है। जिसको सब जगह यही कह कर प्रचारित किया गया, वह एक लड़का है। यह बात सिर्फ राजा द्रुपद, उसकी पत्नी और इनके इलवा भीष्म जानते थे कि शिखंडी एक लड़की है। उसके गुप्तचरों ने उसे भगवान् शिव के वरदान के बारे में बता दिया था। समय के साथ साथ कहानी आगे बढती रहती है, वह जवान होती जाती है, उसकी शादी हिरण्यवर्मा की पुत्री से करदी गई। एक लड़की की शादी लड़की से ? जब उसकी पत्नी को पता चलेगा तो क्या होगा ? हिरण्यवर्मा तो राजा द्रुपद से अधिक शक्तिशाली था और सेना भी उससे ज्यादा थी। यह छोटे छोटे बिंदु हैं जो पूरी कहानी को पकड़ कर उसमें रोचकता बनाए रखते हैं। होता भी वैसे ही है, जब उसको पता चलता है, उसका पति

एक लड़की है, तब वह अपने पीहर को बता देती है, वह राजा द्रुपद को कहते हैं, उन्होंने बहुत बड़ा अपराध किया है। उनको इस बात की सजा भुगतनी पड़ेगी। शिखंडी इस बात से दुखी हो जाती है कि वह ही अपने माता पिता के दुखों का कारण है। तंग होकर वह अपने जीवन का अंत कर देने का निश्चय करके वनों में चली जाती है। कठिन उपवास करके वह अपने तन को सुखाना शुरू कर देती है। रचनाकार का मन कब कहाँ घूम जाए, कहाँ से क्या हो जाए किसी को कुछ नहीं पता। होता भी यही है, उसका सामना स्थुणाकर्ण ऋषि से होता है। जो उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर उसे अपना पुरुषत्व प्रदान करते हैं और उसका नारीत्व स्वयं ग्रहण कर लेते हैं। क्या यह संभव है ? यह कैसे हुआ होगा ? इसकी सत्यता या वास्तविकता पर नहीं जा रहे, किन्तु यह नाटकीयता ही अम्बा को उसके लक्ष्य की ओर लेकर जाएंगी।

शिखंडी अब पुरुष रूप के साथ अपने माता पिता के साथ रहने लगता है। उसका उद्देश्य कब पूरा होगा, यह अब भी उसको नहीं पता था। समय का पहिया घूमता गया जो घूमते घूमते सबको कुरुक्षेत्र की भूमि पर ले आया। जहाँ काल अपना जाल बुन कर बैठा था और मोहरे कौरवों पांडवों के रूप में सज रहे थे। निश्चित दिन पर श्री कृष्ण की निगरानी में दोनों पक्ष इकठा हुए और सारी रणनीति बन्ने लगी। शिखंडी को अपना सपना सत्य होता दिखने लगा। श्री कृष्ण ने उसे पांडव पक्ष का सेनापति किया। इस बात पर कौरव पक्ष ने उसका उपहास उड़ाया। वह चुप रहकर अपनी बारी का इंतज़ार करता रहा। जब युद्ध हुआ तो वहां भी अपनी बारी का इंतजार करता रहा। भीष्म ने पहले ही बता दिया था कि वह शिखंडी पर हमला नहीं करेगा। जब भीष्म ने पांडव सेना का संहार करना शुरू कर दिया, तो सब तरफ हाहाकार मच गया। इस से बचने के लिए शिखंडी को आगे लाया गया, वह अपने रथ पर सवार होकर अपने तीन जन्मों के इंतज़ार को ख़त्म करने के लिए चल पड़ा। शिखंडी को सामने आते देख भीष्म भी बर्फ की भाँति शीतल और मौन हो गया। वह भी इस बात के लिए तैयार हो गया, अब वह शिखंडी के हाथों मृत्यु प्राप्त करके यम लोक को प्रस्थान करना चाहता है। पर वह भीष्म को अपने हाथों से मौत भी नहीं देती, उसके पीछे से पांडव पक्ष भीष्म पर बाणों की वर्षा कर देता है, जिससे आहात होकर भीष्म बाणो की शैय्या पर सो जाते हैं।

जिसका सारा जीवन अनेकों नाटकीय मोड़ों से भरा रहा, जिसने तीन जन्मों तक चैन से बैठ कर नहीं देखा। उसको साधारण मृत्यु देकर वेदव्यास उसके साथ अन्याय नहीं करना चाहते थे। उसका अंत भी बहुत ही मार्मिक रहा। देखने, पढ़ने या सुनने के बाद किसी के मुंह

से कुछ शब्द नहीं निकलते। कौरवों की हार से विचलित होकर द्रोण पुत्र, महाबली अश्वत्थामा ने पांडव पक्ष को ख़तम करने की ठान ली। वह उस ओर निकाल पड़ा जहां पांडव सोए हुए थे। उसने ऐसे प्रहार किए मानों माँ कालिका और महादेव स्वयं वहाँ तांडव करने आ पहुंचे। इसी बीच शिखंडी और द्रोण पुत्र का मुक़ाबला हो जाता है। दोनों नाना प्रकार के अस्त्रों से एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। दोनों खून से लथपथ हो चुके थे। इतने में अश्वत्थामा ने उसकी दोनों भौहों के बीच में आघात किया।

स तु क्रोधसमविष्टो द्रोणपुत्रो महाबल : ।

शिखंडिन समसाद्य द्विधा चिच्छेद सोऽसिना ॥ (*महाभारत* सौप्तिकपर्वणि 4246)

अर्थात : क्रोध के आवेश में आकार शिखंडी के पास जाकर अपनी तलवार से उसके दो टुकड़े कर डाले। तीन जन्मों का संघर्ष इस युद्ध में पूर्ण विराम ले रहा था।

इतने लंबे सफर के बाद अम्बा (शिखंडी) शांति के सफर पर चली गई। शिखंडी के इस मार्मिक अंत का चित्रण चित्रा चतुर्वेदी कर्तिका इस तरह करती है, "धन्य हो अम्बा ! तुम्हारी महिमा अपार है ! तुम्हें अपने एक जन्म में अग्नि स्नान कर स्वयं को भस्म कर देना पड़ा। दूसरे जन्म में तुम्हें जलसमाधि लेकर स्वयं को जल में तिरोहित कर दिया। तीसरे जन्म में तुम्हारा जिस प्रकार करुणामिक अंत हुआ है, उस से कलेजा दहल जाता है। किसी के कंठ में तीर लगा, किसी के वक्ष में बाण लगा, किसी का मस्तक उच्छेद हुआ तो किसी के उदर में खड़ग समा गया। किन्तु , तुम ! ..... अश्वत्थामा ने शिखंडी के तन को अपने फरसे से दो टुकड़े कर दिया। दो फांक कर दिया। खंडित मन ! खंडित तन ! जैसा आधा अधूरा जीवन वैसी ही आधी अधूरी मृत्यु-गति । जीवन की ही भांति शरीर तक बँट गया दो टुकड़ों में।" (*अम्बा नहीं मैं भीष्मा* 16)

इसके तीन तीन जन्मों के इंतज़ार, परिश्रम, और लगन आदि के तत्वों से जो नाटकीयता और बात वेदवेदव्यास ने कहना चाहा उसमें वह सफल हुए हैं। अगर अम्बा ना होती तो महाभारत का अंतिम दृश्य कुछ और ही होता। यह एक ऐसी नायिका है, जिसने एक नहीं बल्कि तीन जन्मों की तपस्या और त्याग के बाद अपने निश्चय को पूर्ण किया। एक छोटी सी कन्या जिसके आगे भीष्म को भी घुटने टेकने पड़े, जिसने हस्तिनापुर तिनके की तरह बिखेर दिया। वो स्वयं में एक नहीं बल्कि कई संसार समाए बैठे थी। जिसने नारी जाति को एक क्रांति की ज्वाला दिखाई। इसके बिना यह कथा कभी पूर्ण न होती और यह युद्ध यूँही चलता रहता।

गांधारी

"तो, वह पड़ा है कंकाल मेरे पुत्र का
किया है यह सब कुछ श्री कृष्ण
तुमने किया है सब
सुनो !
आज तुम भी सुनो
मैं तपस्विनी गांधारी
अपने सारे जीवन के पुण्यों का
अपने सारे पिछले जन्मों के पुण्यों का
बल लेकर कहती हूँ।
श्री कृष्ण सुनो !
तुम यदि चाहते तो रुक सकता था युद्ध यह
मैंने प्रसव नहीं किया था कंकाल यह
इंगित पर तुम्हारे ही भीम ने अधर्म किया
क्यों नहीं तुमने वह शाप दिया भीम को
जो तुमने दिया था निरपराध अश्वत्थामा को
तुमने किया है प्रभुता का दुरूपयोग
यदि मेरी सेवा में बल है
संचित तप में धर्म है
प्रभु हो या परात्पर हो
कुछ भी हो
सारा तुम्हारा वंश
इसी तरह पागल कुत्तों की तरह
एक दूसरे को परस्पर फाड़ खायेगा
तुम स्वयं उनका विनाश करके कई वर्षों बाद
किसी घने जंगल में

साधारण व्याध के हाथों मारे जाओगे

प्रभु हो

पर मारे जाओगे पशुयों की तरह।" (*अंधा युग* 104 105)

इस संवाद में गांधारी के चरित्र की शक्ति काफी हद तक निकल कर सामने आती है। वह कैसी थी ? क्या थी ? जिसके आगे समस्त ब्रह्माण्ड झुकता था, जिसने महाभारत के युद्ध का पासा ही पलट दिया, वह भी कौरव जननी गांधारी को माँ कहते थे, उस श्री कृष्ण ने भी सर झुका कर गांधारी के शाप को स्वीकार कर लिया। एक माँ का अपने पुत्र को शाप, यही रौचकता के वेग को तेज करती है। जिन मुख्य स्तंभों पर महाभारत खड़ी है, गांधारी उनमें से एक है। उसने कुरुक्षेत्र की भूमि को अपनी संतान की आहुति दी। इसके किरदारों को अपनी कोख से जन्म दिया, पाला पोसा, सारी विद्या दी और फिर कुरुक्षेत्र के मैदान में एक-एक कर मरते मिटते जाने के समाचार को सुना। जिसकी वेदना और वेग के आगे श्री कृष्ण भी नतमस्तिक हो गए। इस नायिका की अपनी पीड़ा है, जिसको सहते हुए स्वयं को कभी गिरने नहीं दिया, बल्कि उसे अपने अस्तित्व के लिए खाद के रूप में इस्तेमाल किया। जिससे वह शक्तिशाली रूप से मजबूत हुई।

केवल धालीवाल अपने साक्षात्कार में कहते है - "नाटकीयत तल, नाटकीय तत्व, नाटकीय जीवन, नाटकीय चरित्र, नाटकीय अंश सब कुछ नाटकीय ही तो है जो गांधारी से जुड़ा हुआ है। जिस कारण आज भी से बहुत लोगों के मन में बसी हुई है। जितना रंग जितने अनुभव और जितनी नाटकीयता इस नायिका में छुपी हुई है, वह किसी और में नहीं है, अगर महाभारत में उन्हें कोई नायिका सबसे ज्यादा पसंद है, तो वह गांधारी है। जिस पर वह खेलना और लिखना पसंद करते है।" (धालीवाल साक्षात्कार)

अंधकार का सूर्य जब उदय होता है, तो हर तरफ अंधेरे के इलावा कुछ नहीं दिखता और ना ही कुछ नया पनपता है। किसी भी नए जीव या विचार की उत्पत्ति तो संभव ही नहीं है। उस समय यह सूर्य धरा पर नहीं बल्कि सबके मनों पर भी छा रहा था। क्या गलत है, क्या सही है, किसी को कुछ नहीं पता चल रहा था। जिसे जो सही लग रहा था, वह कर रहा था। मानवीय मूल्य, आशा, संस्कार, गुण अथवा सभ्यता सब पतित हो रही थी। इनका अंत कहाँ जा कर किस हाल पर रुकेगा, किसी को पता नहीं था। सबकी आँखों पर मानो एक पट्टी बंधी हो, किसी ने मोह की, किसी ने स्वार्थ को, किसी ने लोभ की और किसी ने विनाश की। इनको खोल कर उस

रौशनी देते सूर्य को कोई महसूस नहीं करना चाहता था। यह प्रतिज्ञायों का दौर था, जिसमें हर कोई स्वयं को किसी ना किसी प्रतिज्ञा में बाँध रहा था।

भारतीय मान्यताओं के अनुसार जब कोई अनिष्ट होने वाला होता है, तब प्रकृति में बहुत से अपशकुन होने लगते हैं, अशुभ चिन्न दिखने लगते हैं। जो इस बात का संकेत देते हैं, संभल जाओ, रुक जाओ, स्वयं को सुरक्षित करलो। रिश्ते मन के विचारों की तरह उलझते जा रहे थे। इसका छोर कहाँ है.....? किसी को कुछ नहीं पता था और ना ही कोई इसे सुलझाने की कोशिश कर रहा था। सब कुछ ख़त्म होता जा रहा था। भरी पूरी सभ्यता का अंत होने वाला था। विश्व का पहला संभावित महायुद्ध होने वाला था, जिसमें सभ्यता, धर्म, विज्ञानं, और मूल्य सब नष्ट होने वाले थे। द्वापर युग का सूर्य अस्त होने वाला था और कलयुग का उदय।

चित्रा चतुर्वेदी इसके बारे में लिखती है, "वेदव्यास का यह ग्रंथ इस अर्थ में भी अद्वितीय है कि यह दो युगों के संधिकाल का विलक्षण प्रतिनिध्व करता है। एक ओर युगांत हो रहा था, दूसरी ओर नए युग का सूत्रपात हो रहा था। द्वापर और कलयुग के इस महान संक्रमणकाल के विशिष्ट लक्षणो का महाभारत में बड़ा अद्भुत तथा रोमांचकारी रूप से यथार्थ चित्रण मिलता है। यह वह युग था जब प्राचीन मान्यताओं को ठुकराया जा रहा था, नए मूल्य प्रतिष्ठित हो रहे थे।" (*अम्बा नहीं मैं भीष्मा* 13)

इतने बड़े बदलाव को प्रस्तुत करने के लिए उन कंधों की जरूरत थी, जो इन सब का भार अपने कंधों पर उठा सके। जो समय के साथ जर्जर ईमारत की तरह गिर न जाएं बल्कि अमर होकर स्वयं एक समय बन जाएं। जब भी महाभारत का नाम आता है, गांधारी की चर्चा अवश्य होगी ही होगी। किसी को महाभारत के बारे में कुछ ज्ञात हो ना हो, पर गांधारी का नाम जरुर पता होता है "अच्छा, गांधारी वही ना जिसने अपनी आँखों पर पट्टी बंधी थी ? इस पट्टी ने अत्यंत नाटकीयता के साथ उसके चरित्र को अमर कर दिया। इस पट्टी के माध्यम से ही वेदव्यास ने एक तीर से कई निशाने लगा दिए। जिनके बारे में अभी तक खोज और शोध कार्य चल रहे हैं। गांधारी का चयन भी इसी लिए किया गया है। गांधारी भारत के कई नामचीन लेखको, नाटककारों, अभिनेतायों और फिल्मकारों को अपनी ओर आकर्षित करती रही है। जिन्होंने इस पर बहुत सा साहित्य लिखा और चलचित्र बनाएं हैं।

गुरु कुम्हार शिश कुंभ है,
गढ़ गढ़ काढे खोट ।

अंतर हाथ सहार दे,

बाहर मारे चोट ।।

इस दोहे में कबीर जी कहते हैं, गुरु एक कुम्हार की भांति है और उसका शिष्य कच्ची मिट्टी के घड़े के समान है। जिस तरह कुम्हार घड़े को मजबूत बनाने के लिए अंदर हाथ डालकर बाहर से थाप मारता है, ठीक उसी प्रकार शिष्य को कठोर अनुशासन में रखकर अंदर से प्रेम भावना रखते हुए शिष्य की बुराइयों को दूर करके संसार में सम्माननीय बनाता है। ऐसे ही वेदव्यास ने बहुत से कष्टों को उसके जीवन का हिस्सा बनाते हुए उसे विशेष नायिका बनाया है। जिसने कुरु वंश के पैदा होने से लेकर उसके छिन्न छिन्न होने तक बहुत लंबा सफ़र तय किया है।

गांधारी को लेकर बहुत से नाटककर, उपन्यासकर, रंगकर्मी, मीडिया कर्मी आदि सब ने खेला और लिखा। इसकी काली पट्टी के पीछे छुपी हुई रंगीन नाटकीयता ने सबको आकर्षित किया है। हस्तिनापुर के राज सिंहासन को एक नहीं बल्कि 101 उत्तराधिकारी देने वाली, गांधारी जिसका मूल नाम शुभलक्षणा भी है, वह बहुत ही रोचक और कठिन जीवन की मालिक है।

राकेश लिखते हैं, "गांधारी का चरित्र प्रत्येक दृष्टि से उज्ज्वल और आदर्शपूर्ण है। वह ऐसी पतिपरायणा है कि पति के अंधे होने के कारण अपने भी नेत्रों पर पट्टी बांधे रहती है। वह द्रौपदी को हृदय से आशीष देती है और अपने पुत्रों के अन्याय का समर्थन नहीं करती। आलोच्य काव्य में गांधारी का चरित्र जहां कहीं भी उभरा है, उसमें सहज मनुष्यत्व की तरलता मूर्तिमान हो उठी है ।" (*द्रौपदी* 172)

जिस समय हस्तिनापुर के सिंहासन पर उत्तराधिकारी का खतरा मंडराने लगा कि अब उसको कौन संभालेगा ? तब इस स्थिति में वेदव्यास ने आगमन करते हुए, नियोग प्रथा द्वारा उत्पन्न तीन उत्तराधिकारी धृतराष्ट, पांडू और विदुर, इस सत्ता को दिए। सत्यवती अब राज सिंहासन पर आए संकट से उभर चुकी थी। जब वह युवा हुए तो उनके विवाह की बात चलने लगी। बस एक बात जो उसके मन में उभर रही थी, वह थी कि उनके लिए योग्य वधु की खोज की जाए। अब उसके पुत्रों को कन्या कौन देगा ? सबसे बड़ा पुत्र नेत्रों से दिव्यांग था, मंझला पंडू रोग से ग्रसित था, सबसे छोटा दासी पुत्र ही ठीक था। लेकिन सत्यवती भी किसी से कम नहीं थी, ऐसे ही नहीं उसने इतनी बड़ी सत्ता को संभाल कर रखा हुआ था। उसने अपने ख़ास सेवकों और ब्राह्मणों को इस कार्य पर लगा दिया। वह पता करके दें पूरे भारत वर्ष या आस

पड़ोस के राज्यों में कौन सी ऐसा क्षत्रिय कन्या है, जो हस्तिनापुर की वधु बनने के योग्य है। उन्होने उचित समय पर आकर सारा समाचार भीष्म को सुना दिया। भीष्म विदुर से बात करते हुए उन्हें कहते हैं।

श्रूयते यादवी कन्या स्वनुरुपा कुलस्य न: ।

सुबलस्यात्मजा चैव तथा मद्रेश्वरस्य च । ।

कुलीना रूपवत्ययश्च्य ता:कन्या: पुत्र सर्वश: ।

उचिताशचैव सम्बन्धे तेऽनरुमाकं क्षत्रियषर्भा: । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 5 6)

अर्थात: उन्होंने कहा, सुना जाता है यदुवंशी शूरसेन की कन्या पृथा जो अब राजा कुंतीभोज ने गोद ली हुई है, वह हमारे कुल के अनुरूप है। इसी प्रकार गान्धार राज सुबल और मद्रनरेश के यहाँ भी एक एक कन्या सुनी जाती है। वह बड़ी सुन्दरी तथा उत्तम कुल में उत्पन्न हैं। श्रेष्ठ क्षत्रियगण हमारे साथ विवाह संबंध करने के सर्वथा योग्य है।

ब्राह्मणों ने भीष्म को बताया कि राजा सुबल की कन्या को भगवान शिव से 100 पुत्रों का वरदान प्राप्त है। इस बात से उनकी और लालसा बढ़ गई कि उसको विवाह के माध्यम से अपनी कुल में लाया जाए। यह नाटकीयता उभर कर आती है, जिसमें बताया जाता है कि वह 100 पुत्रों की जन्म दाती बनेगी। गांधारी के आगमन से पहले ही इस वरदान के बारे में बता कर उसकी विशेषता बढ़ा दी गई जिस से कसाव और विद्यमान हो जाता है। सुनने में चाहे यह बात अविश्वसनीय और अकल्पनीय लगती है, पर यह सत्य कि इसमें छिपी नाटकीयता दर्शकों को बाँध कर रख लेती है। भीष्म राजा सुबल के पास जाकर उनकी कन्या का हाथ मांगते हैं। जब राजा सुबल को पता चलता है, वह जिस के लिए उनकी बेटी का हाथ मांग रहे हैं, वह राजकुमार धृतराष्ट अंधे है, वह उलझे विचारों में फंस जाते हैं। जिस उलझन में फँसते है, वो देखने को तो बहुत छोटी सी है, पर इसमें बहुत विशाल नाटकीयता समाई हुई है। बाद में उनकी कुल, प्रसिद्धि और आचार आदि के विषय में विचार कर के अपनी पुत्री का रिश्ता उसके साथ तय कर देते हैं।

हर लड़की अपने होने वाले स्वामी के बारे में बहुत से सपने देखती है और उनको सच होते भी देखना चाहती है। इस नायिका में जो नाटकीयता उभर कर आती है, वह यह है कि हस्तिनापुर का सिंहासन उसके सपनो को भी गया, केवल ताज, राज और सत्ता को देख कर ही उसका विवाह एक नेत्रहीन व्यक्ति से कर दिया गया। गांधारी के मन को देखें तो वह

नाटकीयता महसूस होगी कि उसकी मनो दशा क्या हुई होगी ? जब उसको यह सूचना मिली होगी, जिस व्यक्ति से विवाह तय किया गया है, वह नेत्रों से दिव्यांग है। उसकी दासी ने डरते डरते यह समाचार उसको बताया। वेदव्यास जिस नाटकीय विडम्बना का समावेश उसके भाग्य में लिखने जा रहे थे, वह किसी के मन में भी नहीं होगा। गांधारी एक रेशमी कपडा मंगवाती है और अनेको तह लगाकर उसकी पट्टी बना कर अपनी आँखों पर बाँध लेती है और कहती है "मैं सदा अपने पति के अनुकूल रहूंगी, मैं उनके दोषों को कभी नहीं देखूंगी।"

बहुत चतुरता और महीनता से वेदव्यास इस नाटकीय तनाव से कथा को बांधता चला जाता है। वह कहाँ देखता हैं, कहाँ निशाना लगाता हैं, इसके बारे में कोई कुछ तय नहीं कर पाता और न ही अनुमान लगा पाता है। बहुत सी बातों को एक बात में बाँध देना और कभी एक बात को अनेकों रूप में बांध देना, यह उनके लिए बहुत आसान सी बात है। ऐसे ही उसकी इन नायिकाओं पर अनेकों ग्रन्थ नहीं लिखे गए, और नाटक बनाए गए। उन्होने महाभारत में स्पष्ट लिखा है, "रेशम के कपडे से पट्टी बना कर आँखों पर पट्टी बाँध ली" अब इसके शब्दों में अर्थ देखे तो बहुत निकलते है। राजसी, धार्मिक, सामाजिक विभिन्न पक्षों के संदर्भ में विभिन्न अर्थ। समस्त जीवन में बस दो बार ही यह पट्टी खुली और दोनों बार हालात बदल कर रख दिए। वेदव्यास ने उस पट्टी में कितनी रौचकता, बिम्ब, कसाव और नाटकीयता कितना कुछ भर दिया।

जब गांधारी हस्तिनापुर आई तो उसने सब गुरुजनों की कृपा प्राप्त करली। उसके उत्तम स्वाभाव, सदाचार तथा सदव्यवहार से उसने सभी का दिल जीत लिया। उसने कभी अपने साथ हुए किसी भी द्वेष का रोष प्रकट नहीं किया। सब कुछ कुशल मंगल चलता गया, उधर उसके देवर महाराज पांडू का विवाह भी कुंती और माद्री से हो गया। समय बीतता गया , गांधारी के अभी कोई संतान नहीं थी। उसके मन में कहीं न कहीं यह बीज पनपना शुरू हो गया और स्वाभाविक भी था। उसकी संतान ही हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठे। इस बीज के साथ उसके चरित्र का कौतूहल भी दिखाई देता है। एक बार महर्षि विशिष्ट उनके राज महल में आए, वह बहुत थके और भूखे भी थे। गांधारी ने बड़े भाव से उनकी सेवा की, खुश होकर महर्षि विशिष्ट ने उन्हें वर मांगने के लिए कहा, तब गांधारी ने 100 पुत्र मांगे। कुछ समय पश्चात गांधारी को गर्भ धारण हो गया। लंबा समय बीत जाने पर भी उसे प्रसव नहीं हो रहा था। उधर उसको खबर मिली कि उसकी देवरानी कुंती ने पुत्र को जन्म दिया है। इसी बात को लेकर वह चिंतित

रहने लगी कि अब कुंती की संतान ही सिंहासन पर बैठेगी। उसको ऐसा लगने लगा उसे मिला वरदान झूठ था। अभी तक २ वर्ष बीत जाने पर भी प्रसव पीड़ा नहीं हुई। एक दिन उसने अपने उदर पर मुष्टिका से जोर जोर से प्रहार करना शुरू कर दिया। यह सब नाटकीयता के बंधन में बंधा हुआ है, जिसे समझाने की जरूरत नहीं है। सौ पुत्रों का वरदान, दो वर्ष से प्रसव पीड़ा ना होना, इसको सुन पढ़ कर ही एक अलग रस की अनुभूति होती है। इसको मंच पर देखेंगे तो कैसा अनुभव होगा इसकी कल्पना ही काफी है। जब वह जोर जोर से अपने गर्भ पर प्रहार करती है, तो एक बहुत बड़ा लोहे सा सखत मास का भारी गोल पिंड नीचे गिरता है। वह घबरा जाती है, दो वर्ष तक गर्भ धारण किया और पैदा हुआ तो यह पिंड। मानवीय गर्भ से लोहे समान पिंड ? अपने आप मे यह एक अलग वातवर्ण का सृजन करता है। यह आश्चर्य का चरम बिन्दु है। जो वह उस पिंड को फेंकने का निर्णय करती है। उधर जब महर्षि विशिष्ट को इस बात का पता चलता है, वह शीघ्र ही दौड़े चले आते है। तब गांधारी उनके सामने अश्रु धारा के साथ सारी बात उनको बताती है। किस कारण वह दुखी हुई और अपने उदर पर प्रहार किया। गर्भ से लोहे के सम्मान भारी पिंड....? यह कैसे..... ? क्या भगवान् शिव और महर्षि विशिष्ट का वरदान झूठ साबित हो गया.... ? सौ पुत्र कैसे पैदा होंगे..... ? इन सब नाटकीय मोड़ो और घटनाओं को विराम देते हुए महर्षि विशिष्ट कहते हैं।

वितथं नौक्तपुर्वे में स्वैरेय्वपि कुतोऽन्यथा ।

घृतपूर्णे कुण्डशतं क्षिप्रमेंव विधियातम । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 18)

अर्थात: मैंने तो कभी हास परिहास के समय भी झूठी बात मुंह से नहीं निकाली। फिर वरदान आदि इन्हीं अवसरों पर कही हुई मेरी बात झूठ कैसे हो सकती है। तुम शीघ्र ही सौ मटके (कुंड) तैयार करवायो और उन्हें घी से भर दो।

एक और अत्याधिक अमानवीय नाटकीय घटना.....। इससे क्या होगा....? क्या इन सौ मटकों में संतान उत्पति होगी.....? कहीं-कहीं यहाँ आधुनिक टेस्ट ट्यूब बेबी जैसी विधि का आभास सा लगता है। उस लोहे के समान सख्त मास पिंड के एक सौ एक टुकड़े करके उन मटकों में भर दिए गए तद पश्चात् ठीक दो वर्ष बाद जब उनको खोला गया तो उसमें से सौ कौरव पुत्रों और एक कौरव पुत्री का जन्म हुआ। कितना नाटकीय हुआ सब कुछ, चार वर्षों के बाद गांधारी की प्रतीक्षा ख़त्म हुई। किसी भी माँ के लिए बहुत लंबा समय होता है यह, आखिरकार वह माँ बन ही गई। इस चरित्र कि नाटकीयता अभी तो आरंभ हुई है।

जैसे ही सबसे बड़े बेटे दुर्योधन का जन्म हुआ तब बहुत से अमंगल अपशगुन हुए, मासभक्षी पशुओं ने रुदन शुरू कर दिया, कौए भी चिल्लाने लगे और गीदड़ भी रुदन करने लगे। ब्राह्मणों ने उनको बताया यह कोई शुभ शकुन नहीं है। उसका यह पुत्र कुल का नाश करेगा इस लिए इसका त्याग कर दिया जाए और धर्म शास्त्र भी यही कहतें है, सब की रक्षा के लिए त्याग कर देना ही धर्म है। आँखों पर लगी पट्टी मन पर प्रहार कर रही थी। वहाँ सभी भविष्यवाणियों को दरकिनार करते हुए पिता द्वारा अपने पुत्र को न त्यागने का निर्णय ले लिया जाता है। दरअसल वह दुर्योधन नहीं महाभारत का कारण पैदा हुआ था। जो भूगोल और इतिहास बदलने वाली नाटकीयता लेकर जन्मा था।

कितने रूप देकर वेदव्यास ने इस नायिका को अमर बना दिया। वह किरदार जिसके समक्ष स्वयं मुरलीधर भी नतमस्तक होते हैं। जिसे पांडू नंदन भी नमन करते हैं। स्वयं वेदव्यास भी उसका आदर करते हैं। भीष्म भी उसके किरदार की सराहना करते हैं। महाभारत में स्वयं वैशम्पायन गांधारी के बारे में स्त्रीविलाप पर्व में कहते हैं। "गांधारी बड़ी ही पतिव्रता, परम सौभाग्यवती, पति के समान वर्त का पालन करनेवाली, उग्र तपस्या से युक्त तथा सदा सत्य बोलने वाली है।"

कुरु वंश को सदा काल का ग्रास बनने से बचाने के लिए, वह सारी उम्र प्रयत्न करती रही किन्तु इसमें वह सफल ना हो सकी। सत्यवती और काशीराज की कन्याओं के बाद राज सत्ता के सबसे अधिक पास रही। कुरु नंदन और पांडू नंदन अब बाल्य अवस्था में आ चुके थे। उनकी शिक्षा और दीक्षा का सारा प्रबंध कर दिया गया। सबसे ज्येष्ठ कुरु नंदन दुर्योधन उसी समय से पांडव पुत्रों के प्रति मन में द्वेष भावना रखने लगा। गांधारी को इसकी भनक पहले तो न लगी, धीरे-धीरे जब उसकी इधर उधर से शिकायतें आने लगी तो वह भी चिंतित रहने लगी। उसके कानों में उसके जन्म के समय ब्राह्मणों द्वारा की गई, वह भविष्यवाणी गूंजने लगी। वह कर भी क्या सकती थी, अब तो वह बाल काल में आ चुके थे। फिर भी वह प्रयत्न करती है कि वह किसी ना किसी तरह अपने स्वाभाव को त्याग कर सही रास्ते पर आ जाए। अब वह कहाँ रुकने वाला था, जिसने गांधारी की सारी नाटकीयता बाहर निकाल कर लानी थी। एक दिन अचानक भीम गुरुकुल से गायब हो जाता है। सभी चिंतित हो जाते है, क्या हुआ ? वह कहाँ गया ? कुछ दिन बाद अचानक भीम वापिस आ जाता है। उसको देख कर युयुत्सु बहुत खुश होता है। उसको अधिक प्रसन्न देखकर गांधारी के मन में विक्षित हुए सवाल उठ खड़े होते हैं।

वह उससे पूछती हैं, सच सच बता क्या बात हुई थी। तब उससे पता चलता है कि दुर्योधन ने उसे विषैला भोजन खिला कर नदी में बांध कर फेंक दिया था। यह बात उसके मन में बहुत अघात करती है, और पछताती भी बहुत है। वह युयुत्सु को भी उतना प्यार करती है, जितना अपने पुत्रों से,भले ही वह दासी था, पर उसके संस्कार क्षत्रिय थे। यहाँ जो नाटकीयता उभर कर सामने आती है, जिस दिन भीम गायब हुआ था, उसी रात प्रलाप करती हुई कुंती को वह अपने अंक में भर कर सांत्वना देती रही थी। उसके दर्द को समझते और महसूस करते हुए उसने तुरंत विदुर और अपने पति से उसको शीघ्र खोज लाने का अनुरोध किया था। जब सारा भेद खुला तो वह ग्लानी से भर गई। वह यह सोचने पर मजबूर हो गई कि कितना अच्छा होता अगर वह सौ पुत्रों की जगह किसी एक की माता होती।

उसका जीवन ही नाटक बनता चला गया, जिस पति के लिए उसने अपने नेत्रों का त्याग किया था। उसने अब गांधारी के बोलों को भी सुनना बंद कर दिया था, अब वह बोल उसके भीतर शोर मचाने लगे थे। वह चाहती थी दुर्योधन किसी तरह सुयोधन बन जाए। वो भरत वंशीयों से कुरु और पांडू वंशों में बंट चुको को एक साथ लाने का यत्न करती रही। इसके किरदार में छिपी नाटकीयता किसी विशेष घटना से नहीं बल्कि इसकी बातों से, इसके स्नेह और इसके कार्य से निकल कर सामने आ रही थी।

यौवन काल में पाँव रख चुके दोनों पक्ष अपनी शिक्षा पूर्ण कर चुके थे। हस्तिनापुर में उनके प्रशिक्षण के लिए एक रंगमंडप तैयार किया गया। जिसमें सभी ने अपनी ग्रहण की गई विद्या का प्रदर्शन करना था। सारी प्रजा और राज परिवार अपने स्थान पर बैठा था। गांधारी की आँखें आज कुंती बनी हुई थी, वह ही उसको सारा हाल सुना रही थी। गांधारी और कुंती का स्नेह और प्यार इतनी दुर्घटनाओं के बाद भी नहीं टूटा था। वह भी बड़ी होने के बावजूद कुंती को स्नेह और प्यार के साथ झुक कर मिलती थी। यह भी तो उसके किरदार की विशेषता है, जो सबको अपनी ओर आकर्षित करती है। गुरु आज्ञा के साथ सबका कला प्रदर्शन शुरू हो गया। कभी गदा प्रदर्शन होता तो कभी मल्ल युद्ध का प्रदर्शन होता। कुरु नंदन यहाँ बीच में अपने अंदर छिपी हुई द्वेष भावना को सामने ले आते। उस दिन खुले आसमान के नीचे इस विरोध और हीन भावना के प्रदर्शन से गांधारी शोकाकुल हो जाती है। उस दिन दोनों पक्षो में युद्ध तो टल गया, पर संभावनाए बहुत छोड़ गया था।

गांधारी को अपने आँखों के सामने हस्तिनापुर का साम्राज्य गिरता हुआ नज़र आ रहा था। वह चाहती थी उसके पुत्र बुरी बातें छोड़कर राजधर्म का पालन करे और अपने भाइयों के साथ मिल कर रहे। उसने अपने भाई से अनुरोध किया कि वह उसके पुत्रो को शिक्षा दे। शकुनि के साथ मानों गांधारी ने स्वयं काल देव को बुलावा दे दिया था। जिस बात से वह बचना चाहती थी, वह उसको स्वयं बुलावा दे आई। अपने मामा की छाया में वह पहले से अधिक चतुरता पूर्ण पांडवों के प्रति षड्यंत्र करने लग गए। आज दुर्योधन को एक और शक्तिशाली मित्र कर्ण मिल गया था, जो अर्जुन से किसी भी रूप में कम नहीं था। अपने पुत्र के प्रति उसके मन में जो आशंकाएं थी, वह और भी बड़ी हो गई थी। अब तो एक ही मार्ग शेष रह गया था, युद्ध और विनाश का,जिसे वह टालना चाहती थी।

धृतराष्ट भी अपने पुत्रों को समझाने की जगह उनकी हर योजना में उनका साथ देते। वह गांधारी जिसने अपने पति के लिए दृष्टिविहीन बनी, पतिव्रता धर्म का पालन किया, उसने भी उसकी बात सुनने से मना कर दिया। वह जाए तो जाए कहाँ, उसकी सारी दशा ही नाटकीय बन गई थी, कहे तो किसे कहे..... ? क्या कोई उसे समझेगा.....? उसकी जिंदगी में सारे रंग सिर्फ सलेटी रंग में तब्दील हो गए।

जब पांडवों का माँ कुंती सहित वारणावत जाने का प्रबन्ध किया गया, तो उसके अंदर की वह माँ जाग जाती है, जो उनकी रक्षा करना चाहती है। उसके मन में संदेह प्रकट होता है अगर वह जगह इतनी ही रमणीक है, तो केवल पांड्वो को ही क्यों भेजा जा रहा हैं। कुछ दिन बाद उसको समाचार मिलता है, वहां जिस जगह वह रुके थे, उसमें अचानक आग लग गई और वह जल कर मर गए हैं। इस बात को सुन कर उसका मन विचलित हो जाता है। वह सोचती रहती है, कहीं इसमें उसके पति-भाई और पुत्रों की कोई साजिश होगी। अपने पति को विरलाप करते देख कर उसको यह धैर्य हो जाता है, भले ही किसी ने यह साजिश की हो पर उसके आराध्य इसमें शामिल नहीं हो सकते और ना ही वह इस कार्य की अनुमति दे सकते।

वह किस स्थिति को किस तरह सहती है.....? कैसे कार्य करती है..... ? यही उसकी नाटकीयता है। समय के साथ उसके बेटे दुर्योधन का मूल स्वाभाव कहीं खो गया था। इस बात से गांधारी भी बहुत संतुष्ट थी, पर होनी कहाँ रूकती है। गांधारी के मन में जो शांति स्थिर हुई थी वह अभी अशांत होने वाली थी। हस्तिनापुर में दुर्योधन को समाचार प्राप्त हुआ, पांचाल राजकुमारी द्रौपदी का स्वयंवर होने वाला है। जिसकी रूप शोभा सुन दुर्योधन हिल गया। इसके

साथ गांधारी का मन भी हिल गया, जो शांति उसको मिली थी, वह स्थिर न रह सकी। उससे गांधारी अभी इस बात को नहीं समझ पा रही थी कि जो मोहरे वेदव्यास ने कथा को संपूर्ण करने के लिए बिछा रखे थे, उसी के तहत सब कार्य हो रहा था। गांधारी का चरित्र और उसमें छुपी हुई नाटकीयता और गहरी होती जा रही थी।

पांचाल की सभा में ब्राह्मणों के भेस धारण किए हुए पांड्वो से कौरवों का सामना होता है, जो द्रौपदी को पा लेते हैं। कुछ समय बाद जब यह बात सामने निकल कर आती है, पांडव अभी जीवित हैं और वह पंचाल देश में राजा द्रुपद के अतिथि बन कर रह रहे हैं। इस बात के बारे में जब गांधारी को पता चलता हैं, तो वह अपने पति से कहती है, अब जब सब लोगों को पता चल चूका है, वह लोग जीवित है। उन्हें अब भी राज भवन में वापिस नहीं बुलाया गया तो इस से प्रजा में कोई अच्छा सन्देश नहीं जाएगा। उसकी बात मान कर पांडवों को वापिस राज भवन में आने के लिए बुलावा भेज दिया जाता है। गांधारी जिस घटना को टालने के लिए जो रास्ता अपनाती है, वह रास्ता कहीं ना कहीं सबको उसके और पास ले आता है। जिस पांचाली को जीतने दुर्योधन अपने मित्र कर्ण के साथ गया था, अब वह कुंती की पुत्र वधु है। क्या उसके बेटे यह सहन कर सकेंगे और अपनी आँखों के सामने यह देख सकेंगे कि द्रौपदी उनके राज भवन में पांडवों की अर्धांगिनी बन कर रहे।

पांडव इतने वर्षों बाद वह वापिस राजभवन में आ रहे थे, इसलिए गांधारी ने पांडवों के स्वागत के लिए सब उचित प्रबंध किए। जो उसके हृदय की विशालता को दर्शाती है। द्रौपदी के रूप को देखकर सभी मुग्ध हो जाते। द्रौपदी भी गांधारी के चरणों में वंदन करते बोलती है, "धरती की महान पतिव्रता, कुरुकुल की महारानी के चरणों में मुझ कुरुवंश की ज्येष्ठ वधु पांचाली द्रौपदी का प्रणाम स्वीकार करो"। आगे से गांधारी भी उसे सौभाग्यवती रहो का आशीर्वाद देती हुई गले लगाती है। ।

इस कथा में जितनी भी विशिष्ट नायिकाएँ है, सब के साथ श्री कृष्ण का एक विशेष संबंध रहा है। जब कोई किसी भी स्थिति में फंसता है, तो श्री कृष्ण उसे मार्ग दिखाने चले आते हैं। बुआ कुंती के साथ श्री कृष्ण गांधारी को भी स्नेह करते थे। एक बार श्री कृष्ण गांधारी को कहते हैं, "जब भी मैं आपको देखता हूँ तो मुझे माँ यशोदा का स्नेह याद आ जाता है।" वह सब जानती है श्री कृष्ण ही सब कुछ करने वाला है। वह अपने मन की बात उससे करती भी रहती है। वह दूर दर्शी भी थी, उसको पता था कि पांडवों ने भी माँ कुंती की सहायता से आस पास

के राज्यों से अपने राजनितिक, कुटनीतिक और वैवाहिक संबंध स्थापित कर लिए हैं। इसलिए अब उन्हें हीन जानना दुर्योधन के लिए खतरे से कम नहीं होगा।

अभी गांधारी का भार कम नहीं हुआ था। उधर शकुनी भी दुर्योधन के अंदर की इर्शाग्नी पर घी डालने का कार्य निरंतर कर रहा था। तरह-तरह की दुसाह्सी और कुटनीतिक चालों से जब वह पांडवों को परास्त नहीं कर पाए तो उन्होंने जुए का सहारा लिया। वह जानते थे पांडव इसमें निपुण नहीं है। पर शकुनी इस कला में निपुण था। उन्होंने इस चाल में फंसा कर उनको नीचा दिखा कर उनका राज्य हड़पना चाहा। गांधारी को भी इस बात का अंदेशा हो गया था अब पानी सर के ऊपर जा चूका है। एक दिन वह युधिष्ठिर को उकसा कर जुआ खेलने के लिए बुलाते हैं और उनके बहकावे में आकर वह फिर उनके पास खेलने के लिए आ जाते है। वह धृतराष्ट को कहती है, "अपने पुत्र को बोले वह जुआ मत खेले।" वह गांधारी की इस बात को अनसुना कर देते है, तब गांधारी होने वाले अनिष्ट कार्य की चेतावनी देते हुए कहती है।

तथा ते न कृतं राजन पुत्रस्नेहात्रारापिध ।

तस्य प्राप्तं फलं विद्धि कुलान्तकारणाय यत । । (*महाभारत* सभापर्वणि 922)

अर्थात : महाराज आपको जो करना चाहिए था, वह आपने पुत्रस्नेह वश नहीं किया। अत: समझ लीजिए उसी का यह फल प्राप्त हुआ है, जो समूचे कुलके विनाश का कारण होने जा रहा है।

उस समय ऐसा लगता है केवल गांधारी के पास ही दृष्टि है, बाकी सबकी आँखों पर मानो पट्टी बंधी हो, होता भी ऐसे ही है। महाराज धृतराष्ट गांधारी को कहते हैं, "इस कुल का अंत भले ही हो जाए, मैं उसको नहीं रोक सकता"। मानो गांधारी अपनी दिव्य दृष्टि से पहले ही भविष्य के गर्भ में महाभारत के मैदान में जाकर खड़ी होकर आने वाली आपदा का अनुभव कर रही हो। असल में जुआ नहीं कुरु कुल की बर्बादी का खेल खेला जा रहा था। जिसमें अग्नि पुत्री याज्ञसेनी का अपमान होना था और उसकी अग्नि में सबने भस्म होना था। यही नाटकीयता की चरम सीमा है।

गांधारी कभी कौरवों की पक्षधर लगती है, तो कभी पांडवों की, कभी वह मनस्विनी लगती है, तो कभी महारानी का रूप सामने आता है। उसके चरित्र की नाटकीयता उसके जीवन के उतार चढ़ाव में नज़र आती है। उस दिन भरी सभा में द्रौपदी के अपमान ने सभी को शून्य कर दिया था। जब कौरव वधुओं को इसके बारे में पता चला तो उन्होंने भी इसका शोक मनाया और कौरवों को बुरा कहा। गांधारी जानती थी, जहाँ श्री कृष्ण है वहां विजय स्वयं आती

है। इस बार उसके पुत्रों ने पांडवों को नहीं, श्री कृष्ण की सखी कृष्णा को अपमानित किया है। योद्धाओं से भरी पड़ी सभा में कोई भी उसकी रक्षा के लिए नहीं आया तो उसने आँखें मूँद कर श्री कृष्ण को याद किया। तब वह वस्त्र रूप में उसकी रक्षा के लिए शीघ्र चले आए। गुरु ग्रन्थ साहिब में भी इस बात का ज़िक्र आता है

पांचाली को राज सभा में राम नाम सुध आई ।

ताको दुख हरियो करुणा में अपनी पैद बढाई । । (*गुरु ग्रंथ साहिब* अंग 1008 मारू मोहल्ला 5)

इस घटना के बाद गांधारी के चरित्र में बहुत बदलाव आ गया था। सच में अँधेरा उसका अंग बन गया था। जिस अँधेरे से उसको सारी उम्र डर नहीं लगा, वह अब उसे डराने लगा था। राज महल में हलचल बढ़ने लग गई, उसको सारी बातें युयुत्सु और स्वयं विदुर से पता लग जाती थी। उसको यह भी पता लगा, वासुदेव ने अपनी सखी को समझाते हुए कहा है "बस तुम सही समय की प्रतीक्षा करो, जिन्होंने तुम्हारे साथ यह जघन्य अपराध किया है, तुम देखोगी की उसकी स्त्रियाँ उनकी देहों के साथ लिपट लिपट कर रो रही हैं।" यह बात गांधारी के चरित्र की अनेकों तहों को खोलती नज़र आती है। श्री कृष्ण की कही बात व्यर्थ नहीं जाती। जब श्री कृष्ण हस्तिनापुर में दूत बन कर बहुत से साधुओं और ऋषि गणों के साथ आते हैं तो गांधारी को लगता है, अब श्री कृष्ण स्वयं भाइयों की आपसी घृणा को दूर करने के लिए आगे आए है। अब शीघ्र ही सब कुछ शांत हो जाएगा। इस धरा पर कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो उनकी बात को मना कर सके। वैशम्पायन जी दुर्योधन के सन्दर्भ में कहते हैं

शास्त्रं न शास्ति दुबुर्द्धि श्रेयसे चेतराय च ।

न वै वृद्धो बालमतिभ्रवेद राजन कथंचन । । (*महाभारत* सभापर्वणि 922)

अर्थात : जिसकी बुद्धि खोटी है, उसे शास्त्र भी भला बुरा कुछ नहीं सिखा सकता, मन्दबुद्धि बालक वृद्धों जैसा विवेकशील किसी प्रकार नहीं हो सकता।

इस बात को दुर्योधन भरी सभी में सिद्ध कर देता है। वह श्री कृष्ण के लाख समझाने पर नहीं समझता और उनका अपमान करते हुए भरी सभा में से अपने मंत्रियों के साथ उठ कर चला जाता है। गांधारी सोच रही थी आज कोई हितकारी निर्णय हो जाएगा, वह इस अनिष्ट के बारे में सुन कर स्तब्ध रह जाती है। उसकी यही नाटकीयता है, वह सभी को साथ लेकर चलने की कोशिश करती रही, फिर भी उलझी रही है। जब उसको पता लगा कि दुर्योधन ने श्री कृष्ण

का अपमान किया है, उसने श्री कृष्ण के पांच गाँव वाले प्रस्ताव को नकारते हुए उनको सुई की नोक जितनी भूमि भी देने से मना कर दिया, उल्टा दूत रूप में आए श्री कृष्ण को बंधी बनाने जैसा ना क्षमायोग अपराध किया, उसका दिल गति से तेज़ दौड़ने लगता है। गांधारी को आभास हो जाता है, कि उसके पुत्रों की आयु अब ख़त्म होने जा रही है।

बहुत से रंगों, भावों, रिश्तों, नाटकीय मोड़ों, और संवेदनाओं से भरा पड़ा गांधारी का चरित्र उसको विशिष्ट रूप दे रहा है। जब यम देव नाचते हैं तो कोई भी उनके समक्ष नहीं आता। जिन मूल्यों को बचाने का यत्न किया गया था, वह सब टूटने वाला था। सारी उम्र जिस साम्राज्य और परिवार को बचाने का प्रयत्न गांधारी करती रही, उसके टूटने और तिनकों की तरह बिखरने की शुरुयात हो चुकी थी। यह सुन्दरता और उसको मंच पर खेलने और प्रदर्शित करने वाली संभावनाए जो गांधारी के चरित्र में हैं, वह बहुत ही कम दूसरी नायिकाओं के हिस्से में आया है। कुरुक्षेत्र की भूमि पर रक्त की बारिश होने वाली थी, बहने वाली नदियों और चश्मों का रंग लाल होने वाला था। लंबे समय से भूखे बैठे नर भक्षी पशु-पक्षी पेट भर कर खाने वाले थे। द्वापर ख़त्म होने वाला था और कलयुग शुरू होने वाला था। शिव का तीसरा नेत्र खुलने वाला था, उनके पाँव तांडव करने के लिए ललायत हो रहे थे। सुदर्शन भी कुरुक्षेत्र का भ्रमण करने के लिए तैयार बैठा था और गांधारी चुप चाप देखने के लिए।

जैसे ही पांचजन्य नामक राक्षस की हड्डी से बना श्री कृष्ण के प्रसिद्ध शंख का शंखनाद हुआ, एक अजब सी गर्जना सारे वातावरण में गूंजने लगी, कई लोगों के डर के मारे मल मूत्र निकल गया। यह नाद था बदलाव का, धर्म और अधर्म के बीच कौन अपनी स्थापति पूर्ण करेगा कोई नहीं जानता। 18 दिन तक भयंकर महायुद्ध चलता रहा। ग्यारह और सात अक्षौहिणी सेना की बीच, बड़े बड़े अस्त्र सूखे पत्तों की भांति और महायोद्धा पेड़ों की भांति गिरते रहे। भीष्म से लेकर अभिमन्यु और दुर्योधन तक सब रणभूमि में वीरगति प्राप्त कर चुके थे। सारा माहौल बस एक ही रंग में रंगा था और वो था "रंग लाल"। हस्तिनापुर में संजय अपनी दिव्य दृष्टि से धृतराष्ट और गांधारी को सारा हाल सुना रहे थे। गांधारी ने महत्वपूर्ण सफ़र तय किया, जिसने इसकी नाटकीयता को और बढ़ा दिया और वह था "सौ संतानों की माँ से निसंतान का।" गांधारी के लिए यह असह नाटकीय मोड है, जिसने अनेकों कष्ट सह कर इतनी संतानों को जन्म दिया, उनकी रक्षा करने की कोशिश की, वह आज कुरुक्षेत्र में लाशें बन कर पड़े थे।

मासभक्षी जीवों की गर्जना और बच्चे, बूढ़ों और विधवाओं के रुदन के बिना कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। कौरव पक्ष का खून अब ठंडा हो गया था। राज महल में कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा ही शेष बचे थे। वह तीनों राज भवन में आते हैं और भरे मन से धृतराष्ट को सूचना देते हैं, कि उनके नंदन युद्ध में पराक्रम दिखाते हुए, देवलोक को प्रस्थान कर चुके हैं। जिस बात को टालने के लिए गांधारी सारी उम्र प्रयत्न करती रही उस बात को स्वयं श्री कृष्ण भी ना टाल सके, जिसकी सूचना गांधारी को मिली थी। गांधारी कभी स्वयं से, तो कभी अपनों से लडती रही। दर्शक गण उसके चरित्र के इसी द्वंध में नाटकीयता का आभास करते हैं।

व्यास ने युद्ध के बाद स्त्रियों के मन की पीड़ा को स्त्री पर्व में छुआ है। युद्ध 18 दिन चला हो, पर वह स्त्रियाँ अब रोज अपने हालातों से युद्ध लड़ेंगी। युद्ध की समाप्ति के बाद सभी पांडू नंदन, श्री कृष्ण के साथ हस्तिनापुर गांधारी से मिलने पहुँचते हैं। जो गांधारी पांडवों को अपने पुत्रों की भाँति मानती रही, कौरवों की मृत्यु के संताप में वह उनको भी शाप देने को आतुर हो जाती है। जब इस बात के बारे में वेदव्यास को पता चलता है, तो वह वायु के वेग समान वहां पहुँच जाते हैं और उसको समझाते हैं। वह अपने मन की बात को होठों तक ना आने दे क्योंकि इसमें उनका कोई कसूर नहीं है। जब भी दुर्योधन उमसे रोज आशीर्वाद लेने आता था तो तुम ही कहती थी "यतो धर्म स्ततो जय:" भाव जहाँ धर्म है वहीं विजय है। जब समय ने सबके समक्ष दिखा दिया है कि धर्म का बल सच में अधिक है, विजय उसकी ही होगी जो धर्म पर चलेगा तो अब तुम इसके विपरीत क्यों विचार कर रही हो। वेदव्यास की बात सुनने के पश्चात् जब गांधारी अपने क्रोध का त्याग करती है, तो स्वयं ही कहती है "कुरु कुल के नाश में दुर्योधन, कर्ण और उसके मामा शकुनी" का ही हाथ है, इसमें पांडवों का कोई कसूर नहीं है, मैं पांडवों से कोई द्वेष भाव नहीं रखती।"

जब सभी पांडव उनसे क्षमा याचना करते हैं और गांधारी और पांडवों के बीच संवाद उभर कर आता है। उनकी बातों में एक और तत्व उभर कर आता है, एक माँ की ममता जिसमें वह पांड्वो को कहती है, "हम दोनों बूढ़े हुए, हमारा राज्य भी तुमने छीन लिया, ऐसी दशा में हमारी एक ही संतान को दो अंधों के लिए एक ही लाठी के सहारे को तुमने क्यों नहीं जीवित छोड़ा ? तुम मेरे सारे पुत्रों के लिए यमराज बन गए। यदि तुम मेरे एक पुत्र को भी जीवित छोड़ देते तो मुझे इतना दुख नहीं होता" यह है उसके चरित्र में छुपी हुई नाटकीयता जिसने आज तक उसको जिन्दा रखा है। धर्मराज युधिष्ठिर उसके सामने हाथ जोड़ कर खड़े हो

जाता है और कहता है "आपके पुत्रों और दुनिया भर के राजाओं को मृत्यु के घाट उतारने वाला मैं ही हूँ, इसलिए मैं आपके शाप के योग्य हूँ, आप मुझे शाप दे दीजिए," गांधारी के मुख से कुछ नहीं निकलता, बस उसका क्रोध, संताप, तप इकट्ठा हो जाता है, जोर से सांस खींचती हुई सिसकियाँ लेते हुए वह मुंह से कुछ ना बोल सकी। युधिष्ठिर एक बच्चे की भाँति गांधारी के चरणों पर गिर जाना चाहते थे। इतने में पट्टी के अन्दर से ही गांधारी की दृष्टि धर्मराज के पैरों की अँगुलियों के अग्रभाग पर पड़ जाती है। जिससे उसके नख काले पड़ गए, जो पहले बहुत सुंदर और दर्शनीय थे। जब युधिष्ठिर ने यह देखा तो वह उसके क्रोध से बचने के लिए श्री कृष्ण के पीछे जा कर छिप गए।

उधर अपने पुत्रों को खोकर द्रौपदी का भी रो कर बुरा हाल हो चूका था। माँ कुंती उसको साहस देती रही। अंत दोनों गांधारी के पास जाती हैं। वह भी द्रौपदी को समझाती हुई कहती है, मैं तुम्हारा दुख समझती हूँ क्योंकि आज जैसी तुम हो मैं भी वैसी ही हूँ, दोनों को कौन धीरज देगा ? मेरे ही अपराध से इस श्रेष्ठ कुल का संहार हुआ है। यही नहीं वह द्रौपदी के संताप पर रोई और भावुक हुई। उसके अन्दर की भावुकता तब सामने आती है, जब वह सब कुरु वधुओं के रुदन पर चिंतित हो जाती है। अब उनके दुखों को कौन दूर करेगा ? गांधारी ने अपनी दिव्य दृष्टि से कुरुक्षेत्र का मैदान देखा और वहां पड़े उन वीरों की लाशें भी देखी जिनसे कल तक आधा संसार काँपता था। श्री कृष्ण के सन्मुख वह मारे गए सभी योद्धाओं का शोक प्रकट करती है। हे कृष्ण तुमने यह सब क्यों होने दिया ? जिस मार्मिक दृष्टि और वार्तालाप का इस्तेमाल वेदव्यास ने उसके मुख से करवाया है, अतियंत करुणामय और नाटकीय है।

गांधारी इस सब अनिष्ट कार्य के लिए श्री कृष्ण को जिम्मेदार ठहरा देती है। तब श्री कृष्ण कहते हैं, उठो गांधारी तुम शोक में मन को न डुबायो, तुम्हारे ही अपराध से कौरवों का विनाश हुआ है। तुम्हारा पुत्र दुर्योधन इसका मुख्य मोहरा था। तुमने उसको अगुआ बनाकर जो अपराध किया है, उसे क्या तुम अच्छा समझती हो ? अपने ही किए हुए कार्यों को मुझ पर कैसे लाद सकती हो। तुम शोक मत मनाओ क्योंकि ब्राह्मण तप के लिए, घोड़ी वेग से दौड़ने के लिए और तुम जैसी राज पुत्री युद्ध में लड़कर मरने के लिए ही पुत्र पैदा करती है। श्री कृष्ण द्वारा कहा हुआ यह अप्रिय वचन सुन कर गांधारी चुप हो गई थी। उसके नेत्र शोक से व्याकुल हो उठे थे ।

इतने में धृतराष्ट युधिष्ठिर से युद्ध के बारे में पूछते है, तो वह बताता है, इस युद्ध में एक अरब, छाछठ करोड़, बीस हजार योद्धा मारे गए है और इसके अतिरिक्त चौबीस हजार एक सौ पैंसठ सैनिक लापता है,

गांधारी कुछ न बोल सकी, इसके बाद वह निर्णय करती है, वह राज भवन त्याग कर अपने पति के साथ वनों में चली जाएगी। पांडव माता कुंती कहती है, वह उनको अकेले नहीं भेज सकती बल्कि वह उनके साथ सेवा के लिए चलेगी। फिर वह तीनों वनों में चले जाते हैं। गांधारी के चरित्र में बहुत महीन मीनाकारी वेदव्यास ने नाटकीयता के धागों से की है, जो उसको सुंदर बनाती है। बहुत से छोटे छोटे वाक्यों, घटनाओं, हालातों ने गांधारी के चरित्र को नाटकीयता से भर कर अमीर किया है। हर एक पहलू , हर एक वाक्य, हर एक कदम नाटकीयता लेकर चलता रहता है। जिस कारण वह आज भी सभी रंगकर्मियों की पहली पसंद बनी हुआ हैं।

कुंती

समय के साथ लड़ने की कला प्रत्येक में नहीं होती, जिस में यह कला होती है वह समय से कभी मार नहीं खाता। जीवन की पाठशाला में बहुत से पाठ हैं, जो पता नहीं किस मोड पर मिल जाएँ। वह बहुत कुछ दे जाते हैं, जिसके बारे में किसी ने सोचा तक नहीं होता। महाभारत ऐसे ही नायक नायिकाओं के साथ भरी पड़ी है, जिनके चरित्र में अत्यंत नाटकीयता है। वह जिंदगी में अच्छी से अच्छी और बुरी से बुरी स्थिति में भी नहीं डोले। यही बात उनके चरित्र को अमर बनाती है।

महाभारत के बारे में बात करते समय, तो सहसा ही कुछ किरदारों के नाम हमारी उँगलियों पर आ जाते हैं।इस कथा की नायिकाएँ द्रौपदी, गांधारी, कुंती, आदि के नाम मुख से उचारण होते हैं, कभी सोचा है ऐसा क्यों.... ? वैसे तो बहुत नायिकाएँ है जो इस कथा की प्राण हैं। फिर ऐसे क्यों.... ? यह सब इतनी चर्चित क्यों है..... ? यह क्यों भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अंग बनी हुई हैं.... ? क्या है जो इन पर बड़े बड़े उपन्यास और नाटक लिखे जा रहे हैं। वह है इन के चरित्रों में रौचकता।

इस युद्ध में धर्म के पक्ष में लड़ने वाले पांडव थे। जिन्होने धर्म ध्वज लेकर श्री कृष्ण के मार्गदर्शन में यह युद्ध लड़ा और जीता। उन पांडवों की जन्मदाती का नाम कुंती था। जो चुनी गई नायिकाओं में से एक है।

राजा कुंती भोज बहुत चिंता में रहने लगे थे। उनके यहाँ किसी भी संतान का जन्म नहीं हो हुआ। उनको बस यही चिंता प्रतिदिन खाए जा रही थी। उसके मामा के लड़के का नाम था शूरसेन, वह स्वाभाव से वीर और सत्यवादी था। एक दिन उससे कुंतिभोज से चिंता का विषय पूछा, तो उसने बताया कि उसके घर में कोई संतान नहीं है। शूरसेन ने उसे आश्वासन दिया "तुम तनिक भी चिंता मत करो, मेरे घर में जो भी पहली संतान पैदा होगी, वह मैं तुमको समर्पित करूँगा और तुम ही उसके पिता होगे"। उसकी इस बात से कुंतीभोज निश्चिन्त हो गया।

आने वाली संतान के भाग्य में जन्म से लेकर मृत्यु तक राज, सत्ता और संघर्ष सब थे । वह कोई साधारण संतान नहीं थी। यह भाग्य में छुपी हुई नाटकीयता लेकर पैदा हुई। समय व्यतीत होता गया, राजा शूरसेन के घर पहली संतान ने जन्म लिया, जिसके बारे में वैशम्पायन जी कहते है।

तस्य कन्या पृथा नाम रूपे णाप्रतिमा भुवि ।। (महाभारत,आदिपर्वणि,333,1)

अर्थात : उन्हें एक कन्या की प्राप्ति हुई जिसका नाम पृथा रखा गया, इस भूमण्डल में उसके रूप की तुलना में दूसरी कोई स्त्री नहीं थी, दरअसल यह एक साधारण कन्या ने जन्म नहीं लिया था बल्कि धर्म के पक्ष को समक्ष रखने वाले पक्ष की जन्मदाती ने जन्म लिया था।

कुछ वर्ष पृथा अपनी जन्मदाती माँ के पास रही। जब वह बड़ी हुई तो अपने आश्वासन के अनुसार राजा शूरसेन ने पृथा को अपने भाई कुंतीभोज को गोद दे दिया। यहीं से उस नायिका के चरित्र में छुपी हुई नाटकीयता का उदय होता है। जब उसको जन्म देने वाला पिता पालन पोषण करने वाले पिता को सौंप देता हैं। बहुत भारी मन से उस बालिका पृथा ने अपने पिता का घर त्यागा था। घर का त्याग उसके समस्त जीवन में ही रहा, बहुत कम समय उसने घर का सुख देखा। जीवन से मृत्यु तक, त्याग तो उसके भाग्य की एक गहरी रेखा बन गई थी। अभी वह कुंति भोज के यहाँ पहुंची ही थी, उसका नया नामकरण किया जाता है। अब वह पृथा से नहीं बल्कि कुंती के नाम से जानी जाने लगी। पहले घर त्यागा और फिर नाम भी।

कुंती के पालन पोषण में कुंतीभोज ने तनिक भी भेद नहीं किया। उसको अपनी पुत्री की भाँति ही रखा, उसकी शिक्षा का सारा प्रबंध कर दिया गया। उसे गुरुकुल भेजा गया। उसे हर प्रकार की विद्या दी गई, राजनीती, कूटनीति, शास्त्र और शस्त्र विद्या सब में वह कुशलता हासिल करती गई। कोई भी कार्य उसको सौंपा जाता तो वह उसे कुशलता पूर्वक करती। एक अच्छी दूरदर्शी राजनीतिज्ञ उसमें नज़र आने लगी।

घर में देव पूजन और अतिथि पूजन का सारा कार्यभार उसके कन्धों पर ही था। एक बार उनके राजमहल में कठोर व्रत का पालन करने वाले ब्राह्मण ऋषि आते हैं। जिसके बारे में कहा जाता था, वह बहुत जल्दी ही रुष्ट हो जाते हैं। उनको प्रसन्न करना बहुत मुश्किल है। वह बहुत कठोर स्वाभाव के थे और उनका हृदय भी बहुत कठोर था। जिनको सब "महर्षि दुर्वाषा" के नाम से जानते थे। कुंती उनकी सेवा में लगी रही, किसी बात की शिकायत होने नहीं दी, और उनको प्रसन्न किया। दुर्वाषा महर्षि भविष्य को जानने वाले दूरदर्शी थे। उन्होंने कुंती के भविष्य को जानते हुए कहा, "मैं तुम्हारी सेवा भावना से बहुत खुश हुआ हूँ। मैं तुम्हें एक मन्त्र देता हूँ और इसके प्रयोग की विधि भी बताता हूँ।

यं यं देवं त्वमेंतेन मन्त्रेणावाहयिप्यसि।

तस्य तस्य प्रसादेन पुत्रस्त्व भविष्यति।। (*महभरात* आदिपर्वणि 334)

अर्थात: तुम इस मंत्र द्वारा जिस जिस भी देवता का अववाहन करोगी, उसी के अनुग्रह से तुम्हें पुत्र प्राप्त होगा।"

सुनने में यह बात थोडा अटपटी सी लगती है। जिसको कोई आसानी से खुश नहीं कर सकता, कुंती ने उसे अपनी सेवा से संतुष्ट करके पुत्र प्राप्ति का मंत्र भी ले लिया। यह नाटकीय मंत्र आने वाले घटना क्रम को आगे लेकर जाने के लिए और कथा में नाटकीयता का प्रवाह जारी रखने के लिए यह आवश्यक था। हैं न गजब, मंत्रो से पुत्र प्राप्ति..... ऐसा ही विचार उस समय कुंती के मन में भी आया होगा , ऐसे कैसा हो सकता है..... ? बिना स्त्री पुरुष के समागम से संतान की प्राप्ति..... ? कुंती कोई साधारण कन्या नहीं थी, वह हर बात का प्रमाण चाहती थी। उसके मन में कौतुहल मचा हुआ था, एक दिन उसने इस बात की सत्यता को जांचने के लिए भगवान भास्कर (सूर्य देव) का आवाहन कर दिया और वह उसके सामने प्रकट हो गए। कुंती अभी कुमारी ही थी, जब सूर्य देव ने उसको वरदान के अनुसार समागम के लिए कहा तो वह घबरा गई और सूर्य देव को वापिस जाने के लिए कहा। वह कहते हैं, इससे उस वरदान का अपमान होगा, तुम्हें घबराने की जरूरत नहीं है, इससे जो बालक पैदा होगा, वह माता अदिति के दिए हुए कुंडल और कवच लेकर पैदा होगा। जिसको कोई कभी पराजित नहीं कर सकेगा,वह धनुर विद्या में कुशल होगा। इस सारे नाटकीय घटना कर्म में बालक कर्ण का जन्म कवच और कुण्डलों के साथ होता है। इस घटना क्रम को मंच और पर्दे के उपर प्रस्तुत करने के ढंग से देखा और सोचा जाए तो इसमें भरपूर रौचकता है। कुमारी कुंती ने लोक लज्जा और भय के कारण सोचा, अगर समाज को पता लगा तो वह इसके बारे में क्या कहेंगे.... ? इससे उसके पिता लज्जित होंगे। इसी लिए वह उस बालक को बहुत सुरक्षा के साथ कुश आसन में बिठा कर नदी की लहरों पर छोड़ देती है । उसका वह पुत्र नदी और समय की लहरों के साथ बहता हुआ सूत अधिरथ और राधा के घर में आ गया, जिसका पालन पोषण उन्होंने ही किया । जिसको आगे चल कर सबने "दानवीर-कर्ण" के नाम से जाना ।

कुंती ने इस वरदान के बारे में किसी से बात तक नहीं की और ना ही किसी को इसके बारे में बताया। वह अपने दैनिक कार्यों में लगी रही और राज विद्या की शिक्षा लेती रही। उसके चरित्र के गुणों की प्रशंसा में वैशम्पायन कहते हैं। राजा कुंतीभोज की पुत्री विशाल नेत्रोंवाली पृथा धर्म, सुंदर रूप तथा उत्तम गुणों से संपन्न थी। वह एकमात्र धर्म में ही रत रहनेवाली और महान व्रतों का पालन करने वाली थी। उसके रूप और गुणों की शोभा को देखते हुए पडोसी

राजाओं ने कुंती के लिए राजा कुंतीभोज से याचना करनी शुरू कर दी थी। जिसमें से हस्तिनपुर राज्य भी था। अभी तक त्याग का तत्व ही कुंती के जीवन में उभर कर सामने आ रहा था। यही उसके जीवन का मुख्य घटनाक्रम रहा, पिता के घर का त्याग, अपने नाम का त्याग और फिर अपने पहले पुत्र कर्ण का त्याग। इस त्याग तत्व का समावेश कर्ण में भी था, जिस कारण वह दानवीर कर्ण भी कहलाया।

कुंतीभोज ने उन सभी राजाओं को स्वयंवर का न्योता भेजा, जो उसकी बेटी का हाथ माँगना चाहते थे। निश्चित दिन सब प्रस्तुत हुए, वहां महाराज पांडू भी प्रस्तुत थे, जिसकी शोभा उभर कर सामने आ रही थी। कुंती भी उससे बच नहीं सकी और वह राजा पांडु को अपने वर के रूप में चुन लेती है। अभी नाटकीयता भरी घटनाएँ उसके जीवन में भला कब रुकने वाली थी। हस्तिनापुर में आए हुए उसे कुछ समय ही बीता था, उसे पता चला महाराज पांडू के द्वितीय विवाह की तैयारी चलने लगी है। कोई भी स्त्री अपने पति को किसी और स्त्री के साथ बाँट नहीं सकती। यह एक और भंवर था, जिसमें उसको फसना और निकलना था। भीष्म मद्र नरेश राजा शल्य की साध्वी, शस्त्र विद्या में निपुण बहन माद्री का हाथ महाराज पांडू के लिए मांगने गए, जिसमें वह सफल हुए। हस्तिनापुर में सही समय पर दोनों को विवाह बंधन में बांध दिया गया।

कुंती इस बात से जरा भी आहत नहीं हुई। माद्री अपने सेवा भाव और महाराज पांडू के साथ हर स्थिति में खड़े रहने के गुण के कारण कुंती के दिल के पास आ गई। कुंती ने अपने उस स्वाभाव का परिचय दिया, जिसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। कुंती ने माद्री को अपनी छोटी बहन की तरह स्नेह और प्यार से रखना शुरू कर दिया। जिस बात की कल्पना मन में नहीं थी, उसके विपरीत नाटकीय मोड़ से दोनों का बहनों जैसा रिश्ता निकल कर आता है। महाराज पांडू ने राजा शांतनु के बाद खोई हुई भरत वंश की महानता और यश को पुनः स्थापित किया। जिन्होंने कुरु वंश के हिस्सों पर कब्ज़ा कर लिया था, उन सबको वापिस पा लिया। इसमें कुंती और माद्री ने उनका बहुत साथ दिया। कुछ वर्ष बाद महाराज पांडू राज महल को त्याग कर वनों में कुछ समय के लिए अपनी दोनों पत्नियों के साथ चले गए। दोनों पांडू के साथ साथ उनकी छाया बनकर रहती थी। एक बार वह साँपों और मृगों से भरपूर वन में निवास कर रहे थे। महाराज पांडू अठखेलियाँ कर रहे मृगों को देखकर उनका शिकार करने के लिए उत्सुक हो उन की तलाश में निकल पड़े। उनको झाड़ियों के पीछे दैवीय से मृग दिखे

और झट से पांडू ने बाण निकाले और उनके उपर चला दिए। जब बाण जाकर उनपर लगे तो वह मानवीय आवाज़ में कराहने लगे, दरअसल वह मैथुन कर रहे थे। वह इच्छाधारी ऋषि और उसकी पतनी थी। जिसका वध पांडू ने मृग समझ कर दिया था। इस बात से आहत होकर उस ऋषि ने पांडू को बहुत ही नाटकीय शाप दिया। जिसने कुंती को दुर्वाषा महर्षि द्वारा दिए हुए वरदान को सत्य सिद्ध करना था। वह ऋषि कहते हैं "मैं मृग रूप धारण करके काम से मोहित होकर अपनी पत्नी से मैथुन कर रहा था, उस अवस्था में तुमने अत्यंत क्रूरता के साथ मुझे मारा है। अत: मूढ़ ! तुम्हें अपने इस कर्म का फल अवश्य मिलेगा

प्रियया सह संवासं प्राप्य कामविमोहित: ।

त्वमप्यस्यामवस्थायाँ प्रेतलोकं गमिष्यसि ।। (*महाभारत* आदिपर्वणि 349)

अर्थात : "तुम भी जब काम से सर्वथा मोहित होकर अपनी प्यारी पत्नी के साथ समागम करने लगोगे, तब इसी तरह मेरी अवस्था में ही यमलोक सिधारोगे।"

इस नाटकीय शाप के बाद उसकी वैवाहिक जिंदगी को जैसे ग्रहण लग गया था। यहाँ एक और जो नाटकीयता है, पांडू के पिता विचित्रवीर्य भी कामभोग में आसत्कचित होने के कारण ही छोटी उम्र में ही मृत्यु को प्राप्त हुए थे, समय स्वयं को दोहराता है ।

इस घटना से वह बहुत दुखी होते हैं और सब कुछ त्याग सन्यास आश्रम अपनाकर गहन जंगलों में अकेले रहने का निर्णय कुंती और माद्री को सुना देते हैं। अपने पतिव्रता धर्म और सूझ का निर्णय देते हुए कुंती कहती है "यदि उन्होंने ऐसा किया भी तो वह अपने प्राण त्याग देगी, उसकी इस बात का समर्थन माद्री भी करती है।" कुंती पांडु महाराज को समझाती है अगर वह इसका पश्चाताप करना चाहते हैं तो कोई बात नहीं, वह दोनों भी अपने कामजीवन का त्याग कर उनके साथ वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण रहेंगी। वह अपने सारे कीमती वस्त्र और आभूषण गरीब जनों और ब्राह्मणों को बाँट कर अपने करूण स्वाभाव का परिचय देती हैं। एक महारानी से अब वह वनवासी के रूप में परिवर्तित हो गई थी। त्याग तो उसके जीवन का अंग था। वनवासी बन कर वह सबसे पहले नागशत नामक पर्वत पर चले गए, उसके बाद चैत्ररथ वन में जाकर कालकूट और हिमालय पर्वत को लांघते हुए गन्धमादन चले गए। इन सब गहन वनों में वह ऊँची-नीची ज़मीन पर सोते थे। उनका सफ़र यहीं ख़तम नहीं हुआ, वह इन्द्रद्युम्न सरोवर पहुँच कर तथा उसके बाद हंसकूट को लांघते हुए शतश्रुंग पर्वत जा पहुंचे। वहां से तपस्वी जीवन बिताते हुए भारी तपस्या में संलग्न हो गए। इन सब स्थलों का ज़िक्र जिस प्रकार

महाभारत में किया गया है, उनको पढ़ते हुए यह सब दृश्य प्रश्न मन में उभरते हैं,जो नाटकीयता का स्रोत हैं।

एक दिन पांडू कुंती से बात करते हुए उन्हें कहते हैं, वह संतान की उत्पत्ति किए बिना पितृ ऋण से मुक्त नहीं हो सकते। इस लिए वह संतान प्राप्ति के अन्य तरीकों से उसे इस ऋण से मुक्त करदे। कुंती कहती है "मैं आपके इलावा किसी से समागम नहीं कर सकती, इस समय आपसे बड़ा पुरुष और कौन है ? मै आपसे ही समागम करुँगी चाहे उस ऋषि का शाप सत्य ही सिद्ध क्यों न हो।" पांडू उसे समझाते हैं कि ऐसा नहीं हो सकता। अंत में कुंती उनको महर्षि दुर्वाषा द्वारा दिए गए मन्त्र अथवा वरदान के बारे में बताती है। जिसको सुनकर पांडू खुश हो जाते हैं और उसको आज्ञा देते हैं कि वह देवताओं के माध्यम से पुत्र प्राप्त करके उसे पितृ ऋण से मुक्त करे। फिर नाटकीय ढंग से पुत्रों का जन्म होता है, वह बहुत अद्भुत घटना है। कुंती धर्म के माध्यम से युधिष्ठिर, वायु से भीमसेन और इंद्र से अर्जुन नामक तीन पुत्रों को जन्म देती है। जो विभिन्न गुणों से परिपूर्ण होते है। उधर माद्री खुश होती है कि कुंती ने तीन पुत्रों को जन्म देकर उसे चिंता मुक्त कर दिया है। वह अकेले में पांडू से कहती है, वह भी उसकी भाँति पुत्रों को जन्म देना चाहती है। उसकी सौत होने के कारण कहीं ना कहीं उससे यह बात कहने से हिचकिचाती है, कि कुंती भी उसे उस मन्त्र और विद्या के बारे में बता दे जिसके द्वारा वह भी संतान की प्राप्ति कर सके। कुंती उसे बहुत स्नेह के साथ सारी विद्या और मन्त्र देती है। जिससे माद्री भी अश्विनी कुमारों की सहायता से अपने दो जुड़वां पुत्रों नकुल और सहदेव को जन्म देती है। यह प्रक्रिया कुछ अटपटी सी भले लगे पर उसके चरित्र में और कथा में नाटकीय वेग के साथ रोमांचित करते हुए आगे लेकर जाती हैं। यह महाभारत की कथा है, यहाँ विधि का विधान नहीं, वेदव्यास का विधान चलता है।

एक दिन फागुन के समय में जब अर्जुन चौदह वर्ष का हो गया था। तब उनके आश्रम में बहुत से ऋषि आए हुए थे। माद्री उनकी सेवा में लगी हुई थी, महाराज पांडू भी उनके साथ हाथ बंटाने आ जाते है। किसी कार्य वश वह उसके साथ बाहर वनों में चले जाते हैं। वहाँ काम रूप में बैठे काल देव उसके मन में सवार हो जाते हैं और ऋषि के शाप वस वह अपने प्राणों को खो देते हैं। कुंती कहती है उनकी बड़ी पत्नी होने के कारण वह ही उसके साथ अपने प्राण त्याग देगी, लेकिन माद्री कहती है।

तस्मान्मे सुतयो: कुन्ति वतिंतवयं स्वपुत्रवत ।

माँ च कामयमानोऽयं राजा प्रेतवशं गत: । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 372)

अर्थात: "आप ही जीवित रहकर मेरे पुत्रों का भी अपने पुत्रों के समान ही पालन कीजिएगा। इसके सिवा यह महाराज मेरी ही कामना रखकर मृत्यु के अधीन हुए हैं।"

वह महाराज पांडू की देह के साथ चिखा पर बैठ अपने प्राण त्याग देती है। कुंती के जीवन में नाटकीय मोड आता है, जो दिशा और दशा दोनों को बदल देने वाला था। वेदव्यास के विधान ने इसके कंधों पर बहुत बोझ डाल दिया था। इस घटना के बाद अपने पति और बहन जैसी सौत माद्री को खो कर अकेली पड जाती है। उसके साथ उसके पांच पुत्र रह जाते हैं। वह माद्री के पुत्रों को भी अपने पुत्रों की भाँति ही रखती है। इतने वर्ष वानप्रस्थ आश्रम में रहने के बाद अब वह क्या करे.....? बिना बाप के बच्चों को कैसे पाले..... ? उनका भविष्य कैसे सुरक्षित करे..... ? ऐसे बहुत से सवाल उसके सामने खड़े हो जाते हैं। ऐसी स्थितियां ही किसी पात्र को अमर बनाती हैं। कथा कि गर्भागनी उसको पका रही थी, नाटकीयता की नाड़ी उसकी नाभि से जुड़ी हुई उसके चरित्र का पोषण कर रही थी।

कुंती की वह दो भुजाएं भंग हो चुकी थी। जिस के सहारे वह कठिन से कठिन समय में भी नहीं घबराई थी। उसके मन की भुजाएं अब भी स्थिर और साहसी थीं। मुख्य समस्या उसके सामने आई वह थी कि उन पाँच पुत्रों को लेकर कहाँ जाए ? उनका पालन पोषण कैसे करे ? पांडू कुंती और माद्री के पास तो वनों में रहने का ठोस कारण था। उन बच्चों का क्या कसूर था ? अब वह एक दोराहे पर खड़ी थी। जिन मुनियों की शरण में वह रहते थे, उन्होंने हालात और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय किया

तस्येमानात्मजान देहं भार्यो चसुमहात्मन: ।

स्वराष्ट्रं गृ गच्छामो धर्म एष हि न: स्मृत: । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 375)

अर्थात : पांडू पुत्रों, पांडू और माद्री के शरीरों की अस्थियों को तथा उन महात्मा नरेश की महारानी कुंती को लेकर लोग राजधानी चलें। इस समय हमारे लिए यही धर्म प्रतीत होता है।

वह लोग उन सब को लेकर हस्तिनापुर पहुंचे। उनका भव्य स्वागत हुआ, महाराज पांडू के बारे में सुन कर सब ओर शोक फैल गया। इस शोक के माहोल में अपने और अपनी संतान के लिए कुछ रंग ढूँढना कुंती की ज़िम्मेदारी थी।

समय बीतता गया और हालात भी। धृतराष्ट भी अपने और पांडू पुत्रों के साथ खेलने में व्यस्त रहते। भीम सभी पुत्रों में बलशाली था। जो अकेला ही अपने कौरव भाइयों को पीट देता

था। इस बात से तंग वह प्रतिदिन उससे बदला लेने की सोचते रहते। एक दिन दुर्योधन तरकीब बनाता है, जब सब पांडू भाई सो जाएंगे, तब वह उसे उठाकर गंगा जी में फेंक देंगे। इसके बाद बड़े और छोटे भाई को बलपूर्वक कैद में डालकर अकेला ही सारी पृथ्वी पर शासन करेगा। बचपन की छोटी छोटी लडाइयों से यह बड़े युद्ध में तब्दील हो जाएंगी, किसी के मन में इसका ख्याल तक नहीं था। दुर्योधन करता भी ऐसा है, वह भीम को बाँध कर गंगा जी में फेंक देते हैं, जहाँ बहुत से नाग उसको डसते हैं। उधर कुंती बहुत शोकाकुल हो जाती हैं कि अभी तक भीम घर नहीं आया। गंगा जी के गर्भ में नाटकीय चक्र घटित होता है। भीम वहाँ जिस नाग लोक में पहुँच जाता है, वह उसका ननिहाल निकलता है। जब उनको पता चलता है यह बालक भीम, कुंती पुत्र है तो वह उसका इलाज करते हैं और बहुत सी अद्भुत शक्तियां देते हैं, जो उसके भविष्य में काम आने वाली है। यहाँ से युद्ध शुरू हो चूका था, जिसने कुरुक्षेत्र के मैदान पर ख़त्म होना था। यहाँ वेदव्यास सत्यवती से बात करते भविष्यवाणी करते हैं।

अतिक्रान्तसुखा: काला: पर्युगस्थितदारुणा: ।

श्व: श्व: पापिष्ठदिवसा: पृथिवी गतयौवना । ।

कुरूणामनयाचापि पृथिवी भविष्यति ।

गच्छ त्वं योगमास्थाय युक्ता वस तपोवने । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 380)

अर्थात : अब सुख के दिन बीत गए, बड़ा भयंकर समय उपस्थित होने वाला है। उत्तरोतर बुरे दिन आ रहे हैं। पृथ्वी की जवानी चली गई। दुर्योधन और कौरवों के अन्याय से सारी पृथ्वी वीरों से शून्य हो जाएगी। अत: तुम योग का आश्रय लेकर यहाँ से (सत्यवती, अंबिका और अंबालिका) चली जाओ और योगपरायण हो तपोवन में निवास करो।

कौरवों और पांडवों की शिक्षा का प्रबंध कर उनको गुरुकुल में भेज दिया गया। कुंती राजमहल में रहने लगी, जैसा प्यार और व्यवहार उसका माद्री के साथ था, ठीक वैसे ही गांधारी के साथ भी था। वह उसके साथ अपने दिल की हर बात कर लेती, जब भीम गंगा जी में डूब गया था, तब भी गांधारी की ही गोद में सर रख कर रोती है और अपना सारा दुःख उसके सामने व्यक्त करती है। दोनों का रिश्ता बड़ी छोटी बहन वाला था। दिन बीतने के साथ उनके दोनों के पुत्रो की शिक्षा भी पूरी हो गई। जब वह हस्तिनापुर आए तो उनके लिए एक रंगमंडल का निर्माण किया गया जहाँ उन्होंने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना था। वहां कुंती गांधारी की आँखें बन कर साथ आती है और सामने चल रहे सारे दृश्य का हाल बताती है। सब कुशलता

पूर्वक अपना प्रदर्शन करते हैं। जब अर्जुन अपने बाणों की शक्ति का प्रदर्शन कर रहे होते हैं, एक नाटकीय मोड़ कुंती को झंकोर कर रख देता है। वहां कर्ण का प्रवेश होता है। जिसके कारण कुरु और पांडू पुत्र लड़ रहे होते हैं, वह एक शक्ति प्रदर्शन केवल राजा ही कर सकते थे। कुंती कर्ण को देखकर हैरान होती है, वह चाहती तो है कि कर्ण के बारे में सबको बता दे और उसको गले लगा ले। वह ऐसा नहीं कर पाती, सिर्फ वही जानती है कि कर्ण उसका ज्येष्ठ सूर्य पुत्र है। जिसका त्याग उसने अपने कौमार्य में कर दिया था। आज इतने वर्षो बाद जब वह उसके सामने आया है, तो वह खुल कर उसको अपना भी नहीं सकती। वह उसके पुत्रों के दुश्मन पक्ष के साथ खड़ा हो गया। यह नाटकीयता की चरम सीमा है। यही छोटी छोटी बातें, सबको झकोर कर रख देती है।

सिद्धनाथ कुमार अपना मत प्रकट करते हुए कहते हैं : "यह विचार करना चाहिए कि नाटक जीवन की अभिव्यक्ति है, और दर्शकों के सम्मुख किए जाने के लिए होता है। एरिक बेण्ट्ले का कहना है नाटकीयता घटनायों में नहीं, दर्शकों की सनवेगनत्म्क प्रतिक्रियायों में हैं। कोई भी घटना अपने में नाटकीय नहीं होती, वह तभी नाटकीय होती है, जब दर्शकों के अंतर में कोई प्रतिकीरिया जगा पाने में सक्षम होती है। जीवन में नाटकीय किसे कहते हैं ? समान्यत: वैसे घटनायों को जो हमारे मन में उत्सुकता, जिज्ञासा, कुतूहल जैसे भाव जगाती है, जिनमें आकस्मिकता, आश्चर्य आदि का भी भाव रहता है।"(नाटकलोचन के सिद्धांत 105)

वेदव्यास ने स्वयं जिस अनर्थ की भविष्यवाणी करदी थी, वह कैसे रुक सकती थी। कुंती ने अपने पुत्रों को पिता की कमी का अहसास कभी नहीं होने दिया। उसने उनका मार्गदर्शन करने में कभी कोई कसर नहीं छोड़ी। ज्येष्ठ युधिष्ठिर को एक वर्ष बीतने पर धृतराष्ट ने उसकी वृति, स्थिरता, सहिष्णुता, दयालुता, सरलता तथा अविचल सौहार्द आदि सद्गुणों के कारण पालन करने तथा योग्य प्रजा पर अनुग्रह करने के लिए युवराज पद पर अभिषिक्त कर दिया। लेकिन दुर्योधन कैसे सहन कर पाता। वह उनको ख़त्म करने के लिए चालें चलता रहता। जिस प्रकार मादा अपने शावकों की रक्षा के लिए जल, थल और आकाश में नज़र गडाए रखती है, कि कहीं से कोई आपदा उसके बच्चों को छू ना जाए, उसी तरह कुंती अपने बच्चों की रक्षा में तत्पर रहती थी। विदुर उनका इस कार्य में पूर्ण साथ दे रहे थे। वह बचपन से लेकर अब तक दुर्योधन और उसकी मण्डली द्वारा की जा रही कुकर्मता को जानते थे। कुंती ने खुल के किसी को कुछ ना कहा, वह सब समझती थी। जब युधिष्ठिर के राज तिलक से पहले उनको वारणावत

में भेजने की तैयारी की गई तो कुंती के मस्तिष्क में कुछ चलने लगा। जरुर कोई अनिष्ट होने वाला है, अगर इतना ही रमणीक स्थान है, तो केवल पांडव ही क्यों ? अपने स्वाभाव के अनुसार वह क्षत्रिणी की भाँति अंदर से तैयार हो गई। जब प्रस्थान करने लगी तो विदुर ने गुप्त भाषा में युधिष्ठिर को आने वाली विपत्ति के बारे में बातों में बता दिया। कुंती उसकी बात को समझ नहीं सकी। उनके जाने के बाद, उसने अपने पुत्र से पूछा तो उसने बताया की विदुर जी ने कहा "तुम जिस घर में ठहरोगे वहां आग का खतरा है, यह बात अच्छी तरह समझ लो, साथ ही कोई मार्ग न हो जो तुमसे अपरिचित रहे, यदि तुम अपनी इन्द्रियों को वश में रखोगे तो राज्य भी प्राप्त कर लोगे" विदुर के कहने के अनुसार जब वह वारणावत गए तो वहां कोई भी ऐसा रास्ता नहीं छोड़ा जिससे वह परिचित ना हों, वह सभी लोगों के घर गए और उनसे प्रेम संबंध स्थापित किए। विदुर के ख़ास लोगों ने उस घर में एक सुरुंग का निर्माण भी किया। वहां रहते पांडवों को एक वर्ष पूरा हो गया था, पुरोचन को लगता था पांड्वो को कुछ नहीं पता, इस लिए वह अब जल्दी ही अपने कार्य को पूर्ण कर सकता है। एक दिन काल वश वहां एक भीलनी अपने पुत्रों के साथ वहां आ पहुंची। वह भोजन के बाद मदिरा पी कर मतवाली हो कर बेहोश हो गई और अपने पुत्रों के साथ वही सो गई। उसी रात पुरोचन ने उस लाक्षाग्रह को अग्नि की भेंट कर दिया। जिससे वह भीलनी अपने पुत्रों के साथ जल गई। उधर विदुर के निर्देशानुसार कुंती अपने पुत्रों को सुरंग से लेकर निकल गई थी।

एक के बाद एक आपदा और कठिन परिस्थिति में कुंती को वेदव्यास डाल रहे थे। वह भी बड़ी ही कुशलता के साथ हर परीक्षा को पास कर रही थी। महाभारत में हर नायिका का अपना रंग है, अपना भाव है और अपना कर्म है। कुंती भी अपने रंग में रंगी हुई चली जा रही थी। नाटकीयता का हर स्तर जीती जा रही थी। जन्म से लेकर अभी तक कुंती को जैसे विपत्ति और आपदायों ने घेर रखा था। यह उसके जीवन का अंग बन गई थी। अब नाटकीयता की दृष्टि से देखें जो भी घटनाएँ उसके साथ हुई उन सब ने उसके किरदार को उभारा और स्नेह हासिल किया। इन सबको पर्दे और मंच पर प्रस्तुत करने के लिए अदाकार और निर्देशक के पास खेलने के लिए बहुत कुछ है। आधुनिक तकनीकी युग में तो पर्वतों, नदियों, विशाल भव्य भवनों और लाक्षाग्रह के दृश्यों को अति सुंदरता से उभारा जा सकता है। रंगमंच पर आज जिस तरह नए नए प्रयोग हो रहे हैं, उसमें भी अपार संभावनाए है।

समस्त पांडू परिवार को मारने की कोशिश की गई, उसमें से सभी बच कर निकल गए। एक बात तो तय थी, पांडव इतने चालाक नहीं हैं जितने कौरव हैं। उनके सर पर बाप की परछाई भी नहीं थी। जिस कारण उनको हर बार किसी ना किसी कष्ट में डाल दिया जाता है। कोई कुछ नहीं बोलता। इन सबको हल करना कुंती के लिए बड़ी समस्या थी। जहाँ राज सत्ता होती है, वहाँ सब नतमस्तक होते हैं। पांडवों के पास तो कुछ भी नहीं था। लाक्षाग्रह की घटना के बाद तो दुनिया के लिए उन सब का अस्तित्व भी ख़त्म हो गया था। सबको यही मालूम था, वह मर चुके है, महाराज पांडु का कुल ख़त्म हो गया है।

वहां से निकलने के पश्चात् भीम माँ कुंती को कंधे पर और नकुल सहदेव को गोदी में उठा कर तीव्र वेग से चल दिए। वह अपनी छाती से ही रास्ते में आने वाले पेड़ों को तोड़ते जा रहा था। जब वह गंगा के तट पर पहुंचे तो वहाँ विदुर के भेजे हुए विश्वासपात्र एक ख़ास प्रकार की नाव लेकर खड़े थे, जो वायु के वेग के समान चलती थी, इसमें ख़ास प्रकार के यंत्र लगाए थे। वह उन्हें गंगा जी के पार हस्तिनापुर से दूर देश में छोड़ देते हैं। निद्रा और थकान के कारण उनकी हालत बहुत दयनीय हो गई थी। सूर्य अस्त हो गया था। भीम अपने भाइयों और माँ के लिए पानी लेकर आता है, जिस से वह सभी तृप्त होते है, उसके बाद भीम कहते हैं, "आप सब निद्रा ग्रहण करें और मैं यहाँ जाग कर आपकी रक्षा करूँगा।" अभी एक घटना से निकले उन्हें कुछ समय भी नहीं हुआ था, एक और घटना उनके साथ होने वाली थी। यह घटना उनको और भी सक्षम करने वाली थी। यह जंगल एक नरभक्षी राजा हिडिम्ब का था। जिसे मानवीय मास खाने में मजा आता था, जब उसने देखा कि छ: मानव आज उसके वन में आएं हुए हैं तो उसने अपनी बहन हिडिम्बा को उनको लाने के लिए भेजा। जब हिडिम्बा वहां पहुँचती है तो देखती है, भीम अपने भाइयों और माँ की रक्षा के लिए बैठे हुए है, वह उसको देखते ही रह जाती है।

अयं श्यामो महाबाहु: सिंहस्कन्धो महाद्यति ।

कम्बुग्रीव: पुष्कराक्षो भर्त्रो युक्तो भवेन्मम । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 454)

अर्थात : इस श्यामसुन्दर तरुण वीर की भुजाएँ बड़ी-बड़ी हैं, कंधे सिंह के जैसे हैं, यह महान तेजस्वी हैं। इनकी ग्रीवा शंख के समान सुंदर और नेत्र काम दलदल के सादृश्य विशाल हैं। यह मेरे लिए उपयुक्त पति हो सकते है।

हिडिंबा सुंदर कन्या का रूप धारण करके उसके पास जाती है और उसे अपने दिल की सारी बात बता देती। वह उसको अपने भाई के बारे में बताती है कि उसने ही उसको यहाँ

भेजा है। भीम सावधान हो जाता है। इतने में उसका भाई हिडिम्ब अपनी बहन हिडिम्बा की तलाश में वहां आ जाता हैं। जब अपनी बहन को इस रूप में देखता है, तो क्रोधित हो उठता है। वह उसको मारने लगता है, तो भीम उसे कहते हैं, "स्त्री पर हाथ उठाना ठीक नहीं, यह तो तुम्हारी आज्ञा से ही आई थी। अगर तुम्हे लड़ना ही है और तुममें इतनी ही शक्ति है तो मुझसे लड़ो।" उन दोनों के भयंकर युद्ध को और चीख पुकार सुन कर सारा वन कुंती और पांडव जाग जाते हैं। उधर भीम उस का वध करके विजय प्राप्त करता है। अपने भाई के वध पर हिडिम्बा की आँखों में अश्रु आ जाते हैं, वह कुंती से कहती है, उसके भाई के सिवा उसका कोई सहारा नहीं है। अब वह अनाथ हो गई है। ऐसे शब्द सुनते ही कुंती भावुक हो जाती है, क्योंकि एक अनाथ की क्या दशा होती है, वह जानती है। हिडिम्बा उसको कहती है, वह भीम से विवाह करना चाहती है, इस लिए वह उसे आज्ञा दे। कुंती हिडिम्बा की शक्ति और साम्राज्य से परिचित हो चुकी थी। वह जानती थी इस गहन वन में हिडिंबा से विरोध मोल लेना हितकर नहीं। इस को भीम से विवाह संबध की आज्ञा देकर, वह अपने पुत्रो की शक्ति बढ़ाना चाहती थी। कल तक जिस राज्य में वह रहे थे, वह उनका नहीं था और आज उनका हो गया। हिडिम्बा से उनको एक दैवीय और भीम के समान बलशाली पुत्र घटोत्कच की प्राप्ति होती है। पल में जितने रंग उसका किरदार बदलता है, यही उसके चरित्र की नाटकीयता है, पहले महारानी, फिर सन्यासी, फिर बेघर और फिर महारानी।

वह एक वन को छोड़ दूसरे वन में जाकर रहने लगते, एक स्थान पर नहीं रुके आगे बढ़ते रहते थे। उन सबने तपस्वी का वेश धारण कर अपने सिर पर जटाएं रख ली, वल्कल और मृगचर्म से अपने शारीर को ढक लिया। वह माँ कुंती को अपनी पीठ पर रख कर तीव्र गति से चलते रहते। वेदव्यास ने उनके जीवन यापन और छोटी छोटी घटनाओं, उनके वस्त्रो और वेश भूषा के माध्यम से भी नाटकीयता भरी है।

जिसके साथ स्वयं रचनाकार खड़ा हो उसको कौन परास्त कर सकता है। वनों में वेदव्यास स्वयं उनका मार्गदर्शन करते रहते हैं। वह उनको एक ब्राह्मण के घर ठहरा देते हैं और कहते हैं कि वह एक माह तक उनकी प्रतीक्षा करें। जिस प्रकार एक बालक जब चलना सीख रहा होता है, वह दौड़ने की कोशिश करता है तो गिर भी जाता है, तभी उसकी माँ उसकी उँगली पकड़ लेती है, ताकि वह दौड़ना सीखे, कहीं गिर न जाए। इसी प्रकार वेदव्यास पूरी कथा में उनकी उँगली पकड़ कर उनको दौड़ने का बल देते रहते है। जो कथा में गतिशीलता

बनाए रखते हैं। कुंती उसकी आज्ञा पाकर वहां रहने लगती है। वहां उसे पता चलता है, उस नगर का मालिक एक बक नामक राक्षस है, जो मनुष्य मास खाकर ही संतुष्ट होता है। उसके लिए गाँव वालो ने निश्चित किया हुआ है, गाँव का हर परिवार अपनी बारी से बीस खारी अगहनी के चावल का भात, दो भैंसे और एक मनुष्य उसको भेंट करेगा। कुंती उनकी इस बात को सुन कर चिंतित हो जाती है और पुत्रो से बात करती कहती है, ब्राह्मणों की रक्षा करनी क्षत्रियों का धर्म बनता है। इतने दिन से इन्होने अपने घर में स्थान भी दिया हुआ है। यहाँ कुंती की नाटकीय दूरदर्शिता नज़र आती है, एक तो वह सब नरभक्षी लोगों को मार के अपने पुत्रों की प्रसिद्धि देखना चाहती थी, दूसरा उनके राज्य की प्राप्ति करवाना चाहती थी, ताकि आने वाले समय में उनके पुत्रो के पक्ष में भी कोई खड़ा हो और वह स्वतंत्र होकर रह सकें। यह छोटी छोटी घटनाएँ उनको सक्षम बनाए रखती हैं। वह ब्राह्मण परिवार को आश्वासन देती है, इस बार वह भोजन रूप मनुष्य में अपने पुत्र को भेजेगी, आप सब निश्चिन्त रहो मेरे पुत्र ने बड़े बड़े नरभक्षी राक्षसों को मारा है। भीम बकासुर को मार कर अपनी माँ की बात पर फूल भी चढाते हैं।

वेदव्यास ऐसे ही उनको ब्राह्मण के घर नहीं छोड़ कर गए थे। असल में यह वह स्थल था, जहाँ उनकी जिंदगी में बदलाव आने वाला था। बकासुर वध के पश्चात् पांडव ब्रह्मत्व का पालन करते, उन्ही के घर में रहते हुए उपनिषदों का अध्यन करने लगे। कुंती उनको सारी अध्यात्मिक शक्ति और शिक्षा देने में लगी हुई थी, जिसे उसने महाराज पांडू के साथ रहते हुए ग्रहण किया था। बच्चों का चरित्र निर्माण कैसे करना है, कुंती दर्शकों और कलाकारों को भी सिखाती है। वहां एक बार पहुंचा हुआ ब्राह्मण आता है, जो उनको बड़ी अलौकिक कथाएँ सुनाता है। उसने अनेक देशों, तीर्थों, नदियों, राजाओं, नाना प्रकार के आश्चर्यजनक स्थानों तथा नगरों का वर्णन किया। बातचीत के अंत में उसने धुष्टद्युमन, शिखंडी और द्रौपदी की जन्म कथा और उनके बारे में बताया, फिर उसके पिता द्रुपद और द्रोण की लड़ाई में बताया। जिसको सुनकर कुंती मन ही मन अपने भविष्य की योजनाएं बुनने लगी। अंत उस ब्राह्मण ने बताया पांचालदेश में यज्ञासेनी कुमारी द्रौपदी का दिव्य स्वयंवर होने जा रहा हैं। जब कुंती सुनती है, तो उसकी आँखों में लगे हुए काफी जाले उतर जाते है। वह उनके जन्म की कथा और बाकी सारी बाते सुन चुकी थी। अगर वह उस से विवाह संबंध स्थापित करती है, तो उसके लिए लाभ होगा। एक और सशक्त नायिका को पांडवों और कुंती के साथ खड़ा कर वेदव्यास इस कथा में बहुत ही तीव्र गति लाना चाहते थे। भक्ति और शक्ति का मिलन होने वाला था।

द्रौपदी के रूप की चर्चा सुन कर वह आनंदित और लालायित हो उठे और सोचने लगे वह द्रौपदी को एक बार जरुर देखेंगे। कुंती इस बात को भांप जाती है। वह अपने सभी पुत्रों का मन उस स्वयंवर की ओर आकृष्ट देख युधिष्ठिर से कहती है, "हम इस ब्राह्मण के घर बहुत दिनों से रह रहे हैं, यहाँ सब कुछ देख चुके है, अब यहाँ उचित भिक्षा भी नहीं मिलती, सुना जाता है पांचाल देश सम्पन्न है। इसलिए वहां भिक्षा भी ज्यादा मिलती है और यह भी सुना है वहाँ के राजा ब्राह्मणों के बड़े भक्त हैं। वैसे भी एक स्थान पर ज्यादा दिन रुके रहना उचित नहीं है, यदि तुम कहो और ठीक लगे तो वहाँ चलें ?" देखने वाली बात है कितनी कुशलता पूर्वक उसने अपने बेटों को सारी बात कह दी और उनको वहां जाने के लिए से मना भी लिया। जब वहां से निकल कर जाने लगते हैं, तो वेदव्यास उनके समक्ष प्रकट हो जाते है, पांडवों को गलती का आभास होता है कि वह वेदव्यास की प्रतीक्षा किए बिना ही जा रहे थे। तब वह क्षमा मांगते हैं। वेदव्यास उन्हें द्रौपदी के पुनर्जन्म की कथा सुनाते हुए बताते हैं, वह आपके भाग्य में लिखी जा चुकी है, इसको पाकर आप लोग सुखद रहोगे। महाभारत में बहुत से पात्र है जिनके चरित्र में नाटकीयता की गहराई बढ़ाने के लिए पुनरजन्म की कथा का सहारा लिया गया है।

कुंती के जीवन में कष्ट और त्याग क्या अब ख़त्म हो जाएगा.....? इन सबके बारे में वेदव्यास ने अभी कुछ नहीं बताया था। जिस ब्राह्मण के घर वह रह रहे थे, उनसे आज्ञा और आशीर्वाद लेकर वह निकल पड़े। रास्ते में जाते समय उनकी शक्ति में एक और बढौतरी हुई चित्ररथ को युद्ध में हराने के बाद उससे मित्रता कर ली गई। बार बार आती विपत्ति और हर विपत्ति के बाद पांडवों की बढती ताकत, यह सब नाटकीय तत्व ही हैं जो दर्शकों को एक कड़ी में बाँध कर रखने के कार्य में सक्षम हैं। जितनी बड़ी विपत्ति उतनी बड़ी ताकत उनको मिलती है। विदुर की एक बात जो उसने युधिष्ठिर को वारणावत जाते समय कही थी, वह पांडवों ने अंत समय तक याद रखी "जिसकी आँखें नहीं हैं, वह मार्ग नहीं जान पाता, अंधे को दिशायों का ज्ञान नहीं होता और जो धैर्य खो देता है, उसे सद्बुद्धि प्राप्त नहीं होती"

जिसका मार्गदर्शक बुद्धिमान होता है, उसको कोई नहीं हरा सका। कुंती चाहती थी, उसके पुत्रों को कोई अच्छा मार्गदर्शक मिल जाए। इसी दौरान उनको गंधर्व से धौम्य ऋषि के बारे में पता चलता हैं। जिसको वह माँ कुंती की आज्ञा से अपना पुरोहित बना लेते हैं। उसकी आज्ञा से ही सारे कार्य करते थे।

ते समाशंसिरे लब्धां श्रियं राज्यं पाण्डवा: ।

ब्राह्मण तं पुरस्कृत्य पांचाली च स्वयंवरे । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 532)

अर्थात : पांडवों ने उन ब्राह्मण देवता को पुरोहित बनाकर यह भली भांति विश्वास कर लिया कि "हमें अपना राज्य और धन अब मिले हुए के समान है, साथ ही उन्हें यह भी विश्वाश हो गया कि "स्वयंवर में द्रौपदी मिल जाएगी"।

इस कार्य में वह सफल भी होते है। स्वयंवर में वह द्रौपदी को विजय कर के अपने आश्रम लाते हैं। जब वह अपनी माँ के पास आते हैं तो कहते हैं "माँ भिक्षा लाए है" और आगे से कुंती भी बिना देखे कह देती है "सभी भाई मिलकर पाओ"। हर बात सोच के करने वाली कुंती ऐसी बात बिना देखे या सोचे कैसे कह सकती हैं... ? इसमें भी विशेष मंतव्य है। कहीं विकसित कमल के समान नयनों वाली द्रौपदी को देख काम वश इन भाइयों में आपसी फूट ना पड़ जाए। कुंती की इस बात को पक्का करते हुए युधिष्ठिर ने कहा

सर्वेषां द्रौपदी भार्या भविष्यति हि न: शुभा । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 551)

अर्थात : कल्याणकारी द्रौपदी हम सब लोगों की पत्नी होगी।

इस कथा का प्रवाह यौवन की तरफ जा रहा है। इस लिए सब हालात ऐसे बनने थे कि इस कथा के अंत के बारे में जो कथाकार ने सोच कर रखा है वह संपूर्ण हो। इस कारण इसमें रोचकता पैदा होती रहती है। गांधारी के बाद कुंती एक मजबूत नायिका बन कर सामने आती है। उसका बचपन हो, या उसका राजकुमारी रूप, या फिर हिमालय की चोटियों पर सन्यासी देवी कुंती का, या उस अकेली औरत का जिस का कोई सहारा नहीं है। इन सब पड़ावों में जो जो घटनाएं आती है। एक छोटी सी उदाहरन लेते हैं जिस प्रकार किसी मोटरसाइकिल का इंजन खोलें तो उसमें बहुत से छोटे छोटे नट, बोल्ट, पेच, आदिक लगे होते हैं। यह सब वही पुर्जे हैं, वैसे तो इनको कोई नहीं देखता, अगर यह ना हो तो आप संपूर्ण इंजन की कल्पना नहीं कर सकते। इसी प्रकार यह छोटी छोटी घटनाएँ, पल, कदम वह नाटकीयता है, जिसके बिना किसी नायिका के चरित्र और कथा की कल्पना नहीं हो सकती। एक चित्रकार जैसे कोई आकृति बनाता है, अगर वह उसमें रंग ना भरे तो उतना आकर्षित नहीं करती जितना रंगों से करती है। इसी तरह निर्देशक चलती फिरती तस्वीरे, रंगमंच पर अपने अदाकारों द्वारा बनाते हैं और इनमें जो रंग हैं वह इन नाटकीय तत्वों से भरते हैं। जब वह रंग भर रहे होते हैं तब उनके बारे में पता नहीं चलता, जब वह कृति बन कर तैयार होकर सामने निकल कर आती है। तब उसको देख कर चकित होते हैं। उसको तैयार करने में हुई सारी क्रियायों की श्रृंखला याद आती है।

नरेंद्र कोहली कुंती के विषय में कहते है, "कुंती के जीवन का जो गौरवपूर्ण पक्ष है, वह उसकी सफलता नहीं, उसकी कूटता-शून्यता, प्रतिहिंसा का आभाव, प्रतिशोध का निषेध, दया करुणा, परदुख-कातरता, उदारता तथा धर्म पर अडिग रहना है। कुंती के पाँच पुत्रों में पृथक जो गुण दिखाई पड़ते हैं, वह सारे सम्मिलित रूप में अकेली कुंती में विद्यमान हैं। ऐसा लगता है कि जीवन ने कुंती को बहुत कम दिया। कुंती ने जीवन को प्रतिदान में बहुत कुछ दिया है। वह अपनी कठिन परिस्थितिओं के बावजूद उनसे अप्रभावित, निर्लिप्त भाव से जीवन को कुछ न कुछ देती ही रही है। अपनी कठिनाइओं असफलताओं तथा निराशाओं के मध्य भी, जिस प्रकार अनासक्त रूप में वह अपने धर्म का पालन करती रही है। उससे निश्चय ही उसने स्वयं को, विशव भर को अनासक्ति का मंत्र देने वाले कृष्ण की योग्य बुआ सिद्ध किया है।"

कुंती अब थोडा निश्चिन्त हो गई थी। उसकी बात झूठी नहीं हुई। उसके पुत्रों ने उसकी बात भी मान ली और भगवान शिव का वरदान भी सत्य सिद्ध हो गया। सबसे ज्यादा उसको प्रसन्नता इस बात की हुई कि उनकी रक्षा और सहायता के लिए एक और बड़ा राज्य जुड़ गया था। उसके जीवन में जो नाटकीय घटना जुडती है वह उसके पुत्रों को कुरुक्षेत्र के मैदान में विजयी बनाने वाली थी, कि उसको अपने भतीजे श्री कृष्ण का साथ मिलता है। जो उसके पुत्रों की वधु कृष्णा के परम सखा भी थे। एक दिन कुंती अपने पुत्रों के साथ आश्रम में बैठी होती है, तभी श्री कृष्ण अपने भाई बलराम के साथ आकर अपनी बुआ कुंती को प्रणाम करते हैं, तो वह चकित रह जाती हैं और कहती हैं, "हम तो भेष बदल कर इतने लंबे समय से रह रहे है, किसी ने पहचाना नहीं आपने कैसे पहचाना ?" तब श्री कृष्ण कहते हैं, जिसके शब्दों में ही एक सुन्दरता है।

तमब्रवीद वासुदेव: प्रहस्य

गूढोऽप्याग्निशर्यत एव राजन ।

तं विक्रम पाण्डवेयानतीत्य

कोऽम्य: कर्ता विद्यते मानुषेषु । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 552)

अर्थात : तब भगवान् वासुदेव ने हंसकर उत्तर दिया, अग्नि कितनी ही छिपी क्यों न हो, वह पहचान में आ ही जाती है। इन शब्दों को वेदव्यास ने श्री कृष्ण के मुख से कहलवा कर एक बाण से कई निशाने सिद्ध कर के दिखा दिए। यही कारण है, इस कथा की यही ख़ासियत है

आज भारत ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है और अपना परचम लहराती हुई खड़ी है। इसके किरदार भी शौर्य पूर्ण खड़े है।

जब राजा द्रुपद की सभा में द्रौपदी को स्वयंवर में जीतने के लिए आए राजाओं ने उन पर हमला कर दिया था। तब जिस प्रकार उन पांचो ने अपना बचाव किया, उस को देख कर श्री कृष्ण समझ गए थे, यह पांच प्राक्रमी कोई ब्राह्मण नहीं बल्कि पांच पांडव ही है। इसके बाद द्रौपदी का भाई भी यह देखना चाहता है, उन ब्राह्मणों के साथ उसकी बहन कितनी सुखद है, तब उसको भी पता लगता है, वह पांच ब्राह्मण असल में पांच क्षत्रिय पांडव है। फिर वह अपनी बहन की विधि पूर्वक शादी करते हैं। जिसमें उनको बहुत सा दाज दिया, बहुत सी नाना प्रकार की वस्तुएं थी, सुंदर स्वर्ण की मालाएं, सौ रथ वह भी सोने से जड़े हुए थे। जिसमें चार चार घोड़े जुते हुए थे, सौ हाथी, सुंदर सुंदर वस्त्र और सौ दासियाँ भी भेंट की।

कुंती जिस से सब कुछ छिन गया था, आज फिर उसके पास सब कुछ आ गया। बड़ी बात, उसको अब श्री कृष्ण का साथ मिल गया था। कुंती अपनी बहु द्रौपदी का मार्ग दर्शन करती रहती थी, उसको मन से मजबूत करती है, वह कहीं अपना मनोबल न खो दे। कुंती को श्री कृष्ण भी बहुत से वाहन, मुद्राएँ, वस्त्र, दास और जो भी एक राज महल में राजा के पास वस्तुएं होनी चाहिए वह सब देते हैं। कुंती ने जिस जिस भाव से जो कार्य किए थे, वह सब संपूर्ण होने लगे। उसके पुत्रों के पास अब सत्ता का कुछ अंशिक भाग दोबारा आने लगा था। उसे आशा थी जल्दी ही सब ठीक होगा। उधर हस्तिनापुर राज दरबार में भी सबको यह समाचार मिल जाता है, कि कुंती और पाँचों पांडव जीवित है, तब धृतराष्ट्र विदुर को कहते हैं।

क्षत्तरानय गच्छेतान सह मात्रा सुसत्कृतान ।

तया च देवरुपिण्या कृष्णया सह भारत । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 586)

अर्थात : भरतवंशी विदुर ! अब तुम्हीं जाओ और उनकी माता कुंती तथा देवरूपी वधु कृष्णा के साथ पाँचों पांडवों को सत्कार सहित ले आओ।

वेदव्यास ने जो गहन स्थिति कुंती के लिए पैदा की है, उसमें भी बहुत से नाटकीय मोड़ और घटनाएँ है, बाहर ही नहीं अपितु उसके मन में भी द्वन्द पैदा होता है। जिन कुरु पुत्रों ने उसे और उसके बेटों को मारने की कोशिश की वह अब उनके साथ क्या करेंगे..... ? अब तो उनके साथ उसकी बहु कृष्णा भी है। जिसको जीतने के लिए कुरु भी गए और हार कर वापिस आए थे। क्या अब वह उसको अपनी भाभी के स्थान पर देखेंगे..... ? उसके पुत्रों के प्राणों पर हर

पग पर खतरा है। क्या कुंती विदुर के कहने पर वापिस वहां जाएगी..... ? यहीं से नाटकीय मोड़ कथा और दर्शक मन में और गहरे होने शुरू होते हैं।

पांडवों को आधे राज्य भाग के रूप में भयंकर खांडव वन दे दिया गया। उन्होंने वहां इन्द्रप्रस्थ का निर्माण किया और अपनी शक्ति को धीरे धीरे बढाया। वह श्री कृष्ण और विदुर के संपर्क में निरंतर रहे और उनकी आज्ञा और निर्देश से कार्य करते रहे। उनके मार्गदर्शन की सहायता से उन्होंने बहुत से राजायों को परास्त करके उन पर अपना अधिकार जमा लिया था। अनेकों पर्वतीय क्षेत्रों पर राज्य स्थापित हो चूका था। बल, राजनीति और कूटनीति के सहारे उन्होंने पांडव साम्राज्य की नीव रख दी थी और इसमें श्री कृष्ण का बहुत बड़ा हाथ था। खाली हाथ से फिर इतना बड़ा साम्राज्य, सब नाटकीयता के प्राण बिंदु है। चारों दिशायों में सभी भाई अपना अपना पराक्रम दिखा रहे थे। उधर पांडवों की बढती शक्ति और राज्य देखकर कौरवों का उनसे जलना स्वाभाविक था। वह नहीं चाहते थे पांडव शक्तिशाली बनें। सभा पर्व में दुर्योधन इस बात पर विचार करते हुए अपने मामा शकुनी से कहता है, "मामा जी, यदि मेरे सगे संबंधी तथा अन्य महात्माओं की सतत सावधानी से किसी उपाय द्वारा पांडवों को जीता जा सके वह मुझे बताएं।"

द्यतप्रियंश्च कौन्तेयो न स जानाति देवितुम।

समाहूतश्च राजेन्द्रो न शक्ष्यति निवतिर्तुम ।।

देवने कुशलश्चाहं न मेंsसित सद्यशो भुवि ।

त्रिषु लोकेषु कौरव्य तं त्वं द्यूते समाह्वय ।। (*महाभारत* सभापर्वणि 852)

अर्थात : शकुनि बोला हे राजन ! कुंतीनन्दन युधिष्ठिर को जुए का खेल बहुत प्रिय है। वह उसे खेलना नहीं जानते, यदि महाराज युधिष्ठिर को इस क्रीडा के लिए बुलाया जाए तो वह पीछे नहीं हट सकेंगे। मैं जुआ खेलने में बहुत निपुण हूँ, इस कला में मेरी समानता करनेवाला पृथ्वी पर दूसरा कोई नहीं है। केवल यहीं नहीं, तीनों लोकों में मेरे जैसा इस विद्या का जानकार नहीं है। अत: कुरुनन्दन ! तुम इस क्रीड़ा के लिए युधिष्ठिर को बुलाओ।

इन जुए के पासों के माध्यम से एक चिन्ह और सन्देश वेदव्यास ने सबके समक्ष रखा है। वह पांडव जिनको बड़े बड़े राजा परस्त नहीं कर पाए, उनको शकुनि के पासों ने प्रसत कर दिया। इस खेल में वह अपना सारा राज्य जो उसे मिला और जो उसने जीता था, सब अपने भाइयों और पत्नी कृष्णा सहित दांव पर लगा कर हार चूका था। कुंती जानती थी, उसके पुत्र

इसे खेलेंगे तो हारेंगे, उन्होंने अपनी माँ, द्रौपदी, विदुर, भीष्म किसी की बात नहीं सुनी। इस खेल में द्रौपदी का चीर हरण करने की कोशिश की गई। जिसने कुरु और पांडू पुत्रों के बीच की खाई को और गहरा कर दिया।

इतने वर्ष वनों में रहने के बाद उनको फिर वनवास मिल गया था। जब उनके साथ कुंती भी जाने लगी तो उनको विदुर रोक लेते हैं, क्योंकि अब वह वृद्ध हो चुकी थी। वह इतनी सक्षम नहीं थी कि वनों में रह सके। दरअसल वह स्वयं भी राज महल में रह कर सारे हालातों पर नज़र रखना चाहती थी, कहीं उसके पुत्रों के खिलाफ कोई षड्यंत्र तो नहीं चल रहा। दूसरा वह इस बात से खुश और निश्चिन्त थी क्योंकि अब उनके साथ अब द्रौपदी थी। जब वह अपने पुत्रों को विदा करती है। तब जो उसकी वार्तालाप द्रौपदी से है, वह अपार संभावनाओं से भरी पड़ी है, जो किसी भी दर्शक को बाँधने में सक्षम है।

वत्से शोको न ते कार्य: प्राय्येदं व्यसनं महत ।

स्त्री धर्माणामभिज्ञासि शीलाचारवती तथा ।। (*महाभारत* सभापर्वणि 93)

अर्थात : द्रौपती को जाती देख कुंती अत्यंत संतप्त हो उठी और शोकाकुल वाणी द्वारा बड़ी कठिनाई से इस प्रकार बोली, "बेटी इस महान संकट को पाकर तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए, तुम स्त्री धर्म को जानती हो, शील और सदाचार का पालन करनेवाली हो। पवित्र मुस्कान वाली बहु ! इसलिए पतियों के प्रति तुम्हारा क्या कर्तव्य है, यह तुम्हें बताने की आवश्यकता मैं नहीं समझती, तुम सती स्त्रियों के सदगुणों से संपन्न हो, तुम्हें पति और पिता दोनों के कुलों की शोभा बढाई है। निष्पाप द्रौपदी ! यह कौरव बड़े भाग्यशाली हैं। जिन्हें तुमने अपनी क्रोधाग्नि से जलाकर भस्म नहीं कर दिया। जाओ, तुम्हारा मार्ग विघ्न और बाधायों से रहित हो, मेरे किए हुए शुभ चिन्तन से तुम्हारा अभ्युदय हो। जो बात अवश्य होने वाली है, उसके होने पर साध्वी स्त्रियों के मन में व्याकुलता नहीं होती। तुम अपने श्रेष्ठ धर्म से सुरक्षित रहकर शीघ्र ही कल्याण प्राप्त करोगी। बेटी ! वन में रहते हुए मेरे पुत्र सहदेव की तुम सदा देख भाल रखना, जिससे यह परम बुद्धिमान सहदेव इस भारी संकट में पड़कर दुखी ना होने पाए।

तथेत्युकत्वा तु सा देवी स्त्रवन्नेत्रजलाविला।

शोणिताक्तैकसना मुक्तेशी विनिर्ययौ । । (*महाभारत* सभापर्वणि 93)

अर्थात : कुंती के ऐसा कहने पर नेत्रों से आंसू बहाती हुई द्रौपदी ने "तथास्तु" कहकर उनकी आज्ञा शिरोधार्य की।

उस समय उसके शारीर पर एक ही वस्त्र था। उसका भी कुछ भाग रज से सना हुआ था और उसके सिर के बाल बिखरे हुए थे। उसी दशा में वह अन्त:पुर से बाहर निकली। रोती बिलखती, वन को जाती हुई द्रौपदी के पीछे पीछे, कुंती भी दुःख से व्याकुल होकर कुछ दूर तक गई।

इस वाक्य में सुंदर भाव, दशा और प्रेम निकल कर आते हैं। एक नायिका के कंधों से भार उतारते हुए वेदव्यास ने दूसरी के कंधों पर डाला है। जिसमें किसी भी अदाकार को खेलने के लिए बहुत कुछ है। कुंती को वेदव्यास ने एक अजब शक्ति दी थी। वह थी परिस्थितियों से खेलने की, उनसे लड़ने की। गुरुकुल से शुरू हुई लड़ाई अब कुरुक्षेत्र के मैंदान में आ गई थी। कुंती ने अपने पुत्रों को अधर्म से लड़ने का गुण दिया।

आरंभ से लेकर दूसरी बार बनवास जाने तक उसने कभी स्वयं को नहीं डोलने दिया, कभी उसकी आँखों में अश्रु धारा नहीं बही, पति के खो जाने पर भी वह डटी रही, बनवास में भी अपने बच्चों को हिमालय बनाती रही। उद्योगपर्व में उसका एक और रूप निकल कर सामने आता है, जिस पर बहुत सी परतें चढ़ गई थी। उसका श्री कृष्ण के साथ विशेष रिश्ता था। उसका भतीजा, गुरु, बेटा, मार्गदर्शक, ईश्वर, क्या कहा जाए ? अगर किसी एक रूप में उसको बाँध देते हैं, तो अन्याय होगा। यही वह नाटकीयता है सबको बार बार कुंती के प्रति आकर्षित करती है।

दूसरी बार जब पांडव अज्ञातवास में थे, तब श्री कृष्ण उनसे मिलते है। सभी अपनी व्यथा उनको सुनाते है। युधिष्ठिर सब के कुशल मंगल होने का समाचार उनके हाथों अपनी माँ तक पहुँचाने को कहते है। उसी समय कृष्णा और श्री कृष्ण का संवाद भी होता है। वह श्री कृष्ण के सामने अपने खुले केशों को दिखा कर अपने पर हुए अत्याचार और बर्बरता को बताती है। सबका हाल जानने के बाद श्री कृष्ण जब हस्तिनापुर आ कर अपनी बुआ कुंती से मिलते हैं, तो सालों से प्रतीक्षा और वेदना के वेग से भरी कुंती की अश्रुधारा श्री कृष्ण के सामने फूट पड़ती है। हीरे की भाँति कठोर कुंती मोम की भाँति पिघल जाती है। जब तीसरे पहर में कृष्ण, विदुर से मिलने के पश्चात् कुंती को मिलने गए तो

सा दृष्टा कृष्णमायान्तं प्रसन्नादित्यवर्चसम ।

कण्ठे गृहीत्वा प्राक्रोशत स्मरन्ती तनयान पृथा । । (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2300)

अर्थात : निर्मल सूर्य के समान तेजस्वी श्री कृष्ण को आते देख कुंती देवी उनके गले लग गई और अपने पुत्रों को याद करके फूट फूट कर रोने लगी। अपने पुत्रों के अनाथ होने के दर्द को इस प्रकार चित्रित करती है। मेरे पुत्र सब कुछ पा कर भी सब कुछ से वंचित हो गए। तात ! वे बचपन में ही पिता के प्यार से वंचित हो गए थे, मैंने ही उनका सदा लालन पालन किया, वह उन सिंह और हाथियों से भरे वन में कैसे रह रहे होंगे। माता पिता को सामने ना देख कर उनकी हालत क्या होती होगी। अपने छोटे पुत्रों नकुल और सहदेव को एक पल भी आँखों से दूर नहीं देख सकती थी। जितना समय आँखों की पलकें बंद होने में लगता है, उतनी देर भी उनके अलग रहने पर धैर्य खो बैठती थी। पुत्रों के प्रति उसका ऐसा मोह खुल के पूरी कथा में कहीं व्यक्त नहीं हुआ है। ऐसा नहीं उसको पुत्र ही प्यारे थे। कुंती कहती है।

सर्वे:पुत्रे: प्रियतरा द्रौपदी में जनार्दन।

कुलीना रूपसम्पन्ना सर्वे: समुदिता गुणे: । । (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2302)

अर्थात : हे जनार्दन ! द्रुपद कुमारी कृष्णा मुझे अपने सभी पुत्रों से अधिक प्रिय है। वह कुलीन, अनुपम सुन्दरी तथा समस्त सद्गुणों से सम्पन्न है। वह महारानी द्रौपदी इन दिनों पता नहीं कैसी दशा में होगी।

चौदहवाँ वर्ष बीत रहा है। इतने दिनों से मैंने पुत्रों के विछोह से संतप्त हुई सत्यवादिनी द्रौपदी को नहीं देखा है। वह बात जो उसने कभी नहीं कही, जिसके बारे में सिर्फ सोचते ही है, जो सबके मन में आती है। श्री कृष्ण को वह कहती है, मैं जो कष्ट भोग रही हूँ, उसके लिए किसी को दोष नहीं देती। अपितु मैं अपने पिता की ही निंदा करती हूँ, जिन्होंने मुझे राजा कुंती भोज के हाथ में दे दिया। यहाँ किस प्रकार बाल काल से लेकर अपने बुढ़ापे तक के सारे दर्द को वह श्री कृष्ण को अर्पण कर रही है। बातों बातों में वह श्री कृष्ण को अपने पुत्रों की रक्षा करने को उकसाती भी है, धर्म का वास्ता देकर, वह जानती है श्री कृष्ण ही अपराजय है। उसकी छाया में ही वह विजय होंगे।

वह श्री कृष्ण के माध्यम से अपने पुत्रों तक अंतिम हल का सन्देश भिजवाना चाहती है, "हे माधव तुम मेरे पुत्रों को कहना जिस प्रयोजन के लिए क्षत्राणी पुत्र उत्पन्न करती है, उसे पूरा करने का समय आ गया है। यदि ऐसा समय आने पर तुम युद्ध नहीं करोगे तो यह व्यर्थ बीत जाएगा। पुत्रो समय आने पर प्राणों की बाजी लगाने के लिए तत्पर तैयार रहना।" ऐसा लगता है मानों कुंती भी अब जान चुकी थी, प्रेम और स्नेह से अब कुछ नहीं होने वाला। अब इन भाइयों

में कभी भी युद्ध हो सकता है। शांत रहने वाली कुंती अब श्री कृष्ण के रंग में रंगती हुई अपने हक़ छीनने की बात कर रही है।

जो सदैव शान्ति की बात करती थी, आज वह अप्रत्यक्ष रूप में श्री कृष्ण को अपने पुत्रों को युद्ध के लिए तैयार रहने का संदेसा क्यों भिजवाने के लिए बाध्य हो गई.....? उसको इस हाल में लाने वाला जो सबसे बड़ा कारण है, आगे वह अपनी बात रखते हुए कहती है।

न दुःख राज्यहरणं न च द्यूते पराजय: ।

प्रव्राजनं तु पुत्राणा न में तद दुःखकारणंम । ।

यत तु सा वृहती श्यामा एकवस्त्रा सभां गता ।

अष्टणोत परुषा वाच: किं नु दुःखतर तत: । । (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2305)

अर्थात : "राज्य छिन गया, यह कोई दुःख का कारण नहीं है, जुए में हार जाना भी दुःख का कारण नहीं है। मेरे पुत्रों को वन में भेज दिया गया, इससे भी मुझे दुःख नहीं हुआ है। परन्तु मेरी श्रेष्ठ सुन्दरी वधु को एक वस्त्र धारण किए, जब सभा में जाना पड़ा और दुष्टों की कठोर बातें सुननी पड़ी, इससे बढ़कर महान दुःख की बात और क्या हो सकती है ? इस छोटी सी बात में बहुत बड़ी बात छुपी हुई है।

वेग में बह कर टूट चुकी कुंती को सँभालने के लिए चित मन में हाथ रखते हुए, श्री कृष्ण अपनी बुआ को हौंसला देते हुए कहते हैं, "बुआ तुम जैसी सौभायशाली नारी दूसरी कौन है, तुम राजा शूरसेन की पुत्री हो, तुम एक उच्च कुल की कन्या हो और दूसरे उच्च कुल में ब्याही हो, तुम्हारे पतिदेव ने सदा तुम्हारा विशेष सम्मान किया है। शीघ्र ही तुम देखोगी पांडव निरोग अवस्था में तुम्हारे सामने उपस्थित हैं। उनके सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध हो गए हैं और वह अपने शत्रुओं का संहार करके साम्राज्य लक्ष्मी से संयुक्त हो सम्पूर्ण जगत के शासक पद पर प्रतिष्ठित है।" अब कहीं न कहीं चिंतित हुई कुंती थोड़ी निश्चिन्त हो जाती है, उसे ज्ञात था श्री कृष्ण कभी भी कोई बात ऐसे ही नहीं बोलते।

यद यत तेषां महाबाहो पथ्यं स्यान्मधुसुदन ।

यथा यथा त्वं मन्येथा: कुर्या: कृष्ण तथा तथा । । (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2306)

कुंती बोली: महाबाहु मधुसुदन कृष्ण ! जो पाण्डवों के लिए हितकर हो तथा जैसे कार्य करना तुम्हें उचित जान पड़े, वैसे वैसे करो।

यह साधारण बात नहीं थी, एक बड़ी घटना थी, जिसने आने वाले समय में सबके ऊपर अपना प्रभाव डालना था। इसके बाद महाबाहु गोविन्द कुंती देवी की परिक्रमा करके उनसे आज्ञा ले, दुर्योधन के घर की और चल दिए। सनातन धर्म में किसी की भी परिक्रमा ऐसी ही नहीं की जाती। जिसको अपना सर्वस्व मानते है, इष्ट और माता पिता का स्थान देते हैं केवल उसी की परिक्रमा की जाती है। वेदव्यास कभी कभी छोटी बातों से बड़ी बातें कर जाते हैं। यह बुआ भतीजे की मुलाकात कोई साधारण मुलाकात नहीं थी, इस मुलकात में अनंत रंग उभर कर बाहर आए।

महाभारत का युद्ध अपनी होंद की धरती तलाश रहा था। कुरु योद्धा भी अपने घमंड में लीन थे। वह पांडवों से किसी प्रकार भी संधि करने के लिए तैयार नहीं थे। अपनी बुआ से मिलने के पश्चात् श्री कृष्ण स्वयं कुरु राज्य सभा में दूत बन कर गए और उनसे गुहार लगाई, "आप लोग सब अपना हठ छोड़ दे और पांडवों से संधि करले"। इसके उल्ट दुर्योधन ने श्री कृष्ण को ही बंधी बनाना चाहा। वह इसमें असफल रहा। जब श्री कृष्ण ने भरी सभा में अपना विराट रूप दिखाया तो,उन्हे अहसास हुआ कि उन्हे कैसे बंधी बनाया जा सकता है। अपना दिव्य रूप दिखाने के बाद श्री कृष्ण सीधा अपनी बुआ के पास गए और सारा वाक्य बताया। जिसे सुन कर कुंती भी रुष्ट हो गई, जब श्री कृष्ण उससे पूछते है, अब वह पाण्ड्वो के पास जा रहे है, उनके लिए कुछ सन्देश भेजना है ? तब कुंती कहती है, केशव ! तुम धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर के पास जाकर इस प्रकार कहना –

ब्रूया: केशव राजानं धर्मात्मानं युधिष्ठिरिम ।

भूयांस्ते हीयते धर्मो मा पुत्रक वृथा कृथा: ॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2396)

अर्थात : बेटा तुम्हारे प्रजापालन धर्म की बड़ी हानि हो रही है। तुम उस धर्म पालन के अवसर को व्यर्थ न खोयो।

यहाँ कुंती के चरित्र में जो परिवर्तन और नाटकीय रूप देखने को मिलता है। अभी तक इतने वर्ष तक उसका साध्वी रूप ही सबने देखा, वह चुप चाप सब कष्टों को सहती रही, उसके पुत्रों को मारने तक की कोशिश की गई, पर वह कुछ न बोली। जब कुरु पक्ष की अति हो गई और भीष्म, विदुर, धृतराष्ट, गांधारी, कुंती किसी के समझाने से भी दुर्योधन को फर्क नहीं पड़ा। यहा तक कि उसने जब श्री कृष्ण उसको समझाने गए, उनको ही बंधी बनाने की कोशिश की (एक दूत रूप को)।

तब उसके अंदर की महारानी और क्षत्राणी उभर कर दिखती है। वह कहती है, उसके पुत्रो को कहना "बेटा ! तुम्हारे पिता और पितामह ने जिनका पालन किया है, उन राज धर्मों की ओर ही देखो, तुम जिसका आश्रय लेना चाहते हो, वह राज ऋषियों का आचार अथवा राज धर्म नहीं है।" बिन बाप के पली संतान जो अपने जीवन में अधिक समय बनवास में ही रही, जिन्हें राज धर्म का कुछ पता नहीं था, उनके पास शक्ति तो थी पर उसका प्रयोग कैसे करना है, उसका ज्ञान उन्हें बिलकुल भी नहीं था। इस बात को कुंती श्री कृष्ण के माध्यम से उनको ज्ञात करवाना चाहती थी। अब केवल युद्ध ही अंतिम हल रह गया था, शांति के सब द्वार बंद हो चुके थे। आखिरी प्रयास श्री कृष्ण भी कर चुके थे। इस रूप को देखना एक नाटकीयता ही है। कैसे एक साध्वी माँ कुंती अब महारानी कुंती के रूप में तब्दील होने लगी थी। यह वह आग थी, जिसकी ज्वाला में उसकी पुत्र वधु कृष्णा के अपमान और उसके आंसुओं ने घी डाला था।

पित्र्यमंशं महाबाहो निमग्नं पुन रुद्दर ।

सम्न भेदेन दानेन दण्डेनाथ नयेन वा ।।

ईतो दु:खतरं कि नु यदहं हीनबानध्वा ।

परपिण्डमुदीक्षे वै त्वा सुत्वामित्रनंदन ॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2397)

युद्धयस्व राजधर्मेण मा निमज्जी: पितामहान ।

मागम: क्षीणपुण्यस्त्वं सानुज:पापिकां गतिम ॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2398)

अर्थात : "महाबाहो ! तुम्हारा पैतृक राज्य भाग, शत्रुओं के हाथ में पड़कर लुप्त हो गया है। तुम साम, दाम, दण्ड अथवा भेद नीति से पुनः उसका उद्दार करो।"इससे बढ़कर दुःख की बात और क्या हो सकती, मैं तुम्हें जन्म देकर भी बन्धु बान्धवों से हीन नारी की भाँति जीविका के लिए दूसरों के दिए हुए अन्न पिण्ड की आशा लगाए देखती रहती हूँ। अत: तुम राज धर्म के अनुसार युद्ध करो। कायर बनकर अपने बाप दादों का नाम मत डुबाओ और भाइयों सहित पुण्य से वंचित होकर पापमयी गति को न प्राप्त होओ। जिस प्रकार जो सन्देश वह अपने बेटो को देती है, वह उसके अब तक के चरित्र चित्रण से बिलकुल विभिन्न है। उसका यह रूप भी हो सकता है..... ! बुद्ध की भाँति शान्ति, दया और प्यार की बात करने वाली कुंती आज दुर्गा की भाँति अपने बेटों को सन्देश भेज रही है। यही रंग ही नाटकीयता पैदा करते हैं। जिस तरह आसमान में बहुत से रंग भरे पड़े हैं, वह दिखाई नहीं देते, बस दिखते है तो बारिश के बाद।

कुंती श्री कृष्ण को अपने बेटों को विदुला द्वारा रण भूमि से भागकर आए अपने पुत्रों को कड़ी फटकार देकर पुनः युद्ध के लिए उत्साहित करने की कथा सुनाने को भी कहती है। उन सबके जन्म के समय जो जो भविष्यवाणियां हुई थी, वह भी उनको बताने को कहती है। "हे श्री कृष्ण तुम स्वयं भी वह सब उसी रूप में पूर्ण करोगे, आकाशवाणी ने जैसा कहा है, उसमें मैं किसी दोष की उद्भावना नहीं करती हूँ।

उसकी इस वार्ता में सब तरह के रंग भरे पड़े हैं, वह उन्हें धर्म अर्थ काम मोक्ष सब रंगों से परिचित करवाती है। यह भी सन्देश देती है, अब निर्बल बन कर रहने का समय गया, अब केवल रण ही सहारा है। इस काम के लिए वह श्री कृष्ण का चुनाव करती है, क्योंकि उस समय ऐसा कोई पुरुष नहीं था जो उसके पुत्रों की रक्षा कर सके। इतने रंग, भाव, गहरे संवाद आने वाले भयंकर प्रलय का शंखनाद मन मस्तिष्क में पहले कर देते हैं। एक दौड़ मन में शुरू हो जाती है, क्या इतने समय से सोए पांडव जागेंगे..... ? या अब भी लाचारों की भाँति कौरवों की चालों में फसते जाएंगे...? क्या अपनी माँ कुंती और श्री कृष्ण के बोल उनके सीने पर प्रहार करेंगे ?

एक हलचल अब शुरू हो चुकी थी, रण नीति, कूट नीति, क्या होगा कैसा होगा सब सोचने समझने लगे थे। श्री कृष्ण भी कर्ण को मिलने जाते है और उसे पांडव पक्ष से लड़ने को कहते हैं। कुंती भी यही चाहती थी, कि उसके छे पुत्र एक साथ लड़ें। जिस के लिए गंगा तट पर तपस्या कर रहे पुत्र कर्ण के पास जाती है और उसे उसके जन्म और माता पिता का सत्य बताती है। जिस पर सूर्य देव की आकाशवाणी सत्यता की मोहर लगाती है। एक माँ के दिल की ममता जो सारी उम्र अपने बेटे को नहीं अपना पाई, उसे युद्ध में ना खोने के भय से वह उसको सब सत्य बताने चली गई। वह पांडव पक्ष में लड़ने से मना कर देता है। पर कुंती को एक वचन देता है, वह अर्जुन के इलावा किसी को नहीं मारेगा। अर्जुन मरे या कर्ण तुम्हारे पांच पुत्र हमेंशा जीवित रहेंगे।

इसके बाद कुरुक्षेत्र की भूमि पर इतिहास और युग बदलने का कार्य शुरू हो गया, वर्तमान के योद्धा अतीत बनने वाले थे। जिनके पीछे अनेकों कथा कहानियां छूटने वाली थी। अनेकों नियम बने और टूटे। सत्य और धर्म का बलात्कार हुआ। जिसके मन में जो आ रहा था, वह कर रहा था। कोई प्रतिज्ञा में बंधा हुआ था, तो कोई स्वयं को उन प्रतिज्ञाओं में बांध रहा था। यम के रथ पर सवार होकर मानो स्वयं देवी कलिका अपना तांडव दिखा रही थी। मोह के रिश्ते

अब विष हो गए थे, भाई भाई के सामने, गुरु शिष्य के सामने जैसे दृश्य देखने को मिल रहे थे। गरुड़ और चील जैसे मांस भक्षी पक्षी बहुत ही प्रसन्न चित्त मुद्रा में बैठे थे। बड़े बड़े योद्धा तिनकों की भांति खंड खंड हुए इधर उधर बिखरे पड़े थे। इसका संताप कौन झेलेगा..... ? कौन इन बिखरे पन्नो को समेंटेगा.....? इस भयानक रक्त पात का उत्तर कौन देगा..... ? लाखों प्रश्न जो इधर उधर दौड़ रहे थे, उनको कौन शांत करेगा..... ? कौरव-पांडव दोनों बचपन में साथ खेलने वाले भाई अब कुरुक्षेत्र की भूमि पर युद्ध खेल रहे थे। सहस्त्रों अस्त्रों का प्रयोग सारी धरा को विनाश की गोद में लेकर बैठ गया था।

कई बार सही समय पर न बोलने के कारण, बहुत देर हो जाती है और उसके दुश परिणाम भुगतने पड़ते हैं। भयंकर युद्ध में हनुमान के आशीर्वाद और श्री कृष्ण के नेतृत्व में पांडवों ने विजय पाई। युद्ध के पश्चात् योद्धाओं के अंतिम संस्कार की तैयारी होती है तो कुंती उस रहस्य को उजागर करती है, जिस कारण सोगमय माहोल में पीड़ा फैल जाती है। वह पांड्वो को बताती है कि "रण भूमि में कभी भी पीठ न दिखाने वाला, एक महान दानवीर, जिस शूरवीर ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी भू मंडल में सदा यश का ही उपार्जन किया, जैसे तुमको अर्जुन के बल पर अभिमान था, वैसे ही कौरवों को उसके बल पर। उस सत्य प्रतिज्ञ भ्राता कर्ण के लिए भी जल-दान करो, वह तुम लोगों का बड़ा भाई था। भगवान सूर्य के अंश से वह मेरे ही गर्भ से उत्पन्न हुआ था।" कुंती की इतनी बात सुनते ही सारी सभा में गमगीन माहौल बन जाता है। माता का यह वचन सुन कर पांडव अत्यंत कष्ट में पड गए। युधिष्ठिर सर्प के समान लंबी सांस खींचते हुए माता से बोले "आपने यह गूढ़ रहस्य हमसे छिपा कर हम लोगों को मार डाला, कर्ण की मृत्यु से भाइयों सहित मुझे बड़ी पीड़ा हो रही है। अभिमन्यु, द्रौपदी के पुत्र और पांचालों के विनाश से तथा कुरु कुल के पतन से जितना दुःख हुआ था, उससे सौ गुना यह दुःख इस समय मुझे अत्यंत व्यथित कर रहा है।"

अठारह दिन के भयंकर रक्त पात के बाद सब शांत हो गए थे। इसके बाद भी बहुत से प्रश्न इधर उधर बिखरे पड़े थे। किसी को कोई मार्ग दिखाई नहीं पड़ रहा था। धर्म राज भी अपना मानसिक संतुलन खो चूका था। जिस सत्ता सिंहासन के लिए यह सब हुआ, उस पर बैठने के लिए मना कर दिया। कुंती पुत्रों के मार्ग दर्शक श्री कृष्ण उन्हें समझाते हैं। जब सब कुछ सही हो जाता है तो गांधारी अपने पति धृतराष्ट्र के साथ वनवास पर जाने के लिए तैयार हो जाती है, तो कुंती कहती है वह उन्हें अकेला नहीं जाने देगी, उसके पुत्रों के कारण यह सब हुआ

है, इस लिए वह भी उनके साथ चलेगी।" वह पीछे सवाल छोड़ जाती है, जब दूसरी बार पांडव बनवास पर गए थे, तो अपने वृद्ध होने के कारण वह उनके साथ नहीं गई थी। इतने वर्षों बाद वह गांधारी के साथ चल दी, इसमें क्या है.... ? कोई राज़..... ? दूरदर्शिता..... ? सेवा भाव.... ? धर्म कर्म.... ? या नाटकीयता.... ? इसी कार्य को असल में नाटकीयता कहते हैं, जो अंतिम क्षण में भी दर्शकों के मन में स्वालों का चक्रवात पैदा कर जाए।

हिडिम्बा

भारत देश में प्राचीन काल से ही कथा का बहुत महत्त्व रहा है। कभी घर के बजुर्गों से, तो कभी पाठशाला के गुरु जनों से, कभी धार्मिक स्थलों के प्रांगण से, कोई न कोई कथा सुनने को मिलती रहतीं थी। इससे कल्पनाशीलता का विकास होता था। इन कहानियों के पात्र भी विचित्र होते थे, वह कहीं भी कुछ भी कर सकते थे। इन कहानियों में प्रत्येक व्यक्ति अपने हिसाब से कुछ भी जोड़ लेता था, घटा लेता था। महाभारत असंख्य छोटी बड़ी कथा कहानियों का संग्रह है। इसमें तो भगवान से लेकर देव, दानव, दूसरे लोकों के जीव, असुर, अस्त्र, रमणीक स्थल और भी बहुत कुछ है। इसके पात्रों के जन्म भी बड़े विचित्र, लौकिक और अलौकिक ढंग से होते हैं, फिर उनका पालन पोषण भी बहुत चमत्कारिक ढंग से होता है। किसी का कुंभ से जन्म, किसी का देवता के अव्वाहन से जन्म, किसी का एक पल में हवा में, तो किसी का माँ के गर्भ से, यह तत्व कथा में रोचकता बनाए रखते हैं।

इस कथा में देव-मानव और दानव सभी का समावेश है। कभी वह प्रत्यक्ष रूप में समक्ष आते हैं, तो कभी किसी के अवतार रूप में। कहीं न कहीं सब के पास कुछ न कुछ अलौकिक है, कोई भी साधारण नहीं है। दर्शक वर्ग की बुद्धि से आगे बढ़ कर इस कथा को लिखा गया और इससे प्रेरित होकर आज तक लिखा जा रहा है। इसको देखते-सुनते और पढ़ते समय स्वयं को इसके साथ जुडा महसूस होता है। ऐसा लगता है, स्वयं इस कथा का अंग है। कथाओं और स्भ्यताओं के इस संघ में वह सब गुण है जो इसको कालजयिता प्रदान करते हैं। जब इसको पढ़ते हैं तो एक बार तो सब उलझा सा लगता है। पता ही नहीं लगता कौन सी कथा शुरू हो गई ? कैसे शुरू हुई ? इसका क्या महत्व है ? यह किसने सुनाई और क्यों सुनाई ? इसकी सह कथाएँ लताओं की भांति हैं। जैसे इसके मार्ग पर चलते जाते हैं यह पावों को जकड़ती चलती हैं, आगे बढ़ने पर हर कथा का महत्व समझ आने लगता है। उसके पात्रों से लगाव बढ़ने लगता है। जिन लताओं की जकडन में जा रहे होते हैं, उसमें एक आनंद सा आने लगता है।

इस कथा की विशिष्ट नायिकाओं में बहुत सी विविधता है और सामान्यता है। सबने अपने दम पर कथा को गति दी है। स्वयं के बल पर आगे ले जाने में सक्षम रही हैं। इस कथा की हर बड़ी और छोटी घटनाओं के आधार में नायिकाओं का अधिक अथवा आंशिक योगदान

रहा है। देखने को मिलता है, वेदव्यास इस कथा में इन नायिकाओं के मार्ग दर्शक बन कर समय समय पर आते रहते हैं। हिडिम्ब वध पर्व में वैशम्पायन जी कहते हैं

तस्मान्मुकता वयं दाहादिमं वृक्षमुपाश्रिता: ।

कां दिशं प्रतिपत्स्याम: प्राप्त। : क्लेशमनुत्तमम । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 452)

अर्थात : जब लाक्षाग्रह की घटना से जीवित बच निकलने के बाद कुंती अपने पुत्रों के साथ वनों में भटकती हुई चलती जाती है। वह वैसे करते जाते हैं जैसा दिशानिर्देश उनको विदुर ने दिया होता है।

कुंती कहती है "आज उस अग्निदाह से मुक्त हो इस वृक्ष के नीचे आश्रय ले रहे हैं। किस दिशा में जाना है, इसका भी पता नहीं है। भारी से भारी कष्ट उठा रहे हैं। दिन भर की थकान के बाद वह सभी लोग एक वृक्ष के नीचे सो जाते है।" तब भीम अपने परिवार की रक्षा के लिए सारी रात जागता है। जहाँ पांडव कुंती सहित सो रहे होते हैं, वहां थोड़ी दूर पर शालवृक्ष का आश्रय ले हिडिम्ब नामक राक्षस रहता था। जो बहुत क्रूर और मानवीय मांस खाने वाला था। मनुष्य की गंध उसको दूर से आ जाती थी। पांड्वो को दूर से देख कर उसके मुख में पानी आने लगा। वह खुश होकर सोचने लगा, आज तो मैं इनकी गर्दन पर चढ़ कर उसकी नाड़ियों को काट दूंगा और उसका गरमा गर्म, फेनयुक्त तथा ताज़ा खून खूब छककर पीऊंगा। वह अपनी बहन से कहता हैं, "जाओ तुम इन मनुष्यों को मारकर मेरे पास लेकर आओ, यह हमारी हद में सो रहे हैं, इसलिए तुम्हें तनिक भी खतरा नहीं है। फिर दोनों एक साथ बैठकर इन मनुष्यों के मांस नोच नोचकर जी भर खाएंगे। तुम मेरी इस आज्ञा का तुरंत पालन करो।"

अपने भाई की बात मान कर उसकी बहन हिडिम्बा बड़ी उतावली हो के उस स्थान पर चली गई, जहाँ पांडव थे। वहां जाकर उसने कुंती के साथ पांडवों को सोते और किसी से परास्त ना होने वाले भीम को जागते देखा तो उसको देखते ही रह गई। वेदव्यास ने हिडिम्बा के रूप में एक नायिका का परिचय करवाया। वह बहुत अद्भुत और रौचक है। निश्चय ही वह बहुत अधिक शक्तिशाली होगी, जिस कारण उसके भाई ने उसको पांडवों को मारने के लिए भेजा। उसका भाई दिखने में बहुत ही भयंकर है और नर भक्षी है। हिडिम्बा भी राक्षसी नर भक्षी है। पर उसके हृदय में एक मानवीय और दैवीय दिल भी है, जो भावनायों को समझता है। इसी गुण के कारण वो दानवीय होकर भी सबसे अलग है और सबको आश्चर्य चकित करती है। यह गुण

ही उसके चरित्र में नाटकीयता का समावेश करता है। अपने आप में ही यह बात अद्भुत है, जिसमें सिर्फ नफरत ही नहीं प्यार भी है। वैशम्पायन जी कहते हैं

दृष्टैव भीमसेनं सा शालपोतमिवोंदतम ।

राक्षसी कामयाभास् रूपे णाप्रतिमं भुवि । ।

अयं श्यामो महाबाहू: सिंहस्कन्धो महाद्युति: ।

कम्बुग्रीव: पुष्कराक्षो भर्ता युक्तो भवेन्मम । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 454)

अर्थात : धरती पर उगे हुए साखू के पौधे की भाँति मनोहर भीमसेन को देखते ही वह राक्षसी मुग्ध हो उसे चाहने लगी। इस पृथ्वी पर वह अनुपम रूपवान थे। उसने मन ही मन सोचा इन श्यामसुन्दर तरुण वीर की भुजाएं बड़ी बड़ी हैं, कंधे सिंह के समान हैं, यह महान तेजस्वी हैं, इनकी ग्रीवा शंख के सामान सुंदर और नेत्र कमल दल के सदृश्य विशाल है। यह मेरे लिए उपयुक्त पति हो सकते हैं।

कुछ देर पहले वह जिसका रक्त पीने और मांस खाने के चक्कर में उसका वध करने आई थी। उसको देखते ही पति रूप में पाने का सोचने लगी। क्या किसी राक्षसी के पास भी ऐसा दिल हो सकता है.....? इसकी कल्पना किसी के मन में नहीं आती। यही वह छोटे छोटे तत्व है जो कथा के परवाह को उत्सुकता के साथ नाटकीय वेग मे ले जाते है। हिडिम्बा का ऐसा रूप उसे देवीय रूप की संज्ञा देता है। भास द्वारा रचित संस्कृत नाटक "मध्यम व्यायोग" में भी अंत में भीम और हिडिम्बा का प्रेम दृश्य देखने वाला होता है, जब उसका मिलन भीम से होता है। राक्षसीय होने के बावजूद भी सनातन धर्म में हिडिम्बा का पूजनीय स्थान है। इसका प्रमाण मनाली में हिडिम्बा देवी के मंदिर रूप में देखने को मिलता है।

वैशम्पायन जी कहते है, जब वह भीमसेन के रूप पर मोहित हो जाती है। वह सोचती है कि मेरे भाई की बात क्रूरता से भरी है। अत: मैं कदापि इसका पालन नहीं करुँगी। उसके सीने में धड़क रहा एक नारी का दिल जाग उठता है, जो सृजन शक्ति का प्रतीक है, किसी का अनर्थ नहीं चाहता। व्यास बड़ी तीव्र गति से उसका एक से दूसरा रूप निकाल कर ले आता है, जो उसके कुशल लेखन को दर्शाती है। नारी जिसको चाहती है, उसके प्रेम में कुछ भी करने के लिए तैयार रहती है। चाहे उसे प्राणों की बाज़ी ही क्यों ना लगानी पड़े। वह अपने स्वामी का साथ नहीं छोडती। यह बात लगभग हर नायिका के चरित्र में दिखती भी है। पति प्रेम अत्यंत प्रबल होता है। भाई का सौहार्द उसके समान नहीं होता। हिडिम्बा सोचती है, इन सबको मार

देने पर इनके मांस से मुझे और मेरे भाई को केवल दो घडी के लिए तृप्ति मिल सकती है, यदि ना मारूं तो बहुत वर्षों तक इनके साथ आनंद भोगूंगी।

एक राक्षसी कन्या किसी मानव पर मोहित हो कर उसे पति रूप में पाने का सोचने लगी, एक नारी की संवेदना, स्नेह सब एक झटके में बाहर उमड़ने लगा। दूरदर्शी नारी और प्रेम भाविनी का जो दृश्य देखते हैं, वह संभवतः पहले नहीं मिलता। यही नाटकीयता के उपयुक्त उदाहरण हैं। वह दूर की बात सोचती है, कि भले इनको मार के वह भाई को खुश और तृप्त करेगी। लेकिन इसको पा कर साथ रहेगी तो बात ही कुछ और ही होगी। यही ऐसे छोटे छोटे मोड़, बातें और भाव हैं जो नाटकीयता के केंद्र बिन्दु हैं।

अब जो बात सबसे ज्यादा मजेदार है, हिडिम्बा के पास ऐसी शक्ति थी कि वह अपनी इच्छा के अनुसार कोई भी रूप धारण कर सकती थी। सुनने में इस बात पर विश्वास न हो परंतु यह रोचकता जरुर पैदा करती है। वह मानव जाति की स्त्री के समान सुंदर रूप बनाकर लजीली ललना की भाँति धीरे धीरे महाबाहु भीमसेन के पास गई। दिव्य आभूषण उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। तब उसने मुस्कुराकर भीमसेन से इस प्रकार पूछा "पुरुष रत्न ! आप कौन हैं और कहाँ से आए हैं ? यह देवताओं के समान सुंदर रूपवाले पुरुष कौन हैं जो यहाँ सो रहे हैं"। प्रेम भाव से उससे बात करती है। यहाँ उसकी नाटकीय व्यतिगत विडम्बना प्रस्तुत होती है।

प्रेम में पड़ा व्यक्ति किस प्रकार अपनों से भी विद्रोह कर लेता है, यहाँ दिखाई पड़ता है। वह भीम को बताती है, इस गहन वन में राक्षसों का निवासस्थान है। यह वन पापत्मा राक्षस मेरा भाई हिडिम्ब का है। उस राक्षस ने दुष्ट भाव से मुझे यहाँ भेजा है। वह आप लोगों का मांस खाना चाहता है। वह प्रेम वश उसको सब सच सच बता देती है। हिडिम्बा भीम को कहती है।

साहं त्वामभिसम्प्रेक्ष्य देवगर्भसमप्रभम ।

नान्यं भर्तारमिच्छामि सत्यमेंतद ब्रवीमि ते । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 454)

अर्थात : "आपका तेज देवकुमारों सा है। मैं आपको देखकर अब दूसरे को अपना पति बनाना नहीं चाहती। मैं यह सच्ची बात आपसे कह रही हूँ।"

एक राक्षसी का मानव को प्रेम परिचय देना स्वयं में अचंभा सा लगता है। यह सुन्दरता ही महाभारत को सजाती है। उसके चरित्र और व्यक्तित्व के जो अद्भुत गुणों का पता चलता है, जब वह भीम को कहती है, "मैं आकाश में विचरने वाली हूँ जहाँ इच्छा हो वहीं विचरण कर

सकती हूँ। आप मेरे साथ भिन्न भिन्न लोकों और प्रदेशों में विहार करके अनुपम प्रसन्नता प्राप्त कीजिए।"

उसका राक्षस रूप, मानवीय रूप, एक प्रेमिका, कोमल हृदय वाली स्त्री, अपनों के लिए जान की बाजी पर खेल जाने वाली, नायिका का परिचय इस कथा में होता है तो इसके दूसरे पक्ष का ख्याल किसी के मन में नहीं आता। यही सुंदरता है जो इसकी ओर आकर्षित करती है। इसके उपर बहुत कुछ लिखा और खेला जा सकता।

भीमसेन उसकी बात सुन कर क्या कहेंगे..... ? बात मानेगे या नहीं.... ? वह आगे कहता है, "मैं अपने सोते हुए भाइयों और माता को नहीं उठाऊंगा। मै तुम्हारे भाई के भय से इनको नहीं जगाऊंगा। मेरे प्रकारम को राक्षस, मनुष्य, गन्धर्व, तथा यक्ष भी नहीं सह सकते। अत: भद्रे तुम जाओ या रहो, अथवा तुम्हारी जैसी इच्छा हो वही करो। यदि तुम चाहो तो अपने नरभक्षी भाई को ही भेज दो।" अब हिडिम्बा क्या करेगी.... ? एक के बाद एक चक्रवात सामने आता जाता है। जिसे अभी पार भी नहीं करते दूसरा फिर आ जाता है।

वैशम्पायन उच्चाव करते है, उधर हिडिम्ब यह सोचकर कि इतनी देर हो गई वह अभी तक वापिस नहीं आई। वृक्ष से उतर कर शीघ्र ही पांडवों के पास आ गया। यहाँ जिस प्रकार से उसने हिडिम्ब का स्वरुप प्रस्तुत किया है, वह भी बहुत कलात्मक है जिसमें अपार संभावनाएं हैं।

लोहिताक्षो महाबाहुरूध्वर्वकेशो महानन: ।

मेंघसंघातव्श्भ्रा च तीक्ष्ण दंष्टो भयानक: । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 455)

अर्थात : उसकी आँखें क्रोध से लाल हो रही थी, भुजाएं बड़ी बड़ी थी, केश ऊपर उठे हुए थे और विशाल मुख था। उसके शरीर का रंग ऐसा काला था, मानों मेंघों की काली घटा छा रही हो। तीखे दाढ़ोंवाला वह राक्षस बहुत ही भयंकर जान पड़ता था।

लिखित रूप में उसके रूप का वर्णन और भी नाटकीयता पैदा करता है। विकराल राक्षस हिडिम्ब को आते देखकर हिडिम्बा भय से थर्रा उठी और भीमसेन से कहती है, देखो वह आ गया है। मैं जैसा कहती हूँ आप वैसे ही करो। उधर भीम भी अपनी बात पर अडिग था। वह कहीं भी हिलने को तैयार नहीं था। अब एक तरफ भाई और एक तरफ वह जिसे वह पति रूप में पाना चाहती थी। इन दो पासों में पिस रही हिडिम्बा की स्थिति कैसी हो रही होगी, इसका चिंतन भी उत्सुकता भरता है। यहाँ हिडिम्बा के धरे हुए रूप का वर्णन भी आता है। हिडिम्ब ने

जब अपनी बहिन के मनुष्योचित रूप की ओर दृष्टीपात किया तो देखा, उसने अपनी चोटी में फूलों के गजरे लगा रखे थे। मुख पूर्ण चंद्रमा के समान मनोहर जान पड़ता था। उसकी भौहें, नासिका, नेत्र और केशान्त भाग सभी सुंदर थे। नख और त्वचा बहुत ही सुकुमार थी। उसने अपने अंगों को समस्त आभूषणों से विभूषित कर रखा था तथा शरीर पर अत्यंत सुंदर महीन साडी शोभा पा रही थी। महाभारत कथा की सबसे बड़ी विशेषता है इसकी वर्णन शैली, सब कुछ बहुत ही सरल ढंग से कलात्मक रूप से लिखा गया है। जिसे पढ़ते सुनते समय मन के पट पर चलचित्र चलने लगते हैं। जब भी इसको कहीं खेलने का प्रयास करते हैं तो हर रूप में यह सहाई सिद्ध होती है। यही कारण है समस्त विश्व में खेलें जाने के बाद और इतनी विभिन्न प्रतियाँ मिलने के बाद भी इसकी भव्यता ख़त्म नहीं हुई। इसके किरदार आज भी सबको अपनी ओर आकर्षित करते हैं, बुलाते है और कार्य करने का बल देते हैं। असंख्य कथाओं के बावजूद, इतने किरदारों के होते हुए भी कुछ उलझा सा नहीं है। स्वच्छ निर्मल जल की भांति भीतरी सतह तक स्पष्ट दिखाई पड़ता है, कहाँ क्या पड़ा है, कैसे पड़ा है।

अपनी बहन को इस रूप में देख कर हिडिम्ब के मन में संदेह उठने लगता है। हो-न-हो यह पति रूप में किसी पुरुष का वरण करना चाहती है। यह विचार आते ही वह कुपित हो उठा। हिडिम्बा को पांड्वो सहित मारने के लिए दौड़ता है। सबसे पहले हिडिंबा की और बढ़ता है, तो भीम आगे आकर उसको ललकारता है, "रूको....! "हिडिम्बा स्त्री है, इसमें इसका कोई अपराध नहीं है, यह भोली भाली स्त्री अपने वश में नहीं है, शरीर के भीतर विचरने वाले कामदेव से प्रेरित होकर आज यह मुझे अपना पति बनाना चाहती है।" यहाँ संवादों के माध्यम से भी बहुत कुछ निकाल कर आता है । कहीं ना कहीं भीम के अन्दर का प्रेम भी उसकी रक्षा रूप में बाहर आता है। वह हिडिम्बा की रक्षा के लिए आगे आता है और युद्ध के लिए ललकारता है। थोडा दूर जाकर दोनों दोनों में भयंकर युद्ध होता है। मानों दो गजराज आपस में लड़ रहे हों, बड़े बड़े वृक्षों को उखाड़कर वह एक दूसरे पर फेंकने लगते हैं। कभी भीम जीतता लगता तो कभी हिडिम्ब। जोर से गरजते हुए आपस में इस तरह प्रहार करने लगे मानों दो चट्टानें आपस में टकरा रही हों।

इस सब के शोर से सोए हुए पांडव और कुंती जाग जाते हैं। सामने खड़ी हिडिम्बा के रूप को देख वह विस्मय में पड जाते हैं। कुंती अपनी मधुर वाणी से हिडिम्बा से कहती है "देव कन्या के समान सुंदर कन्या, तुम कौन हो, किसकी कन्या हो ? तूम किस काम से यहाँ आई हो,

कहाँ तुम्हारा शुभ आगमन हुआ है।" यदि तुम इस वन की देवी अथवा अप्सरा हो तो सब मुझे ठीक ठीक बता तो, तुम किस कार्य के लिए यहाँ खड़ी हो ? कुंती भी जानती थी साधारण कन्या तो ऐसे इतनी रात को यहाँ नहीं आएगी। हिडिम्बा कुंती को अपने असली स्वरुप और अपने राक्षस भाई के बारे में बता देती है और यह भी बता देती है, वह भीम को देखते ही उस पर मोहित होकर पति रूप में मन ही मन में वरण कर चुकी है।

भीम उसके भाई को यमलोक पहुंचा देता है। वह सब सतर्क हो जाते है। अर्जुन कहता है "प्रभो मैं समझता हूँ, इस वन से नगर अब दूर नहीं है। अब शीघ्र ही प्रस्थान करना चाहिए ताकि दुर्योधन को हमारा पता ना चल सके"। तब सभी पांडवों ने उसकी बात को ठीक है कह कर माँ कुंती के साथ वहां से चलने का निर्णय लिया। जब वह चलते लगते हैं, तभी हिडिम्बा भी उनके साथ हो लेती है।

हिडिम्बा के चरित्र में नाटकीय संभावनाएं है, जो उसकी ओर बार बार आकर्षित करती है। राक्षसी होते दैवीय गुणों से भरपूर। वह कुंती और युधिष्ठिर के पास जाकर प्रणाम करके कहती है "मैं भीम के दर्शन मात्र से ही कामदेव के अधीन हो गई और अपने भाई के क्रूरतापूर्ण वचनों की अवहेलना करके, आपका ही अनुसरण करने लगी,आपका जो पराक्रम मैंने अपनी आँखों से देखा है, मैं सेविका आपकी सेवा करना चाहती हूँ"। भीम उसकी बात मानने से मना देता है। एक अनाथ और काम जनित की पीड़ा को यहाँ प्रस्तुत किया है। तब हिडिम्बा कुंती को कहती है "स्त्रियों को इस जगत में जो काम जनित पीड़ा होती है, उसे आप जानती ही हैं, शुभे आपके पुत्र भीमसेन की ओर से मुझे वही कामदेव जनित कष्ट प्राप्त हुआ है। मैंने समय की प्रतीक्षा में उस दुःख को सहन किया है। अब वह समय आ गया है, आशा है मुझे अभीष्ट सुख की प्राप्ति होगी। यदि यह वीरवर या आप मेरी इस प्रार्थना को ठुकरा देंगी तो मैं जीवित नहीं रह सकुंगी, मैं आपसे सत्य कहती हूँ"

बहुत कुछ ऐसा होता है जो कभी हमारे समक्ष नहीं होता, जो किसी जीवाणु की भाँति मन की सूक्षम आँखों से ही देखा जा सकता है। ऐसी ही कुछ है हिडिम्बा, जिसको समझने वाला उसे अभी तक नहीं मिला था। हिडिम्बा को अपना पक्ष सही पक्षों के साथ रखना आता है। इसका परिचय वह किसी पंडित की भाँति युधिष्ठिर से बात करते हुए देती है। सबसे पहले अपने स्त्री भाव से कुंती को अपने पक्ष में करने का ठानती है। अब तक भीम के अपने भाइयों

और माँ के प्रति प्रेम को देख कर वह इतना तो जान चुकी थी। वह उनकी बात को नहीं ठुकरा सकता इसीलिए वह कुंती और युधिष्ठिर से वार्तालाप करती है।

"हे कुंती ! मुझे अपने इस पुत्र से जो मेरे मनोनीत पति है, मिलने का अवसर दीजिए। मैं इन देव स्वरुप स्वामी को लेकर अपने अभीष्ट स्थान पर जाउंगी और पुनः निश्चित समय पर इन्हें आपके समीप ले आउंगी। शुभे आप मेरा विश्वास कीजिए। आप अपने मन से जब मेरा स्मरण करेंगे, तब सेवा में उपस्थित हो जाऊँगी। मैं आप लोगों को अभीष्ट स्थानों में पहुंचा दिया करुँगी। आर्ये ! मैं ना तो यातुधानी हूँ और न निशाचरी हूँ। महारानी मैं राक्षस जाती की सुशीला कन्या हूँ और मेरा नाम सालकटंकटी है। मैं देवोपम कान्ति से युक्त और युवावस्था से सम्पन्न हूँ। मेरे हृदय का संयोग आपके पुत्र भीम के साथ हुआ है। मैं वृकोदर को सामने रखकर आप सब लोगों की सेवा में उपस्थित रहूंगी। आप लोग असावधान हों, तो भी मैं पूरी सावधानी रखकर निरंतर आपकी सेवा में संलग्न रहूंगी। आपको संकटों से बचाऊँगी। दुर्गम एवं विषम स्थानों में यदि आप शीघ्रतापूर्वक अपने लक्ष्य तक जाना चाहते हो तो मैं आप सब लोगों को अपनी पीठ पर बिठाकर वहां पहुंचा दूंगी। आप लोग मुझ पर कृपा करें, जिससे भीम सेन मुझे स्वीकार कर ले।"

डॉ योगेश्वर अपनी किताब में लिखते हैं, "कुंती इतने गुणों से भरपूर नारी को कैसे ठुकरा सकती थी। उसका मन सोच विचार में घुमने लगा। "हिडिम्बा और भीम का संबंध लाचारी का है। वरना किसी राक्षसी से संबंध संभव न था। पांडव वन संकट में थे। लाक्षागृह से भागने की सूचना को छुपाए रहना है। ऐसे में हिडिम्बा का कहा मानना ही उचित है। हिडिम्बा अत्यधिक शक्तिशाली भी है। फिर भी युधिष्ठिर सावधान है। भीम और हिडिम्बा रात को न मिले। रात में राक्षस शक्ति बढ़ जाती है। न जाने हिडिम्बा क्या करे ? राक्षसी का भरोसा नहीं। पांडव देव परिवार है। इसमें किसी राक्षस का प्रवेश उचित नहीं है। राक्षस कलिअंश दुर्योधन से मिल सकते हैं। अनुचित जन्म के कारण ही कर्ण कौरवों के साथ है।" (*भारत का महाभारत*)

जिस तरह से वह अपनी बात रख रही थी, बहुत सी संभावनाओं को निकाल कर सामने ला रहा थी। धर्मराज से बात करते हुए कहती है

आपदस्तरणे प्राणान धारयेद येन तेन वा ।

सर्वमावृत्य कर्तव्यं तं धर्ममनुवर्तता । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 463)

अर्थात : जिस उपाय से भी आपत्ति से छुटकारा मिले और प्राणों की रक्षा हो सके। धर्म का अनुसरण करने वाले पुरुष को वह सब स्वीकार करके उस उपाय को काम में लाना चाहिए।

जो आपत्ति काल में धर्म को धारण करता है, वही धर्मात्माओं में श्रेष्ठ है। धर्मपालन में संकट उपस्थित होना ही धर्मात्मा पुरुषों के लिए आपति कही जाती है। इस प्रकार वह बहुत से विचार उनके समक्ष रखती है। एक राक्षसी कन्या का धर्म के बारे में ज्ञान सुन कर उन सब के मनों में जो चित्र हिडिम्बा का बना हुआ था, वह अब दूसरे रूप में परिवर्तित होने लगा था। अब उसको मात्र साधारण कन्या जानने की भूल वह नहीं कर सकते थे। अभी उनके पास कुछ भी नहीं था। उनके मार्ग में कठिन और जटिल समस्याएँ आ सकती थी। हिडिंबा के जो रूप सामने आ रहे थे, वह सब नाटकीय संभावनाए ही हैं।

आगे अचंभित घटना घटित होती है। जो उनके मनों को हिडिम्बा को अपनी वधु बनाने के लिए बांधती है। वह उन्हें बताती है, "मैं कामवेदना से पीड़ित एक नारी हूँ, अत: आप मेरी भी रक्षा कीजिए। साधु पुरुष, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के सभी पुरुषार्थों के लिए शरणागतों पर दया करते हैं।" धर्मानुरागी महर्षि दया को ही श्रेष्ठ धर्म मानते है। वह कहती है मैं दिव्य ज्ञान से भूत और भविष्य की घटनाओं को देख लेती हूँ। बात बहुत ही नाटकीय है, कोई भी भूत, वर्तमान और भविष्य को कैसे जान सकता है ? उसका यह गुण उसको विशेष नाटकीयता प्रदान करता है। आगे हिडिंबा कहती है "इस लिए मैं आपके कल्याण की बात बता रही हूँ। थोड़ी ही दूरी पर एक उत्तम सरोवर है। आप लोग आज वहां जाकर उस सरोवर में स्नान करके वृक्ष के नीचे विश्राम करे। कुछ दिन बाद कमलनयन वेदव्यास जी का दर्शन पा कर शोकमुक्त हो जाएँगे।"

हिडिम्बा की बातों से, ज्ञान से वह बंध से जाते हैं, वह उनको बताती है, दुर्योधन द्वारा उनको हस्तिनापुर से निकाला जाना, वारणावत नगर में जलाया जाना और विदुर जी के प्रयत्न से सब लोगों की रक्षा होनी आदि। इस बात को सुन वह स्तब्ध रह जाते हैं। इस कथा में सब संभव है, जो कथा और किरदार में प्राणों को फूंकता है। वह कहती है, महात्मा वेदव्यास शालिहोत्र मुनि के आश्रम में निवास करेंगे। उनके आश्रम का वह पवित्र वृक्ष सर्दी, गर्मी, और वर्षा को अच्छी तरह सहने वाला है, वहां केवल जल पी लेने से भूख प्यास दूर हो जाती है। शालिहोत्र मुनि ने अपनी तपस्या द्वारा सरोवर और वृक्ष का निर्माण किया है। वहां कादम्ब, सारस, हंस, कुररी और कुरर आदि पक्षी संगीत की ध्वनि से मिश्रित गीत गाते रहते हैं।

व्यास कुशलता के साथ आगे प्रवेश करते है और प्रस्तुति के लिए रचनातमक माहौल को सृजना कर देते हैं। हिडिम्बा का वो रूप जो किसी के सूक्ष्म मन मे भी नहीं था वो प्रकट होता है।

उसकी बातों को सुन कर कुंती और युधिष्ठिर मान जाते हैं। युधिष्ठिर कहता है, "हिडिम्बा तुम जैसा कह रही हो वह सब ठीक है, इसमें संशय नहीं, किन्तु मैं जैसे कहूँ उसी प्रकार तुम्हें सत्य पर स्थिर रहना चाहिए। भद्रे जब भीमसेन स्नान, नित्यकर्म तथा मांगलिक वेशभूषा आदि धारण कर ले, तब तुम प्रतिदिन उनके साथ रहकर सूर्यास्त होने से पहले तक ही उनकी सेवा कर सकती हो। तुम मन के समान वेग में चलने फिरने वाली हो अत: दिन भर तो तुम इनके साथ अपनी इच्छा के अनुसार विहार करो, रात को सदा ही तुम्हें भीमसेन को हमारे पास पहुंचा देना होगा। संध्या काल आने से पहले ही इन्हें छोड़ देना होगा और नित्य निरंतर इनकी रक्षा करनी होगी। इस शर्त पर तुम जब तक यह पता न चल जाए कि तुम्हारे गर्भ में बालक आ गया है। भद्रे यही तुम्हारे लिए पालन करने योग्य नियम है। तुम्हें सावधान होकर भीमसेन की सेवा करनी चाहिए और नित्य उनके अनुकूल होकर सदा उनकी भलाई में संलग्न रहना चाहिए।" बहुत मुश्किल से हिडिम्बा के मन की इच्छा पूरी हुई। उसे भी शर्तों में बाँध दिया गया। कितनी दयनीय और नाटकीय स्थिति बन गई। उसका फिर त्याग स्वरुप देखने को मिलता है। वह उसे भी हाथ जोड़ कर स्वीकार कर लेती है। यह बात मन को झिंझोर कर रख देने वाली है।

युधिष्ठिर के यों कहने पर कुंती उसको अपनी पुत्री की भाँति गले से लगा लेती है। हिडिम्बा उनके साथ चलने लगती है। आगे जाकर उसने आश्रम में वृक्ष के नीचे एक गृहणी की भाँति झाड़ू लगाई और फिर पांडवों के लिए निवासस्थान का निर्माण किया, उसके बाद कुंती के लिए दूसरी जगह कुटिया बनाई और सबको भोजन करवाया। पश्चात जब सब विश्राम कर रहे होते है तो कुंती भीम से कहती है, "आज हमारे सामने अत्यंत दुखद धर्म संकट उपस्थित हुआ है, हिडिम्बा तुम्हें देखते ही देखते काम से प्रेरित हो मेरे और युधिष्ठिर के पास आकर धर्मत: तुम्हें पति के रूप में वर्ण कर चुकी है। मेरी आज्ञा है, तुम उसे धर्म के लिए एक पुत्र प्रदान करो। वह हमारे लिए कल्याणकारी होगा। मैं इस विषय में तुम्हारा कोई प्रतिवाद नहीं सुनना चाहती। तुम हम दोनों के सामने प्रतिज्ञा करो।"

बहुत अच्छा कह कर भीम ने वैसा ही करने की प्रतिज्ञा की और हिडिम्बा से विवाह कर लिया। यह वचन दिया जब तक उसे पुत्र प्राप्ति नहीं होती, वह उसके साथ ही रहेगा।

तथेति तत प्रतिज्ञाय हिडिम्बा राक्षसी तदा ।

भीमसेनमुपादाय सौध्वर्मचक्रमें तत : ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 465)

अर्थात : तब ऐसा ही होगा, कह कर के हिडिम्बा राक्षसी भीमसेन को साथ ले वहां से ऊपर आकाश में उड़ गई।

हिडिम्बा नरभक्षी राक्षस की बहन थी, पर वह उसके तरह निशाचर नहीं थी। उसको प्रकृति प्रेम और ज्ञान था। एक नारी को अपने पति को किस तरह रिझाना और खुश रखना है। वह सब आता था। जब तक भीम के साथ रही परम सुन्दरी के रूप में रही। उसने भीम को रमणीय पर्वतशिखर, देवताओं के निवास स्थान जहाँ बहुत से पशु पक्षी मधुर शब्द करते रहते थे, पुष्पित वृक्षों और लताओं से सुशोभित दुर्गम वनों में, कमल और उत्पल आदि से अलंकृत रमणीय सरोवर में, नदियों के द्वीपों में, बड़े बड़े शाल वृक्षों के जंगल में, पर्वतीय नदियों में, हिमालय की भांत भांत की गुफायों में, छोटे छोटे सुन्दर तालाबों में, पवित्र देव वनों में, सभी ऋतुयों के फलों से संपन्न तपस्वी मुनियों के सुरम्य आश्रमों में, मानसरोवर एवं अन्य जलाशयों में घूमा फिर प्रसन्न किया। इन सब स्थानों का वर्णन महाभारत में किया गया है। जब इनका वर्णन पढ़ कर ही मन आनंद विभोर हो उठता है। इन सब रमणीय और दैवीय स्थानों के वर्णन से हिडिम्बा की छवि में एक और गुण मन में जुड़ जाता है। इस तरह अपने दिए गए वचन अनुसार हिडिम्बा गृहस्थ आश्रम का पालन करती रही। हिडिम्बा कोई साधारण नायिका नहीं थी तो फिर उससे जुडी घटनाएँ कैसे साधारण हो सकती हैं। उसकी हर घटना, हर कार्य हिडिम्ब वध पर्व में रोचकता बनाए रखता है। अंततः वह समय भी आ गया, जब हिडिम्बा को भीम से विदाई लेनी पडनी है। आगे वर्णन आता है।

सद्यो हि गर्भान राक्षस्यो लभन्ते प्रसवन्ति च ।

कामरूपधराश्चैच भवन्ति बहुरुपिका: । । (*महाभारत* आदिपर्वणि 466)

अर्थात : राक्षसियां जब गर्भ धारण करती हैं, तब तत्काल ही उसको जन्म दे देती है। इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली और नाना प्रकार के रूप बदलनेवाली होती है।

शोध कार्य के दौरान पंजाब के साहिबज़ादा अजीत सिंह नगर (मोहाली) के गाँव "घडूयाँ" जाने का अवसर मिला । प्रचलित दंत कथाओं और मान्यतायों के अनुसार यह वो

स्थान है जहां हिडिम्बा का पांडवों और कुंती से मिलन हुआ था । यहाँ इस गाँव मे द्रौपदी का कुआं और पांडव मंदिर भी हैं जहां हिन्दू लोग पुजा करने जाते हैं। गाँव में एक तालाब है जिसके बारे में कहा जाता है, इसी के पास हिडिम्बा पुत्र घटोत्त्कच का जन्म हुआ था । गाँव के बजुर्गों ने बताया ऐसी मान्यता है कि उसका जन्म एक घड़ी (पल) में हो गया था, इसी कारण घड़ी का अपभ्रंश रूप "घडूयाँ" बना है। इस तलाब का निर्माण भीम और घटोत्त्कच ने किया था।

एक मानव और दानव के संगम से संतान की उत्पत्ति, जिसके माता और पिता असंख्य शक्तियों के स्वामी थे, शारीरिक रूप से बलशाली थे। जब उनका पुत्र पैदा हुआ, उसकी आवाज़ बहुत भयंकर थी, सुंदर लाल लाल होंठ, तीखी आँखें, महान बल, महान वेग और विशाल शरीर उसकी विशेषताएँ थी। यद्यपि उसका जन्म मनुष्य से हुआ था, उसकी आकृति और शक्ति अमानुषिक थी। अपने पिता की भाँति उसका वेग भयंकर और बल महान था। वह दूसरे पिशाचों तथा राक्षसों से बहुत अधिक शक्तिशाली था। जब वह पैदा हुआ तो उसके सर पर बाल नहीं थे।

घटो हास्योत्क्च इति माता तं प्रत्यभापत ।

अब्रवीत तेन नामास्य घटोत्कच इति स्म ह ।। (*महाभारत* आदिपर्वणि 466)

अर्थात : तब बालक की माता ने भीम से कहा- "इसका सर केश रहित है" उसके कथन से ही उसका नाम घटोत्कच हो गया।

इसके बाद हिडिम्बा उन्हें यह कह कर उन्हें अलविदा कह दिया, अब मेरा भीम सेन के साथ रहने का समय समाप्त हो गया है। आवश्यकता के समय पुनः मिलने की प्रतिज्ञा करके अपने अभीष्ट स्थान पर चली गई।

पांडवों के वनों में रहने के बाद राज्य प्राप्त करने के लिए जो संघर्ष चला, उसमें हिडिम्बा ने सबसे बड़ा स्तंभ लगाया। अब उनके के पास एक बलशाली पुत्र और विशाल राज्य था। कुंती भी अपनी पुत्र वधु हिडिम्बा को पाकर खुश थी। वह भी उसकी पवित्रता, त्याग,शक्ति, और साम्राज्य के बारे में जान चुकी थी। अब पांडव अधिक निर्भय होकर वनों और दूसरे स्थलों पर घूमने का प्रयत्न कर सकते थे।

हिडिम्बा पांडव वधु के रूप में एक विशेष स्थान रखती है। वह वनों में रही, बलिदान और त्याग, चरित्र, बाकी नायिकाओं से कम नहीं है। व्यक्ति चाहे किसी भी कुल में जन्म ले, तो

भी वह कुल उसकी पहचान नहीं बनती बल्कि उसका चरित्र, गुण ही पहचान बनती है।हिडिम्बा इसकी उत्कृष्ट उदाहरणों में से एक है। जैसे गुरु रविदास जी कहते हैं

ऊँचे कुल के कारने ब्राह्मण कोई न होई,

जो जाने ब्रह्म आत्मा रविदास ब्राह्मण सोई।

एक के बाद एक हिडिम्बा के जो रूप देखने को मिलते है वह किसी भी नाटकीय चक्रवात के लिए उपयुक्त हैं। हिडिम्बा के चरित्र को अभी तक वह स्थान नहीं दिया गया जो उसका बनता है। चाहे यह कथा में लंबे समय के लिए नहीं रहती पर इसके स्थान और इसके चरित्र मे पाई जाने वाली नाटकीयता को भी ओझल नहीं कर सकते। इसी बात ने शोध कार्य में इसको शामिल करने पर विवश किया।

द्रौपदी

कर्तिका चित्रा चतुर्वेदी लिखती हैं, "महाभारत व रामायण काल में कितनी ही कन्याओं ने अपनी इच्छाओं का गला घोंट दिया। कितनी की कन्यायों ने धर्म के नाम पर अपमान व कष्ट का हलाहल पान कर लिया। क्या हुआ था अम्बिका और अम्बालिका के साथ ? किस विवशता में आत्मघात किया था अम्बा ने ? क्या बीती थी ययाति की पूर्ति माधवी पर ? अनजाने में अंधत्व को ब्याह दी जानेवाली गांधारी ने क्यों सदा के लिए अपनी आँखें बंद कर ली थी ? और क्यों भूमि में समा गई जनक नंदिनी अपमान से तिलमिलाकर? द्रौपदी भी इसी प्रकार निराश हो टूट सकती थी।

किन्तु अद्‌भुत था द्रुपदसुता का आत्मबल । जितना उस पर अत्याचार हुआ उतना ही वह भभक कर ज्वाला बनती गई। जितनी बार उसे कुचला गया, उतनी ही बार वह क्रुद्ध सर्पिणी सी फुफकार उठी। वह यज्ञासेनी थी। यज्ञकुंड से उसका जन्म हुआ था। अन्याय के प्रतिकार हेतु सहसत्रों जिह्वाओं वाली अक्षत ज्वाला सी वह अंत तक लपलपाती रही।" (*महाभारती* 10)

मनुष्य सबसे पहले शुक्राणुओं के रूप में अपनी होंद के लिए संघर्ष करता है। फिर नौं महीने माँ की गर्भ अग्नि में तपता हुआ जन्म लेता है। इसके बाद बचपन से लेकर जवानी तक और फिर जवानी से लेकर वृद्ध अवस्था तक स्वयं के लिए संघर्ष करता है। संघर्ष में जो रौचक तत्व छिपा हुआ है वह है नाटकीयता। नाट्य रचना में प्राण आधार का कार्य करता है। नाटक के मुख्य तत्वों में संघर्ष है। जितना ज्यादा संघर्ष कोई करेगा, वह उतना ही नाटकीय ढंग से उभर कर सामने आएगा और स्वयं को अमर करेगा। महाभारत में यह गुण दिखाई पड़ता है।

निर्जीव पड़े पत्थर किसी को कुछ नहीं कहते। कभी कभी इनके टकराव से निकली चिंगारी पूरे वन को राख़ में तबदील कर देती है। जिसकी अग्नि में सब कुछ भस्म हो जाता है। सिवाए राख और जले हुए अवशेषों के कुछ भी नहीं बचता। कुछ ऐसा ही हुआ था जब एक छोटी सी चिंगारी ने अपनी ज्वाला से कौरवों को सूखे पत्तों की तरह जला कर रख दिया। आज उसकी कहानियों और किस्सों के शेष कुछ भी नहीं बचा।

इस कथा की नायिकाएँ जितने रंगों से भरी पड़ी है। उतने रंग कम किरदारों में देखने को मिलते हैं। एक गुण शोध के लिए चुनी गई सब नायिकाओं में है, वह यह है कि अंत तक आते आते सब रंग सलेटी रंग में तबदील हो जाती हैं।

यज्ञासेनी, कृष्णा, द्रुपद-नंदिनी, पृषती और सैरंध्री किस नाम से उसको याद किया जाए....? किस किरदार को लेकर उस पर चर्चा की जाए.... ? हर किरदार, हर रूप, बहुत से किस्से, बहुत से भाव मिल के उसको पूर्ण करने में लगे रहे। यही वह तत्व है जो नाटकीयता युक्त होकर द्रौपदी को मंच पर अमर करते हैं। उसका चरित्र बहुत अनोखा है, जो सबको अपनी ओर आकर्षित करता है। इसे लेकर कितने लेखक, कवी, निर्देशक और अभिनेता आदि कार्य कर चुके हैं और आज भी निरंतर कार्य जारी है। उसका किरदार वेदव्यास ने नाटकीय चुम्बकीय शक्ति से रचित किया है। जितना अन्याय इस कथा में इसके साथ हुआ है, वह किसी और नायिका के साथ नहीं हुआ। एक दिव्य नायिका होने के साथ वह एक संपूर्ण नारी भी थी। वह कार्यकुशल थी और लोक व्यवहार के साथ घर गृहस्थ में पारंगत थी। द्रौपदी जैसी असाधारण नारी के बीच भी एक साधारण नारी छिपी थी। जिसमें प्रेम, क्रोध, भक्ति, पति प्रेम, और रूप जैसे सभी नारी सुलभ मौजूद थे।

शोभा निगम द्रौपदी के चरित्र के बारे में कहती हैं, "महाभारत के कुछ व्याख्याकार पांचाली पर दोष लगते हुए, उसे बदमिजाज तथा घमंडी कहने से भी नहीं चुके थे। किन्तु पांचाली पर लगाए गए यह सारे आरोप निश्चय ही निराधार एवं दोषपूर्ण हैं। महाभारत की द्रौपदी वस्तुत: एक अत्यंत विदुषी, ओजस्वी, दीप्तशिखा सी प्रज्वलित एवं समस्त श्रेष्ठगुणों से परिपूर्ण आदर्श नारी है। वस्तुत: हमारा आम भारतीय समाज जो नारी पर अत्याचार करना अपना अधिकार समझता है। उन नारियों का ही गुणगान करता है, जो अत्याचार को चुपचाप सहती हैं। इसीलिए धरती के समान सब कुछ चुपचाप सहने वाली सीता उसके लिए आदर्श सती है। यह सुखद बात है कि प्राचीन मनीषियों ने अत्याचार का डटकर मुक़ाबला करने वाली नारियों को उतना ही मान दिया है। इसीलिए महाभारत युद्ध का तथा कथित कारण, पाँच पांडवों की पत्नी द्रौपदी को भी उन्होने सती की कोटि में रखा है.....निश्चय ही यह सत्य है।"(*व्यास कथा* 58-59)

पूरी कथा में जीवन भर वह किसी के सहारे नहीं खड़ी और ना लड़ी। संघर्ष में वह हमेंशा अकेली रही। पाँच देव पतियों के होने बावजूद, राजा द्रुपद की बेटी होने के बावजूद भी अकेली चलती गई। उसकी बुद्धिमता, सतीत्व, तर्क और दूरदर्शिता के आगे सब लाचार नज़र आते हैं। जब भी वह कोई सवाल करती है, तो सब निरुतर हो जाते हैं।

यह कथा आज भी उतनी ही प्रासंगिक और उपयोगी है जितनी कल थी। इसके उतार चढ़ाव और पड़ाव पूरे विश्व के रंगकर्मियों को स्वयं को खेलने पर विवश करते है। राजसत्ता के भीतर होने वाला षड्यंत्र हो या राजसत्ता का बेकाबू मद, बिक चुकी शिक्षा व्यवस्था हो या फिर छल कपट से मारे जाते अभिमन्यु। आज भी सरे बाजार बच्ची से लेकर बूढ़ी द्रौपदी का चीर हर्ण होता है। आज भी कर्ण किसी नदी नाले में बहा दिए जाते हैं।

यज्ञ वेदी की अग्नि के गर्भ से पैदा हुई, अग्नि पुत्री ने अपनी ज्वाला से सब को भस्म कर दिया, जिसने भी उसके सम्मान से खेलने के कोशिश की। उसके किरदार में नाटकीयता है। ऐसा नहीं वह सिर्फ रौद्र रूप में रही। एक प्रेमिका का रूप, एक सती का रूप, एक पतिव्रता पत्नी और भी बहुत कुछ है जो इसकी शोभा बढ़ाते हैं। प्रतिभा रॉय कहती हैं, "द्रौपदी महाभारत ही नहीं, भारतीय जीवन तथा संस्कृति का एक अत्यंत विलक्षण और महत्वपूर्ण चरित्र है।"(*द्रौपदी* पुस्तक परिचय)

महाभारत में रौचकता का हर छोटी बड़ी घटना से संबंध रहा है। यही से नाटकीयता के बीज निकल कर बड़े वृक्ष के रूप में परिवर्तित हुए हैं। एक छोटे से बालक को जैसे हर वस्तु में एक नया रूप दिखता है। जिसके साथ वह खेलना चाहता है, उसे तोड़ फोड़ कर देखना चाहता है। उसको किसी खिलौने से यह मतलब नहीं होता कि वह टूटा है या नहीं। ठीक ऐसे ही जब भी किसी पाठ को देखते हैं, तो एक बालक की तरह देखना चाहिए। जब उसके किरदारों को मंच पर तोड़ फोड़ कर गहन अध्यन के साथ देखते हैं, तो बहुत सी नाटकीयता सामने निकाल कर आती है। जिसे रचनकार ने सारी कथा में किरदारों के साथ घटनाओं में बसा कर प्रस्तुत किया है, उसी तरह जैसे प्रकृति ने पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश से मानवीय तन का निर्माण किया है।

द्रौपदी जिसे बहु संख्या में लोग इस कथा की महानायिका का दर्जा देते हैं। वह नायिका जो भारतीय जीवन में एक पूजनीय किरदार बन गई। अग्नि के गर्भ से जन्म और हिमालय की छाती पर जीवन के पड़ाव की समाप्ति, कितना नाटकीय संदेश भरा पड़ा है इसमें। अग्नि की तपन और हिमालय की शीतलता। एक बात अक्सर आम जन जीवन में प्रयोग की जाती है "जो लोग विशेष होते हैं, उनका कुछ भी सामान्य नहीं होता।" इसके कंधों पर तो फिर सारे युद्ध का भार पड़ना था। प्रतिशोध की अग्नि के कारण, अग्नि गर्भ से जन्म लेने वाली अपमान की अग्नि से

त्रस्त होकर ऐसी ज्वाला बनी जिसने काल की अग्नि में सबकी समाधि बना दी।अंत में भी उसके सीने में प्रश्नो की ज्वाला जलती रही, जिसे या तो वह जानती थी या वसुदेव।

आदि पर्व में जब पांडव ब्राह्मण भेस धारण करके वनों में रह रहे होते है, वहाँ ब्राह्मण उनको द्रौपदी के जन्म के बारे में सारी घटना सुनाते है। द्रौपदी के पिता द्रुपद ने अपने एक ब्राह्मण मित्र द्रोण का अपमान किया और उस अपमान का बदला लेने के लिए द्रोण ने हस्तिनापुर के राज कुमारों को अपना शिष्य बनाया, उनको अस्त्र विद्या में निपुण करके द्रुपद को बंधी बना कर उसका आधा राज अपने पास रख कर छोड़ दिया। यहीं से शुरू होती है इसके जन्म की कहानी

पुत्रजन्म परीप्स्न वै शोकोपहचेतन:

नास्ति श्रेष्ठ मपत्य में इति नित्यमचिंत्यत॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 488)

अर्था : वह अपने लिए एक श्रेष्ठ पुत्र चाहते थे। उनका चित शोक से व्याकुल रहता था। वह रात दिन इसी चिंता में पड़े रहते थे कि मेरे कोई श्रेष्ठ संतान नहीं है।

द्रोण उससे हर पक्ष में श्रेष्ठ थे। द्रुपद के पक्ष में अब कोई ऐसा नहीं था, जो द्रोण को हरा सके। उसके पक्ष में सबसे शक्तिशाली राजसत्ता हस्तिनापुर थी। द्रुपद सारा समय अपमान की अग्नि में जलते रहते। अपना बदला लेने के लिए उसने बहुत से ब्राह्मणो को देखा, पर उसे कोई भी ऐसा नहीं मिला जो उसके प्रतिशोध का बदला ले सके। एक दिन उसने महाभाग में कठोर व्रत का पालन करने वाले दो ब्रह्मऋषियों को देखा, जिनके नाम याज और उपयाज़ थे। वह दोनों ही पर्म शांत और परमेंष्ठि ब्रह्मा के तुल्य प्रभावशाली थे। द्रुपद ने अपनी सारी व्यथा उनको जाकर सुनाई और सहायता करने की प्रार्थना की। उपयाज़ ने उसकी यज्ञ की प्रार्थना स्वीकार की और कहा "राजन, इस यज्ञ से तुम जैसा पुत्र चाहते हो, वैसे ही तुम्हें प्राप्त होगा"। वह पुत्र महान पराक्रमी, महातेजस्वी और महाबली होगा। यज्ञ से पुत्र प्राप्ति..... ? अगर हाँ तो कैसे.... ? यही छोटे छोटे मोड रौचकता पैदा करते रहते हैं। यज्ञ के अंत में याज ने द्रुपद की रानी को आज्ञा दी पृषत की पुत्र वधू महारानी शीघ्र मेरे पास हविष्य ग्रहण करने के लिए आओ। तुम्हें एक पुत्र और एक कन्या की प्राप्ति होने वाली है। वह कुमार और कुमारी अपने पिता की कुल वृद्धि करने वाले है। यों कहकर याज ने जैसे यज्ञ अग्नि में आहुति डाली उसमें अग्नि देवता के समान एक तेजस्वी कुमार प्रकट हुआ। जो तेजोमय कवच कुंडल एवं क्षात्रतेज आदि के साथ उत्पन्न होने के कारण "धृष्टधूमन" नाम से प्रसिद्ध हुआ। अब बारी आती है, इस कथा की

असाधारण नारी की। जो पेड़ सत्यवती ने लगाया था, उसको फल से पूर्ण करना इसकी भाग्य रेखा में था ।

तत्पश्चात यज्ञ की वेदी में से एक कुमारी कन्या प्रकट हुई, जो पांचाली कहलाई। वह बड़ी सुंदरी और सौभाग्य शाली थी। द्रौपदी के रूप का वर्णन सबको अपने मोहिनी रूप में बांध कर रख देता है। यहाँ नाटकीयता उसके वर्णन और जन्म प्रक्रिया में है। उसके रूप के बारे में श्लोकों में कुछ इस तरह बताया है।

श्यामापद्मपलासाक्षी नीलकुंचितमूर्धजा ।

ताम्र तुग्ननखी सुभ्रश्चारूपीनपयोधरा॥(*महाभारत* आदिपर्वणि 491)

अर्थात : उसके शरीर की कान्ति श्याम थी। नेत्र ऐसे जान पड़ते मानो खिले हुए कमल दल हों, केश काले और घुँघराले थे। नख उभरे हुए और लाल रंग के थे, भौहें बड़ी सुंदर थी, दोनों उरोज स्थूल और मनोहर थे।

आगे वह कहते हैं, वह ऐसी जान पड़ती मानों साक्षात देवी दुर्गा ही मानव तन धारण करके प्रकट हुई हों। उसके अंगों से नील कमल सी सुगंध प्रकट होकर एक कोस तक चारों ओर फैल रही थी। जिस तरह यहाँ अलंकारों का इस्तेमाल किया है, वह कमाल है। जब वह कन्या पैदा हुई तो उसी समय आकाशवाणी भी हुई

तां चापिजातां सुश्रोणी वागुवाचाशरीरिणी ।

षिद्वरासर्वयोकृष्णा निनीपु:क्षत्रियानक्षयम ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 491)

अर्थात : सुंदर कटि प्रदेश वाली उस कन्या के प्रकट होने पर भी आकाशवाणी हुई, इस कन्या का नाम कृष्णा है। वह शरीर से कृष्ण वर्ण की थी, इसलिए भी उसका यह नाम पड़ा। यह समस्त युवतियों में श्रेष्ठ एवं सुंदरी है, यह क्षत्रिओं का संहार करने के लिए प्रकट हुई है। इस तरह इस कथा की महनायिका का जन्म होता है।

द्रौपदी ने सीधा युवा कुमारी अवस्था में जन्म लिया था। बाल्य काल, कौमार्य का आरंभिक काल कुछ भी उसने नहीं देखा। है न आश्चरायचकित ..... उसको सिर्फ पैदा ही इस लिए किया गया, कि वह अपने पिता के अपमान का बदला के सके। वह सदैव दूसरों के ही उदेश्य पूर्ण करती रही। वह क्या चाहती थी.... ? इसके बारे में किसी ने नहीं पूछा, किसी ने नहीं जाना, यही बात उसके जीवन और चरित्र का दुखांत भी है ।

महाभारत में असंख्य किरदार और घटनाएँ हैं। इन सबको सरलता पूर्ण विस्तार से लिखा गया है कि कहीं भी कुछ उलझा हुआ नहीं लगता। द्रुपद चाहता था उसकी बेटी का विवाह पांडु पुत्र अर्जुन से हो। क्या द्रौपदी की कोई इच्छा नहीं..... ? उसके विवाह की नियति भी पूर्व ही तय करदी गई।

ब्राह्मण जब द्रुपद को लाक्षाग्रह की सारी घटना बताते हैं, तो द्रुपद बहुत दुखी होता है, क्योकि वह अपनी बेटी को अर्जुन के साथ विदा करना चाहता था। वह तो पहले ही अपनी माँ और भाइयों के संग इस दुनिया को छोड़ कर जा चुके हैं। फिर ब्राह्मण उसे कहता है उसने भ्रांति सुन रखी है, पांडव अवश्य ही कहीं न कहीं जीवित है और इसमें संशय नहीं है। आप संपूर्ण नगर में कृष्णा के स्वयंवर की घोषणा करदो। पांडव अपनी माता के साथ कहीं भी दूर या निकट हों, अथवा स्वर्ग में ही क्यों न हों, जहां भी होंगे वह स्वयंवर का समाचार सुन कर अवश्य आएंगे। अब पांडवों के पास कैसे यह समाचार पहुंचेगा.... ? वह कैसे आएंगे.... ? क्या वह सबके समक्ष पांडव रूप में आएंगे.... ? यह सब सवाल रौचकता का प्रवाह लेकर आते हैं । पांडव जब वनों में ब्राह्मण रूप धारण करके अपनी माँ कुंती के साथ घूम रहे थे। तभी एक आगुंतक ब्राह्मण, ब्राह्मणी (कुंती) को कहता है, "तुम देवी कृष्णा का स्वयंवर देखने चलो वहाँ देवता, गंधर्व, यक्ष, और तपस्वी ऋषि भी स्वयंवर देखने आ रहे हैं, हो सकता है पांचाल राज कुमारी अपनी इच्छा से तुम्हारे किसी पुत्र को अपना पति चुन ले। मैं भी अपने शिष्यों के साथ वहीं जाता हूँ, यदि ठीक जान पड़े तो चलो, सब लोग एक साथ ही वहाँ चलेंगे।" उस ब्राह्मण की बात कुंती के मन को लगती है और वह अपने सबसे ज्येष्ठ पुत्र को अपने भाइयों के साथ जाने के लिए मना लेती है ।

अपनी हर कृति को आगे बढ़ाने के लिए जिस प्रकार कुदरत कोई न कोई रास्ता निकाल ही लेती है, जिससे आगे का रास्ता स्वयं बन जाता है। ऐसे ही रचनाकार होता है, जो अपने पात्रों के विकास और कथा के प्रवाह को जारी रखने के लिए कोई न कोई रास्ता निकाल ही लेता है। जहां कुछ बताना हो या किसी को मुश्किल से निकालना हो, तब वेदव्यास वहाँ प्रकट हो जाते हैं। पांडव जब गुप्त रूप से निवास कर रहे थे, उसी समय सत्यवती नंदन वेदव्यास उनको मिलने जाते हैं। वह उनको बहुत सी कथाएँ सुनाते हैं। अभी तक कथा में यहा पता चलता है, यज्ञ की अग्नि से एक दैव्य कन्या पैदा हुई, वह कौन है, उसका पूर्व क्या है, किसी को नहीं पता। वेदव्यास नाटकीयता से भरी कथा उनको सुनाते हैं। बहुत पहले एक महात्मा

ऋषि की रूपवती कन्या थी। अपने किए कर्मों के कारण वह कोई पति नहीं पा सकी। तब अच्छे पति की कामना के लिए उसने तपस्या आरंभ की, उसकी उग्र तपस्या से भगवान शंकर प्रसन्न हुए। जब उन्होने उसको वर मांगने के लिए कहा, तो उसने कहा

सैवमुक्ता ब्रवीत देवंवरदमीश्व्रम ।

पति सर्वगुणोपेत्मिच्छामीति पुनः पुनः ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 567)

अर्थात : तब उसने भगवान शंकर से अपने लिए हितकर वचन कहा, प्रभो ! मैं सर्वगुण पति चाहती हूँ। इस वाक्य को उसने बार बार दुहराया। तब भगवान शंकर ने उसे कहाँ "भद्रे तुम्हारे पाँच भरतवंशी पति होंगे"। उस कन्या ने कहा, मैं तो एक पति चाहती हूँ, तब भगवान शंकर ने कहा "तुमने पाँच बार कहा है कि मुझे पति दीजिए"।

जो बार बार दौहराया गया वह ऐसे ही नहीं था। इसमें भी नाटकीयता छिपी हुई थी। जिसने आगे चल कर सबके समक्ष आना था। यही देवरूपिणी कन्या अब राजा द्रुपद के कुल में पैदा हुई है। आगे वेदव्यास उन्हें कहते हैं, तुम पांचों उसको पा कर बहुत खुश रहोगे।

द्रौपदी के भव्य स्वयंवर का ज़िक्र आता है। वहाँ अनेकों देशों के नट, वैतालिक, नर्तक, सूत, मागध तथा अत्यंत बलवान मल्ल आएंगे। राजा द्रुपद के मन में सदा यही इच्छा रहती थी, कि मैं पांडु नंदन अर्जुन के साथ द्रौपदी का विवाह करूँ। परंतु वह अपने इस मनोभाव को किसी के सामने प्रकट नहीं कर पाते थे। अर्जुन को खोज निकालने की इच्छा से एक ऐसा धनुष्य बनवाया जिसे दूसरा कोई और उठा भी न सके। यहाँ जो नाटकीयता द्रौपदी के विवाह के साथ जुड़ी है, वह बहुत दिलचस्प है। द्रुपद एक तीर के साथ कई निशाने लगाना चाहते हैं।

राजा द्रुपद ने एक ऐसा कृत्रिम यंत्र बनाया, जो तीव्र वेग से आकाश में घूमता रहता था। उस यंत्र के छिद्र के ऊपर उन्होने उसी के बराबर का लक्ष्य तैयार करवाकर रखवा दिया। यह घोषणा करदी, जो वीर इस धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाकर, इन प्रस्तुत बाणों द्वारा ही यंत्र के छेद के भीतर से इसे लांघकर लक्ष्य भेद करेगा, वही मेरी पुत्री को प्राप्त कर सकेगा। निश्चित दिन पर समस्त राजा लोग अपने भाग्य को आज़माने के लिए आए। जरासंध से लेकर कौरव तक सब परास्त हुए। क्योंकि उसका भाग्य तो कथा विधाता द्रौपदी के पूर्व जन्म में ही लिख चुके थे। इस सारी सभा में जो चुप चाप सबको देख रहा था, वह था द्रौपदी का सखा, गुरु, उसका सब कुछ देवकी नंदन कृष्ण। जब सभी नरेश असफल हो गए, तो वहाँ ब्राह्मण रूप धारी पांडु नंदन अर्जुन उठे और जिस धनुष पर रुक्म, सुनीथ, बक्र, कर्ण, दुर्योधन, शल्य, तथा शालव आदि

धनुर्वेद के प्राङ्गत विद्वान डोरी ना चढ़ा सके। उसी धनुष पर अर्जुन ने पलक झपकते ही प्रत्यञ्चा चढ़ा दी। इसके बाद पाँच बाण हाथ में लिए और लक्ष्य भेद कर दिया। इस बात को बाकी सब नरेश सहन नहीं कर पाए। क्षत्रियों के होते एक ब्राह्मण विजय कर ले..... यहाँ पांडवों का बाकी सब आए हुए राजाओं से युद्ध होता है। जिसमें पांडव विजय होते हैं। इसको देख कर द्रुपद और श्री कृष्ण जान जाते है, अवश्य ही यह पाँच ब्राह्मण, पाँच पांडव ही है।

द्रौपदी के चरित्र में जो विशेष है, उसका प्रभाव और वर्चस्व महाभारत में दिखाई पड़ता है। इसका संताप आज भी जारी है। कोई भी उसको जाने बगैर कुछ भी बोल देता है। महाभारत में जिस तरह से इसके किरदार को शुरू से बांध कर कर अंत तक लेकर जाया गया है, वह बहुत दिलचस्प है। रंगमंच के तत्व अभिनय, मंच सज्जा, निर्देशन, और लेखन ऐसा कौन सा तत्व है, जो इसमें नहीं दिखते।

पांचों पांडव युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव क्रमशः आकाश, वायु, अग्नि, जल और पार्थिव तत्व के प्रतीक हैं। होमजा द्रौपदी इन पंचभूतों में जीवन-शक्ति का संचार करती है। पंच भूत रूपी पांडव जीवनी शक्ति के एक सूत्र में बंधकर कर्तव्य दायित्व और अधिकार के प्रति सजग होते हैं। द्रौपदी स्वयंवर से पूर्व वे शक्ति-हीन बने हुए ब्राह्मण वेश में भिक्षाटन करते फिरते थे। द्रौपदी उनको जीवनी-शक्ति के रूप में प्राप्त होती है ; जीवन शक्ति द्रौपदी के द्वारा संशलिस्ट होकर पांडव अपने लुप्त स्वत्वों को प्राप्त करते हैं। द्रौपदी के संयोग से वे स्वधर्म और पैतृक राज्य को पुनः प्राप्त करते हैं। द्रौपदी स्वयंवर के अवसर पर ही पांडवों का श्री कृष्ण से मिलन होता है।

जन्म के कुछ वर्ष पश्चात राज महल में रहने के बाद ही उसके जीवन में एक बदलाव, और नाटकीय मोड आता है। जब पांडव द्रौपदी के साथ कुटिया में पहुँचते है, अपनी माँ कुंती को कहते हैं "माँ, हम लोग भिक्षा लाए हैं"। कुंती बिना देखे ही कहती है "तुम सभी मिलकर उसे पाओ"। जब वह बाहर आकर द्रौपदी को देखती है, तो चिंता में पड जाती है। उसे महसूस होता है, उसके मुंह से बड़ी अनुचित बात निकल गई है।कोई भी बात, कोई भी कार्य, व्यर्थ या बिना मतलब के नहीं किया जाता, मंच पर तो बिना मतलब के हाथ भी इधर से उधर नहीं करते। फिर कुंती इतनी बड़ी बात कैसे कह सकती है ? जो उनके लिए बहुत लाभ कार्य है। एक सुंदर युवती जिसको पाने के लिए सभी देशों के राजा आपस में लड़ पड़े, जिसके रूप को देखते ही देखते सब सम्मोहित हो जाते थे। जिसने अपने इच्छा से एक वीर युवक के गले में वर माला

डाली थी। अब उसके साथ उसकी कुटिया में आकर उसको चार और युवको को अपना स्वामी मानना पड़ेगा। क्या ऐसा होगा..... ? उसकी मनो दशा क्या होगी.... ? यह सब नाटकीयता उसके किरदार को और उभारती है।

अव्रवीत सहितान भ्रातन मिथोभेदभयान्नृप :।

सर्वेषा द्रौपदी भार्या भविष्यति हि न: शुभा ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 551)

अर्थात : जब कुंती के वचनो को सुन कर सब चिंता में पड जाते है, अब क्या किया जाए, तो धर्म राज विचार करने के बाद कहते हैं। द्रौपदी को लेकर सब भाइयों में फूट न पड़ जाए। इस भय से राजा ने अपने सभी बंधुओं से कहा "कल्याणमयी द्रौपदी पाँचों की पत्नी होगी"।

कृष्णा का हर कदम पर साथ देने वाले श्री कृष्ण भी वहाँ आ जाते है। बुआ कुंती और पांचों भाइयों से वार्तालाप करते हैं और द्रौपदी को भी आशीर्वाद देते है। इसके पश्चात जब राजा द्रुपद को सारी बात पता चलती है, वह वेदव्यास से कुंती के साथ मिलते है। जिसमें वेदव्यास उनके सारे संशय दूर कर देते हैं और उनको कृष्णा के पूर्व जन्म और उसके दिव्य रूप के बारे में बताते है। इसके पश्चात पांडवों ने द्रौपदी का पाणिग्रहण किया।

देवर्षि ने वहाँ घटित हुई इस अद्‌भुत घटना का वर्णन किया है कि सुंदर कटिप्रदेश वाली, महानुभावा द्रौपदी प्रतिवार विवाह के दूसरे दिन कन्याभाव को प्राप्त हो जाती थी। यह भी एक नाटकीय क्रम है, जिसके कारण उसको सती रूप में जाना जाता है। क्या सच में ऐसा हो सकता है.... ? अगर हाँ तो कैसे..... ? इसकी सत्यता या असत्यता पर चर्चा नहीं करेंगे। हाँ पर यह नाटकीयता ही है जो उसके चरित्र को रूप और गति प्रदान करती है। थोड़ा पूर्व चलते हैं, ऋषि पराशर ने भी सत्यवती के साथ समागम करने के पश्चात उसको कौमार्य प्रदान किया था। यही वरदान द्रौपदी को भी मिला। इसके चरित्र की नाटकीयता का यह गुण दूसरी नायिकाओं के साथ मिलता है।

कृष्णा ने जिस बलशाली अस्त्र से सबको जीता, वह था उसका प्रेम। वह प्रेम जिसके आगे स्वयं वसुदेव भी नतमस्तक हो जाते थे। यह वही प्रेम था, जिसने पांचों भाइयों को बांध कर रखा। जिसने कुंती के हृदय में उसका विशेष स्थान बना दिया। एक छोटी सी घटना आती है, जब अर्जुन, श्री कृष्ण की बहन सुभद्रा से विवाह करके राज भवन में आता है, द्रौपदी उससे रुष्ट हो जाती है। वह अपनी सास कुंती के साथ भवन में बैठी होती है, तो सुभद्रा आकर पहले कुंती के चरण स्पर्श करती है और आशीर्वाद लेती है, बाद में वह द्रौपदी के चरणों में प्रणाम

करते कहती है, “आज से मैं आपकी दासी हूँ, मेरा प्रणाम स्वीकार करो" उसकी इतनी बात सुनते उसका दिल पिघल जाता है और वह उसको अपने सीने से लगा लेती है। उसका यह प्रेम सारी जिंदगी ज़रा भी कम नहीं हुआ। यह दृश्य हमें कुंती की याद भी दिलाता है, जब वह प्रेम से अपनी सौत माद्री का भी दिल जीत लेती है।

समय के साथ साथ बहुत कुछ बदलता गया। पांडवों ने अपने राज महल में राजसूय यज्ञ का आयोजन किया, जिसमें दुर्योधन भी पधारा था। वह भ्रमण करते करते छ्लावा महल में घूमने चला गया। जिसमें वह कभी जल में गिरा, तो कभी दरवाजे से टकराया। उसकी इस दशा का उपहास पांडवों ने उड़ाया। यही बात उस के दिल में बैठ गई और वह उनसे बदला लेने की सोचने लगा। उसे एक बात का पांडवों से भय भी था। जिसे वह अपने मामा शकुनि से बात करते हुए बताता है

तैर्लब्धा द्रौपदी भार्या द्रुपदश्च सुतैः सह ।

सहाय :पृथिवीलाभे वासुदेवश्च वीर्यवान ॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 851)

अर्थात : उन पांचों ने पत्नी रूप में द्रौपदी को तथा पुत्रों सहित राजा द्रुपद और सम्पूर्ण पृथ्वी की प्राप्ति में कारण महापराक्रमी वासुदेव नन्दन श्री कृष्ण को सहायक रूप में प्राप्त किया है।

उधर शकुनि योजना बनाते हुए दुर्योधन से कहता है “युधिष्ठिर को जुए का खेल बहुत पसंद है। वह उसे खेलना नहीं जानता, मैं इस खेल में बहुत निपुण हूँ, इस कला में मेरी समान्ता करने वाला पृथ्वी पर दूसरा कोई नहीं है। यदि तुम उसको इस क्रीडा के लिए बुलाओ तो उसको इस खेल में हरा को सब कुछ जीत लेंगे।“

जिस बात की भविष्यवाणी वेदव्यास ने पहले कर दी थी, वह दिन आ गया। कुंती, द्रौपदी, विदुर, भीष्म सबके समझाने से भी युधिष्ठिर नहीं हटे। भरी सभा में खेल का आरंभ हुआ। एक एक कर युधिष्ठिर के सब दांव विफल होते गए। वह सब कुछ हारते गए, हाथी घोड़े, धन, मुद्राएँ, अपनी सत्ता इत्यादि। इस बीच भी विदुर ने उसको रोका, वह नहीं रुका क्योंकि जिसकी आँखों पर काल की पट्टी बंधी हो, उसे कहाँ सूर्य दिखाई देता है ? अपने भाइयों के साथ साथ वह स्वयं को भी दांव लगा देता है और हार जाता है। यह खेल असल में कोई साधारण खेल नहीं चल रहा था। यह भविष्य के निर्णय का खेल चल रहा था। वैशम्पायन आगे जनमेंजय को कहते है,

अस्ति ते वै प्रिया राजन ग्लह एकोऽपराजित :।

पणस्व कृष्णां पांचाली तयाऽऽत्मानं पुनजर्य ॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 891)

अर्थात: चलाक बुद्धि शकुनि उसे कहता है राजन, आपकी प्रिय द्रौपदी एक ऐसा दांव है, जिसे आप अब तक नहीं हारे हैं। अत :पांचाल राजकुमारी कृष्णा को आप दांव पर रखिए और उसके द्वारा फिर अपने को जीत लीजिए।

अच्छे साहित्य की खास बात यही होती हैं कि एक बात में अनेकों बातें कह जाते हैं, समझने वाले उसे समझ लेते है। वास्तव में जुआ खेलना, सब कुछ दांव पर लगाना बहुत सी बातें इशारों में कह जाता है। समय, स्थान और हालत ही बदलते हैं, स्थितियाँ परिस्थितियाँ तो वही रहती हैं। यही वजह है महाभारत की लोकप्रियता आज भी बनी हुई है। आज भी एशिया यूरोप की महाशक्तियों द्वारा एक दूसरे को दबाने के षड्यंत्र बिलकुल वैसे ही तो है, हाथी घोड़ों और देव दानव पुरुषों के युग से निकल कर बम बारूद, आईएसआईएस और शांति का संदेश देने वाले लोगों के युग में आ गए हैं। यही तो इसकी प्रासंगिकता है जिसने स्वयं को बचा कर रखा है। समय के साथ इस कथा ने स्वयं को गंवाया नहीं बल्कि प्रतिष्ठित रूप से सामने आई है। जिस खेल या कार्य में निपुण न हों, वह कार्य करना ही नहीं चाहिए। चित्रा चतुर्वेदी महाभारत के संदर्भ में लिखती हैं "वेदव्यास का यह ग्रंथ इस अर्थ में भी अद्वितीय है कि यह दो युगों के संधिकाल का विलक्षण प्रतिनिध्व करता है। एक ओर युगांत हो रहा था, दूसरी ओर नए युग का सूत्रपात हो रहा था। द्वापर और कलयुग के इस महान संक्रमणकाल के विशिष्ट लक्षणो का महाभारत में बड़ा अद्भुत तथा रोमांचकारी रूप से यथार्थ चित्रण मिलता है।" (*अम्बा नहीं मैं भीष्मा* 13)

शकुनी की चाल कामयाब होती है, तभी इसी के साथ भरी सभा में एक आवाज़ गूँजती है

तयैवंविधया राजन पांचल्याहं सुमध्यया।

ग्लहं दीव्यामि चावरावारंग्य द्रौपद्या हन्त सौबल ॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 892)

अर्थात : मैं सुमध्यमा पांचाल राजकुमारी द्रौपदी को दांव पर रखकर तुम्हारे साथ जुआ खेलता हूँ। यद्यपि ऐसा करते हुए मुझे महान कष्ट हो रहा है। इस बात को सुन कर विदुर, भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य आदि के शरीर से पसीना छूटने लगा।

महाभारत का अगर सबसे बड़ा निर्णायक मोड कहा जाए तो वह यही है, जिसने इसके प्रवाह को ही मोड दिया। जहां अपनी पत्नी को ही दांव पर ही लगा दिया। आखिरकार वह

अपनी पत्नी को भी हार जाते है। अब क्या होगा.... ? जिस कृष्णा को पाने के लिए दुर्योधन और कर्ण हार कर आए थे, जिसको वह स्वयंवर में ना जीत पाए, वह उसे छल से जुए में जीत गए। उनके चेहरे पर कुटिल हंसी आ रही थी। इस नाटकीय चक्र में सब एक बिन्दु पर इकत्रित हो गए थे। इस सारी कथा का केंद्र बिन्दु द्रौपदी बन कर उभरी है। उसकी रक्षा करने वाले पति, उसके ससुर, कुरु कुल के गुरु, बड़े बड़े योद्धा, क्या उसके सम्मान के लिए आगे आएंगे जो सर झुकाए बैठे है.....? इतनी बड़ी सुनामी में सब उलझ कर रह गया था। यही महाभारत की नाटकीयता का चर्म बिन्दु है। जिसने हस्तिनापुर के धरातल और धरा को बदल कर रख देना था। सब लोग यह भूल गए थे कि वह अग्नि की बेटी है, अगर उसे हाथ लगाने की कोशिश करेंगे तो जल कर भस्म हो जाएंगे।

यह टूटने का युग था। सब मान्यताएँ टूट रही थी, सब रिश्ते धरा शाही हो रहे थे। जिस राजा भरत ने अपने पुत्र को राज सत्ता ना देकर एक योग्य व्यक्ति को सत्ता दी थी। उसके राज्य में ही कुल बहू और बेटी का अपमान हो रहा था। इससे बड़ी नाटकीयता क्या होगी। जहां बच्चे बूढ़े और स्त्रियाँ को पूजा जाता था, आज उन्हीं का अपमान और वह भी भरी सभा में। दुर्योधन ने विदुर को कहा "जाओ और पांडवों की प्यारी पत्नी द्रौपदी को यहाँ ले आओ। उसे कहो मेरे महल में झाड़ू लगा, उसे दासियों के साथ रहना होगा।" धर्मराज विदुर उस समय क्रोध से दुर्योधन को फटकार लगते हुए कहते हैं।

न हि दासीत्वमापन्ना कृष्णा भवितुमर्हती ।

अनीशेन हि राज्ञेषा पणे न्यस्तेति में मति :॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 893)

अर्थात : द्रौपदी कभी दासी नहीं हो सकती। क्योंकि राजा युधिष्ठिर जब पहले अपने को हारकर द्रौपदी को दांव पर लगाने का अधिकार खो चुके थे। उस दशा में उन्होने इसे दांवपर रखा। इसके साथ विदुर उसको कहते है, मेरा विश्वास है कि द्रौपदी हारी नहीं गई।

वह विदुर की कहाँ सुनने वाला था। उसने प्रतिकामी को कहा "जाओ, द्रौपदी को मेरे पास लेकर आओ।" वह द्रौपदी के पास जाकर उसको दुर्योधन के महल में दासी करी करने के लिए ले जाने के लिए कहता है। द्रौपदी को राज्य सभा में हुए जुए के खेल और सब कुछ हारने की बात बताता है। जो सभी देखने वालों सुनने वालों और पढ़ने वालों को भी स्वयं के साथ जोड़ लेती है। क्या ऐसा हो सकता है... ? धर्मराज युधिष्ठिर स्वयंवर में प्राप्त की गई और सभी भाइयों द्वारा माँ कुंती की आज्ञा से विवाह सूत्र में बांध लेने वाली कृष्णा को दांव पर लगा सकते हैं.... ?

सबसे बड़ी सत्ता की महारानी एक पल में ही दासी बन जाएगी.... ? पहाड़ी क्षेत्र के मौसम की तरह यहाँ सब कुछ नाटकीय है। कब क्या हो जाए, क्या बदल जाए कुछ पता नहीं चलता। क्या अब वह भी अंबिका और अंबालिका की तरह राज सत्ता की बात मान लेगी, या फिर अम्बा की तरह उन के सामने अपने स्वाभिमान की लड़ाई में डट कर खड़ी हो जाएगी....? वह प्रतिकामी को कहती है।

गच्छ त्वं कित्वं गत्वा सभायां पृच्छ सूतज ।

किं नु पूर्वे परा जेषीरात्मानमथवा नु मम ॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 895)

अर्थात: हे सूत तुम सभा में उन जुआरी महाराज के पास जाओ और जाकर यह पूछो "आप पहले अपने को हारे थे या मुझे"।

द्रौपदी कहती है "राजा क्या करना चाहते है ? यह जानकार ही मैं अबला तुम्हारे साथ चलूँगी।" समय समय पर द्रौपदी में विभिन्न विद्वान और विदुषियों की झलक देखने को मिलती है, जो बात विदुर ने कही थी वही द्रौपदी ने कही।

उस माहोल में जो नाटकीयता पनपती है, वो सब को शून्य कर देती है। दुशासन उठ खड़ा होता है, आँखें लाल कर के द्रौपदी के कक्ष में प्रवेश करता है। उसको अपने साथ ले जाने लगता है। वह अपने हाथों से अपने अश्रु पौंछती है और उस ओर भागती है जहां बूढ़े महाराज धृतराष्ट्र की स्त्रियाँ बैठी हुई थी। एक हिरनी के पीछे जैसे भूखा शेर दौड़ता है वही हालत उसकी थी। तभी दुशासन रोष से गर्जना करते हुए बड़े वेग से उसके पीछे दौड़ा। उसने द्रौपदी के लंबे नीले और लहराते हुए केशो को पकड़ लिया। ऐसा तो कोई किसी दासी से भी नहीं करता जैसे वह अपनी भाभी से कर रहा था। वह चीकते हुए उसे कहती है "ओ मंदबुद्धि दुशातमा मैं रजस्वला हूँ, और मेरे शरीर पर एक ही वस्त्र है। इस दशा में मुझे सभा में ले जाना अनुचित है"। यह मार्मिक नाटकीय घटना सबको अंदर तक हिला कर रख देती है। मानसिक दशा के साथ दर्शकों को कैसे जोड़ना है, वेदव्यास को पता है। जब भी महिलाओं को मासिक धर्म आता है, तब वह शारीरिक और मानसिक तौर पर ठीक नहीं होती। इस दशा में उसके साथ ऐसा बर्ताव, दर्शकों में मन में बहुत करारी चोट करता है। जिसके सखा स्वयं श्री कृष्ण हो उस की ऐसी दशा.... ? आगे से वह उसको बेशर्मी भरी बात कहता है। जिसको सुनके किसी को भी शर्म आ जाए, "हे द्रौपदी ! तू रजस्वला, एकवस्त्र, अथवा नंगी ही क्यों ना हो, हमने तुम्हें जुए में जीता है, तू अब हमारी दासी है, तुम्हें हमारी इच्छा अनुसार रहना होगा।"

महाभारत जैसे असाधारण युद्ध का कारण साधारण नहीं हो सकता इसी लिए इसके आधार में ऐसी घटना का होना अनिवार्य था, जिसमें सभी लिप्त हो जिसका कोई उत्तर ना दे सके। इसलिए इस शोध में इस पूरी घटना का नाटकीय वृतांत करना अनिवार्य है। इस घटना ने द्रौपदी के जीवन को बदल कर महाभारत के यज्ञ में सबसे मुख्य आहुति दी।

वैशम्पायन जी आगे लिखते है "जनमेंजय ! उस समय द्रौपदी के केश बिखर गए थे, दु:शासन के झकझोरने से उसका आधा वस्त्र भी खिसककर गिर गया था। वह लज्जा से गड़ी जाती थी और भीतर ही भीतर क्रोध से दग्ध हो रही थी। उसी दशा में वह धीरे से इस प्रकार बोली – अरे दुष्ट ! उस सभा में शास्त्रों के विद्वान कर्मठ और इन्द्र के समान तेजस्वी मेरे पिता के समान सभी गुरु जन बैठे हुए हैं। मैं उनके सामने इस रूप में खड़ी होना नहीं चाहती। तू इस प्रकार मुझे न खींच, मुझे वस्त्रहीन मत कर, अरे तू इन कौरव वीरों में जो मुझ रजस्वला स्त्री को खींचकर लिए जा रहा है, यह अत्यंत पापपूर्ण कृत्य है। यहाँ कोई भी तेरी निंदा नहीं कर रहा है। निश्चय ही यह सब लोग तेरे मत से हो गए है। जान पड़ता है द्रोणाचार्य, पितामह भीष्म, महात्मा विदुर तथा राजा धृतराष्ट्र में अब कोई शक्ति नहीं रह गई है। तभी तो यह कुरुवंश के बड़े बूढ़े महापुरुष राजा दुर्योधन के इस भयानक पापाचार की ओर दृष्टिपथ नहीं कर रहे है।" इस सारी घटना में जो शब्द स्थिति और दशा है वह नाटकीयता का शिखर है।

उसके पति भी उसकी सहायता की लिए आगे नहीं आते। दु:शासन उसे बड़े ज़ोर से झकझोरते हुए "दासी-दासी" कह कर उसका हास कर रहा था। उस समय द्रौपदी मूर्छित सी हो रही थी। वहाँ जितने सभासद उपस्थित थे, उनमें से कर्ण, शकुनि और दुर्योधन को छोड़ कर अन्य सब लोगों को सभा में इस प्रकार घसीटी जा रही द्रौपदी की दुर्दशा देख कर बड़ा दुख हुआ। यह नाटकीयता का वह दृश्य था जिसने सभी के असली चेहरे सामने ला दिए थे। कर्ण कहता है, इन पांडवों के और द्रौपदी के वस्त्र उतार दो। कर्ण की बात को सुन कर समस्त पांडव अपने उत्तरीय वस्त्र उतार कर सभा में बैठ गए। क्या द्रौपदी भी इसमें धकेल दी जाएगी ?

वैशम्पायन जी आगे कहते हैं, "तब दुशासन ने उस भरी सभा में द्रौपदी का वस्त्र बलपूर्वक पकड़कर खींचना शुरू कर दिया। यह घटना बहुत कुछ सोचने और सीखने पर मजबूर कर देती है। क्या उस अबला की सहायता के लिए कोई आगे नहीं आया.... ? क्या

उसको पूर्ण निर्वस्त्र कर दिया जाएगा.... ? जहां सब रास्ते बंद हो वहाँ वह शक्ति कार्य करती है जो रचनाकार के मन में है।

आकृष्णमाणे वसने द्रौपद्याश्चिंतितों हरि :

ज्ञातं मया वसिष्ठेन पुरा गीतंमहात्मा ।

महत्यापदि स्मप्राप्ते स्मतरव्यो भगवान हरि : ॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 902)

अर्थात : जब सब रास्ते बंद हो गए कोई वीर, कोई गुरु, कोई पति, उसकी रक्षा के लिए आगे नहीं आया। वह लज्जा से मरी जा रही थी, उसने अपनी आँखें बंद कर ली। जैसे ही उसका वस्त्र खींचा जाने लगा, तब द्रौपदी ने अपने पर्म सखा श्री कृष्ण को याद किया।

उसे पूर्वकाल में वशिष्ठ जी की बताई हुई इस बात को अच्छी तरह समझा कि भारी विपत्ति पड़ने पर भगवान श्री हरि का स्मरण करना चाहिए वो मन ही मन पुकारने लगी " हे गोविंद, हे द्वारकावासी, श्री कृष्ण , हे केशव, यह कौरव मेरा अपमान कर रहे है, क्या आप नहीं जानते ? हे नाथ, हे रमानाथ, हे वज्रनाथ, हे संकटनाशन जनार्दन मैं कौरवरूप समुद्र में डूबी जा रही हूँ, मेरा उद्दार कीजिए। इतना कह के वह ज़ोर ज़ोर से रोने लगी। फिर जो घटना घटित होती है, वह इसकी रौचकता का शिखर है ।

नानारागविरागाणि वसनान्यथ वै प्रभो।

प्रादुर्भवन्ति शतशो धर्मस्य परिपालनात ॥

ततो हलहदलाशब्दस्तत्रासीद घोरदर्शन: ।

तदद्भूततमं लोको वीक्षय सर्वे महीभृत: ।

शशंसुद्रौपदी तत्र कुत्संतों धृतराष्ट्रजम ॥ (*महाभारत* सभापर्वणि 903)

अर्थात : द्रौपदी के वस्त्र खींचे जाते समय उसी तरह के दूसरे अनेक वस्त्र प्रकट होने लग गए। धर्मपालन के प्रभाव से भांति भांति के सैंकड़ों रंग बिरंगे वस्त्र प्रकट होते रहे। यह एक अद्भुत, अविश्वसनीय और अकल्पनीय नाटकीयता है। जो द्रौपदी की लज्जा को बचाती है। इस घटना को देख सब सन्न रह जाते है। वहाँ बड़ा भयंकर कोलाहल मच गया। जगत में यह अद्भुत दृश्य देखकर सब राजा द्रौपदी की प्रशंसा और दु:शासन की निंदा करने लगे।

इसके बाद सबके समक्ष द्रौपदी का जो रूप आता है, उसको कोई नहीं सहन कर पाता। वह धृतराष्ट्र से वरदान रूप में अपने पतियों को दास भाव से मुक्त करवा वापिस मांग लेती है। यह भी उसके चरित्र की विशेषता ही है, इतना कुछ हो जाने पर भी वह अपना धैर्य ना

खोकर अपनी दूरदर्शिता का परिचय देती है। उसके चरित्र का परिचय देते कर्ण कहता है, " कुंती पुत्र तथा धृतराष्ट्र पुत्र सभी एक दूसरे के प्रति अत्यंत क्रोध से भरे हुए थे। ऐसे समय में यह कृष्णा इन पांडवों को पर्म शांति देनेवाली बन गई। पांडव लोग नौका और आधार से रहित जल में गोते खा रहे थे, अर्थात संकट के अथाह सागर में डूब रहे थे। यह पांचाल राजकुमारी इनके लिए पार लगाने वाली नौका बन गई।"

द्रौपदी एक ऐसा पात्र है, जिसके किरदार के साथ बहुत कुछ सच्चा और झूठा जुड़ गया है या फिर जोड़ दिया गया है। जो भी है सब मिलके इसको वशिष्ठ बना गए हैं। इस नायिका में कितना कुछ भरा पड़ा है, जो परिस्थित्यों की बारिश के बाद उभर कर सामने आता है, पति प्रेम, सती, माँ, शिष्य, कुशल नारी, त्यागी,कूटनीतिका, महारानी, दूरदर्शी, और भी बहुत कुछ जो देखने को मिलता रहता है। यही उसकी नाटकीयता है कि स्वयं भगवान को भी नियम तोड़ कर उसकी सहायता के लिए आना पड़ता है।

बच्चन सिंह लिखते है, "गांधारी, कुंती और द्रौपदी में से सबसे अधिक दुखी कौन है, नहीं कहा जा सकता, दुख ही उनके जीवन की कथा रही। यदि संसार में स्त्री न होती तो यह रेगिस्तान होता, अगर महाभारत में यह तीनों स्त्रियाँ न होती तो महाभारत अपाठ्य होता। इनके कारण मुख्यत द्रौपदी के कारण महाभारत की संरचना में जान आ गई। वैसे ही जैसे कैशिकी वृति के कारण नाट्य में आती है।" (*महभरात की संरचना* 9)

चीर हर्ण के समय भी वह अपना धैर्य नहीं खोती, तब श्री कृष्ण उसकी रक्षा करते हैं। उसके बाद वह सभा में बैठे सभी गुरु जनो और बड़े बूढ़ो से क्षमा मांगती हुई कहती है, " मुझे क्षमा कीजिएगा, जब मैं सभा में आई तो आपको प्रणाम नहीं कर पाई"। यह छोटी सी बात बहुत बड़ी बात है। जिसके सहारे वह सभी को अपने साथ जोड़ लेती है। फिर अपनी बुद्धि से अपने ससुर के माध्यम से सबको दासत्व से मुक्त भी करवा लेती है।

वैशम्पायन अथवा अन्य ऋषिगण जब भी कथा का व्याख्यान करते हैं। वह बीच बीच में अन्य सनातन के व्याख्यान नहीं भूलते। उनको भी प्रत्यक्ष या प्रतीकात्मक रूप में बताते रहते हैं। जिससे इसकी रौचकता बनी रहती है। जैसे सतयुग में प्रहलाद की रक्षा करने के लिए भगवान विष्णु खंबे को फाड़ कर नरसिंघ रूप में प्रकट हो जाते है, वैसे ही यहाँ द्रौपदी की रक्षा के लिए साड़ी के रूप में श्री कृष्ण चले आते हैं। यह छोटी छोटी बाते है, जो रस भाव को संचारित रखती हैं। जुए में हारने के बाद पांडवों को द्रौपदी की सहायता से जब सब कुछ

वापिस मिल जाता है, तब कौरव यह बात सहन नहीं कर पाते। दुर्योधन अपने मामा की सहायता से एक बार फिर उनको जुए के खेल में फँसाने का यत्न करते हैं। नाटकीयता तो देखो वह सब जानते हुए कि शकुनि इस खेल में अत्यधिक कुशल है। वह उसके जाल में फसने के लिए तैयार हो जाते है। वैशम्पायन जी जनमेंजय को इसके बारे में बताने के लिए रामायण की एक घटना का सहारा लेते हुए कहते है।

असम्भवे हेममयस्य जंतो

स्तथापि रामो लुलुभे मृगाय । (*महाभारत* सभापर्वणि 923)

अर्थात : जनमेंजय किसी जानवर का शरीर स्वर्ण का हो, यह संभव नही। तथापि श्री राम स्वर्णमय प्रतीत होने वाले मृग के लिए लुभा गए। जिनका पतन या प्रभाव निकट होता है। उनकी बुद्धि विपरीत हो जाती है।

भारतीय महाकाव्यों की विशेषता है, कि वह सब नाटकीयता की खान है, जिनमें से व्यक्ति निकालता निकालता थक जाए। यही कारण है वेदव्यास कृत महाभारत आज दुनिया भर के साहित्य का पितामह है। दुनिया के और बड़े महाकाव्य एक साथ जोड़ देने पर भी यह इसके आदि पर्व के जितने ही बनते है।

जिस खेल में वह पहले हारे थे उसी में फिर फँसने आ गए थे । इस बार नया षड्यंत्र लेकर शकुनि हाज़िर होता है। वह शर्त रखता हुआ कहता है," यदि कुरु पक्ष ने आप लोगों को जुए में हरा दिया तो मृगचर्म धारण करके महान वन में प्रवेश करेंगे, और बारह वर्ष वहाँ रहेंगे एवं तेहरवां वर्ष जन समूह के लोगों से अज्ञात रहकर पूरा करेंगे और यदि तेहरवें वर्ष लोगों को आप के बारे में पता चल गया तो फिर दोबारा बारह वर्ष वन में रहेंगे। । द्रौपदी इस बात को जानती थी कि वह इस खेल में शकुनि से कभी नहीं जीत सकता इसलिए वह इस खेल का विरोध करती है। इस बार वह अकेली नहीं होती उसके साथ इस खेल का विरोध करने वालों की सूची में भीष्म, द्रोण, विदुर, युयुत्सु, कृपाचार्य, संजय, गांधारी, कुंती, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, वीर विकर्ण, अश्वत्थामा, सोमदत्त भी थे। जो उसे बार बार रोक रहे थे, इतने गुरु जनो, वृद्धो, योद्धाओं, भाइयों और पत्नी के कहने पर भी वह नहीं रुकता।

शर्त थी कि खेल में सिर्फ एक बार ही पासा फेंका जाएगा, जिससे फैसला हो जाएगा। सच में इस एक पासे ने इस सारी कथा का पासा ही पलट दिया। पांडव फिर जुए में हार गए और वेदव्यास अपनी बात कह गए।

जिन पांडवों के दम पर प्रभावित होके राजा द्रुपद ने अपनी कन्या कृष्णा को उनको सौंप दिया था, वह आज कायर और नपुसकों की भांति बन गए थे। सुंदर और रेशमी वस्त्र पहनने वाले आज मृग चर्म ओढ़े बैठे थे। कौरव पक्ष पांडवों का और द्रौपदी का उपहास उड़ा रहा था। इस अवस्था में भी वह शांत स्थिर थी। यही उसकी विशेषता है। जिस समय प्रतिज्ञाओं का दौर चल रहा था और पांडव, कौरवों समेंत शकुनि और कर्ण को मारने की सौगंध ले रहे थे, तब वह सबसे दूर मुक्त अवस्था में थी। शांत ज्वालामुखी, जो उचित समय की प्रतीक्षा में था।

द्रौपदी का कुंती के साथ अजब सा रिश्ता था। कुंती भी जानती थी, द्रौपदी सती, सावित्री और पतिव्रता है। वह जितनी सूझवान और दूरदर्शी है, पांडव उतने नहीं है। सही समय और स्थान पर कब और कैसे फैसला लेना है, वह भली भांति जानती है। दोनों में जो प्रेम भाव है, वह भी नाटकीय भरपूर है। वह द्रौपदी को प्रेरित करती हुई कहती है "तुम सती स्त्रियाँ के सदगुणो से सम्पन्न हो, तुमने पति और पिता दोनों के कुल की शोभा बढ़ाई है।" वह जानती थी द्रौपदी का अपमान करने वाला कभी बच नहीं सकता, वह उसको कहती भी है "हे निष्पाप द्रौपदी ! यह कौरव बड़े भाग्यशालि हैं। जिन्हें तुमने अपनी क्रोधाग्नि से जलाकर भस्म नहीं कर दिया। जाओ, तुम्हारा मार्ग बाधायों से रहित हो। मेरे किए हुए शुभ चिंतन से तुम्हारा अम्यूदय हो। वह द्रौपदी को बहुत से निर्देश भी देती है।

जिस तरह से उसके रूप का जो वर्णन किया गया है, वह मंच अथवा पर्दे पर और भी प्रभावशाली रूप में निखर कर सामने आएगी। जब द्रौपदी भवन से बाहर आती है, तो उस समय उसके शरीर पर एक ही वस्त्र था, उसका भी कुछ भाग रज से सना हुआ था, सिर के बाल बिखरे हुए थे। उसी दशा में वह अन्त पुर से:बाहर निकली। कुंती रोते बिलखते हुए द्रौपदी के पीछे काफी दूर तक भी जाती है। जितनी तरह के भी नाटकीय रूप है, वह सब इसमें सूक्ष्म और बड़े रूप में देखने को मिलते हैं।

वनों में पहुँचने के बाद पांडवों का एक ही लक्ष्य था, अपनी सत्ता और वैभव को दोबारा प्राप्त करना। जिसके लिए वह जी जान से लग जाते है। युधिष्ठिर भगवान सूर्य देव की उपासना करते हैं, जिससे प्रसन्न होकर वह उसे एक ऐसा अक्ष्य पात्र देते हैं जिसमें से जो चाहो, जितना चाहो भोजन निकाल सकते है, है न नाटकीयता ? सिर्फ यही नहीं एक और नाटकीयता इसके साथ और द्रौपदी के साथ जुड़ी हुई थी। वह थी कि जब तक द्रौपदी नहीं खा लेती थी, इसमें से

भोजन आना बंद नहीं होता था। इस पात्र का पांडवों के जीवन में बहुत प्रभाव पड़ा, इसमें भी द्रौपदी का हाथ था। जब तक पांडव, ब्राह्मण, बेघर, बीमार सब लोग खाना नहीं खा लेते थे, द्रौपदी अन्न का एक दाना भी नहीं खाती थी। इस से द्रौपदी ने सभी वन वासियों का दिल जीत लिया, वह उसके लिए कुछ भी करने को तैयार रहते थे।

वेदव्यास, विदुर या श्री कृष्ण सब उनसे मिलने और मार्ग दर्शन करने आते रहते थे। बाह्य रूप से किसी भी व्यक्ति विशेष के चरित्र अथवा रूप का निर्णय नहीं कर सकते, वह कैसा है ? क्या है ? जिस प्रकार नारियल बाहर से देखें तो बहुत कठोर होता है, जब उसको खोल कर देखते हैं भ्रांति टूटती जाती है। वह तो अंदर से नर्म और जल से भरपूर होता है। कुछ ऐसा ही चरित्र है द्रौपदी का जिसको जैसे-जैसे खोलके देखते जाते है, उसके अलग अलग रूप निकल कर सामने आते हैं। चीर हर्ण के समय वह किसी के सामने नहीं टूटी, दोबारा फिर अपने पतियों के जूए में हारने के बाद भी वह नहीं टूटी। बनवास पर जाने के दौरान कुंती सहित समस्त हस्तिनापुर की महिलायों के अश्रु भी उसको तोड़ न सके। वह हिमालय की तरह अटल खड़ी रही। वन पर्व में जब श्री कृष्ण को कृष्णा के साथ हुई इस घटना का पता चलता है, तो वह उनसे मिलने चले जाते है। सभी पांडव स्नेह और आदरणीय भाव से उनको घेर कर बैठ जाते है, अपनी व्यथा बताते है। पत्थर की भांति सख्त हुई द्रौपदी बिलकुल मोम के जैसे हो जाती है। जैसे एक शिशु अपनी माँ के आँचल से लिपट कर खूब रोता है। उसी तरह द्रौपदी के अश्रुयों का बांध श्री कृष्ण को देख कर टूट जाता है, वह उसके चरणों में अपनी सारी कथा उसके साथ जो अन्याय हुआ उसका व्याख्यान कर देती है। अपने जिन पतियों को उसने अब तक कुछ नहीं कहा था, वह उनको भी खरी खोटी सुनाती है "हे मधुसूदन ! मैं श्रेष्ठ और सती साध्वी होती हुई भी इन पांचों पांडवों के देखते देखते केशों से पकड़कर घसीटी गई।" ऐसा कहकर वह हाथों से अपना मूंह ढककर फूट फूट कर रोने लगी। वह दुखजनित अश्रु धारा की वर्षा करने लगी। बार बार सिसकती और आँसू पौंछती हुई, भरे कण्ठ से कहती है।

नैव में पतय: सन्ति न पुत्रा न च बान्धवा : ।

न भ्रातरो न च पिता नैव त्व मधुसूदन ॥ (*महाभारत* वनपर्वणि 188)

अर्थात : "हे मधुसूदन ! मेरे लिए न पति है, न पुत्र है, न बांध्व है, न भाई है, न पिता है और न ही आप है (पांडव)। हे श्री कृष्ण मेरे लिए बस आप ही हो, चार कारणो से आपको मेरी सदा रक्षा करनी चाहिए। एक तो आप मेरे संबंधी है, दूसरा अग्निकुंड में उत्पन्न होने के कारण मैं

गौरवशाली हूँ तीसरे आपकी सच्ची सखी हूँ चौथे आप मेरी रक्षा करने में समर्थ है।" श्री कृष्ण भी उसको कहते हैं, "वह उसके अपमान का बदला अवश्य लेगे और पांडवों के हित के लिए जो कुछ भी संभव है, वह मैं सब करूंगा तुम शोक मत करो ।"

ऐसा नहीं था कि द्रौपदी अपने पतियों से नफरत करने लगी थी। ऐसा भी नहीं था कि उसको उन सब की ताकत का पता नहीं था, और ऐसा भी नहीं था कि वह अपने ऊपर हुए अत्याचार का बदला नहीं लेना चाहती थी। असल में वेदव्यास ने बहुत ही सूक्ष्म तरीके से उसके अंदर रौचकता भरी है, जो उसके कार्यों द्वारा बाहर निकल कर आती है। साहित्य केवल मनोरंजन के लिए ही नहीं होता वह समाज को दिशा निर्देश देने के लिए भी होता है। महाभारत खासतौर पर भारतीय जन जीवन में अपना बहुत योगदान रखती है। द्रौपदी एक ऐसा पात्र है जो ग्रहस्थ जीवन को और सुखी बनाने के लिए महत्वपूर्ण है। उसकी दूरदर्शिता, उसका ज्ञान, उसका विदुषी रूप आज भी हर भारतीय नारी पाना चाहती है। जिस नारीवाद का पेड़ अम्बा ने लगाया था, उसको द्रौपदी उसी कौरवों के रक्त से सींच कर पूर्ण करना चाहती थी। वह पुरुष सत्ता का अहं उखाड़ कर फेंक देना चाहती थी, जो उसको राज सभा में चीर हरण के लिए खींच लाया था। यह कार्य वह उसी कौरव वंश के पांडु पुत्रों की सहायता से करना चाहती थी।

ओशो कहते है, "मनुष्य जाती बहुत से दूरभाग्यों से गुजरती रही है। उनमें सबसे बड़ा दुर्भाग्य, बड़े से बड़ा दुर्भाग्य नारी की स्थिति ही है। नारी न त्याग के लिए बनी है और न नारी भोग के लिए बनी है। नारी का अपना कोई अस्तित्व भी है त्याग और भोग से पृथक, उसकी अपनी कोई गरिमा भी है, अपनी कोई आत्मा भी है।" (*नारी और क्रांति* 119,124)

वह श्री कृष्ण के समक्ष अपने पतियों को खरी खोटी सुनाती है। वहीं एक दिन वह युधिष्ठिर को प्रेरित करती है, वह अपने भाइयों और उसकी इस दयनीय स्थिति का बदले लेने के लिए उठे। इसके लिए वह उसको प्रहलाद की घटना भी सुनाती है। वह उसको कहती है

नून च तव वै नास्ति मन्युभर्रतसत्त्म ।

यत ते भ्रातृश्च्य मां चैव दृष्टा नव्यथते मन: ॥ (*महाभारत* वनपर्वणि 1021)

आर्थत : हे भारत श्रेष्ठ निश्चय ही आपके हृदय में क्रोध नहीं है, क्योंकि मुझे और अपने भाइयों को भी कष्ट में पड़ा देख आपके मन में व्यथा नहीं होती है।

उसके वचनो से भीम के अंदर भी बदला लेने की ज्वाला जाग उठती है। फिर धीरे धीरे वह युधिष्ठिर को भी युद्ध के लिए प्रेरित करती है। जहां कहीं पांडवों के मन में थोड़ा बहुत प्रेम

में भेद पैदा हुआ, वह द्रौपदी ने अपनी सूझ बुझ से खत्म कर दिया। वह उनको अनुभव करवा देती है कि उनमें वह शक्ति है, जो उन दुष्टों की सत्ता को उखाड़ फेंक सकती है।

जैसे जैसे कथा आगे बढ़ती जाती है, द्रौपदी के नाटकीय रूप निकाल कर आगे आते रहते हैं। अलग अलग पुष्पों की भांति एक सुंदर पुष्प माला की रचना करते जाते हैं। जो इस कथा का श्रृंगार बनते हैं। अभी तक उसका एक महारानी और दैव्य रूप ही सबने देखा था। जब वनो में उससे मिलने उसका प्रिय सखा श्री कृष्ण अपनी पत्नी सत्यभामा के साथ पहुंचता है। तब पांडव श्री कृष्ण के साथ मिलके धर्म चर्चा कर रहे होते हैं, द्रौपदी और सत्यभामा दोनों एक ओर जाकर प्रसन्नता पूर्ण हास्य विनोद करने लगती है, तब सत्यभामा द्रौपदी को कहती है

तव वश्या हि सततं पाँड:वा प्रियदर्शने ।

मुख प्रेक्षाश्च ते सर्वे तत्वमेंत्द व्रबीहि में ॥ (*महाभारत* वनपर्वणि 1618)

अर्थात : "प्रियदर्शने ! क्या कारण है, पांडव सदा तुम्हारे अधीन रहते है और सब के सब तुम्हारे मुँह की ओर देखते रहते हैं। इसका यथार्थ मुझे बताओ।"

द्रौपदी उसको एक कुशल साधारण ग्रहणी की भांति जीवन की हर एक बात समझाती है। किस तरह से पति पत्नी के संबंध हों और कैसे इन्हे कुशल बनाया जाए। यह घटना भी नाटकीयता का ही रूप है। जिस प्रकार विस्तार पूर्वक उसने बताया की ग्रहस्थ जीवन कैसे चलाना है। कृष्णा के इस गुण को श्री कृष्ण भली भांति जानते थे। इसी लिए वह अपनी पत्नी को शिक्षा दिलवाने के लिए अपनी सखी के पास लाए। जब वह वापिस जाने लगते हैं, तो उसको बताते हैं, उसके दुख भरे दिन जल्दी खत्म होंगे। उसके पुत्र अस्त्र विद्या में निपुण हो गए हैं और कुशलता पूर्वक हैं। द्रौपदी सत्यभामा संवाद-पर्व असल में भारतीय ग्रहस्थ जीवन का आधार है। आज भी जो द्रौपदी के मुख से वेदव्यास के कहलवाया, उसका पालन भारतीय नर नारी के जीवन में दिखता है। यही छोटी छोटी चीज़े तो रचना में प्राण फूँकती है । ओशो कहते है, "जीवन की क्ला में, जीवन की जड़ों को खोजना पहली बात है। निश्चित ही जड़ें भीतर हैं, वहीं से सब विकसित होता है। हमारा प्रेम कहाँ से विकसित होता है ? कभी सोचा ? हमारा चिंतन कहाँ से जन्मता है, कभी सोचा ? हमारी शक्ति कहाँ से आती है कभी तुमने ख्याल किया ? भीतर से ! एक दिन अचानक हमारे भीतर विचार का जन्म होता है, प्रेम का जन्म होता है। हमारे भीतर से कुछ उठता है और बाहर की तरफ फैलता चला जाता है, जीवन भीतर से बाहर की तरफ।" (*नारी और क्रांति* 61)

द्रौपदी के मार्ग दर्शन में पांडव ब्राह्मणो, वृद्धों और अनाथों की सेवा करते रहते। उधर जब दुर्योधन को यह पता चला कि पांडव वनो में भी सामान्य जीवन जी रहे हैं, तो उनके पास दुर्वाषा ऋषि को अपने दस हज़ार शिष्यों के साथ भेजा और कहा कि आप तब उनके पास जाना, जब सभी पांडव भोजन के पश्चात विश्राम कर रहे हों और द्रौपदी ने भी खा लिया हो आप तब जाकर भोजन के लिए कहना। एक छोटी सी नाटकीय घटना घटित होती है, वह पांडवों को भोजन करने के लिए कहकर स्नान करने के लिए चले जाते हैं। द्रौपदी इस चिंता में होती है कि उसने भी भोजन कर लिया है, अब अक्षयपात्र में भोजन नहीं आएगा। वह श्री कृष्ण को याद करती है। जब वह आते हैं तो पात्र पर लगे थोड़े से साग को देख कर कहते हैं कि यह तो समस्त लोगो का पेट भरने के लिए काफी है। उधर नहा रहे दुरवाशा ऋषि को अपने शिष्यों समेंत भोजन के डकार आने लगते हैं। फिर वह पांडवों के पास जाने कि बजाए वहाँ से प्रस्थान कर जाते है कहीं पांडव और द्रौपदी उन्हे अपने तप की शक्ति से भस्म न करदे कि उन्होने उनका इतना भोजन खराब करवाया। भोजन का अपमान कदापि उचित नहीं है (लेकिन उन्हें असली बात का पता नहीं होता)। व्रत, तप, सेवा और तीर्थ यात्रा से उनकी शक्ति में इस प्रकार बढ़ोतरी हो चुकी थी कि जल्दी ही छोटी सी बात पर रुष्ट होकर शाप देने वाले दूर्वाषा ऋषि भी अपने शिष्यों समेंत उनसे डर के भाग खड़े हुए।

इस कथा में सतयुग से लेकर कलयुग तक होने वाले सब कार्यों का वर्णन है। कई ऐसे पात्र भी है जो सतयुग में भी थे और द्वापर में भी है। बहुत सी घटनाएँ भी आपस में मिलती है। जैसे श्री राम चंद्र को बनवास मिला था, ठीक वैसे ही पांडव बनवास काट रहे थे। इस दौरान उनसे मिलती हुई एक और घटना घटित होती है, जिस प्रकार रावण माँ सीता का अपहरण करके ले गया था, उसी तरह जयद्रथ द्रौपदी का अपहरण करके ले जाता है। जिसे पांडव और द्रौपदी का भाई अपने प्राकर्म से द्रौपदी को वापिस जीत कर लाते है। यह अपने आप में अनूठी नाटकीयता है कि महाभारत अपने किरदारों के माध्यम से रामायण की भी याद दिलवाता रहता है। बस एक मुख्य अंतर था जो इनको एक रेखा से विभिन्न करता है वह है "मर्यादा"। महाऋषि वाल्मीकि ने मर्यादा का आधार रखने वाले राम की बात की है, तो वेदव्यास ने बोझ बन चुकी और बनती जा रही मर्यादाओं को तोड़ने वाले श्री कृष्ण की कथा लिखी।

किसी तरह बारह वर्ष बीत चुके थे और अब तेहरवां वर्ष शुरू हो चुका था। जिसमें पांडवों को आम जनों में अज्ञातवास लेकर रहना था। जिसमें उन्हें कोई पहचान न सके। यह

शर्त अपने आप में नाटकीयता भरी है, अगर किसी ने उन्हे पहचान लिया तो उनको फिर से बारह वर्ष का बनवास शुरू करना पड़ेगा। अपने पुरोहितों और ब्राह्मणो से आज्ञा लेकर वह राजा विराट की नगरी में भेस बदल कर आ गए। द्रौपदी ने राज कुमारी से दासी का सफर तय किया। इसमें कितना दुख, अपमान उसे सहन करना पड़ा। वह सब कुछ स्वयं में समेंट कर आगे बढ़ रही थी, जिसका लक्ष्य था, उस दुर्योधन और उसके कुनबे का अंत, जो उनकी इस दशा के लिए जिम्मेदार थे।

सभी पांडव अपनी एक अलग पहचान और नाम के साथ विभिन्न कार्यों के लिए राजमहल में लग गए। द्रौपदी सैरंध्री का रूप धारण करके नगर में घूमने लगी। एक दिन उसकी मुलाक़ात रानी सुदेष्णा से हुई, वह उसके रूप को देख कर चकित रह गई। उसे संदेह हुआ यह कोई साधारण कन्या नहीं हो सकती। वह उससे पूछती है "तुम सच बतायो तुम कौन हो ?" द्रौपदी भी अभिनय करती कहती है "मैं भिन्न भिन्न स्थानों में सेवा करके उत्तम भोजन पाती हुई विचरती हूँ। पहले मैं श्री कृष्ण की प्यारी रानी सत्यभामा तथा कुरुकुलकी एकमात्र सुंदरी पांडवों की धर्मपत्नी द्रौपदी की सेवा में रह चुकी हूँ। उन्होने मेरा नाम 'मालिनी' रख दिया था।" रानी सुदेष्णा उसके रूप की चर्चा करती कहती है "तुम्हारे रूप को देख कर कोई भी काम के वशीभूत हो जाए, यदि मेरे पति हो गए तो मैं क्या करूंगी ?" द्रौपदी अपनी बुद्धि का परिचय देते कहती है

नासिम लभ्या विराटेन न चान्येन कदाचन।

गन्धर्वा :पतयो महँ युवान :पञ्च भामिनि ॥ (*महाभारत* विराटपर्वणि 1866)

अर्थात : "भामिनी ! मुझे राजा विराट या दूसरा कोई पुरुष कभी नहीं पा सकता। पाँच तरुण गंधर्व मेरे पति है।" अपनी बुद्धि का परिचय देते हुए उसके कानों से निकाल देती है यदि किसी ने उसे बलपूर्वक पाने की कोशिश की तो उसका उसी रात्रि में परलोक वास हो जाता है।

उसके चरित्र की नाटकीय विशेषता ही है कि अब वह सब कार्य अपने सखा श्री कृष्ण के सहयोग से पांडवों द्वारा करवाना चाहती थी। जिन पांडवों ने अस्त्र विद्या को भुला ही दिया था उसका प्रयोग कैसे करना है, किस तरह करना है, इसी लिए वेदव्यास द्रौपदी को वापिस विपत्ति में डाल कर देखते हैं। उसकी बात सुनकर रानी उसे कार्य पर रख लेती है। जहां वह अपने पतियों को युद्ध के लिए कटु वाणी से प्रेरित करती रहती है। वैशम्पायन जी जनमेंजय को कहते है "राजन ! अपने सम्पूर्ण महारथी पतियों को इस प्रकार कलेश उठाते देख द्रौपदी के

मन में खेद होता था और वह लंबी लंबी साँसे भरती रहती थी"। द्रौपदी के चरित्र में कितने नाटकीय रंग बिखरे पड़े हैं। जहां भी उसकी चर्चा होती है, एक नया भाव, एक नया रूप निकल कर सामने आता है। वेदव्यास ने बहुत सोच कर उसको लिखा होगा, तभी तो आज भी रंगमंच रूपी सागर में उसका मंथन जारी है तभी उसके नए, रूप नए आयाम निकल कर सामने आ रहे हैं।

पांडवों के अज्ञातवास में अब केवल दो महीने बचे थे। उधर कौरव भी इस बात के पीछे लगे हुए थे, किसी तरह उनको दोबारा पहचान में लाकर फिर से बनवास में भेजें। पांडव कभी भी पांडव न बनते अगर द्रौपदी उनके अंदर कोई सोई हुई शक्ति को न जगाती। उनको एक गुरु की भांति स्वयं का साक्षात्कार न करवाती। नाटकीय हलातों से जुझती लड़ती हुई द्रौपदी बरगद के पेड़ की भांति अटल खड़ी थी। सतीत्व का गुण उसकी सबसे बड़ी ताकत थी। जिसके दम पर उसने सब कुछ पाया। बहुत से शक्तिशाली योद्धाओं, राजाओं ने उसे लुभाने की कोशिश की, सब असफल रहे। राजा विराट की सभा में भी कई राजा उसके रूप से वशीभूत होकर काम वेग से उसको प्राप्त करने की चेष्टा करने लगे। सुदेष्णा ने उन्हे सैरंध्री के गंधर्व पतियों के बारे में बता कर समझाया। सुदेष्णा का भाई कीचक, राजा विराट का सेनापति था। उसे अपने बल और स्वयं पर अत्यधिक अभिमान था। एक दिन उसने जब सैरंध्री को देखा तो उसको पाने की कोशिश की, लेकिन उसकी बहन सुदेष्णा ने उसे बताया वह पतिव्रता है और उसके पाँच गंधर्व पति उसकी रक्षा करते है। वह अपनी बहन की बात मानने से इंकार कर देता है। जब सुदेष्णा उसे कीचक के घर से पेय पदार्थ लाने के लिए भेजती है, तो कीचक उसको बल पूर्वक पकड़ने का प्रयास करता है। सैरंध्री उसे धक्का देकर वहाँ से भागने का यत्न करती है। जिस तरह कुरु राजकुमारों ने उसका भरी सभा में अपमान किया था। आज वैसी ही स्थिति उसके सनमुख आकर खड़ी हो गई। जब वहाँ से भाग कर राज सभा में आ जाती है तो कीचक उसे केशों से पकड़ कर लात मारता है। यह नाटकीयता ही है बार बार द्रौपदी को ऐसे अपमान का सामना करना पड़ रहा है, जिसे कोई और सहता तो यमलोक के रास्ते को अपना लेता। यहाँ भी उसका अपमान उसके पतियों (भेष बदले हुए) के सामने होता है। सैरंध्री इन सब आ रही विपत्तियों से टूट सी जाती है। रात को वह अपने पति भीमसेन के पास जाती है। जिसके गले लग के वह अपने सारे दुख को अश्रु रूप में बहा देना चाहती थी। क्योंकि भीम कीचक से अधिक बलशाली है और उसकी क्रोध ज्वाला को जीवंत करना आसान भी है। अपनी पत्नी के

आंसूओं को देख भीम कहता है "बताओ मैं तुम्हारा कौन सा प्रिय कार्य करूँ ?" सैरंध्री को यह भली भांति मालूम था उनके अहं को कैसे चोट मारनी है, उनको दोबारा कैसे जीवित करना है। उसको कुरु राज में हुए चीर हर्ण और पांडवों का अपमान सब याद दिलवाती है। वह कहती है "जिस स्त्री के पति राजा युधिष्ठिर हों, वह बिना शोक के कैसे रहे, यह कैसे सम्भव हो सकता है ? तुम मेरे सारे दुखो को जानते हुए भी मुझसे कैसे पूछते हो ?"

यन्मा दासीप्र्वादेन प्रातिकामी तदानयत।

सभापरिषदो मध्ये तन्मा दहति भारत ॥ (*महाभारत* विराटपर्वणि 1897)

अर्थात : "दुर्योधन के सेवक के रूप में दु:शासन मुझे दासी कहकर जो उस समय कौरवों के सभा भवन में जनमानस के भीतर घसीट ले गया। वह अपमान की आग मुझे आजतक जला रही है।"

आगे द्रौपदी कहती है "आज मतस्य देश के राजा विराट के सामने उस जुआरी ने जो लात मारकर मेरा अपमान किया है, उसको सहकर मेरी जैसी कौन राजकुमारी जीवित रह सकती है ? हे कुंतीनंदन ! ऐसे बहुत से कलेशों द्वारा मैं निरंतर पीड़ित रहती हूँ। क्या तुम यह नहीं जानते ? फिर मेरे जीने का ही क्या प्रयोजन है ?" सैरंध्री की इस बात को सुनके उसके अंदर की क्रोधाग्नि जागृत हो उठती है और वह एक योजना के अनुसार नृत्यशाला में मल्लयुद्ध में कीचक को मार डालता है। द्रौपदी का चरित्र हमें सिखाता है, किसी भी स्थिति में लड़ने का सबसे बड़ा अस्त्र धैर्य है, जो सही समय पर अपनी सही ताकत को पहचान कर उसका प्रयोग नहीं करता वह सदा दुखों में घिरा रहता है।

कथा में आगे कौरव राजा विराट का गौ वंश चुरा कर ले जाते है। तब अर्जुन उसे कौरवों से छुड़वा कर लाता है। उसके बाद राजा विराट के सामने सभी पांडवों और द्रौपदी की असल पहचान उजागर होती है। जब उसको द्रौपदी के बारे पता चलता है तो वह शर्मिंदा होकर उससे क्षमा प्रार्थना करता है। इसके बाद वह अपने राज्य समेंत अपनी पुत्री उत्तरा का विवाह अर्जुन से करना चाहता है। अर्जुन उसे अपनी शिष्या होने के कारण न कर देता है। वह उसका विवाह अपने बेटे अभिमन्यु से करवा देता है।

तेरह वर्ष बीत जाने पर भी प्रतिशोध और अपमान की ज्वाला द्रौपदी के भीतर जल रही थी। उसका एक उद्देश्य था, दुर्योधन मंडली को यमलोक का रास्ता दिखाना। उधर पांडव अपने स्वभाव पर अडिग थे, उनके मन में शांत भाव ही था और भीम भी शांत हो रहा था। जब

युधिष्ठिर ने संजय के मध्यम से कौरवों को संधि का प्रस्ताव भेजा और कहा "संजय ! दुर्योधन और उसके पक्ष के सामने मेरी यह मांग रखना- 'तात ! तुम हमें अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत तथा अंतिम पाँचवाँ कोई भी एक गाँव दे दो।" जब द्रौपदी को अपने पति की इस बात का पता चला तो वह भड़क उठी। इस बात का गुस्सा वह श्री कृष्ण के समक्ष करती है। वह उसको कहती है "आज उनके संधि के लिए कहे गए वचन मेरे हृदय में बाण के समान लगे हैं। जिनसे मेरा कलेजा पीड़ित होकर फटा है, वह मेरे अपमान को भूल कर केवल धर्म का ही ध्यान कर रहे है।" वह जानती है कि पांडव जल्दी छ्लावे में आ जाते है। अगर श्री कृष्ण से कौरवों से अपमान का बदला लेने का यह प्रण ले लिया जाए तो समस्त लोक में उसे कोई टाल नहीं सकता और वह स्वयं ही पांडवों को भी जागृत कर लेंगे। वह श्री कृष्ण को कहती है "यदि मैं आपकी अनुग्रहभाजन हूँ, यदि मुझ पर आपकी कृपा है तो आप धृतराष्ट्र के पुत्रों पर पूर्ण रूप से क्रोध कीजिए। "कमललोचन श्री कृष्ण ! शत्रुओं के साथ संधि की इच्छा से आप जो कार्य या प्रयत्न करें, उन सब में दु:शासन के हाथों से खींचे हुए इन केशों को याद रखें।" यहाँ उसके केश रौचकता का समावेश लिए है। यही द्रौपदी ने अपने सम्मान की लड़ाई में मौहरा बनाया। वेदव्यास ने छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी बात को बहुत ध्यान से लिखा और रचा है।

यदि भीमार्जुनों श्री कृष्ण कृपणो संधिकामुकौ ।

पिता में योत्स्यते वृद्ध: सह पुत्रैमर्र्हार थै: ॥

पञ्च चैव महावीर्य: पुत्रा में मधुसूदन।

अभिमन्यु पुरुस्कृत्य योत्स्यनते कुरुभि: सह॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2282)

अर्थात : "हे श्री कृष्ण ! यदि भीमसेन और अर्जुन कायर होकर कौरवों के साथ संधि की कामना करने लगे हैं। तो मेरे वृद्ध पिता जी अपने महारथी पुत्रों के साथ शत्रुओं से युद्ध करेंगे। मधुसूदन ! मेरे पाँच महापराक्रमी पुत्र भी वीर अभिमन्यु को प्रधान बनाकर कौरवों के साथ संग्राम करेंगे। प्रज्वलित अग्नि के समान इस प्रचंड क्रोध को हृदय में रखकर प्रतीक्षा करते मुझे तेरह वर्ष बीत गए हैं।"

इतना कह वह फूट फूट कर रोने लगती है। उसके अश्रु व्यर्थ नहीं जाते, इनका मूल्य श्री कृष्ण यह कह कर देते है "यदि काल के गाल में जाने वाले धृतराष्ट्र पुत्र मेरी बात नहीं सुनेगे तो मारे जाकर धरती पर लोटेंगे और कुत्तों तथा सियारों के भोजन बन जाएंगे। "कृष्णे ! अपने आंसुओं को रोको। मैं तुम्हें सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, तुम शीघ्र ही देखोगी कि सारे शत्रु

मार डाले गए और तुम्हारे पति राज्यलक्ष्मी से सम्पन्न है।" दोनों के नाटकीयता भरे संवाद के बाद कृष्णा संतुष्ट हो जाती है।

दुर्योधन का अहं कहाँ रुकने वाला था। वह पांडवों द्वारा संधि के प्रस्ताव के बाद और भी अभिमानी हो गया था। वह युद्ध के लिए ललायत हो रहा था। भीष्म, विदुर और गुरु द्रोण की बात भी उसने नहीं मानी। पांडव भी द्रौपदी के सम्मान की लड़ाई के लिए तैयार हो गए थे। उनकी पहल थी किसी भी प्रकार का युद्ध ना हो, इसमें श्री कृष्ण सबसे आगे थे। जब वह उसे समझने के लिए गए तो उसने श्री कृष्ण को कहा

ध्रियमाणे महाबाहौ मयि सम्प्रति केशव ।

यावद्धि तीक्षण्या सूच्या विध्ये दग्रेण केशव।

तावदप्यपरित्याज्य भूमेंर्न: पाण्ड्वान प्रति॥ (*महाभारत* उद्योगपर्वणि 2381)

अर्थात : "केशव ! इस समय मुझ महाबाहु दुर्योधन के जीते जी पांडवों को भूमि का उतना अंश भी नहीं दिया जा सकता जितना की एक बारीक सुई की नोक से छिद सकता है।" वह उल्टा श्री कृष्ण को ही बंधी बनाने का प्रयास करता है। भरी सभा में श्री कृष्ण अपने दिव्य रूप का सबको दर्शन करवाते है और यह बताते है उसे सिर्फ एक साधारण व्यक्ति श्री कृष्ण न समझा जाए।

जिस बीज को सत्यवती ने बोया, अम्बा ने उसे पानी दिया और द्रौपदी ने उसे युवा अवस्था में पहुंचाया। बहुत सी नायिकाओं की आबरू लज्जा इस कुरु वंश की जड़ो में समाई हुई थी। बहुत सी ऐसे नायिकाएँ भी होंगी जिनकी चर्चा इस ग्रंथ में नहीं हुई। उस सब के आंसुओं के शाप और सिसकियों के कारण बहुत सी नाटकीय धरायों में बहता हुआ, इस कथा का मोड कुरुक्षेत्र की भूमि पर सभी योद्धाओं को खींच कर ले आया। बड़े बड़े गुरजनों, ऋषियों, बजुर्गों और श्री कृष्ण ने भी पूरी कोशिश की। पर जहां काल की चलती है, वहाँ किसी की नहीं चलती। धर्म, साहित्य, विज्ञान, राजनीति, सत्ता इत्यादि सब का भूगोल बदलने वाला था। पुराने पेड़ों को गिरना था और नए बीजों को अंकुरित होना था। उनके लिए भूमि तैयार होनी थी। द्रौपदी के खुले केशों में छुपी नाटकीयता, जिन्हें पकड़ कर सभा में घसीटा गया था। वह केश जो पांडवों को बहुत प्रिय थे, वह केश जिनको दिखा कर द्रौपदी अपने सखा के सामने अपनी अश्रु धारा वहन करती थी। इन खुले केशों को ही वेदव्यास ने नाटकीय बना दिया। द्रौपदी के

केश मानों भगवान जटाधारी शिव की जटाएँ बन गए थे, जिनमें से निकली भागीरथी सब दुराचार्यों को मिटा कर एक नया इतिहास लिखेगी।

दोनों पक्षों की सेनाएँ अपने अस्त्रों और ध्वजों के साथ एक दूसरे के रक्त से धरती का तिलक करने को ललायत हो रहीं थी। कौरव पक्ष में श्री कृष्ण की सारी सेना थी और पांडव पक्ष में स्वयं कृष्ण। दुर्योधन अपनी सेना के साथ पांडवों को अपने पैरों के तले मसल देने को तैयार था। उधर द्रौपदी के अपमान और अपनी सत्ता को वापिस स्थापित करने के लिए पांडव श्री कृष्ण के मार्गदर्शन में सूर्य की भांति चमक रहे थे। श्री कृष्ण ने जैसे ही अपनी हुंकार भरी दोनों सेनाए एक दूसरे पर टूट पड़ी। कभी पांडव भारी पड़ते तो कभी कौरव। योद्धा, गुरु जन, सैनिक वीरगति को प्राप्त हो रहे थे। कभी लगता दुर्योधन फिर पटखनी देकर पांडु नंदनों पर भारी पड़ेंगे, कभी लगता श्री कृष्ण का मार्गदर्शन सारी दशा बदल देगा। नाटकीय धारा से यह युद्ध चलता रहा जिसमें दोनों पक्षो ने बहुत कुछ खोया। ऐसा लग रहा था मानो साक्षात कालका रण भूमि में घूम रही है, जो अभी तक के रक्त पात से तृप्त नहीं हुई। भीष्म बाण शैया पर सो चुके थे, कर्ण भी वीरगति को प्राप्त कर चुका था। दुर्योधन की जांघ तोड़ दी जा चुकी थी और गुरु द्रोण भी ब्रह्म लोक में जा चुके थे। इन सब के गिरने के बाद कौरव टूट से गए थे और वह लगातार हारते चले जा रहे थे ।

अश्वत्थामा के सर पर खून स्वार हो गया। अपना सारा पक्ष तिनका तिनका बिखरा देख वह इस बात पर उतार आया था कि किसी न किसी तरह धर्म या अधर्म से वह पांडवों का नाश कर देगा। जो नियम युद्ध से पहले बनाए गए थे, वह अब खुल कर तोड़े जाने लगे थे। इसके लिए वह तप करके भगवान शिव से एक खड्ग प्राप्त करता है और उस पांडवों के शिविर की ओर चल पड़ता है जहां वह सो रहे होते हैं। वह उनके शिविर के प्रत्येक स्थान से परिचित था। इसलिए धीरे धीरे उनके खेमें में अपने जीवन का भय छोडकर पहुँच गया। वह अपने साथियों कृतवर्मा और कृपाचार्य को कहता है

अहं प्रवेक्ष्ये शिविरं चरिष्यामि च कालवत।

यथा न कश्चदपि वा जीवन मुच्येत मानव: ॥

तथा भवदभ्यां कार्ये स्यादिति में निश्चिता मति: । (*महाभारत* सौप्तिकपर्वणि 4343)

अर्थात: "मैं तो इस शिविर के भीतर घुस जाऊंगा और वहां काल के समान विचरुंगा। आप लोग ऐसा करें जिससे कोई भी मनुष्य आप दोनों के हाथ से जीवित न बच सके। यही मेरे दृड विचार

है।" वह काल कि भांति वहाँ तांडव करने लगा, जो भी उसके सामने आ रहा था वह सबको मौत की नींद सुला रहा था।

किसी को काट रहा था तो किसी को अपने पाँव के तले कुचल रहा था। उसका मुंह उसके सारे अंग रक्त रंजित हो चुके थे। उसका रूप बहुत ही भयानक हो चुका था। ऐसा लग रहा था मानो कोई भयानक राक्षस यह सब कर रहा है। सबसे पहले उसने धृष्टधूमन को मारा और फिर पांडव पक्ष के सेनापति वीर शिखंडी और फिर बाकी जो भी आया सबको। भयानक रक्तपात के बाद जब वह शांत हुआ तो अपने दोनों साथियों को गले से लगता हुआ हर्ष के साथ बोला।

पाञ्चाला निहता: सर्वे द्रौपदेयाश्च सर्वश: ॥

सोमका मत्स्यशेषाश्च सर्वे विनिहता मया । (*महाभारत* सौप्तिकपर्वणि 4351)

अर्थात : "सारे पांचाल, द्रौपदी के सभी पुत्र, सोमकवंशी क्षत्रिय तथा मत्स्य देश के अविशिष्ट सैनिक सभी मेरे हाथ से मारे गए है।"

लगभग सभी कौरव पक्ष मर चुका था। पांडव अपनी विजय का पताका फहराने वाले थे। तभी वेदव्यास ने इस घटना से संदेश दिया, जब आग जलती है तो सेक सभी को लगता है। अग्नि का कोई भी शत्रु या मित्र नहीं होता। इस युद्ध में सब जल रहा था। जिस प्रतिशोध के लिए अग्नि की बेटी जलती रही, आज उसी प्रतिशोध की अग्नि ने अश्वत्थामा के रूप में आकर इतना भयंकर रक्तपात किया।

धर्मराज अपने पुत्रों की लाशें देख कर अपनी सुध बुध खोकर मूर्छित हो रहे थे। उसके भाई उसको पकड़ कर हौंसला दे रहे थे। युधिष्ठिर के बोल थे "लोग हारकर जीतते हैं, लेकिन हम तो आज जीत कर हार गए।" द्रौपदी का सारा पीहर मारा जा चुका था, जिनको वह प्रेम करती थी। आज उसके भाई, उसके पुत्र सब मृत्यु लोक में प्रस्थान कर चुके थे। खोने की पीड़ा क्या होती है, यह सबको समझ आ गया था। द्रौपदी पिता, भाइयों और पुत्रों से विहीन हो चुकी थी। एक के बाद एक अग्नि द्रौपदी को जलाती रही। अपने भाई और पुत्रों और पांचालों के पड़े शव देख कर वह डोलती है। किन्तु वह युधिष्ठिर की तरह हौंसला नहीं छोड़ती। इस स्थिति में भी वह डोले हुए पांडवों को स्थिति से जूझने के लिए कहती है। जहां धर्मराज पुत्रों की मृत्यु से अचेत हो गए थे और बाकी पांडव भी मानो टूट से गए थे। द्रौपदी पांडवों को कहती है "यदि आज आप रण भूमि में अपनी शक्ति का प्रदर्शन करके सगे संबंधियों सहित पापाचारी द्रोण

कुमार के प्राण नहीं हर लेते तो मैं यही अनशन करके अपने जीवन का अंत कर दूँगी। पांडवों ! आप सब लोग इस बात को कान खोलकर सुन लें। यदि अश्वत्थामा अपने पाप कर्म का फल नहीं पा लेता है तो मैं अवश्य प्राण त्याग दूँगी।" ऐसा कह वह अनशन पर बैठ गई। वह भीम को भी उसकी शक्ति के बारे में बताते हुए कहती है, कि अशत्थामा के माथे में जो मणि है वह उसको ला के दे। इसके बाद भीम उसका पीछा करता हुआ चल पड़ा उसके पीछे अर्जुन और श्री कृष्ण भी चल दिए। दोनों के बीच भयंकर युद्ध के बाद, हज़ारों वर्ष पीड़ा-पीक और रक्त की बदबू के साथ निर्जन स्थानों में घूमते रहने का शाप लेकर वह अपनी मणि पांडवों को देकर वनों में चला गया। भीम द्रौपदी को आकर कहते हैं।

अयं भद्रे तव मणि: पुत्रहन्तुर्जित: स ते।

उतिष्ठ शोकमुत्सुज्य क्षात्रधर्ममनुस्मर ॥ (*महाभारत* सौप्तिकपर्वणि 4368)

अर्थात : "भद्रे ! यह तुम्हारे पुत्रों का वध करने वाले अश्वत्थामा की मणि है। तुम्हारे शत्रु को हम ने जीत लिया। अब शोक छोडकर उठो और क्षत्रिय धर्म का स्मरण करो ॥

अब वह क्या करे... ? हँसे..... ? रोए.....? सत्ता का भोग करे..... ? या धर्म का आचरण करे.... ? ऐसी स्थिति में जहां सब कुछ शून्य सा लगता है। यही नाटकीयता सभी को द्रौपदी की ओर आकर्षित करती है। जन्म से लेकर अब तक अग्नि की पुत्री बस अग्नि में ही जलती आई, क्या उसके जीवन में शीतलता का कोई स्थान नहीं ?

दूर दूर तक रक्त, लाल नदियां, बिलखते बच्चे, सिसकिया भरते वृद्ध, विरलाप करती महिलाए, लाशों को नोचते गिद्ध और गरुड, बिखरे पड़े योद्धाओं के अंग, हाथी-घोडों के शव, बिखरे हुए बाण-अस्त्र, समस्त पृथ्वी के अलग अलग भू-भाग के नरेश आज भूत बन कर कुरुक्षेत्र की भूमि पर पड़े थे। कुछ भी शेष नहीं बचा था। हस्तिनापुर राज महल आज सूना था। धृतराष्ट्र, विदुर, संजय, गांधारी, कुंती, पांडव सब एक शून्य की गोद में बैठ गए थे। दोनों पक्ष अपने पुत्रों और सगे संबंधियों को खोने की पीड़ा का संताप भोग रहे थे। केवल वह ही नहीं इस कथा की हर एक नारी, हर एक नायिका भी पीड़ा भोग रही थी। यह कथा केवल चुनिन्दा नायिकाओं की नहीं बल्कि हर उस नायिका की है, जिसने पती-पिता-पुत्र के रूप में इस युद्ध में आहुती दी। नायिकाओं की आँखों में पहले भी अश्रु थे और अब भी हैं।

युद्ध की समाप्ति के बाद राजा धृतराष्ट्र दुख से व्याकुल हो गए थे। उसकी आँखों का अंधेरा अब उनके मन का अंधेरा बन गया था। विदुर और संजय उसका हौंसला बढ़ाने की

कोशिश करते हैं। तब धृतराष्ट्र उसे कहते है "गांधारी को तथा भरतवंशी अन्य सब स्त्रियों को शीघ्र ले आओ तथा वधू कुन्ती को साथ लेकर वहाँ जो स्त्रियाँ हों, उन्हे भी बुला लो। वह उन सबके साथ युद्ध भूमि में जाने का निर्णय करते हैं।

स्त्रियों की उस समय क्या दशा थी ? यहाँ सब स्त्रियों की दशा और मनोदशा के बारे में स्त्री पर्व में वर्णन करते हुए बताते हैं, जो बहुत ही मार्मिक है। कौरवों के सभी घरों में बड़ा भारी आर्तनाद होने लगा। बूढ़ों से लेकर बच्चों तक सारा नगर शोक से व्याकुल हो उठा। जिन स्त्रियों को पहले कभी देवताओं ने भी नहीं देखा था, उन्हीं को उस समय पतियों के मारे जाने पर साधारण लोग देख रहे थे। वह नारियां अपने सुंदर केश बिखरा कर सारे आभूषण उतरकर एक ही वस्त्र धारण किए अनाथ की भांति रणभूमि की ओर जा रही थी। राज भवन के विशाल आँगन में एकत्र हुई उन किशोरी स्त्रियों के अनेक समुदाय शोक से पीड़ित होकर रण भूमि की ओर जा रहे थे। एक दूसरे के हाथ पकड़ कर पुत्रों, भाइयों, और पिता के नाम लेकर रोती हुई वे कुरुकुल की नारियां प्रलय काल में लोक संहार का दृश्य दिखाती हुई सी जान पड़ती थी। शोक से उनकी ज्ञान शक्ति लुप्त सी हो गई थी। यह रोती और विलाप करती हुई इधर उधर दौड़ रही थी। उन्हे कोई कर्तव्य नहीं सूझ रहा था। प्रलयकाल आने पर दग्ध होते हुए प्राणियों के चीखने चिल्लाने के समान उन स्त्रियों के रोने का वह महान शब्द गूँज रहा था। सब प्राणी ऐसा समझने लगे यह संहार काल आ पहुंचा है। इसी के साथ अत्यंत शोकाकुल हुए पुरवासी जो राजवंश के साथ पूर्ण अनुराग रखते थे वह भी ज़ोर ज़ोर से रोने लगे। उन रोती हुई स्त्रियों से घिरे हुए दुखी राजा धृतराष्ट्र नगर से युद्ध स्थल में जाने के लिए तुरंत निकाल पड़े। कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं होगा, जो इसके रस भाव से प्रभावित न हो। जब भी इस दृश्य को मंच अथवा पर्दे पर प्रस्तुत किया जाएगा तब यह सारी नायिकाएँ सभी दर्शकों को अपने वेग में कुरुक्षेत्र ले जाएंगी।

इस संबंध में हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, "महाभारत पढ़ते समय एक जादू भरे वीरत्व के अरण्य में प्रवेश करता है। जहां पग पग पर विपत्ति है, पर भय नहीं है, जहां जीवन की चेष्टाएँ बार बार असफलता की चट्टान पर टकराकर चूर चूर हो जाती है, पर चेष्टा करने वाला हतोत्साह नहीं होता। जहां गलती करने वाला अपनी गलती पर गर्व करता है, प्रेम करनेवाला अपने प्रेम पर अभिमान करता है और घृणा करने वाला खुल कर घृणा का प्रदर्शन करता है। वहाँ सरलता है, दर्प है, तेज है। महाभारत की नारी अपने नारीत्व पर अभिमान

करती है, पुरुष इस अभिमान की रक्षा के लिए स्वयं को मृत्यु के हाथों सौंप देता है।" (*हिन्दी साहित्य की भूमिका* 160)

जब पांडव वापिस हस्तिनापुर आते हैं, तब भी बहुत सी नाटकीय घटनाएँ घटित होती हैं। जैसे भीम का गांधारी से क्षमा मांगना, धृतराष्ट्र का पांडवों से गले मिलना, गांधारी के दृष्टि पात से युधिष्ठिर के पैरों के नखों का काला पड़ जाना,अर्जुन का भयभीत होकर कृष्णके पीछे छिप जाना, और भी बहुत सी ऐसी घटनाएँ हैं जो घटित होती हैं। ऐसा नहीं था कि द्रौपदी बिलकुल पत्थर बन गई थी। राज महल में अपने बाकी सब परिजनो के बीच उसकी अश्रु धारा तीव्र वेग से बह उठती है। जब कुंती अपने पुत्रों के घायल तन को हाथों से स्पर्श करके देख रही होती है, तो वह देखती है कि गांधारी पास ही पृथ्वी पर गिरकर रो रही है। यहाँ जो उसके संवाद है वह बहुत रौचक है। वह कहती है "आर्ये ! अभिमन्यु सहित आपके सभी पौत्र कहाँ चले गए ? वह दीर्घ काल के बाद आई हुई तपस्विनी देवी को देखकर निकट क्यों नहीं आ रहे ? अपने पुत्रों से हीन होकर अब इस राज्य से हमें क्या कार्य है ?" उसको शांत करवाती हुई गांधारी कहती है " बेटी ! इस प्रकार शोक से व्याकुल न होओ, देखो मैं भी तो दुख में डूबी हुई हूँ। आज जैसी तुम हो वैसे ही मैं हूँ, मेरा भी कोई पुत्र शेष नहीं बचा है, आज हम दोनों एक समान हैं।" दोनों नायिकाओं का आपस में दुख बांटना,अद्वितीय है।

युद्ध के पश्चात सभी योद्धाओं का संस्कार और जलदान कर दिया गया। पांडव अपनी सत्ता पर आसीन हो गए थे। सब के सगे संबंधियों को पिंड दान और बाकी अंतिम क्रियाएँ करने के लिए आगे बुलाया गया। जब कर्ण की बारी आई तो कुंती ने उस समय पांडवों को इस रहस्य से जागरूक करवाया कि कर्ण उनका सबसे बड़ा भाई था। इस बात को लेकर युधिष्ठिर के मन में संताप ठहर गया। अपने बाकी बंधुओं के संहार का बोझ वह सह नहीं पा रहा था। वह वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम के अनुसार सब कुछ त्याग कर जीवन व्यतीत करने का निश्चय करता है। अर्जुन और भीम उसे राज धर्म का पालन करने के लिए प्रेरित करते हैं और भीम सेन उसे बताता हैं कि राजा के लिए सन्यास ठीक नहीं उसे अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए। नकुल और सहदेव भी उन्हें ग्रहस्थ आश्रम की पालना करने के लिए समझते हैं। वह उसे कहते है-

आश्रमांस्तुलया सर्वान धृतानाहुमनींषिण: ।

एकतश्च त्रयो राजन गृहस्थाश्रम एक्त: ॥ (*महाभारत* शांतिपर्वणि 4448)

अर्थात : "राजन कहते हैं कि एक समय मनीषी पुरुषों ने चारों आश्रमों को (विवेक के) तराजू पर तौल कर देखा। एक ओर तो अन्य तीनों आश्रम थे और दूसरी ओर अकेला गृहस्थ आश्रम था।" अपने भाइयों की प्रेरणा और विचार सुन कर भी धर्मराज स्थिर और मौन थे। उन्होने किसी की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। मानों उस पर किसी की भी बात का असर नहीं हुआ था।

जिस प्रकार तीखे बाण जब सीधे तरीके से लक्ष्य को भेदते हैं तो धनुर्धारी का कार्य सिद्ध हो जाता है। युधिष्ठिर अपने स्वभाव के कारण जल्दी भावुक हो जाता था। इस बार भी यही हुआ। उसकी पत्नी कोई साधारण स्त्री नहीं थी। द्रौपदी की विशेषता यह है उसको पता है, कब-कहाँ और किस प्रकार क्या बात कहनी है। अब तक जब भी पांडव टूटने लगे थे उनको द्रौपदी ने ही संभाला था। कभी प्रेम भाव से तो कभी तीखे बोल के बाणों से। शांति पर्व में उसके जीवन का एक और पक्ष निकल कर सामने आता है। वह पांडवो की तरह कभी नहीं डोली। चुप्पी को अपने होठों का श्रृंगार बना कर बैठे हुए, धर्मराज को वह कहती है "हे कुंती कुमार- आपके यह भाई आपका संकल्प सुनकर सूख गए हैं, पपीहों के समान आपसे राज्य करने की रट लगा रहे हैं, फिर भी आप इन का अभिनंदन नहीं करते।" वह जानती है इसको जगाने के लिए कैसे चोट मारूँ और किन शब्दों का चयन करूँ, जिस से इसके अंदर तक घात लगे।

न क्लीवो वसुधं भुडक्ते न क्लीवो धनमश्नुते।

न क्लीवस्य गृहे पुत्रा मतस्या: प्ङ्क इवासते॥ (*महाभारत* शांतिपर्वणि 4452)

अर्थात : "जो कायर और नपुंसक है, वह पृथ्वी का उपभोग नहीं कर सकता। वह न तो धन का उपार्जन कर सकता है और न उसे भोग ही सकता है। जैसे केवल कीचड़ में मछलियाँ नहीं होती, उसी प्रकार नपुंसक के घर में पुत्र नहीं होते।" आगे वह कहती है, "जिनका जेठा भाई उन्मत्त हो जाता है, वह सभी उसी का अनुकरण करने लगते हैं। महाराज ! आपके उन्माद से सारे पांडव भी उन्मत्त हो गए हैं।"

एतेषां यतमानानां न मेंऽघ वचन मृषा।

त्वं तु सर्व्रे महीं त्यकत्वा कुरुषे स्वयमापदम ॥ (*महाभारत* शांतिपर्वणि 4453)

अर्थात : "यह लोग आपको समझने का प्रयत्न कर रहे हैं, फिर भी आप ध्यान नहीं देते। मैं इस समय जो कुछ कह रही हूँ मेरी यह बात झूठी नहीं हैं। आप सारी पृथ्वी का राज्य छोडकर अपने लिए स्वयं ही विपत्ति खड़ी कर रहे है।" यहाँ उसकी सूझ बुझ और शब्दों के चुनाव का पता चलता है कि किस ढंग से उनके अंदर की शक्ति को जगाती है।

वह बात को अपने ओर ले जाती हुई कहती है। "भरत श्रेष्ठ ! मैं ही संसार की सब स्त्रियाँ में अधम हूँ, जो कि पुत्रों से विहीन हो जाने पर भी जीवित रहना चाहती हूँ।" यही इस नायिका की महानता है कि वह हर कठिन से कठिन परिस्थिति को अनुकूल कर लेती है। वह राज सत्ता पर आसीन न होकर सन्यास आश्रम की सोच रहे अपने पति को कटाक्ष और संवाद के माध्यम से फिर रास्ते पर लाती है। यह द्रौपदी के जीवन की सबसे बड़ी सत्यता और नाटकीयता है। जहां कोई भी थोड़े से कष्टों से मिट जाता है। द्रौपदी लगभग अपना सब कुछ लूट जाने पर भी हिमालय की भांति खड़ी है शांत और स्थिर।

जब वह सत्ता पर आसीन हो गया, तो कुछ समय के पश्चात महाराज धृतराष्ट, गांधारी, कुंती, विदुर और संजय सहित सन्यास लेकर वनों में चले गए थे। युद्ध के बाद सब ओर बस एक शून्य छा गया था। अभी तक हर मुसीबत से डटकर लड़ने वाली द्रौपदी अपने पुत्रों की मृत्यु के बाद मानों टूट सी गई थी।

द्रौपदी हतपुत्रा च सुभद्रा चैव भाविनी।

नातिप्रीतियुते देव्यो तदाऽऽस्ताम प्रहृष्टवत ॥

अर्थात : वह द्रूपदकुमारी कृष्णा और भाविनी सुभद्रा जिन दोनों के बेटे मारे गए थे, दोनों देवियाँ निरंतर अप्रसन्न और हर्ष शून्य सी होकर बैठी रहती थी। कुछ ऐसा हाल ही बाकी पांडवों का था और अपनी माँ, गुरु जनों और दुर्योधन के माता पिता के बारे में सोच सोच कर चिंतित रहने लगे थे। जो सत्ता उन्होने पाई थी वह अब उनको खाने को दौड़ती थी।

पांडवों ने युधिष्ठिर के झंडे तले महाभारत के युद्ध के बाद छत्तीस वर्ष तक शासन किया। उसके बाद उन्होने अर्जुन के प्रस्ताव पर राजा परीक्षित का राज्य अभिषेक करके युयुत्सु को बुलाकर उसको सम्पूर्ण राज्य की देख भाल का कार्यभार सौंप दिया। फिर स्वयं पांचों पांडवों ने द्रौपदी सहित महा प्रस्थान का निर्णय कर लिया, वैशम्पायन कहते हैं वह सब के सब उपवास का व्रत लेकर पूर्व दिशा की ओर मुंह करके चल दिए। सबसे आगे युधिष्ठिर, फिर भीम फिर अर्जुन और उसके पीछे नकुल और सहदेव थे। इन सबके पीछे थी उनकी पत्नी द्रौपदी। जब वह जा रहे थे तो उनके पीछे पीछे एक कुत्ता भी चलने लगा ।

जब इस कथा का आरंभ बहुत भव्य और नाटकीयता भरा था फिर मध्य और अंत इतने सरल कैसे हो सकते थे। वेदव्यास ने एक घटना क्रम का बाण संभाल के रखा था, जिसको उन्होने नाटकीयता के कमान पर चढ़ा कर छोड़ा। रास्ते में उन्हें महापर्वत हिमालय भी मिला

जब उसे भी लांघकर आगे बड़े, तब उन्हे बालुका समुद्र दिखाई दिया। साथ ही उन्होने पर्वतों में श्रेष्ठ महागिरि मेंरु का दर्शन किया। सब पांडव योग धर्म में स्थित हो बड़ी शीघ्रता से चल रहे थे। उनमें से कृष्णा का मन योग से विचलित हो जाता है और वह लड़खड़ा कर पृथ्वी पर गिर जाती है। सभी पांडव उसको उठाए बिना आगे अपने रास्ते पर बढ़ जाते है।

यहाँ भी कितनी नाटकीयता है, जो द्रौपदी अपने पतियों के साथ रही उनके लिए हर स्थिति से लड़ी, वह उसको छोड़ कर आगे बड गए। अग्नि की बेटी शीतलता में अपने प्राण त्यागती है। इस दशा को दिखाते हुए प्रतिभा रॉय अपने उपन्यास "द्रौपदी" में लिखती हैं – "वह अपनी पुकार अपनी पीड़ा श्री कृष्ण को सुनाती हुई कहती है – "सखे जिस दिन मैं कुरु सभा में लांछित हो रही थी, पांडवों से मेरा भरोसा उठ चुका था, उस दिन लज्जा छोड़ हाथ उठाकर तुम्हें ही तो बुलाया था, तुम्हारे आगे ही समर्पण किया और आज फिर मेरे पंचपति मुझे नि:सहाय छोडकर जा चुके हैं, मैं तुम्हारे आगे ही स्वयं को अर्पित कर रही हूँ, अपना सारा दुख दर्द-हाहाकार, लांछन सब कुछ तुम्हें दे रही हूँ, मैं अगर अपनी ही नहीं रही तो फिर मेरा दुख मेरा क्यों रहेगा ?" (द्रौपदी 265)

महाभारत के इस सौर मंडल का मुख्य और नाटकीय धुरी द्रौपदी ही है इसमे किसी को संदेह नहीं है। टूटती हुई मरियदा बार बार उसे तोड़ने का यत्न करती है और उनसे लड़ कर फिर से आगे जीवन की ओर बढ्ने का संदेश और हौंसला द्रौपदी ही देती है । इसी कारण वह इस विशेष कृति की विशेष पात्र कहलाती है ।

उत्तरा

इस प्रकृति में कोई भी चीज़ अधिक या फ़ालतू नहीं है, कोई भी ऐसी नहीं है जिसका महत्त्व ना हो। हर एक का अपना स्थान होता है जहां कोई और नहीं आ सकता। कथा में कई बार बड़े पात्रों को आगे ले जाने के लिए या कथा के रसिक प्रवाह को जारी रखने के लिए छोटे पात्रों की आवश्यकता पड़ती है। एक बहुत उत्तम उदाहरण है, जैसे रेशम के कीड़े की तो आयु बहुत ही कम है। किन्तु इस अंतराल में ही वह ऐसा बहुमूल्य पदार्थ दे जाता है जिससे वस्त्र बनाते हैं। इसी तरह कुछ ऐसे पात्र होते हैं जो कथा में बहुत कम समय के लिए हो पर उनका प्रभाव विशेष होता है। व्यक्ति का प्रभाव उसकी उपस्थिति से नहीं उसे वचन और कार्य से होता है। रचनाकर उनकी बस छोटी सी प्रभावशाली झलक दिखा कर छोड़ देता है।

विराट पर्व में आता है, पांडव अज्ञातवास में भेस बदल कर रह रहे थे, ताकि उन्हें कोई पहचान ना सके। चलते चलते वह राजा विराट के राज्य में जा पहुंचे और उसके दरबार में अलग अलग कार्य में लग गए। उन्होंने अपने नाम कंक(युधिष्ठिर), बल्लभ(भीम), बृहनल्ला(अर्जुन), ग्रंथिक(नकुल), अरिष्टनेमि(सहदेव), सैरंध्री(द्रौपदी) बदल कर रहने लगे । जब अर्जुन बृहनल्ला के रूप में राजा विराट के सामने आए और अपना परिचय दिया, जिसमें वह अपने नपुंसक होने की बात भी करते है। पहले तो राजा विराट उसकी बात पर भरोसा नहीं करता और फिर उसकी इस बात की जांच करता है। जब उसे भरोसा हो जाता है, कि वह नपुंसक है, तो उसकी सेवा अपनी पुत्री उत्तरा को नृत्य कला सिखाने में लगा देते हैं। आगे वैशम्पायन जी कहते हैं।

स शिक्षयामास च गीतवादितं
सुतां विराटस्य धनंजय: प्रभु: ।।
सखीश्च तस्या:परिचारिकास्तथा
प्रियश्च तासां सबभूव पाण्डव: ।।
तथा स सत्रेण धनंजयो वसन
प्रियाणी कुर्वन सह ताभिरात्मवान ।
तथा च तं तत्र न जशिरे जना
वहिश्चरा वाप्यथ चान्तरेचरा ।। (*महाभारत* विराटपर्वणि 1870)

अर्थात : शक्तिशाली अर्जुन विराट कन्या उत्तरा, उसकी सखियों तथा सेविकाओं को भी गीत, वाद्य एवं नृत्यकला की शिक्षा देने लगे। इसमें वह उन सबके प्रिय हो गए। कन्याओं के साथ रहते हुए भी अर्जुन अपने मन को सदा पूर्ण रूप से वश में रखते और उन सबको प्रिय लगने वाले कार्य करते थे। इस रूप में वहां रहते हुए अर्जुन को बाहर अथवा अन्त:पुर के कोई भी मनुष्य पहचान ना सके।

कौरव, पांडवों को सामने लाने के लिए राजा विराट का गौ वंश चोरी कर लेते हैं और गौपालकों को मार देते हैं। यह बात जब राजा विराट को पता चलती है, तो वह अपने पुत्र को भेजने का निर्णय करता है। लेकिन उसका पुत्र कहता है कि उसका सबसे योग्य सारथि कुछ दिन पहले युद्ध में मारा जा चूका है। तब सैरंध्री उसे कहती है "बृहनल्ला को अपना सारथि बना के ले जाएं, वह पांडू पुत्र महाराज अर्जुन का सारथी रह चूका है"। जिसके लिए वह उसको मनाने के लिए विराट पुत्री उत्तरा को आगे करते हैं।

वैशम्पायन ने उत्तरा के रूप का बहुत कलात्मक वर्णन किया है। जिसमें बहुत से सुंदर अलंकारो का प्रयोग किया है। वह कहते हैं, "जन्मेजय ! कुमारी उत्तर सोने की माला और मोरपंख का श्रृंगार धारण किए हुए थी। उसकी अंगकांति कमल दल की सी आभा वाली लक्ष्मी को भी लज्जित कर रही थी। उसकी कमर यज्ञ की वेदी के समान सूक्ष्म थी। शारीर से भी वह पतली ही थी। उसके सभी अंग शुभ लक्षणों से युक्त थे। उसने कटि प्रदेश में मणियों की बनी हुई विचित्र करधनी पहन रखी थी। मतस्यराज की वह यशश्विनी कन्या अनुपम शोभा से प्रकशित हो रही थी। बड़ों की आज्ञा मानने वाली उत्तरा बड़े भाई के भेजने से बड़ी उतावली के साथ नृत्यशाला में गई। कुन्तीपुत्र अर्जुन के पास पहुंचकर वह गजराज के समीप गई हुई हथिनी के समान शोभा पा रही थी। उसके नेत्र बड़े बड़े थे।" इन शब्दों के माध्यम से वह उसके रूप और चरित्र की नाटकीय विशेषताओं की ओर इंगित करते हैं। उसको पास आते देख अर्जुन ने पूछा "स्वर्ण की माला धारण करने वाली मृगलोचने ! भामिनि ! तुम क्यों उतावली सी चली आ रही हो ? आज तुम्हारा मुख प्रसन्न क्यों नही हैं। मुझे शीघ्र सब बातें बतायो सब ठीक है न ?"

विशाल नेत्रों वाली अपनी सखी राज कुमारी उत्तरा की ओर देखकर अर्जुन ने उससे कारण पूछा तो वह राजपुत्री अर्जुन के समीप जा कर अपना प्रेम प्रकट करती हुई सखियों के बीच में इस प्रकार बोली, "हमारे राष्ट्र की गौओं को कौरव हांक कर ले गए है, उन्हें वापिस

जीतने के लिए मेरे भाई जाने वाले हैं। लेकिन थोड़े दिन पहले ही उनका सारथि युद्ध में मारा गया है, अब उनका सारथि कार्य कौन संभालेगा।"

अर्जुनस्य किलासींस्त्व सारथिदर्यित: पूरा ।

त्वयाजयत सहायेन पृथिवीं पाण्डवषर्रभ: ।। (*महाभारत* विराटपर्वणि 1950)

अर्थात : "पहले तुम अर्जुन का प्रिय सारथि रह चुकी हो। तुम्हारी सहायता से उन पाण्डव शिरोमणि ने पृथ्वी पर विजय पायी है। तुम मेरे भाई के सारथि का कार्य अच्छी तरह कर दो। सखी मैं बड़े प्रेम से यह बात कहती हूँ, यदि आज इतना अनुरोध करने पर भी तुम मेरी बात नहीं मानोगी तो मैं प्राण त्याग दूंगी।"

दोनों को एक दूसरे से कितना प्यार, स्नेह और विश्वास था जो ऐसी बात कह दी, नहीं तो हर किसी से ये बात नहीं कह सकते। सिर्फ उसी से कहते हैं जिसके साथ विशेष लगाव होता है। वैशम्पायन आगे लिखते हैं, "अपनी सखी उत्तरा के ऐसा कहने पर शत्रुओं को संताप देने वाले अर्जुन अमितपराक्रमी राजकुमार उत्तर के समीप गए। मद टपकाने वाले गजराज की भाँति शीघ्रतापूर्वक आते हुए, अर्जुन के पीछे पीछे विशाल नेत्रों वाली उत्तरा भी आई, ठीक उसी तरह जैसे हथिनी हाथी के पीछे पीछे आती है।" इस संज्ञा से बहुत कुछ अनदिखे चरित्र, बाते, और विचार नाटकीय रूप में हमारे समक्ष आ जाते है।

सारथि रूप में वह उत्तर की सहायता करता है। उसके गौ धन को छुडवा कर ले आता है। इस दौरान राजा विराट को जब पांड्वो के अज्ञातवास और वनवास के रहस्य का पता चलता है तो बहुत हर्षित होते है। विराट उनको हुए कष्टों के लिए क्षमा भी मांगते है, वह प्रसन्न हो कर कहते हैं। "मेरा यह राज्य कुंती पुत्रों को समर्पित है, इसके सिवा और भी जो कुछ मेरे पास है, वह सब पांडव लोग बिना किसी संकोच के ग्रहण करें।"

उत्तरां प्रतिगृह्णातु सव्यसाची धनंजय: ।

अयं ह्यौपयिको भर्ता तस्या: पुरुषसत्तम: ।। (*महाभारत* विराटपर्वणि 2035)

अर्थात : "सव्यसाची धनंजय मेरी कन्या उत्तरा को पत्नी रूप में स्वीकार करें। यह नरश्रेष्ठ उसके लिए सर्वथा योग्य पति है।" राजा विराट के ऐसा कहने पर धर्म राज युधिष्ठिर ने कुंती नंदन अर्जुन की ओर देखा।

अर्जुन मतस्यराज को कहता है "राजन ! मैं आपकी पुत्री को अपनी पुत्र वधु रूप में स्वीकार करता हूँ। मतस्य और भरतवंश का यह संबंध सर्वथा उचित है। मैं इसको एकांत और

सबके सामने पुत्री भाव से देखता आया हूँ। आपकी पुत्री भी सदा मुझे आचार्य मानती आई है। इस लिए यदि मैं इससे विवाह करूँगा तो यह गुरु शिष्य की परंपरा को कलंक लगेगा। लोग इसके और मेरे चरित्र पर शक करेंगे। मैं अभिशाप और मिथ्यावाद से डरता हूँ। इसलिए मैं आपकी पुत्री उत्तरा को पुत्र वधु के रूप में ग्रहण करता हूँ। मैं अपने बेटे और श्री कृष्ण के भांजे अभिमन्यु से इसका विवाह करवाऊंगा। वह आपका सुयोग्य दामाद और आपकी पुत्री का उपयुक्त पति होगा।" पांडव अपने संबंध मतस्यराज विराट से और मजबूत कर लेते हैं।

उत्तरा केवल पांडवों की प्रिय नहीं थी। उसका जो स्थान उसका कुंती के दिल में था वही स्थान उसका कौरवों की माता गांधारी के दिल में भी था। वह भी उस से स्नेह करती थी। उत्तरा के किरदार की एक जो बहुत प्यारी विशेषता है, वह है प्यार, उसका प्यार और स्नेह हर एक के मन को मोह लेता है। उस छोटी सी कन्या के कन्धों पर वेदव्यास ने कितना बड़ा दायित्व रखना था, वह किसी को नहीं पता था। स्त्री पर्व में जब गांधारी सब स्त्रियों पर शोक का वर्ण करती है, तब वह केशव से कहती है, "जिसे बल और शौर्य में अपने पिता से तथा तुमसे भी डेढ़ गुणा बताया जाता था। जिसने अकेले ही मेरे पुत्र के दुर्बेद्य व्यूह को तोड़ डाला था, वही अभिमन्यु दूसरों की मृत्यु बनकर स्वयं भी मृत्यु के अधीन हो गया।"

त्स्योपलक्षयह श्री कृष्ण कृष्नेर्रमिततेजस: ।

अभिमन्योहर्तस्यापि प्रभा नैवोपशाम्यति । । (*महाभारत* स्त्रीपर्वणि 4407)

अर्थात : "श्री कृष्ण मैं देख रही हूँ, कि मारे जाने पर भी अमित तेजस्वी अर्जुनपुत्र अभिमन्यु की कान्ति अभी बुझ नहीं पा रही है। राजा विराट की पुत्री और गांडीवधारी अर्जुन की पुत्र वधु सति साध्वी उत्तरा अपने बालक पति वीर अभिमन्यु को मरा देख आर्त होकर शोक प्रकट कर रही हैं। वह बार बार उसके शारीर पर हाथ फेर रही है।" उसके चरित्र और स्वाभाव के बारे में बहुत कुछ निकल कर सामने आता है गांधारी के शब्दों से।

इस युद्ध में हर किसी को किसी न किसी तरीके से, किसी न किसी रूप में आहुति देनी पड़ी थी। किसी को प्रत्यक्ष रूप में या फिर अप्रत्यक्ष रूप में। यह कोई साधारण युद्ध नहीं था, यह विश्व युद्ध था, यह धर्म युद्ध था, जिसने आने वाले विश्व का रूप बदल कर रख देना था। यह युग परिवर्तन का युग था, जिसमें द्वापर ने जाना था और कलयुग ने आना था। धर्म और विज्ञानं से भरपूर युग के युद्ध में दोनों की हानि हुई थी। बड़े बड़े योद्धा, धर्म गुरु, वैज्ञानिक, गुरुकुल सब नष्ट हो गया।

गांधारी उत्तरा के हालात के बारे में बताती हुई कहती है। "हे ! जनार्दन देखो, अभिमन्यु के सिर को गोदी में रखकर उत्तरा उसके खून से सने हुए केशों को हाथ से उठा उठा कर सुलझाती है और मानो वह जी रहा हो, उत्तरा पति के मुखारबिंद को सूंघकर उसे गले से लगा रही है। पहले भी यह इसी प्रकार मधु के मद से अचेत हो सल्लज भाव से उसका आलिंगन करती रही होगी।"

तस्य क्षतजसंदिग्धं जातरूपपरिष्कृतम ।

विमुच्य कवचं श्री कृष्ण शरीरमभिवीक्षते । । (*महाभारत* स्त्रीपर्वणि 4408)

अर्थात : "श्री कृष्ण ! अभिमन्यु का स्वर्ण भूषित कवच खून से रंग गया है। बालिका उत्तरा उस कवच को खोलकर पति के शरीर को देख रही है।" इस सब व्याख्यान में उत्तरा का चरित्र और उभर कर समक्ष आता है। जैसे जैसे इसको पढ़ते हैं एक चल चित्र सा मन में चलने लगता है। इसको चित्र के माध्यम से, रंगमंच के माध्यम से या चलचित्र के माध्यम से प्रस्तुत करना हो तो सब गुण इसमें मिलते है, जो किसी भी कृति को आगे लाने में सक्षम है।

स्वयं को प्रतिज्ञाओं के जाल में बंधे लोग बस एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए थे। सब के सिरों पर यम देव का पहरा था। इस बीच अश्वत्थामा ने पांडवों के वंश को ख़त्म करने का प्रण ले लिया था। उसके मन मस्तिष्क में बस रक्त और रक्तपात ही था। जिसके लिए युद्ध से पहले बनाए गए सब नियम धराशायी हो रहे थे। इस कड़ी में उसने द्रौपदी के सोते हुए पुत्रों को मार डाला ताकि उनका वंश ही ख़त्म हो जाए। आखिरी पांडू वंश उत्तरा के गर्भ में बचा था। जिसको ख़त्म करने के लिए उसने सींक के बाण का प्रयोग उसके गर्भ पर कर दिया और पांड्वो के आखिरी वंश को मार दिया। वह मृत पैदा हुआ। जिस कारण प्रसूतिगृह में खड़ी सभी महिलाओं में कौतुहल मच गया, कुंती, गांधारी, सुभद्रा सब रोने लगी और श्री कृष्ण से पुकार करने लगी, "तुमने वचन दिया था कि तुम उत्तरा पुत्र को अपनी शक्ति से जीवित कर दोगे"। उनकी पुकार सुन जहाँ उत्तरा थी श्री कृष्ण वहां गए। उससे पहले द्रौपदी भाग कर उत्तरा के पास गई और बोली।

अयमायाती ते भद्रे श्वशुरो मधुसूदन: । ।

पुराणषिर्रचिन्त्यात्मा समीमपराजित: । (*महाभारत* अनुगीतापर्व 6246)

अर्थात : "कल्याणी यह देखो, तुम्हारे अचिन्त्य स्वरूप, किसी से पराजित ना होने वाले, पुरातन ऋषि भगवान् मधुसूदन तुम्हारे पास आ रहे है।"

यह सुनकर उत्तरा ने रोना बंद कर दिया और अपने सारे शरीर को वस्त्रों से ढक लिया। श्री कृष्ण के प्रति उसकी स्नेह भावना थी। इसलिए उन्हें आते देख वह तपस्विनी बाला व्यथित हृदय से करुणविलाप करती हुई गीले कंठ से बोली "देखिए भगवान, आज मैं संतानहीन हो गई। आर्य पुत्र तो युद्ध में वीर गति को प्राप्त हुए है, परन्तु मैं पुत्र शोक से मारी गई। इस प्रकार दोनों समान रूप से ही काल के ग्रास बन गए। मैं आपके चरणों में मस्तष्क रखकर आपका कृपा प्रसाद प्राप्त करना चाहती हूँ, द्रोणपुत्र अश्वत्थामा के अस्त्र से दग्ध हुए मेरे इस पुत्र को जीवित कर दीजिए"।

सभी सती साधवियों के रुदन को सुनकर श्री कृष्ण ने अपने तप और धर्म की शक्ति से उस बालक को जीवित कर दिया। यह भी नाटकीयता है कि एक मृत बालक को जीवित करना। वैसे तो इस कथा में उत्तरा का परिचय बहुत कम है, पर उसका स्थान विशेष रहा है, क्योंकि उसके गर्भ में वह शिशु था जिसने इस कथा को आगे आम जन तक लेकर जाना था। वैशम्पायन आगे जन्मेजय को कथा सुनाते हुए कहते हैं। जब वह बालक जीवित हो उठा तो सभी ओर हर्ष छा गया, तदन्तर मल्ल, नट, ज्योतिषी, सुख का समाचार पूछने वाले सेवक तथा सुतों और मागधों के समुदाय कुरु वंश की स्तुति और आशीर्वाद के साथ भगवान श्री कृष्ण का गुणगान करने लगे। फिर प्रसन्न हुई उत्तरा यथासमय उठकर पुत्र को गोद में लिए हुए यदुनंदन श्री कृष्ण के समीप आई और उन्हें प्रणाम किया। भगवान् श्री कृष्ण ने भी उस बालक को बहुत से उपहार दिए और फिर उसका नामकरण इस प्रकार किया।

परिक्षणे कुले यस्माज्जातोऽऽयमभिमन्युज: । ।

परिक्षिदिति नामास्य भवित्वत्यब्रवीत तदा । (*महाभारत* अनुगीतापर्व 6250)

अर्थात : "कुरुकुल के परिक्षीण हो जाने पर यह अभिमन्यु का बालक उत्पन्न हुआ है। इस लिए इसका नाम परिक्षित होना चाहिए।" ऐसा भगवान ने कहाँ, इस प्रकार नामकरण हो जाने के बाद तुम्हारे पिता परीक्षित काल क्रम से बड़े होने लगे, वह सबको प्रिय थे।

18 दिन के भीषण नर संहारकारी महाभारत के युद्ध के पश्चात चारों ओर विधवाओं और पुत्र-हीना माताओं का करूण छाया हुआ है, परंतु इसी बीच हस्तिनापुर में विजयी युधिष्ठिर के स्वागत की तैयारी हो रही है, यही इस कथा की नाटकीयता है और विधि का विधान।

उत्तरा के जीवन की त्रासदिक नाटकीयता उभरती है, वो छोटी सी कन्या जिसने अपभी अपने ग्रहस्थ जीवन की शुरुयात की थी, उस पर इतना बड़ा भार आकर गिर पड़ा जिसकी

उसने कल्पना भी नहीं की होगी। उसके आगे वह पग बन गया जिस पर स्वयं के साथ चलना था। छोटी सी उम्र, कथा में छोटा सा अन्तराल, बड़ा दायित्व , अपने कंधो पर उत्तरा ने ढोया है। उत्तरा ने ही पांडवों के आखिरी वंश को जन्म देके इस कथा को आगे बढ़ाया है जब सब ख़त्म हो चुका था।

रंगमंचीय प्रस्तुतिकरण में नाटकीय संभावनाएं

कला के संदर्भ में डॉ सत्यनारायन दुबे कहते हैं, "क्ला की भाषा अंतरराष्ट्रीय भाषा होती है। हम किसी देश की भाषा से अपरिचित हो सकते हैं किन्तु किसी देश की, किसी काल की, कोई भी कला-कृति विश्व के किसी भी व्यक्ति के सिर पर चढ़ कर अपनी कथा सुना सकती है। हम उसके संदेश को हृदयंगम कर सकते है।"(*भारतीय क्ला एवं संस्कृति* 1)

इस बात की सत्यता पर महाभारत की लोकप्रियता लगती है। जिस प्रकार हदों सरहदों को हजारों सालों से यह कथा देशों विदेशों में अपनी छाप छोड़ कर और उनकी संस्कृति और साहित्य का अंग बन कर बैठी है। इसी कारण आज भी विभिन्न देश, विश्वविद्यालय, रंग टोलियाँ अपनी कला और माध्यम से महाभारत की प्रस्तुतियाँ कर रहीं हैं। इन सबमें जो सबसे बड़ा कारण है वो इस कथा में समाई उप कथाएँ, प्रसंग, उपाख्यान हैं जो अनेकों नाटकीय संभवनायों को जन्म देते रहते हैं। इसी कारण कला की कोई भी विधा हो वह महाभारत के प्रभाव से वंचित नहीं रह सकी। तभी तो आज भी रंगमंच पर विभिन्न और नए प्रयोगों के साथ इसकी प्रस्तुतीकरण हो रहा है।

गिरीश कर्नाड अमर उजाला अखबार को दिए गए, अपने साक्षात्कार में कहते है, "मुझे समझ आ गया है कि नाटक बच्चों की तरह होते हैं, जो अपनी योग्यता के आधार पर आगे बढ़ते हैं। अर्थात जिस तरह बचपन में अपनी संतान को संस्कार और गुण देते हैं, वह वैसे ही बड़ी होकर निकलती है। उसका सारा जीवन उसी पर आधारित होता है।" वेदव्यास ने अपनी संतान महाभारत को किन गुणो से, किस योग्यता से परिपूर्ण किया है ? आज इतने वर्षो बाद भी वह थक कर रुकी नहीं, आगे ही बढ़ती जा रही है"।

महाभारत को एक साहित्य शास्त्र, धर्म शास्त्र, अर्थ शास्त्र, मोक्ष शास्त्र, नीति शास्त्र और इतिहास के रूप में देखा और माना जाता है। स्वयं महाभारत में इसका जिक्र किया गया है।

धर्मशास्त्रमिदं पुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम ।
मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्त व्यासेनामितबुद्धिना ॥ (*महाभारत* आदिपर्वणि 169)

जिस किसी रचना में इतना कुछ समाया हो, वह कोई साधारण रचना तो नहीं होगी। जिस किसी ने भी इसको समझा और समझ कर खेला, उस हर व्यक्ति को इसने बहुत कुछ

दिया है। रंगमंच हो या मीडिया सबको इसने एक विशेष स्थान पर पहुंचाया है। जहाँ भी जिस भी विधा में जिसने इसको अपनाया, इसने सबको अमीर बना दिया।

रामधारी सिंह दिनकर के मत अनुसार, "रामायण और महाभारत, ये दो महाकाव्य पिछले दो हज़ार वर्षों से समस्त भारतीय साहित्य के उपजीव्य रहे है बल्कि यह कहना चाहिए कि महाभारत से प्रेरणा लेकर लिखे गए काव्यों और नाटकों की संख्या संस्कृत में भी बड़ी थी और यह संख्या भारत अर्वाचीन भाषाओं में भी विशाल है। महाभारत भारतीय संस्कृति का आधार ग्रंथ है । जब जब हमारी संस्कृति में परिवर्तन आते हैं महाभारतीय चरित्रों की नवीन व्याख्याएँ प्रस्तुत की जाती हैं और उनके द्वारा संस्कृति के परिवर्तनों पर प्रकाश डाला जाता है।" (*महाभारत का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव* 9)

जितना भारत में महाभारत को खेला, पूजा और पढ़ा जाता है, उतना शायद कहीं भी नहीं। भारत के लोग इस कथा के पात्रों के जन्म दिवस, त्यौहार मनाते है, इसमें वर्णित और संबंधित स्थानों पर बड़ी श्रद्धा से तीर्थ यात्रा के तौर पर जाते हैं। वह एक नई उर्जा को अपने अंदर ग्रहण करते है। महाभारत ने स्वयं को किसी एक रूप में बाँध कर नहीं रखा। नारीवाद, मनुवाद, ब्राह्मणवाद, विज्ञानं, धर्म संस्कार आदि से संबंध रखने वाले विद्वानों को इस में से सब मिला जो जिसने चाहा। फिर भला कला क्षेत्र कैसे खली हाथ लौट सकता है। इस रचना ने नृत्य, संगीत, चित्रकला और रंगमंच सबको प्रफुल्लित किया। जहाँ-जहाँ भारतीय सभ्यता का प्रचार और प्रसार हुआ, वहां-वहां यह कथा आगे गई, दूसरे सामाजिक कबीलों का भी एक अभिन्न अंग बन गई। कहीं सीधे रूप में तो कहीं आंशिक रूप ।

पंजाब की भूमि पर रचा गया महाभारत आज भी खेला पढ़ा जा रहा है, विद्वान हो या अनपढ़, सबको महाभारत के बारे में आंशिक से लेकर सम्पूर्ण ज्ञान है। जब भी महाभारत को लेकर कोई प्रस्तुति की जाती है, उसकी घोषणा से एक कोतुहल सबके मन में पैदा कर देती है। अच्छा महाभारत पर प्रस्तुति ! वाह क्या बात है, यार वह गांधारी पर प्रस्तुति कर रहे हैं ! ऐसे बहुत से शब्द एकाएक लोकमुख से निकलते है। ऐसे क्यों ? क्या है महाभारत में ? हजारों वर्ष पुरानी कथा, आज की ही कथा लगती है ? एक बात प्रचलित है, इतिहास सदैव स्वयं को दोहराता है। आज भी वर्तमान में बहुत सी उदाहरण हैं, जिनको देख-सुन और महसूस कर कह देते हैं, देखो यह महाभारत में भी तो ऐसे ही हुआ था।

एक उपवन में कितने ही वृक्ष, पेड़, पौधे, लताएँ और बेलें होती है, जो उसकी सुंदरता को उभार कर सबको अपनी और बुलाती है। जितनी विविधता होगी उतना ही आकर्षण होगा। महाभारत केवल एक प्रकार के पेड़ो या फूलों का उपवन नहीं, यह तो विशाल भू भाग में फैला जंगल है। जो हर रंगकर्मी को खुल कर स्वयं के बारे में जानने का, मानने का और खेलने का मौका देता है। इसका आरंभ कहाँ से है और इति कहा पर है किसी को नहीं पता, हाँ इसका सफ़र बहुत रोमांचकारी है यह पता है।

नाटकीयता ! जो किसी भी रचना के अमरत्व का सबसे मुख्य तत्व है। जिस प्रकार मानव जीव जीवित रहने के लिए साँसों का इस्तेमाल करता है, वैसे ही यह किसी भी रचना का स्वास है। जिस भी रचना में जितनी ज्यादा नाटकीयता होगी, उतनी ही वह अमर होगी। इसी के साथ तो हर कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करता है। इस को पाने के लिए वह संघर्ष करता है, उसको निकाल कर सबके सामने रखता है। जिस रचना में जितनी ज्यादा संभवाए होंगी वह समय के व्यतीत होने के साथ उतनी ही निखर कर समक्ष आती है। पंजाबी के प्रसिद्ध नाटककार और निर्देशक केवल धालीवाल अपने साक्षात्कार में कहते है, "वह किसी भी रचना के लेखन और निर्देशन से पहले यह देखते और ढूंढते है, इसमें नाटकीयता कहाँ है ? किस तत्व के माध्यम से वह उस रचना में से स्वयं को निकाल कर बाहर लाएंगे, उनके खड़े होने के लिए स्थान कहाँ है ? लोग कैसे देखेंगे कि देखो यहाँ केवल धालीवाल दिख रहा है ? अपने अदाकारों में कहाँ दिखेंगे ? उनको खेलने और मंच के तल पर तैरने का मौका कैसे देंगे ? वह नाटकीयता उसमें कहाँ छिपी है। सबसे पहले वह उसको ढूंढते है।" (धालीवाल साक्षात्कार)

एक इतिहासकार बीते समय और धरती की सतहों में से बीते युग को खींच कर निकाल लाता है। इसी तरह रंगकर्मी किसी भी रचना की गहराई से नाटकीयता को ढूंढ कर दर्शक वर्ग के समक्ष लाता है। वह किसी भी रूप में किसी भी कोने में क्यों न हों। जिस रचना में नाटकीयता नहीं होती वह रंगमंच से जल्दी अलोप हो जाती है। वेदव्यास ने अपनी रचना को लिखने में जिस कला का प्रदर्शन किया है, उस पर आज भी खोज, शोध कार्य जारी है, भविष्य में भी जारी रहेगा। हर बार यह एक नया बिंदू छोड़ जाता है, जिस से अगला रंगकर्मी नई यात्रा शुरू करता है। वह इस कथा में से किस बिंदु को लेकर खेले और रचे। हर रचना के कुछ अंग होते है जैसे शैली, भाषा, अंक, किरदार, इत्यादि के साथ रंगमंच के कुछ तकनीकी पक्ष भी होते हैं, इन सबमें कहाँ नाटकीयता है ? उसको ढूँढने का कार्य करता है।

संगीत, ध्वनि-प्रभाव, प्रकाश-योजना, मंच-उपकरण, दृश्य-बंध, प्रतीक एवं बिंबों के माध्यम से नाटकीयता - नाटकीयता केवल वस्तु, पात्र, संवाद या भाषा में ही नहीं होती, बल्कि तकनीकी माध्यमों में भी होती है। जिन्हें व्यवहार मे लाने के लिए नाटक विवश करता है। मानसिक तनाव को मंच पर प्रस्तुत करने के लिए नाटककार अनेक शब्द इत्यादि साधनों का सहारा लेते हैं। पाश्चात्य नाटककार आइनेस्को ने जब यह कहा कि, "मुझे एक ऐसी भाषा की तलाश है जो दृश्य हो, जो मंच की भाषा हो, ज्यादा प्रत्यक्ष, ज्यादा हिला देने वाली और अपने प्रभाव में शब्दों से कहीं अधिक शक्तिशाली।" (*मोहन राकेश और उनके नाटक* 152)

आज की परिस्थितों दबावों में घुटते-जीते आदमी की स्थिति को व्यक्त करने के लिए शब्द ही सब कुछ नहीं है, विभिन्न रंग-संयंत्र भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। पात्रों की उदासीनता, निराशा, करुण मनःस्थिति को व्यक्त करने के लिए संगीत का सहारा लिया जाता है। संगीतात्मक योजना नाटकीय गीत के साथ एकीकृत होती है। इससे भाव के वेग और संवेगों की गति को नियंत्रित और तीव्र किया जा सकता है। त्रासदी आधारित प्रस्तुतियों में भी त्रासद परिस्थितियों के तनाव में न्यूनता ले आने के लिए अक्सर संगीत का प्रयोग किया जाता है। शिजूका परफोरमिंग आर्टस जापान के ग्रुप ने वर्ष 2011 मे सतोषी नियगी की निर्देशना मे ऐसी ही प्रस्तुति दी थी जो इसकी उत्तम उदाहरण है। जिसमे यह तत्व बड़ी कुशलता से उभर कर आया था।

कई बार विशेष नाटकीय स्थिति में सटीक ध्वनि प्रभाव तनाव को इस तरह व्यक्त करते हैं कि उसे शब्द-संवादों में भी व्यक्त नहीं किया जा सकता। नाटकों में ध्वनि प्रभाव की योजना अदृश्य संकेतों, दृश्य-निर्माण, आंगिक तथा सात्विक अभिनय का आभास देने के लिए की जाती है। सुमित्रानंदन पंत के अनुसार, "ध्वनि प्रभाव अपने अदृश्य संकेतों द्वारा वास्तव में रंगमंच की कमी की पूर्ति करता है और कभी रंगमंच के दृश्य श्रोता की आँखों के सामने क्यों का त्यों उपस्थित कर देता है।" (*शिल्प और दर्शन, उद्धृत : निर्मला हेगंत : आधुनिक नाट्यकारों के नाट्य सिद्धान्त* 411)

बगल से बादलों की गडग़ड़ाहट द्वारा पात्रों की उमड़ घुमड़ और अंतर्द्वंद को दरवाजे की घंटी या गोली की आवाज़ भी मानसिक तनाव को पैदा कर सकरी है।

प्रकाश योजना भी नाटक में छुपी हुई नाटकीयता को प्रकट करने में सार्थक सिद्ध होती है। किसी विशेष पात्र की मानसिक अव्यवस्था को उभरने के लिए उस पात्र पर वृत्ताकार

प्रकाश रहस्यात्मक भावों को प्रकट करता है । पात्र के खंडित व्यक्तित्व को विशेष प्रकाश-व्यवस्था द्वारा परदर्शित कर उसके मानसिक तनाव को मूर्त एवं जीवंत रूप देता है। पात्र,के बीते हुए तनावमय जीवन-स्थितियों और आगामी द्वदों, सपनों, कल्पनाओं को भी प्रकाश योजना बहुत कलामय तरीके से नाटकीय रूप से बाहर लेकर आता है। प्रकाश योजना का कार्य दृश्यबंध का सृजन, घटनात्मक सूत्रों, संरचनात्मक द्वंदों और मानसिक विधात्मक मनो भावों, मानसिक तनाव को उजागर करना होता है। आधुनिक नाटकों में विभिन्न ढंग से रंगमंच व पात्रों पर डाला गया प्रकाश मूल वस्तु में प्रतिबिम्बित तथा सम्प्रेषित तनाव को सघनता प्रदान करता है।

रंगों को लेकर भरत मुनि ने भी अपना मत प्रकट किया है। रस सिद्धान्त में उसने हर रस को एक रंग, भाव और देवता प्रदान किया गया है। क्योंकि रंगों के माध्यम से भी हम किसी भाव- स्थिति विचार को प्रकट कर सकते है । रंग सिद्धान्त को निम्नलिखित प्रस्तुत किया गया है

रस	रंग (वर्ण)	स्थाई भाव	देव
शृंगार	श्याम	रति	कामदेव/विष्णु
हास्य	श्वेत	हास	शिवगण/ प्रमथ
करुण	कपोत	शोक	यम
रौद्र	लाल/रक्त	क्रोध	रुद्र
वीर	गौर/हेम	उत्साह	महेंद्र
भयानक	कृष्ण	भय	काल
वीभत्स	नील	जुगुप्सा	महाकाल
अद्भुत	पीत	विसमय / आश्चर्य	गंधर्व/ब्रह्मा

वस्तुतः नाटकों मे प्रयुक्त विभिन्न रंगों की योजना भी पात्रों की तनावपूर्ण, द्विधात्मक तथा अनिश्चयपूर्ण मनः स्थिति और विभिन्न स्थितियों में परिवर्तित व्यक्ति के अंतर्द्वंद, घुटन, विवशता, संत्रास को उभारकर बिना शब्दों के गहरे भाव संप्रेक्षित कर जाती है।

इसके अतिरिक्त मंचसज्जा या दृश्यबंध भी कई ऐसे गहन व जटिल भावों को अभिव्यक्ति देते हैं, जिन्हें नाटक के संवाद भी सरलता से नहीं समझा पाते। दृश्यबंध में बिखरा

सामान, घर मे अव्यवस्था, पात्रों के टूटते-बिखरते संबंधो का प्रतीक लगती है। इसी प्रकार अंधेरा, संकरा कमरा दिखाना पात्रों के अन्तर्मन के अंधेरे अर्थात तनावपूर्ण द्विधात्मक मनःस्थिति की व्यक्ति बनती है। नाटक में मंच पर इस्तेमाल किया गया सामान पात्रों की स्थितियों व कार्य व्यापार से गहन भावों तथा मानसिक पीड़ाओं को आसानी से ही प्रदर्शित कर देता है।

आधुनिक जीवन की जटिलता बिम्बों के माध्यम से भी मूर्तिमान हो उठती है। गोबिन्द चातक के अनुसार, " वस्तुतः कथावस्तु के संयोजन, कथ्य को गति, अर्थ का संकेत अथवा प्रतिकार्य प्रदान करने तथा पात्र की मानसिक स्थिति के उदघाटन में बिम्ब का प्रयोग नाटक में बड़ी सफलता के साथ किया जा सकता है।" (*प्रसाद के नाटक: सृजनात्मक धरातल और भाषिक चेतना* 37) निःसंदेह व्यक्ति की मानसिक ग्रंथियों, भीतर की धुंध, जीवन की तनावमयी स्थितियों को गहरने के लिए दृश्य-बिम्ब एवं ध्वनि-बिम्ब महत्वपूर्ण व सार्थक होते है।

पीकॉक का मत है कि, "जब प्रतीक अनुभूतियों अथवा उनसे संबन्धित विचारों के केन्द्रबिन्दु बनकर कार्य करते हैं तब वह भावोद्वेलन में अत्यंत सहायक होते है।" (*द आर्ट ऑफ ड्रामा* 231)

चरित्रों की भावात्मक स्थितियों और रंगमंच का समावेश, मूर्त प्रतीकों द्वारा भी सबल रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। संवादों में प्रतिकात्मक भाषा रंग-प्रतीक, पृष्ठभूमि के संकेतात्मक प्रतीक तथा अन्य प्रतीक नाटक में वस्तुगत तनाव, पतर्गत तनाव को गहराते हैं। प्रतीकों के द्वारा नाटककार किसी गहन गंभीर नाटकीय स्थिति या मनः स्थिति को तथा तनाव की सूक्षमता को और स्पष्टता के साथ उभारकर सामने रख देता है।

इस प्रकार नाटकीय शिल्प की दृष्टि से नाटकीयता की खोज करने पर पता चलता है कि नाटकीयता (तनाव) नाटक की वस्तु में गतिशीलता लाने वाला और कथ्य को चरमसीमा पर पहुंचा कर विस्फोटक स्थिति उत्पन्न करने वाला महत्वपूर्ण घटक है। नाटक में तनाव की उपस्थिति पात्रों के बाह्य परिवेश, स्थितियों से टकराव तथा अन्तर्मन की खींचतान को गति दिए रहती है। इसी प्रकार पात्र अंतर्द्वंद व अत्यधिक तनाव के क्षणों में अधूरे, बिखरे संवादों द्वारा मानसिक द्वंद को प्रकट करते हैं। उनकी चुप्पी व मौन उनके तनाव को गहराती है। प्रकाश-योजना, ध्वनि-प्रभाव, संगीत, विभिन्न रंग उपकरण, प्रतीक तथा बिम्ब नाटकीय तनाव को सघनता प्रदान करते हैं।

एक बेहतरीन रचनाकार की पहचान ही यही होती है, वह कठिन से कठिन बात को भी बिना किसी बल छल के बहुत सरलता से कह जाता है, इस तरह कि हर आम जन तक उसकी बात पहुंचे। वह उसकी रचना से असहज महसूस न करे। वह अपने कथा के किरदारों को कठिन से कठिन परिस्थितियों में डाल कर उतनी ही सरलता से संघर्षमय तरीके से बाहर लेकर आ जाता है। उसका यही पाश तो सबको एक अनजानी शक्ति में बाँध कर रखता है, जो सोचने पर मजबूर करता है, अब क्या होगा ? अब कैसे होगा ? कब और किस तरह वह उस स्थिति से बाहर आ जाता है, पता नहीं चलता। महाभारत की कथा को देखते, सुनते, पढ़ते ऐसे महसूस होता है, इसकी कथा में नाटकीयता नहीं है, बल्कि नाटकीयता को ही कथा का रूप दे दिया हो। अत्यंत नाटकीयता से ही वेदव्यास ने कथा की शुरुयात की है। असंख्य पात्र इस कथा का अंग हैं, यहाँ सिर्फ उन नायिकाओं की चर्चा करेंगे जो इस कथा का मुख्य अंग हैं। जो इसको आगे बढ़ाती है, जैसे सत्यवती, अम्बा, गांधारी, कुंती, हडिम्बा, द्रौपदी और उत्तरा।

एक मतस्य कन्या का राजकुमारी बनना, उसका जीवन संघर्ष, बिना पुत्रों के हस्तिनापुर की राज सत्ता को आगे बढ़ाना और कथा के बीच में ही वेदव्यास के साथ अपनी पुत्र वधुओं के साथ सन्यास ले लेना। उसके जीवन को किस तरह शुरू किया और किस तरह अंत यह अद्‌भुत है। सत्यवती के जीवन में एक पड़ाव आता है, जब भीष्म उसके पुत्रों के लिए अम्बा, अंबिका और अंबालिका का हरण कर के लाता है।

इनमें से अम्बा जो आत्म सम्मान के लिए विद्रोह कर देती है। एक छोटी सी कन्या का उस समय की विश्व सत्ता पर आसीन महारानी को और इच्छा मृत का वरदान प्राप्त भीष्म को ललकार मानो चिड़िया का गरुड संग भिड़ जाने जैसा है। बात यहीं ख़त्म नहीं होती, तीन जन्म तक भीष्म प्रति प्रतिशोध की ज्वाला में जलते रहना, शिव से भीष्म की मृत्यु का कारण बनने का वरदान लेना, जो उसके मन को कहीं तृप्त करता है। अंत कुरुक्षेत्र के मैदान में शिखंडी के रूप में वीरगति प्राप्त करना, स्वयं में अलग कथा समाए हुए हैं।

यहाँ नारीवाद और नारी की बात वेदव्यास ने सुसज्जित ढंग से की है। जो उन्होंने लिखा वह आज भी घटित हो रहा है, जो इसको समकालीन बनाता है।

एक औरत जिस से पूछे बिना ही उसका रिश्ता तय हो जाता है, वह भी आँखों से दिव्यांग व्यक्ति से। इसकी सिर्फ कल्पना ही कर सकते है। शादी से पहले वह अपनी आँखों पर भी पट्टी बाँध लेती है। जिसे वह अपने पुत्र के तन को वज्र समान बनाने के लिए ही खोलती है।

अंधकार को ही अपना जीवन बना लेना, सोच भी नहीं सकते। सौ पुत्रों की माँ का एक भी पुत्र न बचना, कैसा अनुभव है यह ? अपने पुत्र मोह में श्री कृष्ण से भिड जाना और उसको शाप दे देना। यही नाटकीय तत्व गांधारी की ओर आकर्षित करते हैं।

छोटी सी बालिका जिसका पिता उसको अपने भाई को दे देता है, उसका असली नाम भी कहीं खो जाना और कुंती के नाम से जानी जाना रौचक है। युवा अवस्था में सूर्य की सहायता से पुत्र का जन्म, फिर उसका त्याग, विवाह पश्चात पति को खो देना, आजीवन बनवास झेलना और जिनके कारण वह कष्ट उठाती रही अंत में उन्हीं जेठ जेठानी के साथ वन गमन पर चले जाना, एक अजीब विडंबना है।

महाभारत के किरदार केवल मानवीय पात्र ही नहीं है, इसमें रोचकता डालने के लिए दैवीय और दानवीय पात्रों का समावेश भी किया गया है। भीम का एक राक्षसी लड़की हडिम्बा से शादी करना, संतान की उत्पत्ति के बाद उसको छोड़ कर चले जाना, एक अलग संसार का सृजन करता है।

श्री कृष्ण की सखा, अग्नि से पैदा हुई लड़की, पांच पांडवों की अर्धांगिनी, अपने सम्मान के लिए सबको हिला कर रख देना, अपने पुत्रों को खोकर भी मौन रहने वाली और कथा के अंत में गिरती हुई हिमालय के पाँवों में बिखर जाने वाली द्रौपदी का चरित्र सबको ज्ञात है।

काल का तांडव ख़त्म हो जाने के बाद पांडवों के आखिरी वंशज को अपने गर्भ में बचा कर रखने वाली पांडवों की पुत्र वधु उत्तरा, जिस के गर्भ में पल रहे भ्रूण को अश्व्थामा मार देता है। उसकी करूण पुकार और व्यथा को सुनकर श्री कृष्ण का फिर से उसे जीवित कर देना। कथा में नाटकीयता का समावेश करता है।

महाभारत का अध्ययन करते समय पता चलता है, इसके पात्र कैसे है, वह कहाँ खड़े हैं, कैसे सोचते है, किन परिस्थितयों में कैसे व्यव्हार करते है। इसके पात्र किसी भी हालात में घबराते नहीं हैं, वह परिस्थितियों से लड़ना जानते हैं। राज्य की लड़ाई हो हो या अधिकार की, स्वाभिमान की लड़ाई या अभिव्यक्ति की, सबमें उन्होने खुल कर भाग लिया है। आज भी भारतीय समाज में इन पात्रों की उदाहरण दी जाती है। उनके किरदारों में जितनी नाटकीयता भरी पड़ी है उतनी किसी अन्य ग्रंथ में नहीं मिलती।

यह कथा सत्य है या कल्पना, यह चर्चा का विषय नहीं। लेकिन हाँ अगर यह सत्य है तो अद्भुत है और अगर यह वेदव्यास की कल्पना है तो निसंदेह लेखन कला की श्रेष्ठ कृति है। डॉ

रामअवध द्विवेदी कहते है, "बहुसंख्यक दार्शनिकों का यह मत है कि हममें कल्पना की स्थिति उच्चतम स्थान पर नहीं है वर्ण उसकी अवस्था माध्यमिक अर्थात अवगति के कई समकक्ष है। बाह्य जगत के कई पदार्थ, दृश्य इत्यादि अपना प्रभाव डालते है और फलतः संवेदनाएँ उत्पन्न होती है, जिनमें कुछ अधिक और कुछ कम सपष्ट होती है, संवेदनायों से ऊपर उठकर कल्पना की अवस्था आती है। जिसमें प्रतयक्ष अनुभव और संवेदनायों का रूप एकत्र हो सुस्पष्ट और सुसंगठित बन जाता है।" (*समालोचक* 32)

व्यक्ति जिसे देखता सुनता है, जिसका अनुभव या अनुमान करता है, जिसकी कल्पना करता है और बुद्धि से जिसको ग्रहण करता है, सब सत्य है। क्योकि व्यक्ति किसी ऐसी वस्तु की कल्पना ही नहीं कर सकता जो अस्त है या नहीं है। यह हो सकता है कि वह इंद्रिलब्ध न हो, वस्तु जगत में उसका साक्षात्कार व्यक्ति को न हो। कल्पना जब शरीरी हो जाती है तब वही यथार्थ है। इसी कल्पना के संपर्क में रसानुभूति होती है।

कला के पक्ष में यथार्थ और कल्पना दोनों का उपयोग है। दोनों मिलकर एक सत्य की रचना करते हैं। कला की वस्तु, साधन, आधार यथार्थ हैं, उसकी प्रेरक शक्ति कल्पना है। दोनों के एकीकरण से ही श्रेष्ठ कला जन्म लेती है। यह भी हो सकता है इसी विधा से महाभारत का जन्म हुआ हो।

इसके किरदारों की विविधता और संवाद एक अलग वातावरण से अवगत करवाते हैं। इसको सुनते ही मस्तिष्क में इसके पात्र जन्म लेने लगते हैं, उनका रंग-रूप, वस्त्र, बोलने की संवाद शैली बहुत कुछ मन में आ जाता है। वह कितनी संभावनाए अपने अन्दर लेकर बैठे हैं। अभिनय वह अंग है, जिसके माध्यम से इनको सबके समक्ष मंच पर जीवित किया जा सकता है। वैसे तो आज अभिनय की बहुत सी शैलियाँ हैं, जिनके माध्यम से अभिनय करते हैं। हर विधा का एक अलग रूप है। भरत मुनि की बताई गई आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक अभिनय विधियों के अंतर्गत बहुत सी संभावनाएँ है, जो पात्रों को जीवित करने में रोचकता लाएंगे। सत्यवती का संघर्ष हो या अम्बा का शिखंडी रूप धारण करना, गांधारी का अंधकार या अपनी संतानों को खोने की पीड़ा, हिडिम्बा का बिना पति के अकेली संतान के साथ जीवन यापन, अथवा पांच पतियों में विभाजित स्त्री का दर्द या फिर भरी राज्य सभा में बेइज्जत होने का दृश्य, पांड्वो के वंश को आगे बढ़ाने का संघर्ष। सब कुछ अपने भावों से, अंगों से, शब्दों से कितना कुछ व्यक्त करने को है।

बहुत कम किरदार या पात्र ऐसे होते हैं, जिनको अलग अलग शैली से प्रस्तुत किया जा सके। यहीं वह मंच है, जहाँ अँधा युग की गांधारी का अंदाज़ अलग है और कठ कथा की गांधारी का अलग और पीटर ब्रूक की गांधारी का अलग। जहाँ बलदेव राज चोपड़ा की अम्बा थोड़ी नर्म है, तो सिद्दार्थ आनंद कुमार की अम्बा प्यार और सम्मान के लिए लडती नज़र आती है।

यह वह कथा है, जिसको जिसने जैसा चाहा, वैसा खेला है। महाभारत अपने आप को निर्देशित करते चलती है। यह एक विधा में बंध कर नहीं रही। मंदिरों के प्रांगण से निकल कर रंगमंच की धरा पर आई, तो संस्कृत ने इसका हाथ थाम लिया और भास, कालिदास आदि जैसे नाटककारों ने इसको आधार बना कर साहित्य रचना शुरू कर दिया। जिसको मंच पर खेला गया और आज तक खेला जा रहा है।

इंडोनेशिया में व्यांग विधा के रूप में कठपुतलियों से महाभारत खेली जाती है। जावा, मलेशिया, थाईलैंड, सिंगापूर, सुमात्रा बाली में यह शैडो थिएटर के रूप में खेली जाती है। इन देशों की विभिन्न रचनाओं, कलाकृतियों में इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। आधुनिक दौर में फ्रांस, रूस, जापान, न्यूजीलैंड, अमेंरिका, में भी कई रंग टोलियाँ इसकी विभिन्न कथाओं को लेकर प्रस्तुतियां कर रहीं हैं। लंदन में पीटर ब्रूक जैसे निर्देशक महाभारत पर कार्य कर रहे हैं। बात यहीं नहीं थमती, शिकागो, एडिनबर्घ, पोर्टसमाउथ और कैंटरबरी जैसे पाश्चात्य विश्विद्यालय भी महाभारत पर कार्य करवा रहे हैं। इसमें कोई शंका नहीं कि महाभारत नाटकीयता का बड़ा स्रोत है ।

आज कॉर्पोरेट जगत में महाभारत पर लेक्चर और सेमिनार करवाए जाते है। इस कथा के माध्यम से जिंदगी को समझने का यतन किया जाता है। विश्व भर में महाभारत अलग अलग विधायों खेली जा रही है, विभिन्न रंगकर्मी इसको आज अपने तरीके से खेल रहे हैं, हर देश का रंगकर्मी उसको अपनी स्थानीय विधा से खेलने का प्रयत्न कर रहा है। यह सारी कथा, रंगकर्मी और जन वर्ग को आपस में एक सुंदर माला की तरह बाँध कर रखती है। कला की कोई भी ऐसी विधा नही जिस पर इसकी छाप न हो, देश ही नहीं विदेशी धरती पर भी इसका प्रभुत्व है ।

रंगमंच को सब कलाओं की माँ की संज्ञा दी जाती है। गायन शैली में वेदव्यास पीठ पर बिराजित साधु गणों और विदुषियों ने भागवत कथा के माध्यम से, तो कभी गीता के माध्यम से इसको आज तक जीवित रखा है। विभिन्न मंदिरों, गुरुकुलों और घरों के प्रांगणों में इस कथा का

गायन शैली के रूप में पाठ किया जाता है। इसके शलोकों को विशाल जन समूह ने कंठस्थ किया हुआ है।

बी॰ वाई॰ ललितांबा लिखते हैं, "रामायण और महाभारत आज राष्ट्रीय महाकाव्य के रूप में देश का नाम संसार के चारों कोनों में फैलाते हैं तो वह भी एक समय मौखिक परंपरा के काव्य ही रहे होंगे । उन काव्यों से प्रभावित होकर लोकजीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले कई मौखिक काव्यों की रचना हुई है। साहित्य अकादमी से प्रकाशित भीलोनु भारथ का यहाँ स्मरण किया जा सकता है। उसी तरह बोड़ो रामायण, पंढलानी आदि अस्तित्व में आया है। उसकी सुरक्षा के उद्देश्य से पिछले वर्षों में हजार पूष्ठों में इस महाभारत का संग्रह हुआ है। इन महाभारतों की विशेषता यह है कि मूल भारत का हूबहू वाचन नहीं होता, उसमें वाचन परंपरा के उस समुदाय की जीवन शैली, उनके अपने लोगों कहानियाँ आदि जुड़ी हुई होती है, पंढवानी जिस तरह नाममात्र के लिए पांडवों से संबंधित है, लोक जीवन से परिचित करानेवाला वह एक विशिष्ट लोकनाट्य है,ये भी लोकजीवन का प्रतिनिधित्व ही करते है।" (*भारत की लोक-संस्कृति* 30)

छतीसगढ़ की पंडवानी शैली में महाभारत की घटना, प्रसंगों आदि को मुख्य तौर पर गायन और अभिनय के साथ अभिव्यक्त किया जाता है। इसमें गांधारी, द्रौपदी, भीम, धृतराष्ट्र, दुष्शासन, कर्ण और श्री कृष्ण आदि के चरित्र और कथाओं को प्रस्तुत किया जाता है। यह इस रूप में भी कानों को श्रवन रस प्रदान करता है। इसके इलावा संस्कृत नाटकों में भी सारी कथा को गायन शैली के माध्यम से ही खेला जाता है। पंडवानी गायन में लम्बी साधना और उपलब्धियों के लिए तीजन बाई को पद्म श्री (1988), पद्मभूष्ण (2003) से सम्मानित किया गया है। अन्य प्रसंगों के साथ साथ इन्होने अधिकतर भीम प्रसंग को गाया। बी॰ वाई॰ ललितांबा बताते हैं, "इस महाभारत को गाने का निश्चित समय भी है । एक तो यह कन्नड जिले के होन्नवर, सिरसि आदि स्थानों का लोक गायन है, देवी और हनुमान के जलसे के समय और विवाह के संदर्भ में समधी लोगों को भोज देते समय और गर्भिणी महिला को कुछ-कुछ ख़्वाहिश पैदा होने पर और खेती-बाड़ी करते समय रोपने, बेकार के पौधे उखाड़ते समय इन खंडकाव्यों को गाने की परंपरा बनी।" (*भारत की लोक संस्कृति* 30)

जब आदि मानव ने विकसित होना शुरू किया, तो जंगलों से निकलकर गुफायों में रहने के लिए आ गया। आग के पास नाचने से लेकर, गुफायों की दीवारों पर चित्र बनाने का

सफ़र बहुत ही मजेदार रहा। पाषाण युग से सिन्धु घाटी की सभ्यता, गुप्त काल से मुग़ल काल, फिर आज का वर्तमान युग। मानव जब शब्दों की उत्पत्ति करना सीख रहा था, भाषा के इस्तेमाल को अमल में लाना चाह रहा था, तब चित्र कला के माध्यम से ही वह अपने भावों को अभियक्त करता था। समय के साथ यह विकसित कला बन गया। जिसमें विभिन्न माध्यमों से, बारीकियों से, कलाकृतियों से, आकार और रंगों से बात को रखा जाता है। महाभारत का प्रभाव इस कला में भी गहन पड़ा। ऐसा मान जाता है कि रंगमंच की शुरुआत पहले गुफायों में चित्र बनाने से फिर उसको नक़ल कर के दिखाने में से हुई। इस कथा को जब भी पढ़ते है, तब कथा के मेंघ मन के धरातल को तर कर देते हैं। परिणाम स्वरुप निकली सौंधी सौंधी सी खुशबु मन को छु जाती है। आज भी महाभारत पर आधारित चित्र, कुरुक्षेत्र का युद्ध या श्री कृष्ण बाल लीला, रूक्मिणी पीड़ा हो या द्रौपदी वेदना, सब अपनी और आकर्षित करते हैं। भारतीय लोक चित्रकला शैलियों में मेंवाड़ की शैली, गुलेर की शैली, बशोली की शैली, जयपुर शैली, किश्नगड़ शैली महाभारत के प्रभाव से मुक्त नहीं हैं। इनमें महाभारत अथवा इससे संबंधित पात्रों के चित्र देखने को मिलते है। पहाड़ी चित्रकला में रामायण और महाभारत से संबंधित चित्रों को प्रस्तुत किया जाता है। इसके इलावा पूर्वी भारत में अधिक प्रचलित पट-चित्र कला (कपड़ों पे चित्रकारी करने के कारण ही इसे पट चित्र कला कहा गया है) रामायण, महाभारत तथा पुराणों के कथानक पर आधारित है। यह बात दर्शाती है इस कथा में कितना नाटकीयता का समावेश है, जो सबको अपनी और अग्रसर करती चली जाती है। यूरोप में 16 सदी के अंत और 18 वीं सदी के आरंभ में बराक नामक कलात्मक शैली प्रसिद्ध हुई। इस शैली की लोकप्रियता और सफलता को रोमन कैथोलिक चर्च द्वारा प्रोत्साहित किया गया। जिसने प्रोटेस्टेंट सुधार की प्रतिक्रिया में काउन्सिल ऑफ़ ट्रेंट के समय यह निर्णय लिया गया था, कि कला को प्रत्यक्ष और भावनात्मक जुडाव के साथ धार्मिक प्रकरणों को संचारित करना चाहिए। भारत देश में तो यह बहुत पहले से ही हो रहा है, कला का कोई भी माध्यम हो हर वर्ग, जाति, कौम, मज़हब के प्रचारकों ने इसका इस्तेमाल किया है।

प्रो ए° के दास अपने भाषण मे कहते हैं - "मुगल काल की चित्रकला अपनी उत्कृष्टा के लिए विख्यात है। अकबर के दरबार में अनेक फारसी तथा भारतीय चित्रकार मौजूद थे। इस काल की कला की एक उल्लेखनीय विशेषता थी, एक ही चित्र को विभिन्न कलाकारों द्वारा मिलकर तैयार किया जाता था। एक कलाकार चित्र का रेखांकन करता, तो दूसरा उस चित्र में

रंग भरता था, तीसरा तफसील तैयार करता था। "अकबर भी महाभारत के प्रभाव से मुक्त नहीं था। उसने भी महाभारत का अनुवाद तैयार करके उसे चित्रकारी से सजाने का आदेश दिया था।"

चित्र नाटकों में नाटकीय तत्व समावेश करते रहे हैं। रंगमंच ने तो चित्रकला को मंच पर सदा अपने साथ रखा है। चित्र किसी भी कथा का स्थिर रूप है, चित्र जब मंच पर आता है, तब यह जीवित रूप बन जाता है। भागवद कथा हो या जन्माष्टमी, रास लीला हो या राम लीला इन सबमें चित्र कला से युक्त बड़े बड़े पर्दों का इस्तेमाल किया जाता है। कही एक पर्दा मंच को युद्ध का मैदान बना देता है, कहीं वह पर्दा मंच को वृंदावन बना देता है। यह महाभारत की नाटकीयता है, जो चित्रों के रूप में पर्दे और चित्रों पर जन्म लेकर मंच पर बड़ी होती है। ऐसे ही पर्दों का इस्तेमाल संस्कृत रंगमंच, लोक रंगमंच में होता है। आज के डिजिटल युग में यह हरे पर्दे के और साइक्लोरमा के रूप में आ गई है। जिस पर अलग अलग दृश्य बनते हैं। महाभारत की कथा में पात्रों का एक विशाल समूह है, जब वह पर्दे पर चित्रित होते है, तब ऐसा लगता है जैसे वह बातें कर रहें हो। चित्र कला का प्रयोग ब्रेकथ ने भी अपने नाटकों में किया है। यतीन्द्र मिश्र कहते हैं - "यह बात भी रोचक है कि महाकाव्यों और पुराणों के जो कथानक प्रदर्शन परंपरा में अधिक लोकप्रिय रहे, उनका चित्रण रूपांकन कलाओं में भी हुआ है। महाभारत में सबसे अधिक लोकप्रिय कथानक जिनका दोनों कलाओं में प्रयोग हुआ है, वह हैं अभिमन्यु वध, जयद्रथ वध, द्रौपदी चीर हरण और महाभारत के उपाख्यान जैसे "नल-दमयंती" और "किरातार्जुन" रूपांकन कलाओं में महाकाव्यों और पुराणों के प्रसंगों का चित्रण प्रदर्शन परंपरा और क्षेत्र की मौखिक परंपरा से प्रेरित है। राजा रवि वर्मा का भी चित्र कला और रंगमंच का विलय करवाने में बहुत योगदान रहा है"।

चेनी शेल्डान के अनुसार, "रंगमंचीय कला पर चित्रकला कभी बहुत हावी नहीं हो सकी, किन्तु प्राय: तीन शताब्दियों तक वह रंगमंचीय कला की एक अनिवार्य और अविभाज्य सहेली बनकर अवश्य रही।"(*रंगमंच – नाटक अभिनय और मंच शिल्प* 575)

चित्र कला के माध्यम से महाभारत के अन्दर छुपी हुई नाटकीयता को निकाल सकते है। पारसी रंग मंडलियाँ इसी विधा का प्रयोग करती थी। कलाकारों के माध्यम से कालपनिक वस्तु को एक रूप दे सकते हैं। भरत मुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में जिन रसों का ज़िक्र किया है, उन सब रसों का एक देवता और रंग भी बताया है। जितने रंग वेदव्यास ने अपनी कथा में भरे

हैं, वह सब चित्रों से और उभर कर सामने आ सकते है। मानवीय बुद्धि और तन पर रंगों का असर पड़ता है।

चित्रकार अभिलेश कहते हैं, "चित्र का यथार्थ वास्तविकता को कल्पना के सहारे, स्वप्न की तरह दर्शक के लिए प्रकट कर देता है, चित्रकार जितना कल्पना शील होगा उतना अजूबा स्वप्न प्रकट करेगा, चित्र एक वास्तविकता है। उसमें चित्रित सतह एक वास्तविकता है, उसकी अनुभूति अवास्तविक है। यह नाटकीयता रंगों में है, उनके प्रकटन में है, दो रंगों को पास लाने में है, डूबता चंद्रमा अत्यंत नाटकीय होता है। उसका डूबना लोग देखते भी नहीं। क्योंकि देखने का कोई अनुभव व्यक्ति के पास नहीं होता, अचंभित कर देने वाले दृश्य उसे शब्द मुक्त कर देते है, दृश्य की नाटकीयता अतुलनीय है, शब्द संसार तुलनात्मक है। वास्तविकता दरअसल नाटकीय है, अपने देखने को नहीं देखते, यह नाटकीयता कल्पना के स्वरुप में स्वप्न रूप में प्रकट चित्र पहेली बन दर्शक को लुभाती है। जो चाँद कैनवस पर है और जो चाँद आसमान में है, इनमें कल्पना और यथार्थ का भेद है। अगर उस चंद को जो आसमान में है, यथार्थ जैसी कोई अवस्था मान लें, जो कि अवधारणा ही है, तो उसका चित्र कल्पना है। इस कल्पना में चाँद का होना इतना महत्वपूर्ण नहीं है। चाँद का होना उसके इर्दगिर्द चित्रित संसार से सिद्ध हो रहा है। कैनवस पर सिर्फ चंद नहीं बना है, आसमान भी है, तारे भी हैं, अँधेरे में डूबे हुए वृक्ष भी है, वहां पहाड़ भी हैं, नदियाँ भी हैं, वह लोग भी हैं, जो उस चांदनी में हैं, ऐसे अनन्त संयोजन हो सकते है, जो उस चाँद के वहां होने पर उस चाँद की कल्पना को साकार कर रहे हो। आसमान के इस वास्तविक चाँद को जब आप निर्दिष्ट कर रहे होते है, तब आप सिर्फ उसका ज़िक्र कर रहे होते है। जबकि चित्र में उसके साथ का संसार वहां मौजूद है और चाँद के सन्दर्भ में है। अब यह सोचो कि जिस कथा को हर भारतीय किसी न किसी रूप में देखता, सुनता और खेलता आया है। जब वह उसको कल्पना के साथ चित्रों में उतारेगा तो कैसा दृश्य होगा ? जब उन चित्रों के साथ साथ एक रंगकर्मी की भी कल्पना मिश्रित हो जाएगी तो संभवतः एक अद्भुत प्रस्तुति मंच पर देखने को मिलेगी और यह जरुरी है। ऐसी कल्पनायों का मिश्रण होता रहे।" (*अखिलेश-एक संवाद* 79)

चित्र कला के साथ-साथ मूर्ति कला भी दुनिया की बहुत पुरातन कलाओं में से एक है। जब आदि मानव ने अपने रहने के लिए घर बनाने शुरू किए तब उसने चट्टानों और पत्थरों को तोड़ कर निर्माण कार्य शुरू किया। इसमें भी उसकी उत्सुकता और बढती गई जिसके साथ

उसने उन चीजों को मूर्ति रूप में ढालना शुरू कर दिया, जिनका अस्तित्व था या जिनका नहीं था, जो सिर्फ उसकी मानवीय कल्पना थी, उसको वह रूप देकर देखने चाहता था। वह कैसे दिखती है जिनके बारे में केवल उसने अभी तक सुना ही था। उसकी कल्पना को नाटकीय तत्व ने पर दिए और वास्तविकता के पास लाना चाहा। भारत में मूर्ति पूजा का प्रचलन है। श्री कृष्ण की मूर्तियाँ और महाभारत से संबंधित अन्य मुर्तिया समस्त भारत में मिलती है। समय बीत जाने पर धरती के धरातल में समाई हुई मूर्तियाँ मिलती हैं, तो उस काल का अंदाज़ा लगाते है।

डॉ सत्यनारायन दुबे का मानना है, "भारत की आध्यात्मिकता-धार्मिकता उसकी अपनी एक विशिष्ट विशेषता है। भारतीय मूर्तिकला एवं स्थापत्यक्ला में भारतीय कलाकारों का आध्यात्मिक आंदोलन अभिव्यक्त हुआ है। इस भाव को व्यक्त करने में भारतीय कलाकारों को पूर्ण सफलता मिली है।"(*भारतीय कला एवं संस्कृति* 25)

विश्व के सबसे बड़े कंबोडिया में स्थित "अंकोर वाट हिन्दू मंदिर" की दीवारों पर भी अन्य देवी देवताओं के साथ-साथ रामायण और महाभारत की कथा को भी बड़ी शालीनता से अंकित किया गया है। कंबोडिया स्थित यह मंदिर विश्व का सबसे बड़ा हिन्दू मंदिर है। महाभारत-रामायण और पुराण की कथाएँ दक्षिण पूर्व एशियाई देश एवं मंगोलिया में देखने को मिलती है। महाभारत के लोकप्रिय प्रसंगों को ललित कला और नृत्य कला में सम्मिलित करते हुए दक्षिण एशियाई देश के लोगों ने अपने मंदिरों में स्थान दिया है। हिडिम्बा का प्रसंग मंगोलिया के तुर्कों द्वारा रंगमंच में मंचित किया जाता है। जावा में महाभारत को अपनी प्रांतीय भाषा में न केवल अनुवादित किया है, वरन अपने लोक नृत्यों में भी सम्मिलित किया है। संपूर्ण दक्षिण एशिया में महाभारत काव्य बहुत लोकप्रिय है, इस महाकाव्य की कथावस्तु व प्रसंगों की झलक लोक कला एवं परम्पराओं में देखने को मिलती है। कंबोडिया और लाओस में कुरुक्षेत्र एवं महाभारत विशेष रूप से लोकप्रिय रहे है। जिनका महत्त्व लाओस से प्राप्त पांचवी शती के कुरुक्षेत्र महात्म्य नामक शिलालेख से प्रकट होता है। वर्ष 1112 से 1160 के बीच खुमेंर शासक सूर्यवर्मन दूसरे द्वारा अंकोरवाट का निर्माण प्रारंभ किया गया, जिसे उनके भतीजे व उत्तराधिकारी धरणीन्द्र वर्मन ने अंतिम रूप दिया। यह मंदिर भगवान विष्णु को समर्पित तथा चारों और से चार दिवारी व खाई से सुरक्षित है। यहाँ भगवान् विष्णु की प्रमुख लीलाएँ, समुद्र मंथन, नाग, यक्ष-गंधर्वो, के सुंदर उत्कीर्णनों के अतिरिक्त रामायण और महाभारत की कथाओं, प्रसंगों का भी सुंदर चित्रण किया गया है। अंकोरवाट के विशाल प्रदक्षिणापथ पर स्थित दीवारों

पर लगभग 8 फुट ऊँचे व 800 गज लम्बे फलक पर महाभारत के प्रसंग चित्रित है। यह मुर्तिया स्वयं में एक कहानी प्रस्तुत करती हैं। यही नहीं इस्कोन मंदिर फ्लोरेंस में भी हाल ही में महाभारत की सारी कथा को बड़ी बड़ी मूर्तियों और पुतलों के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह मूर्ति चित्रित मंदिर और खंडहर अपने आप में खुले आँगन और बंद आंगन को सभागार के रूप में बांटती हैं। इनको लेकर सदा ही रंगकर्मी अपने प्रयोग करते आए हैं। बड़ी बड़ी मूर्तियाँ लेकर मंच या बंद प्रांगण में नहीं ला सकते, किन्तु अभिनेताओं और दर्शक वर्ग को लेकर तो वहां तक जा ही सकते हैं। जैसे फ़िरोज़ शाह कोटला के खंडहरों में उसकी नाटकीयता को प्राप्त करने के लिए अँधा युग नाटक वहां खेला गया था। इसी तरह खुजराहो की मूर्तियाँ अपने अन्दर समाई हुई नाटकीयता और कशिश के साथ सबको अपने पास बुलाती है। महाभारत में वह शक्ति और वेग है कि यह मूर्ति कला से भी स्वयं को साबित कर सकती है। इसको नए प्रयोग से खेला भी जा सकता है।

मशालों से लेकर, तेल के दीयों तक, बल्बों से लेकर आधुनिक रंगीन नाचती हुई लाइटों रक रंगमंच ने अपना सफ़र तय किया है। इसी के साथ महाभारत और इसकी नाटकीयता ने भी। महाभारत की नाटकीयता किस तरह किसको क्या क्या मौका देती है, यह आज विभिन्न प्रस्तुतियां के साथ हमारे सामने आ रहा है, जैसे लेज़र शो, लाइट एड साउंड शो इसके उदाहरण है। आज वर्तमान में जो पूर्वी और पश्चिमी (भारतीय और पाकिस्तानी) पंजाब है इसमें खुल कर इस महाकाव्य की अनदेखी हो रही है, इस कथा से संबंधित जो धरोहर या अवशेष बचे थे वह धरशाही हो रहे, जिनकी रक्षा करने वाला कोई नहीं। फिर भी इस कथा को बचाने के लिए कुछ रंगकर्मी लगे हुए है। जिनमें से अमृतसर के रंगकर्मी केवल धालीवाल का नाम जिक्रयोग है। उन्होंने इस कथा को पढ़ा और समझा इसके अंदर की नाटकीयता को देखा वह कहते है, "मेरा मानना है कि यह लड़ाई पंजाब की भूमि पर लड़ी और रची गई फिर क्यों न इसे पंजाबी जुबान और विधा में खेला जाए, इसमें जितनी नाटकीयता है वह इसको और निकाल कर सामने लाएगी"। वर्ष 2015 में उन्होंने इस कथा पर आधारित धर्मवीर भारती द्वारा रचित नाटक "अँधा युग" का पंजाबी भाषा में रूपांतरण करवाया और खेला। इस नाटक की विशेष बात इसकी शैली और वस्त्र सज्जा थी, जिसमें महाभारत के साथ पंजाबीयत भी झलक कर आ रही थी। इस नाटक में मुख्य तौर पर यह कथा एक काव्य में कही गई है, क्योंकि पंजाब में कथा सुनाने और कहने के पारंपरिक ढंग है, वार गायन, कविशरी आदि, उन्होंने लोक गायन

की शैलीयों का प्रयोग किया जो मजेदार रूप में उभर कर आया। इसके इलावा पाकिस्तानी पंजाब, हिन्दुस्तानी पंजाब, हरियाणा और हिमाचल आदि के लोक पहरावे को ध्यान में रखते हुए इसकी वस्त्र सज्जा बनाई गई। आंतरिक और बाहरी युद्ध दोनों को कैसे लड़ना है और जीतना है, यह सन्देश देते इस नाटक में युद्ध के दृश्यों को दर्शाने के लिए पंजाबी मार्शल आर्ट गतका के अंशों को लिया गया। कुल मिला कर अच्छे तरीके से पंजाबियों को महाभारत से जोड़ने का कार्य इस नाटक ने किया। पंजाब से बाहर निकलकर इसकी राजधानी और केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ में रंगमंच पूरे यौवन पर है। यहाँ के रंगकर्मी चकाचौंध और दुनिया की तमाम नई विधायों से नाटक खेलते हैं। संवाद थिएटर ग्रुप के निर्देशक मुकेश शर्मा जो इस कथा की नायिकाओं को लेकर समय समय पर प्रस्तुतियाँ खेलते रहते है, अपने साक्षात्कार में कहते हैं - "कि जितनी नाटकीयता और संभावनाएं इसकी नायिकाओं में है और किसी में शायद ही होंगी। उनको खेलना और सही रूप दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करना सदैव उनके लिए एक चुनौती रही है। केवल कथा या कहानी को प्रस्तुत करना ही उनका उद्देश्य नहीं है, बल्कि कैसे नए युवा रंगकर्मिओं को महाभारत के साथ जोड़ा जाए इस बात पर विशेष ध्यान रहता है।" (शर्मा शक्षात्कार)

हर प्रान्त की अपनी एक भाषा होती है, लोक गाथाएँ होती है, जिनकी एक अलग ही विशेषता होती है। जो प्रत्येक व्यक्ति का गौरव हॉट हैं। रंगमंच आम जीवन का अंग है, चलते फिरते अनेकों पात्र और किरदार मिलते हैं। जिनको उचित समय आने पर मंच पर जीवित करते हैं। नाटकीयता के बीज हर वस्तु में पड़े हैं जिन्हें पहचानना होता है। अतुल सत्य कौशिक अपने साक्षात्कार में कहते हैं -"हर व्यक्ति के जीवन और किरदार में नाटकीयता भरी पड़ी होती है, हर स्थान और भाषा में नाटकीयता है यह आप पर निर्भर करता है कि आप उसमें से किस तरह नाटकीयता को निकाल कर लाते है, नाटकीयता निकालना ही काफी नहीं है, उससे ज्यादा आवश्यक उस नाटकीयता को मंच पर अपने ढंग से प्रस्तुत करना कि उसकी ख़ूबसूरती बिलकुल भी खराब न हो। महाभारत की कथाओं से प्रभावित होकर उन्होंने उन पर कार्य भी किया है। नाटक भी खेले हैं। जिनमें से चक्रव्यूह और द्रौपदी है। द्रौपदी के बारे में उन्होंने बात करते बताया किस तरह नाटकीयता हमारे आम जन जीवन में बसी हुई है, उसको ढूँढने की जरूरत नहीं बस समझने की जरूरत है। एक बार वह अपनी किसी नाट्य प्रस्तुति के पश्चात् वापिस आ रहे थे, तब वह मंडी डबवाली(जो आधा पंजाब और आधा हरियाणा में आता है और

राजस्थान बॉर्डर साथ सटा हुआ है) के रेलवे स्टेशन पर अपनी रंग मण्डली के साथ रेल गाडी का इंतजार कर रहे थे। वहां उन्होंने देखा की वहां के लोगों की बोली और कलचर सब मिश्रित है कुछ पंजाबी, कुछ हरियाणवी और कुछ कुछ राजस्थानी। इन सब के मिश्रण ने वहां के वातावरण को एक अलग ही विशेषता दे रखी है। यह बात उनके मन में खनकी, अगर इस वातावरण को लेकर नाटकीय प्रस्तुति की जाए तो खूब रंग लाएगी। अपनी रंग मण्डली के साथ उन्होंने अपना नाटक तैयार किया। महाभारत की विशेषता है कि वह आसानी से हर क्षेत्र में हर जन जाति में भाषा में स्वयं को ढाल लेता है, उनकी बात को अपने रंग से प्रस्तुत कर देता है। जो हालात द्वापर में थे, आज भी कुछ उसी तरह के हालात आज भी पंजाब,हरियाणा और राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में हैं" आज भी उत्तर भारत में एक जगह 5 भाइयों की एक पत्नी है। ऐसी घटनाओं को प्रस्तुत करने के लिए महाभारत से बड़ा माध्यम और कोई नहीं हो सकता। इस नाटक को जब तैयार किया गया, तो एक नाटकीयता इसकी वस्त्र सज्जा और भाषा में थी। सभी पात्र अपनी-अपनी भाषा बोलने में स्वतंत्र थे, कोई पंजाबी, कोई हरियाणवी तो कोई राजस्थानी बोल रहा है। यही सब सुन्दरता थी। वस्त्रों में ज्यादा अंतर नहीं था, उनके पहनने और सिलने का अंदाज़ भिन्न था। तीन राज्य इस कथा को इस तरह प्रस्तुत कर रहे थे। मानों यह उनकी कथा है। मंडी डबवाली सरहदी क्षेत्र होने के कारण ज्यादा तरक्की नहीं कर पाया, वहां के लोगों का सादापन, बोलने का अंदाज़ हूबहू नाटक में रखने की कोशिश की गई। यह कथा आम लोगों की है और आम लोगों के माध्यम से ही जीवित है। जिन्होंने अपने कर्मों संस्कारों से इसको सींचा है। इसलिए इसको प्रस्तुत करने के लिए लोक कला का इस्तेमाल किया गया। किसी को विशेष रूप सज्जा नहीं दी गई, मंच पर बिराजमान कलाकारों में से ही कोई द्रौपदी बन जाती है, तो कोई सूत्रधार, कोई श्री कृष्ण तो कोई संगीतज्ञ, इसमें गायन और संगीत का इस्तेमाल भी लोक धुनो में किया गया है। सभी लोक साज इस्तेमाल किए हैं जो हर वर्ग के दर्शक को बाँध कर रखते है। जिस मिट्टी से व्यक्ति जन्मा, पला और बड़ा होता है, वहां की खुशबु उसको संमोहित करके रखती है। बिना किसी बड़े ताम झाम के, आधुनिक तकनीकों से बड़ी सरलता से, इस कथा को दर्शकों के समक्ष यह नाटक प्रस्तुत किया गया। रंगमंचीय प्रस्तुतिकरण में जितनी नाटकीय संभावनाए यह समाए बैठा है, वह अनंत है किन्तु क्षेत्रीय भाषा, वस्त्र सज्जा, संगीत, और बिना किसी ताम झाम के भी इसको खेला गया। जबकि इसको खेलने के लिए महंगे वस्त्र, लाइटें, सेट और हथियारों की जरूरत है। यह आम लोगों की कथा

साधारण तरीके से भी असाधारण प्रभावशाली हो सकती है, यही तो महाभारत है और यही इसकी नाटकीयता।" (कौशिक शक्षात्कार)

बदलाव सृष्टि का बहुत अहम् नियम है। जो इसको नहीं मानता वह अतीत का हिस्सा बन जाता है। रंगमंच शुरू से ही बदलाव का एक अंग बनता चला आया है। धार्मिक क्रांति हो या राजनीतिक क्रांति सबमें पहले रंगमंच खड़ा होता है। स्वयं रंगमंच भी अपनी शैलियों में बदलाव जारी रखा है, जिस विधा ने बदलाव नहीं किया, वह सिर्फ किताबों के पन्नों में छप कर रह गई है। बदलाव है क्या ? बदलाव का अर्थ है परिवर्तन, पुराने आयामों को ध्यान में रखते नए आयाम खोजना और उनको हालातों को अनुकूल बनाना। रंगमंच में बदलाव का अर्थ अलग अलग तरीकों से, विधायों से आम जन के मनों की बात कहनी। यह संभावना कहाँ दिखती है उन बिंदुयों को ढूँढना। महाभारत इतने वर्ष बीत जाने पर भी मिटी नहीं बल्कि और मजबूत हो कर आगे आई है। इतनी कहानियां, किस्से, संघर्ष बहुत कुछ इसके गर्भ में समाया पड़ा है। यही कारण है यह रंगमंचीय प्रस्तुतियों की संभावनाओं का महासागर है। भारत ही नहीं अपितु पाश्चात्य भूमि पर खेले जाने का कारण यही है। बहुत से रंगकर्मी इसके आयामों को खोजने में लगे हुए हैं।

कठपुतली की विधा भारत में बहुत प्रसिद्ध है। सबने किसी न किसी रूप में कहीं न कहीं जरुर देखा और पसंद भी किया है। बाल मनों पर यह बहुत गहरा असर छोडती है। इसका मुख्य कारण इसकी बनावट और सज्जा होती है। जिससे यह कथा को अधिक स्पष्ट रूप में समक्ष रखती है। यह कठपुतलियां लकड़ी के रूप में, चमड़े के रूप में, कहीं लाख या मृत जानवरों की हड्डियों से बनाई जाती है। आज कल विभिन्न धातुओं से भी इसको बनाया जाने लगा है। जापान, थाईलैंड, इंडोनेशिया, भारत और मंगोलिया आदि देशों में यह कला प्रचाललित है। यहाँ इस कला के माध्यम से महाभारत की कथाओं को खेला जाता है। विशालकाय मानवों और दानवों से सुसज्जित महाभारत की संस्कृति कैसी होगी, जहाँ एक व्यक्ति हाथियों सा बल रखता है, कोई इच्छा मृत्यु का वरदान लेकर चलता है, कोई स्त्री मछली के पेट से जन्म ले रही है तो कोई यज्ञ वेदी से बाहर आ रही है। छोटी सी कन्या उस समय की सबसे शक्तिशाली सत्ता को चुनौती दे रही है, तो कोई कन्या सूर्य के तत्व से गर्भ धारण कर रही है, कोई स्त्री अपने गर्भ से 101 संतानों को जन्म दे रही है, तो कहीं कोई भगवान विष्णु का अवतार किसी बालिका के पेट में मृत शिशु को दोबारा प्राणदान दे रहा है, तो वहीं विशालकाय दैत्य कन्या दैवीय आचरण

का पालन करती है। निश्चय ही सिर्फ सुनने मात्र से यह पात्र एक अलग संसार में ले जाते हैं। बात इसकी सत्यता या असत्यता की नहीं है। रंगमंच से देखें तो यह वह नाटकीय तत्व है, जिनके कारण यह कथा आगे बढती है। दर्शक वर्ग सोचने और जानने के लिए उत्सुक रहता है। इन घटनयों में कितनी संभावनाएँ यह भरी पड़ी है। कठपुतलियों को उसी सोच के मुताबिक वह रूप दें जो इस कथा को सुनने के बाद मन में चित्रित होता है।

भारत की राजधानी दिल्ली की धरती पर दिग्गज रंगकर्मी बैठे हैं। विश्व के सबसे बेहतरीन रंगमंच प्रशिक्षण केन्द्रों में से राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय भी वहीं पर स्थापित है। यहाँ अनुरुपा रॉय, कठपुतलियों के माध्यम से रंगमंच खेलती है। वह भी कहाँ महाभारत के प्रभाव से बच सकीं, इसकी रौचकता ने इसे खेलने के लिए प्रेरित किया। उन्होने बहुत कलात्मकता से कथा के उन रूपों को उभारा जो रौचकता के स्रोत थे। बच्चे से लेकर वृद्ध, संस्कृत रंगमंच के दीवानों से लेकर पाश्चात्य रंगमंच के दीवाने, सभी वर्ग के दर्शक इस प्रस्तुति में खोए हुए आनंद का आभास करते हैं। इस कथा को कठपुतलियों के माध्यम से ही प्रस्तुत किया गया। इन कठपुतलियों की विशेषता है कि यह मानवीय कद की है, कुछ तो इससे भी बड़ी हैं। अनुरुपा रॉय एक साक्षात्कार में कहती हैं, "महाभारत को सुनते समय हमारे मन में उसके प्रति एक बहुत बड़ी सी छवि उत्पन होती है, तो इसलिए इसमें बड़ी बड़ी कठपुतलियां इस्तेमाल की गई हैं, इनको बनाने के लिए जापानी तकनीक बुनराकू का इस्तेमाल किया गया है, कुछ तो अदाकारों द्वारा चालित हैं। यह कठपुतलियों कला सिर्फ बच्चों का खेल नहीं है या कोई गुडिया है जिस से कोई बच्ची अपना मन बहलाती है। इनके माध्यम से बहुत विचार और केंद्र दर्शकों के समक्ष रख सकते हैं, जब न प्रयोग में आने वाली चीज़ों से बनी कठपुतलियां मंच पर जीवित हो उठती है, तो कला का वेग दर्शकों में मन में बह उठता है। उनकी नाट्य प्रस्तुति महाभारत में उन्होंने जिन कठपुतलियों का प्रयोग किया है, उनमें से कुछ ऐसी है जिनको तीन तीन कलाकार चालित करते हैं। इसकी विशेषता है यहाँ कठपुतलियां और मानवीय कलाकार दोनों मिल कर प्रस्तुति करते हैं। इस कथा में उन्होंने 30 पात्रों का चयन किया है। जिनका मंचन 13 कलाकार कठपुतलियों के साथ करते हैं, किरदार और स्थान को दिखाने के लिए वह मुखौटों का इस्तेमाल करते हैं। युद्ध के दृश्यों में उन्होंने घोड़ो के मुखौटों का इस्तेमाल किया है, जिनको चेहरे और हाथों पर धारण किया जाता है, इसकी प्रस्तुती को देखते हयवदन का एक छोटा सा झोंका भी मन में आता है"।

जब नाटक की शुरुयात होती है, तब मंच के कोने में पर्दे के आगे एक कलाकार हारमोनियम लेकर बैठा होता है, जो असतो मा सदगम्य के गायन से नाटक की शुरुयात करता है। इसके बाद नाटकीय प्रस्तुति बढ़ाने के लिए जिस विधा का प्रयोग किया गया है, वह इंडोनेशिया की कठपुतली विधा व्यायंग कुलित की झलक दिखलाता है, जिसमें दो कठपुतलिया आकर कथा के बारे में बताती हैं, यह कठपुतलिया नाटक में रोचकता प्रदान करती है, जहाँ इनको हाथ से मंचित किया गया है। कहीं इसकी प्रस्तुति में साईक्लोरामा पर आधुनिक डिजिटल तकनीक से इनको जीवंत कर युद्ध लड़ता दिखाया गया है, जो अद्भुत नज़ारा प्रस्तुत करती है। सभी वर्गों के दर्शक इसकी पकड़ में आ जाते हैं। यही नाटकीयता सबको बांधती है। बीच बीच में संस्कृत रंगमंच की तरह सूत्रधार भी मंच पर आता है और कथा को आगे बढाता है। अदाकार विभिन्न मुखौटे लगाए हुए मंच पर आते है। दर्शकों को कथा सुनाते है और खेल कर भी दिखाते हैं। कहीं भी दर्शकों को यह न लगे की पता नहीं वह क्या दिखा रहे हैं ? उनको एहसास दिलाते रहते हैं कि आप लोग नाटक देख रहे हैं। यह सब इस महाभारत नाटक की प्रस्तुति का ही हिस्सा है।

मुखौटों के साथ पात्रों के चेहरे, उनके किरदार के रंग और उनकी नाटकीयता को खूब दर्शाया गया है। ग्रीक थिएटर में जैसे कलाकार अपने भावों को दिखाने के लिए बड़े बड़े मुखौटों का इस्तेमाल करते थे, उसकी झलक इसमें दिखती है। अदाकार कहीं किसी जगह पूरे, कहीं सिर्फ आधे मुखौटे धारण किए हुए आते हैं। यह किरदार और नाटक की गति में रोचकता बनाए रखते है। जब भी वह किसी मुखौटे को धारण करके मंच पर आते हैं तो दर्शक भी सोचता है अब यह कौन है ? क्या किरदार होगा इसका ? महाभारत के बहुत से किरदार अपने मन की लड़ाई में कहीं गुम रहते है, कोई प्रतिज्ञा में बंधा हुआ है, तो कोई अपने अस्तित्व की लड़ाई में। इन सबकी मनोदशा और दिशा दिखाने के लिए शेडो थिएटर के माध्यम से प्रस्तुति की गई है। नाटकीयता की इस बारिश में दर्शक वर्ग को अपनी मानसिक हालत स्थिर करने का समय ही नहीं मिलता वह आनंद विभोर रहता है। यही तो महाभारत की नाटकीयता का जादू है। इच्छाधारी नाग की तरह कहीं भी कभी भी समय और हालात के अनुसार अपना रूप बदल सकती है। पर्दे पर बनते टूटते छाया चित्र एक अलग वातावरण बना देते है।

महाभारत का कैनवस साधारण से बड़ा है। उस अनंत फैले आसमान की तरह जिसको पंछी सिर्फ अपने परों की उड़ान से नहीं नाप सकता। कहीं काली घटाएं छाई हुई हैं,

कहीं कपास के बादल । रंगकर्मी महाभारत में कला ढूंढते है, जब कला में महाभारत को ढूंढेंगे तो निश्चय ही बंद कपाट खुलने शुरू हो जाएँगे, नाटकीयता के अर्थो और आयाम को समझना शूरु कर देंगे। कुछ ऐसा ही प्रयोग अनुरुपा रॉय ने अपनी नाटकीय प्रस्तुति को तैयार करने में किया है। नाटक के बीच बीच आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करते हुए युद्ध के कुछ दृश्यों को प्रोजेक्टर की सहायता से दिखाया गया है और दर्शकों को मथुरा से पांचाल और पांचाल से गांधार भी ले जाया गया है। महाभारत युद्ध की कथा है और भारत देश में प्राचीन काल से ही विदेशी हमलावरों रुख रखा है। इसी वजह से देश में युद्ध कला का भी बहुत विकास हुआ है जिसको मार्शल आर्ट भी कह देते हैं। भारतीय समाज में पंजाब में गतका, केरल में कलियारपट्टु जैसी मार्शल आर्ट पाई जाती है, कुंगफू और कराटे इससे प्रभावित हैं। उन्होंने अपने नाटक में बहुत जगह मानसिक द्वंद्व और बाहरी युद्ध को दर्शाया है। कला का मकसद सिर्फ मनोरंजन करना ही नहीं होता बल्कि अपनी सभ्यता का प्रचार और प्रसार भी करना होता है। जिससे हर कोई जागरूक और परिचित हो। महाभारत में यह बात बार बार आगे आकर अपना परिचय देती है। युद्ध कला का इस्तेमाल मंच पर नाटकीय प्रस्तुति के लिए एक अच्छी कार्य शैली है। नाचना और गाना भारतीय समाज एक अभिनय अंग है। किसी भी नाटकीय प्रस्तुति में यह ख्याल रखा जाना अति आवश्यक है, कि किया जाने वाला नृत्य कथा से मेंल खा रहा है या नहीं, वह उसके भावों को प्रकट कर रहा है या नहीं। ऐसा तो नहीं कलाकार बस बेमतलब से अपने हाथ पाँव हवा में पसार रहे हैं। जब किसी चीज का चुनाव करते हैं, तो यह ख्याल जरुर रखते हैं कि वह प्रस्तुति को ऊंचाई पर जा कर बिराजमान करे। भारत की यह विविधता है, यहाँ के नृत्य जहाँ तेज तरार जोश और जनून रखते हैं, तो हवा सी रवानगी भी। बंगाल, उड़ीसा और बिहार में किया जाने वाला छऊ नृत्य उर्जा भरा स्रोत है। यह रहस्यमय उद्भव वाला है। इसमें मार्शल आर्ट, एक्रोबेटिक के अंश देखने को मिलते है। इसमें रामायण और महाभारत की कहानियों को खेला जाता है। छऊ नृतक अपनी आन्तरिक भावनायों व विषय वस्तु को, शारीर के आरोह-अवरोह, मोड़-तोड़, संचालन व गत्यात्मक संकेतों द्वारा व्यक्त करता है। छद्मवेश इसकी दूसरी सामान्य व्याख्या है। इस नृत्य शैली में मुखौटों का व्यापक प्रयोग किया जाता है। छऊ की युद्ध संबंधी चेष्टायों ने इसके शब्द की दूसरी ही व्याख्या कर डाली गुपचुप तरीके से हमला करना या शिकार करना। भारतीय नृत्यों में नाटकीयता भरी पड़ी है, उनको रंगमंच में प्रयोग करना नाटकीय संभावनाओं को सींचने का कार्य करेगा। अनुरुपा

रॉय ने छऊ को अपने नाटक में इसकी रेखाओं को अधिक गहरा अंकुरित करने का प्रयास किया है।

रंगमंच पर जीवन यापन करने के लिए नज़रिया बहुत जरूरी है। आप किसी वस्तु को किस तरह, किस दृष्टिकोण से देख रहे हो। उसमें क्या संभावनाएं है ? संभावनाओं का क्षेत्र और होंद किसी के भी विकास और होंद के लिए अनिवार्य है। इसी लिए संभनाए बनाए रखना आवश्यक है। स्वयं के और दूसरों के विकास के लिए। तभी तो महाभारत समय की अनेकों सुनामियों के बाद भी जीवित है। डॉ प्रेम लता गांधी कहती हैं, "कला जीवन में किसी वस्तु को सुंदर, आकर्षक या चमत्कारपूर्ण रूप में प्रस्तुत करने का ढंग है। यहाँ पर वस्तु के अंतर्गत कला के समस्त विषयों के वर्ग सम्मिलित किए जाते हैं। इसके अंतर्गत कोई पदार्थ, मानव निर्मित वस्तुएँ, कोई घटना, विचार, भाव आदि सत्य का कोई रूप हो सकता है। इसे और वास्तविक रूप में कहना चाहें, तो कहेंगे की काव्य सत्य को सुंदर आकर्षक और चमत्कारपूर्ण रूप में प्रस्तुत करने की कला है। यह सत्य, वास्तविक सतत अथवा सम्भाव्य या काल्पनिक सतत कोई भी हो सकता है। यदि यह सिद्धान्त स्वीकार करें कि जो भी कल्पना में देख सकते है, वह सब वास्तविक सत्ता रखता है तो फिर उसे काल्पनिक सम्भाव्य कहने की भी आवश्यकता नहीं है।"

प्रो (डॉ) सोहन राज तातेड़ कहते हैं, "सत्यं-शिवम-सुंदरम कला का आदर्श है। इस दृष्टि से कल शिवत्व (कल्याण) की उपलब्धि के लिए ससत्य की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति है या जनकल्याण के लिए सत्य की सुंदर एवं सर्वोतम झांकी है। किसी भी कला कृति में सत्यम-शिवम-सुंदरम कि अभिव्यक्ति होना ही कला कहलाता है।" (*कला शिक्षा* 2)

रंगमंच का अपना एक अलग संसार है और इस के अपने नियम है। महाभारत नाटकीयता का एक ऐसा कुंभ है, जहाँ किसी और रचनाओं से ज्यादा और अपार संभावनाए हैं। जो भी इसके पास आया वह इसका हो कर रह गया, वह किसी भी जाति, कौम, मजहब या क्षेत्र का हो। तभी तो अभी तक विभिन्न देशों और राज्यों के रंगमंचों की अलग अलग विधायों में महाभारत की कथाओं और प्रसंगों को खेला जाता है, आज भी खेला जा रहा है। जिसने भी इसको अपनाया उसको ही महाभारत ने एक अलग विशेष स्थान दिया है। यह उनके जीवन का अभिन्न अंग बन गया है।

दुनिया में बहुत से रंगकर्मियों, संगीतज्ञों और नृतकों ने मंच पर महाभारत की प्रस्तुति की है। इसमें से अलग अलग संभावनाओं को खोज कर बाहर निकाला है। वही भारत देश की धरा पर रंगकर्मी डॉ सय्यद सलाउद्दीन पाशा एबिलिटी संस्था पिछले 30 सालों से महाभारत पर कार्य कर रहे हैं। उन्होंने पूरी महाभारत को दिव्यंगों के माध्यम से प्रस्तुत किया है, अपने साक्षात्कार में कहते हैं, "मैं विश्व का पहला रंगकर्मी हूँ, जिसने महाभारत की कथा को दिव्यंगों की सहायता से व्हील चेयर पर किया है। महाभारत सिर्फ एक कथा नहीं है, वह भारत की संस्कृति है, भारत की जान है जो इसकी शान को आगे बढ़ाने के लिए बहुत जरुरी है। यह ऐसा माध्यम है, जो देश के तनाव को कम करके उसको सही दिशा निर्देश दे सकती है। धार्मिक उन्माद जो समय समय पर सर उठाते रहते है, उनको इसके माध्यम से कम किया जा सकता है। एक मुस्लिम होते हुए भी मुझे महाभारत से बहुत प्यार है, महाभारत ने इतना ज्ञान दिया है, कि मैं आज बैठ कर संस्कृत में गीता का ज्ञान सबको बता सकता हूँ । इतना महाभारत अब उनके जीवन का अंग बन चुकी है।"(पाशा साक्षात्कार)

जिन वस्तुयों को निर्जीव और महत्वहीन मानते हैं, उन सबको महाभारत ने अलग ही अर्थ दे दिए। उनमें छुपी हुई सुन्दरता को सबके समक्ष लाकर रख दिया। डॉ सय्यद सलाउद्दीन पाशा ने व्हील चेयर पर महाभारत को उन दिव्यंगों के माध्यम से उतारा जिनको अक्सर समाज नकार देता है। वह कहते हैं "जब मैंने महाभारत को नाटकीयता भरी नज़र से उनको देखा तो एक अलग संसार नज़र आया, वह व्हील चेयर मुझे केवल व्हील चेयर नहीं बल्कि श्री कृष्ण का रथ नज़र आया, जिस पर धर्म युद्ध को लड़ा गया। उनके बाजुयों के नीचे सहारे के लिए लगी बैसाखियां केवल एक सहारे की वस्तु नहीं है। यह तो वह अस्त्र हैं जिनको धारण करके वह योद्धा बन जाते हैं, जिनको किसी सेट प्रॉप्स की क्या जरुरत है। क्यों न इनको इसी माध्यम से मंच पर लाया जाए। महाभारत में बहुत सी रंगमंचीय नाटकीय पेशकारी की संभावनाएँ छिपी हुई है बस अपने देखने का नजरिया बदलना है। महाभारत को किसी और के चश्मे से नहीं बल्कि अपने चश्मे से देखना चाहिए, और उस चश्मे से देखने का यतन करना चाहिए जिस से वेदव्यास ने इसको देखा और पन्नो पर उतारा।"

किसी भी कथा में जितने कठिन बल होंगे,कठिनाईयां होगी और जिस सरलता से उनको अंतिम फल तक ले जाया जाएगा, उसकी नाटकीयता उतनी ही ज्यादा उभर कर सामने आयगी। इस कथा की सुन्दरता है मुख्य किरदारों से लेकर गौण पात्रों तक किसी को भी उठा

कर देख लो सबकी एक अलग कथा है, संघर्ष है। किरदार भले छोटे है, पर उन लोगों के कैनवस बहुत बड़े हैं। महाभारत की नायिकाएँ आज भी अपने स्थान पर शांत और स्थिर खड़ी वर्तमान की नारियों को, अपनी बात को खुल के कहने को और एक क्रांति लाने को कह रही हैं। सबकी शक्लें और स्थान बदल गए हैं, द्वापर से कलयुग आ गया है, पर हालत आज भी वैसे ही है। समय और हालात जैसे भी हों इनकी नाटकीयता अपने मंचन, कथा, नृत्य, संवाद, अभिनय, मंच सज्जा, आदि नाटकीय तत्वों से सबका मार्ग दर्शन करते आ रहे हैं।

आधुनिक युग में बहुत सी विधायों के साथ महाभारत का मंचन संपूर्ण में हो रहा है। कथा अपने चुम्बकीय ग्रुत्व के कारण सबको आकर्षित करती है। भारत के रंगकर्मी संतोष नायर का कहना है - "पहले कत्थक के नृतक थे। अब वह अन्य विधायों को भी इसके साथ जोड़ कर महाभारत पर आधारित प्रस्तुति द गेम ऑफ़ डाइस जो उन्होंने स्वयं तैयार की है, इसकी प्रस्तुति भारत की सांसद परिसर में कर चुके है। यही नहीं अपितु विश्व के अनेक देशों में कर चुके हैं।

इस नाटक को तैयार करने में बहुत से उन तत्वों का ख्याल रखा गया है, जिस से यह एक कसी हुई प्रस्तुति लगती है। जो दर्शक वर्ग को बाँध कर रखने और उनको यही मानने पर मजबूर करती है हाँ बस यही महाभारत है जो असल में हुई थी, यही वह भीम है, यही वह द्रौपदी और शकुनि है, जिसकी चर्चा वेदव्यास ने अपनी कथा में की थी। हर निर्देशक अपनी रचना में वह रंग ढूंढता है, जिनका ज़िक्र भारतीय सौदर्न्य शास्त्रियों ने किया है। जितनी ज्यादा संभावना होगी उतना ही प्रस्तुति उभर कर आएगी। मैं मुख्य तौर पर कत्थक नृतक हूँ। जिसकी शिक्षा मैंने बचपन से ही प्राप्त की थी। कत्थक में खेली जाने वाली रौद्र भीम की कथा से बहुत प्रभावित हूँ । यही प्रभाव नाटक में साफ़ तौर पर दिखता भी है। यह नाटक नृत्य पर आधारित है। इसमें कत्थक, मयुरभंज, तत्कालीन नृत्य का मिश्रण है। जो सारी कथा को आगे बढ़ाने में और उसको उभारने में बहुत सहायता करता है। बीच बीच में कुछ नृत्य भाग ऐसा भी दिखता है जिसको देख कर साफ़ पता लगता है, यह पश्चिमी नहीं है, पर उससे प्रेरित जरुर है। कलाकारों का बॉडी मोमेंट, उनके भाव और चेहरे के उप अंग भी नाटक की सुन्दरता को चार चाँद लगाते हैं। कुल मिलाकर कई प्रकार की नृत्य प्रस्तुतियों का प्रदर्शन इसमें देखने को मिलता है। जैसा इसके नाम से काफी कुछ स्पष्ट हो जाता है।

इसमें खेलने के लिए काफी कुछ है, जैसे जब पांडव चौसर खेलने आते हैं वह शांत होते हैं, इसके दूसरी तरफ कौरव पक्ष अत्यंत चतुर और इस भाव से बैठा है कि किसी भी प्रकार छल या बल से पांडवों को हराना है। पांडवों का हार जाना और द्रौपदी को केशों से पकड़ कर लाना, द्रौपदी चीर हरण, भीम का प्रतिज्ञा लेना और फिर अंत में कुरुक्षेत्र भूमि पर युद्ध लड़ना। तक इस कथा में सब प्रकार के रस है जिनकी चर्चा भरत मुनि ने की है। इनको दिखाने के लिए लाइट्स और पुरलिया छाऊ में इस्तेमाल होने वाले मुखौटों का प्रयोग किया है। मानो छाऊ किसी आधुनिक विधा में हो रहा है। इसमें भीम के तीन रूप दिखाए गए है। पहला जब वह शांत है, अपने भाइयों के साथ चौसर के खेल में बैठा है, दूसरा कत्थक वाला रौद्र भीम वाला है जब द्रौपदी का चीर हरण किया जाता है तो उसके अपमान का बदला लेने की प्रतिज्ञा लेता है। तीसरा रूप थैय्यम के माध्यम से भीम का रूप दिखाया गया है, इसमें बड़े बड़े मुखौटे इस्तेमाल किए गए है, बड़े ही वीर और रौद्र रस से भरा रूप सामने आता है, जैसे वह माँ काली या शिव के रूप में चला जाता है। एक ही पात्र के तीन रंगों को अलग अलग विधा से दिखाया गया है। कलात्मकता से इसका चित्रण किया गया है।" (नायर साक्षात्कार)

संगीत तो वह तत्व है, जो नाटक और नृत्य को श्वास की भांति उर्जा प्रदान करता है। बेशक इसमें प्राचीन भारतीय नृत्य कलाओं का प्रदर्शन किया गया। ऐसा नहीं कि संगीत भी उसी शैली का था। इसका सारा संगीत आधुनिक बैंड शैली द्वारा बनाया गया था। ये आधुनिक जैज़-रॉक और मैटल आदि पसंद करने वाली युवा पीड़ी को ही नहीं, सभी को एक अलग दुनिया में ले जाता है। जब भी संगीत या वॉइसओवर चलता है, तब तन में एक उर्जा सी प्रभावित होने लगती है। वह सारे माहौल को इस तरह बना देती है, जैसे सच में महाभारत चल रही है । इसके संगीत में हर साज़, उसका स्वर और स्वर का माध्यम, लय सब पर बहुत बारीकी से काम किया गया है, जो दर्शक मन में गूंजता है।

जैसे विशाल फैले हिमालय पर सभी को अपनी पसंद का सब कुछ मिलता है, चिकित्सक को जडीबूटी, पर्वतारोही को मुकाम, दवा, फल, फूल, खनिज और साधु जनो को आत्मिक शांति के लिए साधना स्थल। उसी प्रकार नृतक, संगीतज्ञ या रंगकर्मी जिस भी विधा से इसको खेलना चाहता है, उसको उसी प्रकार की संभावनाएँ मिल जाती है। क्लासिकल डांस हो या मार्शल आर्ट, लाईट एंड साउंड हो या बॉडी मोमेंट्स, स्टेज क्राफ्ट हो या जिम्नास्टिक हर विधा में यह स्वयं को ढाल लेता है। सोशल साइट्स को भी आप खोल के देखें तो स्कूल कॉलेजों

के सलाना उत्सव हो या विश्वविद्यालयों के युवा उत्सव, इन सब में भी महाभारत को या इस से संबंधित कथा कहानियों को बड़े चाव से खेला जा रहा है। यह छोटे छोटे बच्चों की भी पहली पसंद बना हुआ है। इतने गंभीर विषय पर आधारित होने के बावजूद भी यह रंग और संभावनाएं लिए बैठा है। आज तो लोग इस कथा के माध्यम से महाभारत को कॉमेंडी बना कर भी अपनी बात कह जाते हैं।

असंख्य किरदार, उतने ही उतर चड़ाव और भाव, जिनको गिन पाना असंभव सी बात है। एक विशाल फैले समंदर की भाँति यह महाभारत है, असंख्य जीव जंतु और निर्जीव चीजें जिसके सीने में पड़ी है। यह रंगमंच की वह कामधेनु है, जिसने किसी को कभी निराश नहीं होने दिया। आज भारत ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व इसकी वर्षा में स्नान कर रहा है। अपने मुताबिक अपनी सहूलियत से इसके अर्थों को बाहर लेकर आ रहा है। बहुत सी अपार नाटकीय संभानायों से युक्त यह कथा और नाटकीय संभावनाओं को रंगमंच पर निरंतर जन्म दे रही है ।

मीडिया प्रस्तुतिकरण में नाटकीय संभावनाएं

लंबा सफ़र तय करने के बाद महाभारत कभी थका नहीं ,लोक कथायों से निकल कर मंदिरों के प्रांगण में और फिर गाँव की चौपाल से लेकर ऑडिटोरियम तक सफ़र तय करने के बाद गूंगी चलती बोलती तस्वीरों से लेकर ब्लैक एंड वाइट फिल्मो से शुरू हो के टेलीविज़न तक और उसके बाद कलर फिल्मों के युग से कदम मिला कर आज 4डी फिल्मो और एनिमेंशन की तकनीकों से अपने आप को और निखार रहा है। यह रंगमंच के साथ साथ मीडिया की भी पहली पसंद है, हर कोई इस पर कार्य करना चाहता है। जो नाटकीय तत्व वेदव्यास ने अपनी आँखों से देख कर या किसी के देखे हुए दृश्यों को अपने कानों से सुन कर इस कथा के शालोकों में भरे होंगे। उनको आज के आधुनिक तकनिकी युग में परदे पर प्रस्तुत करना बहुत सरल हो गया है। अब तो ऐसी तकनीको का इस्तेमाल होने लगा है, मानों यह दृश्य समक्ष चल रहा है। संगीत और संवाद भी ठीक वैसे ही चलता है जैसे इसको महसूस किया जा सके। इसी तकनीक से सोचिए कि देवव्रत भीष्म बनने की प्रतिज्ञा ले रहे हैं, सत्यवती नौका विहार कर रही है, द्रौपदी का चीरहरण, गाय के शावकों और गोपियों को मंत्रमुग्ध करती श्री कृष्ण की बंसी, कुरुक्षेत्र के मैंदान में चलते भीषण अस्त्र और हाथी अश्वों की आवाज़े,18 दिन बाद शांत हो चुकी धर्म क्षेत्र की भूमि पर जवान विधवाओं के प्रलाप, बूढ़े बजुर्गों की सिसकियाँ और बालकों की दिशा और दशा को समझने के लिए दौड़ती हुई पथराई हुई आँखें, जब यह सब मिल कर एक नया रूप स्क्रीन पर लेकर आती हैं, तो दर्शक वर्ग को स्तब्ध कर देती है। बदलते दौर के साथ इसके भीतर की संभावनाएं और उभर कर सामने आ रही हैं।

संभावनाएं एक ऐसा तत्व है जिसके बिना किसी की भी गति नहीं, जहाँ संभावनाएं नहीं वहां ठहराव होता है और ठहराव अंतिम पडाव माना जाता है। समय समय पर रंगकर्मियों ने इसमें पड़ी हुई संभावनाएं ढूँढी जिसको वेदव्यास ने इसमें बोया है। जिस कारण कला और कलाकार जीते आ रहे हैं। जिस प्रकार सावन ऋतू आने पर वर्षा की बूंदे धरती पर पड़ती है, तब बहुत सारे जीव जंतु और वनस्पति जो धरती की कोख में समाई हुई होती है, वह स्वयं बाहर आ जाती है। इसी तरह यह कथा है, जब भी इस पर कार्य करते है, तो यह स्वयं के आयाम और रूप लेकर सामने आ जाती है। पुरे विश्व में विभिन्न रूपों में खेले जानी वाली महाभारत खुद इस बात की साक्षी है। आज महाभारत केवल भारत देश अथवा सनातन धर्म का ग्रन्थ नहीं रह गया है, यह सम्पूर्ण मानव जाति का ग्रंथ बन गया है। मीडिया युग में

महाभारत को लेकर के बहुत से नाटक, एनिमेंशन और फ़िल्में इत्यादि बन चुकी है। हर निर्देशक और उसकी टीम ने अपना पक्ष रखना चाहा है।

फिल्मी जगत भी महाभारत के प्रभाव से वंचित नहीं रह पाया। दादा साहिब फाल्के द्वारा बनाई गई पहली फिल्म हरीश चंद्र भी महाभारत से संबन्धित एक कहानी पर थी । प्रकाश झा द्वारा बनाई गई फिल्म राजनीति की पटकथा भी महाभारत से प्रभावित थी । तेलगु फिल्म जगत में भी इस कथा से संबन्धित फिल्मों का बोल बाला रहा है, जैसे माया बाजार, कृशनवतारम, पांडववनवसम, कृष्णार्जुन यूद्ध्म। इसमें प्रसिद्ध निर्देशकों के वी रेड्डी , बी एन रेड्डी, कमेंश्वर राओ आदि के नाम प्रमुख हैं। एक्टर एन टी रामराओ, वनदेसवी रंगराओ ने भी अपने अभिनय से योगदान दिया है । इनका महाभारत की फिल्मों को लेके काफी योगदान रहा । राज कुमार, बी आर पंतड्डु कन्नड फिल्म जगत में प्रमुख रहे हैं जिन्होने महाभारत को लेकर कार्य किया है।

महाभारत भारत देश के रक्त, संस्कृति, कर्म संस्कारों और सभ्यता में रचा हुआ है। इसको इन सबमें से निकाल कर किसी भी मंच पर लाना आसान नहीं है। रंगमंच हो या मीडिया, रंगकर्मी हो या मीडिया कर्मी जिसने भी इसको खेलना चाहा बहुत सोच समझ के खेला। आज के अत्याधुनिक युग में हर रोज़ नए आयाम और प्रयोग निकल कर सामने आ रहे हैं। नई विधाओं के प्रयोग किए जा रहे हैं। हर वर्ग को देख कर उनको समक्ष रख कर विभिन्न प्रकार के चैनेल और प्रोग्राम प्रसारित किए जा रहे हैं। दूरदर्शन के आँगन से निकल कर आज टीवी बहुत आगे बढ़ गया है। तीन से पांच घटे तक चलने वाली फिल्मे अब दो घंटे से कम समय में सिमटी नज़र आने लगी है। अब तो शोर्ट फिल्मे और वेब सीरिज़ का युग आ गया है। जब सब इसकी नाटकीयता में रंगे हुए हैं तब रेडियो एफ एम कैसे पीछे रह सकता था। महाभारत का क्रेज़ ही कह सकते हैं, MY एफ़एम पर रेडियो नाटक के रूप में महाभारत की प्रस्तुति आती है। इसमें बॉलीवुड की प्रमुख शख्शियतों ने अपनी आवाज़ दी है।

जिस प्रकार रंगमंच में नाटकीयता कहा जाता है, उसी तरह मीडिया और टेलेविजन में सृजनात्मक लेखन में नई और विशिष्ट विधा जिसको “फीचर ”के नाम से जाना जाता है, कहीं न कहीं नाटकीयता से ही संबंध रखती है। दरअसल फीचर में कल्पनाशीलता और सृजनात्मक कौशल्य को लेकर रोचकता और आकर्षित करने वाली शैली से किसी भी वस्तु, स्थान, व्यक्ति अथवा घटना से संबन्धित आलेख प्रस्तुत किया जाता है। किसी भी फीचर की सफलता उसकी

रचना प्रक्रिया पर निर्भर होती है कि उसका शीर्षक, आरंभ, मध्य और अंत यथोचित होने से फीचर सर्वौत्कृष्ट बन पाता है। आरंभ में ही विषय का परिचय दिया जाता है, मध्य तक आते आते उस विषय को अधिक पुष्ट एवं प्रमाणिक बनाने वाले तथ्यों और विचारों को रखा जाता है, अंत में लेखक किसी निर्णय पर पहुँच कर अपनी बात अत्यंत संक्षेप में कह देता है।

बदलते दौर और समय के साथ साथ फिल्म मेंकिंग का दायरा और भी विशाल हो रहा है नई टेक्निक्स आ रही है। जिस प्रकार अपने समय को ध्यान में रखते हुए पीटर ब्रूक ने अपनी कृति महाभारत का फिल्मांकन किया, उसके आगे एक कदम भरते हुए बी आर चोपड़ा ने उसी कथा को जान देकर बड़े कैमरों से छोटे परदे पर दर्शकों के सामने परोसा, जिसकी सफलता की चर्चा की जरूरत नहीं है। 2010 के दशक में पेन इंडिया द्वारा एनिमेंटेड मूवी आई जिसको दर्शकों के साथ साथ बच्चों ने भी सराहा। इसी के साथ एक और मूवी आई थी "अर्जुन द वारिओर" जो अपने साउंड और एनिमेंशन को लेकर चर्चा में रही। इसके इलावा बहुत सी फ़िल्में और नाटक आए और गए जिनको दर्शकों ने सराहा ही नहीं बल्कि साफ़ साफ़ नकारा है। मशहूर टीवी सीरियल निर्मात्री एकता कपूर ने "महाभारत " को अपने अंदाज़ से दर्शकों के सामने रखा, हाल यह रहा कि दर्शकों ने नकार दिया और इस धारावाहिक को बीच में ही बंद करना पड़ा। जैसे कि पहले ही चर्चा करके आए है कि "महाभारत" जितनी सरल लगती है उतनी कठिन भी है, क्यूंकि यह भारतीय सभ्यता की जड़ों में समाई हुई कथा है।

सिद्धार्थ आनंद कुमार की निर्देशना में स्टार प्लस ने भी "महाभारत" का प्रसारण किया था। जिसको दर्शकों ने बहुत पसंद किया इसकी स्क्रिप्टिंग, ग्राफिक्स मंझी हुई थी। इस धारावाहिक के स्क्रिप्ट राइटर मिहिर भुट्टा अपने एक इन्टरव्यू में कहते हैं," इसके निर्माण के दौरान उन्होंने इसके और भी संस्करणों को पढ़ा और इस बात का ख्याल रखा है। वह दर्शकों की उम्मीद पर खरे उतरें और इसके युग बोध का भी पूरा ख्याल रखा है। आज के जमाने में मनोरंजन के विविध विकल्प मौजूद हैं, फिर भी सबको भाने वाले इस महाकाव्य को बार बार परदे पर दिखाया जाना चाहिए। हर बीस साल में इस पर धारावाहिक बनना चाहिए जैसा अर्थगांभिर्य इसमें है संसार की किसी कृति में नहीं है।"(नव भारत टाइम विचार, 28 जून 2014) मंदिरों के प्रांगण से रास लीला तक और भगवद कथा से नाटकों तक और बड़े पर्दे पर पहुंची महाभारत सर उठाए खड़ी है।

समय के साथ तकनीक और कला में भी बहुत बदलाव हुआ है। नए इफैक्ट, टेक्निक इत्यादि का समावेश इस कथा को उभार कर और रौचक रूप के साथ सामने ला रहा है। भारत एक धार्मिक देश है यहाँ अनेकों धर्म पनप रहे हैं। धार्मिक कथायो का प्रभाव यहाँ पग पग पर देखने को मिलता है। महाभारत तो वैसे ही भारत की सबसे लोकप्रिय कथा है। इस कथा को कितनी बार देखलें फिर भी मन में कसक और इच्छा रह सी जाती है। इस कसक और इच्छा ने छोटे और बड़े पर्दे के निर्मातायों को बार बार इस से जुड़ी चीजों पर धारावाहिक अथवा फिल्में बनाने के लिए प्रेरित किया है। आज भी छोटे पर्दे को देखें तो बहुत से धारावाहिक हिन्दू पुरानों अथवा धर्म ग्रन्थों में से लिए गए हैं, जैसे की सूर्यपुत्र कर्ण, माँ काली, राधा कृष्ण, जय शनिदेव, जय गंगा मैया, सती अनुसूया, देवों के देव महादेव, सिया के राम, कृष्ण लीला, जैसे अनेकों धारावाहिक और फिल्मे दर्शकों के पास आई हैं। महाभारत अलग अलग रूपों में बहुत बार दिखाई गई है और दिखाई जा रही है। एकता कपूर अपने एक शक्षात्कार मे कहती है- "व्यक्ति कितना भी आधुनिक क्यों न हो जाए। वह उस आधुनिकता को भी धर्म के अनुसार ही जीता है, क्योंकि संस्कार हमारे जीवन की जड़ें हैं और आपसी लड़ाई झगड़े हमारी दिनचर्या का हिस्सा है। यह सारी चीज़ें साथ साथ चलती है। यही वजह है कि टीवी के पर्दे पर अचानक बहुत रंग भर गई जिंदगी की कहानियों के बीच धर्म ने भी अपनी धमक फिर से बना ली है।"

जाने माने संवाद लेखक "जावेद अख्तर "कहते है, "सिनेमा के लिए बुनियादी प्लॉटस की बात करें तो इनकी संख्या दस से अधिक नहीं होगी। इनमें से ज़्यादातर रोमन, ग्रीक, और हिन्दू मिथकों से प्रेरित हैं। जो प्लॉट मिलते हैं वह है खोना, फिर मिल जाना, बदला लेना। यह सब मनुष्य के जज़्बातों से प्रेरित हैं। प्रकाश झा ने एक फिल्म बनाई थी "राजनीति", काफी हद तक यह फिल्म भी महाभारत से प्रेरित थी। महाभारत का उल्लेख खासतौर पर करना जरूरी है। धारावाहिक और फिल्म के सभी मसाले यहाँ हिंसा, प्रेम, षड्यंत्र, धोखा, युद्ध, सब कुछ इस कथा में संतुलित रूप से मिलता है। कदम कदम पर जो नाटकीय मोड या कह लो ट्विस्ट महाभारत के कथानक में है, वह दुर्लभ हैं।"

महाभारत की नाटकीयता का ही कमाल है कि आज दो बड़े फ़िल्मकार बड़े पर्दे पर भव्यतम महाभारत की प्रस्तुति की योजना बना रहे हैं । नवभारत टाइम मे 2 मई 2017 को महाभारत को लेकर पत्रकार विनोद अनुपम ने एक लेख भी लिखा है। जिसके अंश इसमें दिए

जा रहे है -पहले एस एस राजा मौली ने बाहुबली 2 की रिलीज़ के बाद 400करोड़ के बजट वाली महाभारत फिल्म बनाने का ऐलान किया है। दूसरे संयुक्त अरब अमीरात में रहने वाले भारतीय अरबपति बी-आर शेट्टी ने भारत की सबसे बड़े बजट वाली फिल्म" द-महाभारत "के निर्माण के लिए 1000 करोड़ रुपए का ऐलान किया है। कहा जा रहा है, यह फिल्म दो हिस्सों में बनेगी। पहले हिस्से के रिलीज़ होने के 9दिन बाद दूसरा हिस्सा रिलीज़ किया जाएगा। "सिया के राम" और "देवो के देव-महादेव" जैसे टेलेविजन के धारावाहिकों के लिए परिकल्पना करने वाले अनिरुद्ध पाठक कहते हैं" फिल्मों को बजट से नहीं बल्कि उनकी कहानियों से परखा जाना चाहिए। महाभारत इस देश की धरोहर है और प्रस्तुति के लिहाज से सबसे कॉम्प्लेक्स स्टोरी भी है। इन पर बनने वाली फिल्मे सिर्फ प्लानिंग लेवेल पर न रह जाए, बल्कि आने वाली पीढ़ी के लिए भी यह हिस्ट्री और मिथक को समझने का एक नया टूल बन सके। असल में कालजयी रचनयों को समय समय पर री-डीफ़ाइन करने की जरूरत पड़ती है।

भारतीय लोग ज्यादातर किसी न किसी माध्यम से महाभारत से इतनी बार रु-ब-रु हुए हैं। अब महाभारत का नाम लेते ही उनके मन में दृश्य आकार लेने लगते हैं। पद्मश्री उषा किरन खान एक वरिष्ठ साहित्यकार कहती हैं, "यह बिलकुल सही बात है कि समय समय पर कालजयी रचनायों को री-डीफ़ाइन किया जाना चाहिए, लेकिन यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उनकी मूल आत्मा का हनन न हो। दूसरी बात जो उपन्यास में सही हो, वह सिनेमा में भी सही हो, यह जरूरी नहीं है। साहित्य हमें विमर्श के लिए स्वतंत्र छोड़ देता है, जबकि सिनेमा अपने विचार को स्थापित करता है।"

दौर कोई भी रहा हो, लेकिन महाभारत का अंदाज़ हर बार नया ही रहा है। 1980के दशक में दौर आया जब हर रविवार सुबह सब लोग जल्दी उठ कर नहा धोकर तैयार हो जाते थे। अपने टीवी एंटीना को सही दिशा में कस कर स्थिर कर देते थे और फिर सारा परिवार टीवी के सामने बैठ जाते थे। जब महेंद्र कपूर की आवाज़ से महाभारत नाटक शुरू होता तो सारे शहर सारी गलियां खाली हो जाती सबकी नज़रें बस टीवी पर होती। एक अलग सा जादू उस समय महाभारत ने सब पर किया था। इस धारावाहिक के लिए सतीश भटनागर ने देश भर में महाभारत से संबंधित साहित्य पर रिसर्च की। इसकी पटकथा और संवाद राही मासूम रज़ा ने लिखे थे। जो महाभारत की कथा को समकालीनता प्रदान करते थे। यही तो इसका विशेषता है, यह हर काल में समय के कदम के साथ कदम मिला कर चल पड़ता है। महाभारत हमेंशा

शाश्वत बना रहा है, जो कि किसी भी धर्म ग्रंथ के लिए दुर्लभ है। बी आर चोपड़ा की तरह 1989 में पीटर ब्रूक ने महाभारत पर आधारित अपने 9 घंटे लंबे नाटक को पहले 6 घंटे की टीवी सीरीज़ में, फिर 3 घंटे की फिल्म के रूप में प्रस्तुत किया। यह सीरीज़ उस समय 32 करोड़ रुपए में बनी थी। असल में महाभारत इतना विशाल है, इसके फिल्मांकन में किफायत की बात सोचने में थोड़ी मुश्किल सी लगती है। बच्चो को ध्यान में रखकर महाभारत को एनीमेंशन फिल्म के रूप में पेश करने की भी 2013 में कोशिश की गई थी। पैन मूवीज़ की इस फिल्म में अमिताभ बच्चन, शत्रुघन सिन्हा, अजय देवगन, विद्या बालन, माधुरी दीक्षित, दीप्ति नवल जैसे तमाम नामी गिरामी अदाकारों ने आवाज़ दी थी। लेकिन एनीमेंशन की तकनीक बेहतर न होने के कारण यह दर्शकों को आकर्षित नहीं कर पाई।

आज का युग तकनीकी कला में बहुत आगे निकल गया है। 3d तकनीक से आगे भी अब फिल्मे बनने लग गई है। धारावाहिक भी अब नए नए प्रयोग और नए समावेश लेकर आ रहा है। रंगमंच और मीडिया क्रिया समूह का कार्य है। जब तक सबका मन और दिल इसमें नहीं लगता। इसमें अपनी प्रस्तुति को दर्शकों के समक्ष सफल नहीं हो सकेंगे। 1980 के दशक में जब बलदेव राज चोपड़ा ने महाभारत को छोटे पर्दे पर उतारा था। उन्होने इस बात का ख्याल रखा कि दर्शक इसको अपना सकें और इसकी आत्मा का हनन भी ना हो। उस समय की उपलब्ध सुविधायों से इसको कैसे खेला जाए ।

महाभारत को छोटे अथवा बड़े पर्दे पर लाना आसान नहीं है। बलदेव राज चोपड़ा अपनी एक इंटरव्यू में बताते हैं, कि उन्होने इस नाटक को लेकर जो सबसे बड़ा प्रयोग किया वह बहुत मजेदार था। बड़े पर्दे के हिसाब से, फिल्म के कैमरे और तकनीक से इस धारावाहिक को बनाया और इसका प्रस्तुतीकरण छोटे पर्दे पर किया। उस समय के हिसाब से महाभारत को अत्याधुनिक बनाया गया था। मीडिया और टीवी अपने यौवन की ओर बढ़ रहा था। वीएफ़एक्स और 3d इत्यादि तकनीकों का इस्तेमाल नहीं होता था। फिर भी उन्होने जिस तरह थिएटर में सेट बनाया जाता है, उस तरह इस धारावाहिक में इस्तेमाल किया। इस बात का उल्लेख उन्होने अपनी डोकुमेंटरी "मेंकिंग ऑफ महाभारत "में किया है। इस धारावाहिक में थिएटर के मेंकअप का इस्तेमाल किया गया था। लगभग पंद्रह हज़ार में से 1500 चुनिन्दा कलाकारों के साथ इस धारावाहिक को बनाया गया।

80 के दशक में ही महाभारत की दो प्रस्तुतियाँ आई थी, जो राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महाभारत को ऊभार कर सामने लाई। यह कार्य रंगमंच से परे टेलिविजन के पर्दे पर हुआ। भारत में वह दौर था, जब किसी किसी के घर में ही टेलिविजन हुआ करता था। भारतीय टेलिविजन पर एक ही चेनल चला करता था,“ दूरदर्शन ” जिसकी लोकप्रियता बहुत थी। बी आर चोपड़ा द्वारा बनाए धारावाहिक “महाभारत ” का प्रसारण रविवार को किया जाता था। तकनीक का युग अभी करवट भर रहा था। आज की तरह तकनीक का इस्तेमाल संभव नहीं था। इतने बड़े पाठ्य और गहन उदेश्य भरे ग्रंथ को पर्दे पर उतारना कठिन था। उन्होने जिस तरह सिनेमा-टीवी और रंगमंच के सभी तत्वों को मिला कर जो इसका प्रस्तुतिकर्ण किया वो लाजवाब है। जिस प्रकार हस्तिनापुर का राजमहल , गुरु द्रोण का गुरु कुल, लाक्षागृह, माया महल इत्यादि की सादगी और सुंदरता से प्रस्तुति की है। यह वही नाटकीय तत्व है जिसने पहले इस धरवाहिक की समूची टीम को और फिर समस्त दर्शक वर्ग को अपनी ओर आकर्षित किया है। किस तरह लकड़ी के बुरादे-थर्मोकोल से उस माया महल का निर्माण किया गया, जिस में धोखा खा के दुर्योधन पानी में गिरता है, उस समय के हिसाब से यह कमाल लगती है। इन सभी बातों की चर्चा उन्होने अपनी “मेंकिंग ऑफ महाभारता ” नाम की डोकुमेंटरी में की है।

दूसरी प्रस्तुति पाश्चात्य निर्देशक “पीटर ब्रूक ” की जिन्होंने काफी लंबे समय तक इस महाकाव्य पर कार्य किया और फिर इसको मंच और पर्दे पर उतारा। यह कथा फिर एक बार अपने वैश्विक रूप में जीवित हो उठी। उन्होने फिल्म “द महाभारता” द्वारा जो आयाम स्थापित किए वो आज भी जीवंत है। वह एक रंग कर्मी के रूप में कार्य करते रहे हैं और आज भी कर रहे हैं। इस फिल्म का सारा सेट रंगमंच के सेट जैसा है। लगता है कि कोई नाटकीय प्रस्तुति देख रहे हैं। किन्तु वास्तव में एक फिल्म चल रही है। जिस तरह से गणेश और वेदव्यास का मिलना, पांडु और माद्री का वन में मिलन या फिर द्रौपदी चीरहरण सब कुछ नाटकीय तरीके से नाटक वाले सेट से प्रस्तुत किया है। ऐसे इनके सेट में छोटे छोटे बहुत तत्व है, जिनके प्रयोग से उसने इस रचना को लोकप्रिय बनाया और दुनिया के दर्शकों को अपनी ओर खींचा।

किस तरह किस नजरिए से किसी वस्तु को प्रस्तुत करना है, यह नाटकीयता का मुख्य तत्व है। इसके बाद बहुत सी प्रस्तुतियाँ बहुत से निर्देशकों द्वारा आई हैं। हाल ही में 21वीं सदी के दूसरे दशक में और दो प्रस्तुतियाँ आई जिन्होंने खूब सुर्खिया बटोरी। जिनमें एक थी पेन

इंडिया लिमिटेड की "महाभारत" जिसमें बॉलीवुड की दिग्गज हस्तियों ने विभिन्न किरदारों को अपनी आवाज़ दे कर योगदान दिया। बच्चों को इस कथा और इतिहास/मिथिहास से साक्षी करवाने के लिए कार्टून रूप में इस फिल्म का निर्माण किया गया। इस फिल्म में बच्चों की मानसिक दशा और उनकी काल्पनिक शक्ति को ध्यान में रखते सारे सेट का निर्माण अत्याधुनिक तरीके से किया, काफी हद तक अपने कार्य में सफल भी रहे हैं। अब भारत में तकनीक का इस्तेमाल जोरों पर है। टीवी नाटक से लेकर फिल्मों तक में इसका उपयोग हो रहा है। भारत में टीवी का इतिहास 30 से 40 वर्ष से ज्यादा पुराना नहीं है। स्टार प्लस पर सिद्धार्थ आनंद कुमार द्वारा निर्देशित एक धारावाहिक आया था" महाभारत "जिसने सफलता के नए आयाम स्थापित किए, दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित किया। यह सिद्ध हुआ कि महाभारत अब भी सबको अपनी ओर खीचने वाला ग्रूत्व रखता है। इस नाटक के सेट में आधुनिकता की सभी नई तकनीकों का इस्तेमाल किया गया, जैसे वीएफ़एक्स, 3d, हरा पर्दा इत्यादि। जिसने इस कथा की भव्यता को सुशोभित किया और कल्पना की दुनिया में ले गई।

तकनीक का युग आगे बढ़ रहा है, छोटे छोटे तत्त्व इसमें जुडते जा रहे हैं, जो इसके रूप को और उभारते जा रहे हैं। कॉस्ट्यूम डिज़ाइन, सिनमेंटोग्राफ़ी, फाइट सीन, फोटोग्राफी, मेंकअप आदि बहुत से तत्व हैं जो इस कथा के रस को उभार कर आगे ला रहे हैं। समय की बढ़ती रफ्तार के साथ यह कथा युवा होती जा रही है। इसका आकर्षण बरमूडा ट्रेंगल के जैसे है, इसका मुख्य बिन्दु क्या है ? यह कहाँ जाकर खत्म होता है ? यह कोई नहीं बता सकता और न ही बता पाएगा। कला के दौर में इस कथा को जितनी और कल्पना मिलती जा रही है उतना ही इसका आकर्षण बढ़ता जा रहा है। आज के इस युग में अगर कोई कलपना करता है वो युग देखने की, वहाँ घूमने की इच्छा करता है, तो यह संभव भी है। आज यहाँ 3d और 4d तकनीक से बन रही फिल्मे उसकी इच्छा पूर्ति करती हैं। अगर भविष्य में महाभारत को लेकर 3d या 4d फिल्म बनती है तो अवश्य ही यह माना जा सकता है कि वह नए आयाम स्थापित करेगी। एंड टीवी के बिजनेस हैड राजेश अय्यर कहते हैं "कि एक शैली के रूप में, पौराणिक कथाओं में विभिन्न जनसांख्यिकीय बाधाओं के माध्यम से तोड़ने की क्षमता है। श्री कृष्ण की कहानियाँ हमेंशा आकर्षक और मोटे तौर पर प्रेरणादायक हैं। आज के तकनीकी युद्ध में जितना महाभारत और उभर कर सामने आ सकती है वह किसी से छुपा नहीं है। जिस तरह से विस्तृत रूप से महाभारत लिखा गया है, वह मीडिया प्रस्तुतीकरण में अपार संभावनाएं पैदा

करता है। जिस तरह तकनीकें विकसित हो रही हैं। उसी के साथ महाभारत भी और विकसित हो रहा है।"

भारतीय फिल्म के इतिहास मे पहली फिल्म राजा हरीश चंद्र भी महाभारत से संबन्धित कथा पर आधारित थी। दूरदर्शन के शुरुयाती दौर में भी जिस धारावाहिक ने इतिहास रचा वह महाभारत ही था। इसके बाद अनेकों फिल्में और धारावाहिक इसमे से निकाल कर आते रहे। इसको पढ़ते समय जो दृश्य मन मे उत्पन्न होते हैं। वही इसी नाटकीयता को उभारने को लालायित करते है। स्टार प्लस पर प्रसारित महाभारत की प्रस्तुति इसकी उत्कृष्ट उदाहरण है। अब जैसी जैसी तकनीकें और आ रही हैं वैसे ही इसके प्रस्तुतीकरण की संभावनाएं और उभर कर सामने आ रही हैं और आती रहेंगी।

महाभारत का कालजयी प्रभाव

महाभारत वह वट वृक्ष है जिसकी जड़ें लगभग सम्पूर्ण विश्व में फैली हुई है। कहाँ-कहाँ से, किस-किस रूप में, इसने स्वयं का विकास किया है, यह एक अलग शोध का विषय है। वर्तमान समय में सभी भू भागों में शायद ही कोई ऐसा भाग हो जहां इस कथा का प्रचार प्रसार अथवा कोई प्रस्तुति नहीं हुई हो। भारत ही नहीं अपितु अन्य देशों में थोड़ी थोड़ी भिन्नता के साथ इसकी प्रतियाँ मिलती है। महाभारत में बहुत से देशो का वर्णन आया है । महाभारत काल में अखंड भारत के मुख्यत 16 महाजनपद और इनके अंतर्गत 200 से अधिक जनपद आते थे जिनका जिक्र इस कथा में आया है। स्वयं भारतीयो ने भी दूसरे भू भागों में जाकर भारतीय साहित्य और सभ्यता का विकास किया है। वर्तमान समय में वह देश किसी भी धर्म अथवा सभ्यता पर आधारित हो गए हों पर भारत (देश) और महाभारत का प्रभाव आज भी साफ और स्पष्ट रूप में इनपर देखा जा सकता हैं।

चन्द्रकान्त बंदीवाडेकर कहते हैं, "महाभारत में विलक्षण बहुकोणीय पात्र-सूष्टि, रोचक आख्यानता, नाटकीय स्थितियाँ, वृत्तकथन, मिथकीयता, फंटेसी, अलंकृति और कहीं-कहीं सहज क्ला, यानि कुल मिलकर विराट, बहुस्तरीय और चमत्कारी स्थापत्य है; धर्म, नैतिकता, तत्व मीमांसा, लौकिक अनुशासनों की अभिव्यक्ति और व्यंजना है; विरोध विसंगति और विद्रूप के प्रति सहिष्णुता है; ये चीज़ें सृजन की वस्तु और प्रेरणा देती है।" (*बांदीवाडेकर चन्द्रकान्त/प्रभाकर श्रोतीय, भारतीय साहित्य पर महाभारत का प्रभाव* 14)

भारत और महभारत इन दोनों का मिश्रण इस तरह है जैसे वातारण में वायु का वास है, अगर वायु का एहसास करना हो तो किसी पंखे के पास जाना पड़ेगा। इसी तरह किसी को भारतीय संस्कृति, जन मानस को समझना हो तो महाभारत के पास जाना पड़ेगा। इसकी बातों को सुनना, देखना और समझना पड़ेगा। दोनों में से अगर किसी एक चीज को अलग करदें तो दूसरी स्वयं दिव्यांग हो जायगी। इनका सुमेंल ऐसे है जैसे हमारी कोशिकाओं में रक्त प्रवाह है। इसकी कथा, कहानियां और प्रसंग मार्गदर्शन करती है। भारतीय इस कथा के पात्रों को अपना आदर्श मानते है, उनके उदाहरण देते है कि वैसे बनना चाहिए। बात यहीं तक नहीं रहती बल्कि इस कथा के नायकों को अपना इष्ट मानते हैं और उनको दैवीय स्थान पर बिराजित करके भगवान का दर्जा देते हैं। श्री कृष्ण से उत्तम उदाहरण कोई और नहीं हो सकता।

डॉ यूगेश्वर कहते हैं, "पश्चिम का परमात्मा मानव से बहुत दूर है। जबकि भारत का परमात्मा सर्वत्र है, सब में है। सभी उसके भीतर हैं, वह सब के भीतर है। उसकी खोज के लिए किताब का पांडित्य आवश्यक नहीं है। बिना किताब के भी, बिना भारी संग्रह के सब में सर्वत्र ज्ञान तत्त्व की प्राप्ति संभव है। पश्चिम वस्तु पाने पर बल देता है। भारत अपने को पाना चाहता है। भारत की संस्कृति स्व-स्वरूप से बनती है। इसमें वस्तु की भूमिका गौण है।" (*भारत का महाभारत* 7)

महाभारत वह दर्पण है, जिसके समक्ष खड़े होकर बीते हुए कल को देखकर आने वाले कल को आज संवार सकते है। जीवन यापन के ढंग से लेकर राजनितिक ढंग ,आंतरिक युद्ध से लेकर बाहरी युद्ध तक, कहाँ किस प्रकार लड़ना और खड्ना है, महाभारत सिखाता है। कोई भी ऐसा प्रश्न या उत्तर नहीं है, जो इसमें नहीं मिलता। सब मिलता है ,बस किसी गोताखोर की भांति इसके भीतरी तल तक जाना पड़ेगा। भारत की भूमि से बाहर भी एशिया और यूरोप के कई देशों में यह अस्तित्व बनाए हुए है।

इसे सिर्फ धर्म ग्रन्थ की संज्ञा देकर छोड़ दें तो बहुत कम होगा। ऐतिहासिक, काव्य और एक निपुण धर्मशस्त्र के रूप में इसका महत्त्व और भी उभर कर सामने आता है। साहित्य जगत में महाभारत रक्तबीज की भाँति है। इतने वर्ष बीत जाने पर भी समय और हालातों के प्रहार सहते हुए साहित्य की अमर रचना बन के "भीष्म पितामह" के पद पर बिराजमान है। भारत ही नहीं अपितु विश्व के अनेकों देशों के रंगमंच का आधार बिंदु महाभारत है, जिनका अस्तित्व और पहचान ही महाभारत है।

महाभारत ने आने वाले समय की दशा और दिशा के बारे में बहुत कुछ तय किया। कब कैसे और किस हालात में किस तरह कार्य और फैसला करना चाहिए, महाभारत ने बताया है। हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, "महाभारत का शायद ही कोई उत्तम चरित्र महलों के भीतर पलकर चमका हो। सब के सब एक तूफान के भीतर से गुजरे हैं। अपना रास्ता उन्होने स्वयं बनाया है और अपनी रची हुई विपत्ति की चिता में वह हँसते हँसते कूद गए हैं। महाभारत का अदना से अदना चरित्र भी डरना नहीं जानता।" (*हिन्दी साहित्य की भूमिका* 160)

महाभारत ने भारतीय समाज की हर कड़ी को जोड़ा है, वह भी इतने सूक्ष्म स्तर पर जो बाहरी विवेचना से कभी समझ ही नहीं सकते। "ब्रह्म विद्या अंतर्गत योग शास्त्र" अर्थात मात्र महाभारत ही ऐसा साहित्य ग्रन्थ है, जो मात्र ग्रन्थ न होकर योग शास्त्र की उपाधि पाने के योग्य

है। द्वापर हो या कलयुग, विकसित से विकसित समाज का हर पक्ष जिस बात से सदा ही पीड़ित रहा है, वह है द्वंद्ध। द्वंद्ध इस बात का कि कौन सा कर्म करें और कौन सा नहीं, कौन सा कर्म समाज में आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक श्रेष्ट क्रांति ला सकता है और कौन सा नहीं। महाभारत ने द्वापर में ही कलयुग के कई क्रिया कलापों की नींव रखदी थी।

इस युद्ध की शुरुयात से पहले जब अर्जुन सिर्फ इसी बात को लेकर अपने अस्त्र डाल देता है, वह किसी सही या गलत बात का निर्णय नहीं कर पा रहा, वह अपनों से युद्ध करके सही कर रहा है या गलत, तब श्री कृष्ण उसे गीता का ज्ञान अर्थात उस ब्रह्म ज्ञान का चक्षु देते हैं, जिससे वह निर्णय करने में सक्षम होता है। वह गीता सिर्फ महाभारत में ही नहीं बल्कि आज इस युग में भी मार्गदर्शक है। अपने कार्य में कर्तव्य का पालन करना अति आवश्यक है और यह ही धर्म है, यही लोक हित है। जो लोक हित में कार्य नहीं करता, वह पशु के समान है।

भारतीय समाज आरंभ से ही धार्मिक अनुष्ठान में विश्वास करता आया है। जो भी भारत में आया इसने उनको अपना लिया, इस्लाम हो या ईसाईयत, अन्य धर्म-पंथ या संप्रदाय क्यों ना हो। भारत ने अपनी धरा पर सभी को पनपने के लिए स्थान दिया। भारतीय धर्म शास्त्र की विशेषता यह रही है, इसने किसी को भी किसी रूप में नहीं बांधा। अगर कोई पशु-पक्षी की पूजा करना चाहता है तो वह भी स्वतंत्र है, अगर कोई पत्थर,नदी या तालाब की पूजा करना चाहता है तो वह उसकी पूजा कर सकता है। अगर कोई किसी पुस्तक, अज्ञात शक्ति या किसी इंसान की अर्चना करना चाहता है तो वह कर सकता है। अनेकों कर्म काण्ड, अनुष्ठान, रीती रिवाज़, यज्ञ आदिक जिनका ज़िक्र इस महाग्रंथ में मिलता है, उनको ठीक वैसे ही अपना लिया। इस कथा के अनेकों नायकों को आम जन ने इतना अपने भीतर समां लिया कि आज उन्हें एक ईश्वरीय अवतार की संज्ञा और मान्यता दे दी। उनके बड़े बड़े मंदिर भी निर्मित कर दिए गए। श्री कृष्ण को संपूर्ण भारत में भगवान विष्णु के अवतार के रूप में जाना और माना जाता है। महाभारत के पात्र भारतीय जन मानस के लिए अमर नायक है। उनके जीवन की घटनाओं में दिखती शाश्वत सजीवता, जीवन यापन, चरित्र, भारतीय जनजीवन और आचारविहार के आदर्श बन गए हैं। भीष्म प्रतिज्ञा करने वाले पितामह का ब्रह्मचर्य और त्याग, पांडव महाराज युधिष्ठिर का सत्यत्व, पाँच पांडवों की पत्नी द्रौपदी के स्वामीधर्म, कुंती पुत्र कर्ण की दानवीरता और पांडवों का आपस का बन्धुप्रेम भारतीय समाज के आदर्श बन गए।

अरस्तू नाटक के संदर्भ में बात करते कहते हैं, "यद्यपि सशक्त कथानक तात्कालिक सफलता के लिए ही आवश्यक है, परंतु यदि नाटक में ऐसे पात्र नहीं हैं जो कथा से अलग भी पाठकों की समृति में अक्षुष्ण रह सकें तो उसे क्षणिक लोकप्रियता ही मिल सकेगी। कथारुचियाँ देश-देश और समय-समय पर बदलती रहती हैं, और संभव स्थितियाँ इतनी कम होती हैं कि नया नाटककार अधिक से अधिक यही कर सकता है कि उन्हीं पुराने कथानकों को थोड़े हेरफेर से नये पात्रों के प्रस्तुत करे। परन्तु मानव स्वभाव विश्वभर में और पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक-सा रहता है।" (*ब्रैंडर मेंथयूज़/इन्दुजा अवस्थी, नाटक साहित्य का अध्ययन* 80)

"सभी कला रूपों की उत्पत्ति 'रामायण' और 'महाभारत' में निहित है, जिन्होंने अब कला के प्रतिपादकों के अनुसार पौराणिक तकनीक के साथ वर्तमान तकनीक-संचालित पीढ़ी की कल्पना को पकड़ लिया है। मनोरंजन के कई स्रोतों की उपलब्धता के बावजूद, "छोटा भीम" "बाल हनुमान" और "गणेशा" जैसे सुपरहीरो बच्चों को मोहित करते हैं।

ऑक्सफोर्ड बुक स्टोर में "इंडियन माइथोलॉजी एंड आर्ट" पर 2016 में आयोजित पैनल चर्चा में शामिल कलाकारों का रामायण और महाभारत के बारे में मानना और कहना है -

पद्म श्री प्रतिभा प्रहलाद (भरतनाट्यम नर्तक) कहती हैं, "कोई कला रूप या शैली हमारे महाकाव्यों 'रामायण' और 'महाभारत' से अछूती नहीं है। आदिवासी से लेकर लोक समकालीन तक, उनमें से प्रत्येक इन महाकाव्यों पर आधारित है - चाहे वह चित्रकला, नृत्य, संगीत या मूर्तिकला हो - सभी उनके व्युत्पन्न हैं।"

डैन्यूज़ कहते हैं, "दो महाकाव्य "मिथक" नहीं हैं, लेकिन "जीवित इतिहास" हैं। मध्य और पूर्व एशिया के सभी लोग इन इतिहासों को जी रहे हैं। हमारे देवता हमारे साथ इतने अधिक हैं कि हम उनसे अलग नहीं हो सकते, हम अपने देवताओं के साथ एकजुट हैं, और उनके साथ रह रहे हैं।"

प्रह्लाद रंगकर्मी रामायण और महाभारत के बारे में कहते हैं, "कहानियां व्याख्या के लिए खुली हैं और दर्शकों के लिए कई प्रतिपादन प्रस्तुत किए जा सकते हैं। महाकाव्य विभिन्न कहानियों से भरे हुए हैं और हम व्याख्याओं और कथन के संदर्भ में उनके साथ बहुत कुछ कर सकते हैं। कुछ का मानना है कि रावण कुछ स्थानों पर नायक है तो कहीं खलनायक।"

भीम, श्री कृष्ण या हनुमान के पात्रों से प्रेरित एनिमेंटेड शो का जिक्र करते हुए, ध्रुपद के प्रतिपादक वासिफुद्दीन डागर ने कहा, "एक कलाकार की भूमिका समकालीन उपभोक्ता के

लिए प्रासंगिक तरीके से ऐतिहासिक आख्यानों को प्रस्तुत करके अतीत और भविष्य के बीच की खाई को पाटने की थी। "एक कलाकार सिर्फ 'कलकार' नहीं, बल्कि 'कल का आकार' है – वह बीते कल और आने वाले कल दोनों के बीच 'काल' का पुल है। आगे कहते है -"वर्तमान प्रौद्योगिकियां, चाहे वह एनीमेंशन हों या अन्य, इन महाकाव्यों को कहानियां सुनाने के लिए लाई जा रही हैं और यही कारण है कि 'बाल हनुमान' और 'छोटा भीम' वर्तमान उच्च तकनीकी पीढ़ी के लिए हीरो हैं।"

प्रख्यात कला क्यूरेटर अलका रघुवंशी के लिए महाभारत जीवन बदलने वाला पाठ था, वो मानती हैं, "हमारे आसपास जो कुछ भी होता है वह महाकाव्य से होता है और यदि यह महाकाव्य में नहीं है, तो इसका अस्तित्व नहीं है। हमारे सभी लोक रूपों का आधार या केंद्र रामायण या महाभारत में है।"

महाभारत में धर्म के विषय में बहुत चर्चा की गई है। कुरुक्षेत्र की भूमि पर होने वाले महायुद्ध को भी धर्म युद्ध कह कर संबोधित किया गया है, और कुरुक्षेत्र को "धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे" कहा गया है। इस प्रकार महाभारत महत्वपूर्ण धर्मशास्त्र भी है। इसकी छाप चिरंकाल तक रहेगी। महाभारत ग्रन्थ को भारत में किसी अन्य ग्रन्थ के रूप में जानने से पहले सनातन धर्म के पावन धर्म ग्रन्थ के रूप में पूजा जाता है। आज भी उस सनातनता के पेड़ के तने के रूप में है। सिर्फ हिंदू सांप्रदाय ही नहीं बल्कि अन्य सांप्रदाय के लोग भी इस से प्रेरणा लेते हैं। इस बात की एक सबसे उत्तम ताज़ा उदाहरण उत्तर प्रदेश की है, जहाँ जनवरी में लखनऊ शहर में "गीता जयंती 2018" का कार्यक्रम आयोजित किया गया। जिसमें प्रदेश के बहुत से बच्चों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता में एक बच्ची जो गीता प्रतियोगिता की विजेता रही, वह एक मुस्लिम लड़की "आलिया खान" थी। जो यह बात सिद्ध करती है कि महाभारत सिर्फ किसी विशेष समुदाय ही नहीं, बल्कि समस्त भारतियों का ग्रन्थ है। यह सिर्फ एक उदाहरण ही नहीं है बलिक अनेकों उदाहरण है, जैसे बी आर चोपड़ा ने जब महाभारत बनाई थी। उसकी सारी स्क्रिप्ट एक मुस्लिम राइटर राही मासूम रज़ा ने लिखी थी। आज के दशक में जो स्टार प्लस चेनल में जो महाभारत आई थी, उसमें कई मुख्य किरदारों की भूमिका गैर हिन्दू अदाकारों ने निभाई थी, जैसे माँ कुंती का किरदार मुस्लिम अभिनेत्री "शफक नाज़" ने और "साहिर शेख" ने

निभाया। जो दर्शाती है कि किस प्रकार कोई धार्मिकता और संप्रदायकता का बंधन महाभारत के रास्ते में नहीं आता।

भारत देश में शुरू से ही साहित्य प्रेमियों का जमावड़ा रहा है। जिसका प्रमाण सरस्वती से ले कर हिन्द महासागर तक, वेदों से उपनिषदों तक, रामायण से लेकर महाभारत तक, गीत गोविन्द से लेकर अँधा युग तक, नालंदा से तक्षिला तक हर जगह हर पग, साहित्य, कथा, कहानी, उपन्यास और महाकाव्य आदि के रूप में मिलता रहता है। हर जाति, कौम, देश, मजहब का अपना साहित्य है, जिससे वह आगे बढ़ने की और लड़ने की प्रेरणा लेता है। दादी और नानी की बातों से निकल कर महाभारत आज डिजिटल युग तक एक नए रूप में समक्ष आई है। महाभारत के छोटे छोटे बीज समय की हवाओं के साथ समस्त जम्बोद्वीप में बिखर गए, दक्षिण की पठारी भूमि से लेकर उत्तर-पूर्व की वादियों तक और मुकुट हिमालय से लेकर विशाल फैले थार तक, हर जगह यह अलग अलग रूप में मिलते है। ऐसे ही इसको महाकाव्यों का महाकाव्य नहीं कहा गया। इसने अनेकों नेक रचनाओं को जन्म दिया है और दे रही है। केवल भारत वर्ष ही नहीं अपितु दुनिया के अनेकों देश हैं जिनके साहित्य इसके प्रभाव से वंचित नहीं रह पाए। भारतीय साहित्य में संस्कृत साहित्य की बात करें तो संस्कृत के अनेकों विद्वानों और महाकवियों ने बहुत सी चिरकाल जीवित रहने वाली रचनाओं को जन्म दिया। वह या तो सीधे तौर पर महाभारत से ली गई है या महाभारत से प्रेरित घटनाओं से है। संस्कृत के कवियों जैसे भारवि, माघ, श्री हर्ष, कालिदास और महाकवि भास् आदि ने अपनी बहुत सी रचनाओं का आधार महाभारत को ही रखा , जिसमें माध्यम व्यायोग, अभिज्ञान शाकुंतलम और उरुभंगम आदि जिक्रयोग है।

संस्कृत युग के बाद जब प्राकृत और अपभ्रंश का युग आया तो उसमें भी इसका प्रभाव कम न हुआ। उस युग के रचनाकारों ने भी इस महाकथा को उपजीव बनाकर रचनाओं को जन्म दिया। धर्म और साहित्य का रिश्ता बहुत पुराना है। आम जन तक अपना सन्देश पहुँचाने का यह एक कारगर तरीका है। जिसके माध्यम से सब मतों ने अपना प्रचार किया। धर्म क्षेत्र में भी महाभारत का बहुत विशाल प्रभाव दिखाई पड़ता है। विभिन्न मतों और धर्माचार्यों ने इस कथा को अपने मत अनुसार ढाल कर उसका अलग पाठ लिखा है। जैसे जैनाचार्यों द्वारा लिखित हरिवंश पुराण में वस्तु और चिन्हगत अंतर स्पष्ट लक्षित किया जा सकता है।

विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में लोगों ने इस महाकथा की रचना मूलकथा को मुख्य रखते हुए, सहायक कथाओं में थोडा बहुत बदलाव करते हुए लिख ली। ओडिया में 15वीं शती में सारलादास द्वारा लिखी गई, सारला महाभारत इसकी एक उदाहरण है। इसी तरह गुजराती में लिखा गया, भीलों का भारथ भी उल्लेखनीय है। जिसमें भीलों की भावना, प्रतिभा और कल्पनाशीलता प्रकट होती है।

हिंदी साहित्य जगत भी इससे अछूता नहीं रहा है। उसने महाभारत की सहायता से अपना साहित्य बहुत अमीर कर लिया है। अनेकों रचनाएँ को रंगमंच की धरा से अवगत भी करवाया है। यह सिलसिला केवल यहीं आकर नहीं रुक जाता। यह निरंतर एक तीव्र वेग के साथ बढ़ता जा रहा है। आज तो बल्कि इसके पात्रों को मंच पर जीवित करने के लिए अनेकों विधाओं से प्रस्तुत करने का प्रयत्न भी किया जा रहा है। यह केवल एक ग्रन्थ मात्र ना होकर एक उर्जा का स्रोत भी है। भारत की आज़ादी के यज्ञ में अपने प्राणों के बलिदान की आहुति देने वाले माननीय बाल गंगाधर तिलक ने भी इससे प्रेरणा ली और इस ग्रन्थ का सार कहे जाने वाले अध्याय गीता को बहुत गहनता से जाना, उसपर कार्य करके उसको दोबारा लिखा। इनके इलावा तो मैथिलीशरण गुप्त का जय भारत, दिनकर का रशिमरथी, धर्मवीर भारती का अँधा युग, माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा रचित नाटक कृष्णार्जुन युद्ध, शंकर शेष की रचना एक और द्रौनाचार्य, अथवा नरेंद्र कोहली की महाभारत आधारित साहित्य रचनाएँ, पाठक गणों के समक्ष आ रही है। चित्रा चतुर्वेदी कार्तिका ने जो रचनाएँ महाभारती और अम्बा नहीं मैं भीष्मा उपन्यास के रूप में दी है वह भी सराहनीय है। देवदत्त पटनायक भी महाभारत की मुख्य धारा में से जल लेकर अनेकों कृतियाँ रच रहे है। यह है वेदव्यास की रचना का कालजयी प्रभाव जो स्वयं किसी मानवीय मस्तिष्क में अन्दर अपना बीज अंकुरित कर देता है और फिर स्वयं ही अपना मार्गदर्शक बन कर ऊपर उठता हुआ आसमान से हाथ मिलाने के लिए बढ़ जाता है। वह किसी भाषा, जाति या धरातल का मोहताज नहीं है।

पुरातन पंजाब की धरा पर हुए इस विशाल युद्ध के प्रभाव से भला पंजाब कैसे बच सकता है। बेशक यह भूग भाग समय समय पर अपना आकर बदलता रहा है। आकार के साथ साथ इसकी भाषा और संस्कृति भी बदलती रही है। आज भी इसके भारतीय और पाकिस्तानी पंजाब में पंजाबी और उर्दू जुबां का प्रयोग हो रहा है। उर्दू को मुस्लिम सांप्रदाय की जुबां कहा जाता है, उस जुबां के सिपाही भी इसके प्रेम पाश से बच नहीं पाए। अभी तक उर्दू में महाभारत

पर आधारित लगभग 36 ग्रन्थ है। जिनमें से अगर सिर्फ मुख्य उल्लेखनीय रचनाओं की बात करें तो, सीपी खटाऊ द्वारा लिखा गया नाटक महाभारत, बाबू राम वर्मा का द्रौपदी लीला है। दीवान साहिब चंद का भीमसेन, ख्वाजा हसन निजामी का कृष्णबीती स्वर्म, मुंशी रियाजुद्दीन का अर्जुन प्रतिज्ञा और वीर-अभिमन्यु, जसवंत सिंह वर्मा का आर्यसंगीत महाभारत(नाटक) आदि उल्लेखनीय है। पंजाबी में अजायब कमल की लंबी कविता "इकतर सौ अखां वाला महाभारत" जो की महाभारत के पात्र अभिमन्यु से प्रेरित है। वनीता की कविता, "मैं शकुंतला नहीं" महाभारत से प्रेरणा लेकर रची गई एक अद्भुत रचना है। पंजाबी नाटककार केवल धालीवाल भी आज महाभारत की कथाओं को पंजाबी जुबां में खेलते है। महाभारत एक ऐसी रचना है जो समस्त विश्व के लिए एक अध्यन का विषय है, इसका कालजयी प्रभाव कितना है, इस बात का अंदाज़ा इसी बात से लगा सकते। अगर इसको महांकाव्यों का महांकाव्य कहा जाता है तो इसमें कोई भी शंशय नहीं है। संस्कृत भाषा से लेकर उर्दू, हिंदी, पंजाबी, गुजरती, मराठी अथवा भारत की अन्य क्षेत्रीय भाषाओँ को अनेको शाहकार रचनाएँ दे कर उनके साहित्य को अमीर किया है। आज भी इस महांकाव्य से अनेकों रचनाएं जन्म ले रही हैं। समय के साथ साथ भारत ही नहीं बल्कि अन्य देशों की मुख्य भाषाओँ में भी इसको अनुवादित किया गया।

डॉ सत्यनारायन दुबे लिखते हैं, "भारत या भारत से बाहर जहां कहीं भी हिन्दू संस्कृति का प्रसार हुआ रामायण के साथ साथ वहाँ महाभारत का भी प्रचार हुआ। दूसरी शती ई°पू में यूनानी राजदूत इसके उपदेशो को उद्वत करते है छ्ठी शती ई° में सुदूर कम्बोडिया के मंदिरों में इसका पाठ होने लगता है, सातवी शती में मंगोलिया के तुर्क अपनी भाषा में हिडिंबा वध आदि उपाख्यानों का आनंद लेने लगते हैं, 10 वीं शती में जावा की लोक भाषा में इसका अनुवाद हो जाता है।" (*भारतीय क्ला और संस्कृति* 246-247)

भारत एक विशाल देश था, जिसमें से अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, श्री लंका, मियामर जैसे देश निकले हैं। यह देश किसी भी आधार पर बने हो, इन देशों में आज भी महाभारत को एक अहम् स्थान प्राप्त है। भारत में स्थापित नालंदा और तक्षिला विश्वविद्यालय विश्व विख्यात थे। बहुत सारे पडोसी देशों के छात्र शिक्षा ग्रहण करने के लिए भारत आते थे। उनके साथ साथ महाभारत उनके देशों में भी पहुंचा। दक्षिण एशिया के मुल्कों में हिंदू और बौध धर्म कभी अपनी चरम सीमा पर था। इसके प्रचार के साथ साथ महाभारत का उनकी सामाजिक, धार्मिक और साहित्यक कथाओं में समावेश हो गया। समय व्यतीत होने के साथ

उनके रंगमंच में भी समा गया। इंडोनेशिया में व्यांग विधा के रूप में महाभारत की कहानियां आज भी खेली जाती है। जावा, मलेशिया, थाईलैंड, सिंगापुर, सुमात्रा बाली में यह शेडो थिएटर के रूप में खेला जाता है। इन देशों की विभिन्न रचनाओं और कलाकृतियों में इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। आधुनिक दौर में फ्रांस, रूस, जापान, न्यूज़ीलैण्ड, अमेंरिका में कई रंग मंडलिया इसकी विभिन्न कथाओं की रंग प्रस्तुतियां कर रही है। लंदन में पीटर ब्रूक "महांभारत" पर कार्य कर रहे है। महाभारत साहित्य जगत का वो सूर्य है, जिसकी तपिश और ऊर्जा से अधिकतर साहित्य ऊर्जावान हुआ है। आज भी यह अपनी कलजयिता के कारण ही सबकी पसंद बना हुआ है।

डॉ राजेन्द्र प्रसाद इस संदर्भ मे लिखते हैं, "महाभारत, बृहत्कथा, पंचतंत्र और जातक-कथाएँ नाना रूपों में बदलकर संसार के साहित्य में प्रविष्ट हुई है। तिब्बती, चीनी, मंगोलियाई, कोरियाई, जापानी आदि पूर्वी भाषयों में बोद्ध साहित्य तो प्रचुर मात्रा में गया ही है, महाभारत और पंचतंत्र की कथाएँ भी गई हैं। आधुनिक काल में भी महाभारत की कई कथाएँ यूरोपिए देशों में काफी लोकप्रिय हुई हैं। महाभारत में ऐसी बहुत सी कथाएँ हैं, जो अपने आप में परिपूर्ण हैं। पश्चिमी विद्वानों ने इन कथायो को 'महाकाव्य के भीतर महाकाव्य' (एपिक विदिन एपिक) कहकर उनकी प्रशंसा की है। इनमें शकुंतला, ययाति, नहुष, नल-दमयंती, कच-देवयानी, विदुला, सावित्री आदि के उपाख्यानों के अनुवाद कई आधुनिक सभ्य भाषायों में हुए।" (*संस्कृत और संस्कृति* 10)

पाश्चात्य देशों पर इसके प्रभाव और कालजयता की बात करें तो एक और कहानी इसमें शामिल हुई है, वर्ष 2010 में जावा से एक नाट्य दल अपनी महाभारत पर आधारित प्रस्तुति लेकर भारत आया, इस दल के साथ अमरीकी मूल की एक अभिनेत्री कैथरीन एमसर्न भी थी। वो 20 साल पहले जावा पहुंची वहाँ उसने महाभारत का मंचन देखा और अभिभूत हो गई । उसने जावा की जबान सीखी और अब इन कलाकारों की मदद में हर जगह जाती है। ये कलाकार जावा की भाषा में मंचन करते हैं और वह अंग्रेज़ी में अनुवाद करके इसका भाव लोगों को समझाती है । वह कहती हैं इंडोनेशिया के बाली द्वीप में रामायण का बोलबाला है तो जावा तो महाभारत के लिए समर्पित है बस रमजान को छोड़ कर पूरे वर्ष महाभारत कथा का मंचन होता रहता है। अगर जावा में रामायण का मंचन साल में 20 बार होता है तो महाभारत का कोई 100 बार। यह महाभारत की लोकप्रियता और कालजयाता का ही परिणाम है।

कुछ दशक पूर्व भारत से अलग होकर नए बने इस्लामिक देश "बंगला देश" में आज भी महाभारत को उसी चाव से खेला और पढ़ा जाता है । इस कथा पर आधारित प्रस्तुतियाँ खेलीं जाती हैं। यही नहीं थोड़ा और बाहर निकला जाए तो रोमानिया देश की 11कक्षा में बच्चों को रामायण और महाभारत के अंश पढ़ाए जाते हैं।

एशिया में यह महाकाव्य विशेष तौर पर पसंद किया जाता है। इसकी कथायो को विभिन्न मौकों पर गाया सुना और खेला जाता है। बाली में किया जाने वाला विशेष नृत्य बीमा रुचि भी महाभारत पर ही आधारित है। कंबोडिया, थायलैंड, इंडोनेशिया, मंगोलिया इत्यादि देशों में इसका प्रभुत्व इस स्तर पर है कि यह इनकी संस्कृति का अंग बना हुआ है। वेद व्यास ने भगवान गणेश की सहायता से इसका सम्पादन किया था, उन भगवान गणेश जी की तस्वीर इंडोनेशिया की राष्ट्रीय क्रंसी पर छपती है। यही नहीं वहाँ आज भी बौद्ध और इस्लामिक शादियों पर महाभारत की कथाएँ विवाह वाले लड़के और लड़की को सुनाईं जाती है।

थायलैंड में भी इसको बहुत चाव से देखा जाता है, जितनी महाभारत भारत देश में लोक प्रिय है उतनी ही इन देशों में भी। इस देश की जड़ों का भारत से जुड़ाव सबको ज्ञात है। वर्ष 2013 में स्टार प्लस नामक निजी टीवी चैनल पर जो "महाभारत" धारावाहिक का प्रसारण हुआ था। उसका प्रसारण थायलैंड में भी हुआ, केवल प्रसारित ही नहीं वहाँ उसकी लोकप्रियता भी रही। इस धारावाहिक के किरदारों को वहाँ के टीवी चैनल पर बुलाया गया और उनकी इंटरव्यू भी की गई। यही महाभारत की लोकप्रियता पर मोहर लगाता है।

मंगोलिया देश की संस्कृति भी इस कथा के प्रभाव से वंचित नहीं है। यहाँ भी सनातन की पताका कभी लहराई गई है। मंगोलियाई लोग "हिडिंबा" की कथा को बहुत ही चाव से खेलते-सुनते और देखते हैं। हिडिंबा की कथा वहाँ बहुत प्रसिद्ध हैं, उनकी लोक कथाओं में भी इसका वर्चस्व दिखता है। महाभारत धारावाहिक को विभिन्न मंगोलियाई भाषायों में डब करके वहाँ टीवी पर भी प्रसारित किया जा चुका है।

एशिया ही नहीं आज महाभारत का प्रभाव यहाँ से निकल कर पूरे विश्व में फैल चुका है। इसमें केवल भारतीय लोगों का ही योगदान नहीं है बल्कि अन्य देशों के कलाकार भी इसमें अपनी आहुति डाल रहे हैं। जापान का "शिजूका परफोरमिंग आर्ट्स" का योगदान भी इसमें है, जिसने वर्ष 2014 में फ़्रांस के एविनोन में अपने कलाकारो के माध्यम से महाभारत से ली गई

कथा पर आधारित "नल-चरित्रम" को नाटक के तौर पर प्रस्तुत किया। जापान के साथ साथ "रूस" में भी नल और दमयंती की कथा बहुत प्रसिद्ध है।

चन्द्रकान्त बंदीवाडेकर अनुसार, "कविता में निहित फेंटेसी, मिथक या पुराणवृति को पहचानना शायद इसलिए जरूरी है कि रचना कोई तात्कालिक उपक्रम नहीं है; और जहां तक महाभारत का सवाल है, वह एक ऐसी रचना है, जिसकी कालजयिता का रहस्य यह भी है कि वह युग-युग में अपने विभिन्न रूप, रंग और प्रयोजन मे व्याख्यायित, विवेचित और गृहीत होने के लिए खुली है।" (*भारतीय साहित्य पर महाभारत का प्रभाव* 13)

कला का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहां तक महाभारत रूपी सूर्य की किरण न जाती हो। वेद व्यास की इस कथा में कल्पना को आकार देने के लिए अनंत संभावनाएं हैं। मिथिला शैली से लेकर आधुनिक डिजिटल युग की चित्रकारी तक कोई इससे अछूता नहीं है। ग्याम्पोलो टोमासेट्टी , प्रतिभाशाली इतालवी चित्रकार/ कलाकार है। वे लगभग 7 वर्षों तक इटली के विला वृंदावन में अंतर्राष्ट्रीय वैदिक कला अकादमी के सदस्य रहे। उनके कार्य पर भी महाभारत का विशेष प्रभाव है। उन्होने अपने जीवन के लगभग 2 दशक इस महाकाव्य को दिए हैं। उन्होंने पूरी लगन के साथ इस महाकाव्य को सीखने और समझने में 5 साल बिताए। लेकिन वह वहाँ यहीं रुके, इसको चित्रों में उतारने के लिए उन्हें 12 साल लग गए। जो नतीजे उभर कर समक्ष आया वह शानदार थे।

जब आप भारतीय महाकाव्य महाभारत लेते हैं और इसे साइबर-पंक शैली में ताज़ा करते हैं, तो आपको क्या मिलता है? जवाब है 18 दिन। स्कॉटिश नाटककार, ग्रांट मॉरिसन के 18 दिन महाभारत में अंतिम जलवायु संघर्ष का एक गतिशील प्रतिपादन है। मुकेश सिंह के चित्र और ग्रांट मॉरिसन की स्क्रिप्ट के साथ एक ग्राफिक प्रारूप में प्रस्तुत किया गया, यह प्राचीन भारतीय महाकाव्य पर एक दिलचस्प नया कदम है।

इस कथा को आज विश्व भर के प्रमुख विश्वविद्यालयों में विशेष स्थान हासिल है, यह उनके सिलेबस का हिस्सा है। विभिन्न पक्षों को लेकर इसपर कार्य किया जा रहा है। विश्व प्रमुख विश्वविद्यालयों की बात करें तो ऑक्सफोर्ड, हार्वर्ड, शिकागो, एडिनबर्घ, पोर्ट्समाउथ और कैंटरबरी जैसे पाश्चात्य विश्वविद्यालों में इस पर कार्य हो रहे है।

दुनिया भर में कई शोधकरता महाभारत पर कार्य कर रहे हैं। डॉ जॉन स्मिथ (कंबरीज़ यूनिवेर्सिटी) ने महाभारत के विभिन्न पात्रों के एपिसोड, विषयों और महाभारत से संबन्धित

संदर्भों का वर्णन करते हुए कम्प्युटरीकृत सूची बनाई है, जिसे इंटरनेट पर उपलब्ध करवाया है। जो न केवल भारत बल्कि मेंक्सिको, यू॰एस॰ए , इंडोनेशिया, मलेसिया, मौरिशियस, दक्षिण अफ्रीका, यू॰के, नेदरलैंड, थायलैंड, जापान और कई अन्य देशों में काम कर रहे हैं। यही इसकी कालजयिता का प्रमाण है जो इस पर निरंतर कार्य हो रहा है।

उपसंहार

महाभारत सदैव एक पूजनीय ग्रंथ रहा है। एक रंगकर्मी (शोधकरता) होने के नाते यह पूजनीय से ज्यादा खेलने, समझने और प्रस्तुति का ग्रंथ रहा है। जिसने आज तक रंगमंच जगत को न जाने कितनी ही भाषाओं, विधाओं, संदर्भों में अनेकों शाहकार रचनाएँ दी हैं। जिसको पकड़ कर कितने ही रचनाकारों ने साहित्य के समंदर के तल पार पाने की कोशिश की है। भारत में महाभारत का प्रभाव हर जगह देखने को, महसूस करने को मिलता है। यहाँ की सभ्यता में इसका समावेश इतना है कि भारतीय साहित्य की बात हो और महाभारत की बात न हो ऐसा असंभव है। इसके पात्रों की उदाहरण सभ्य जीवन यापन के लिए दी जाती हैं। जब भी इस कथा को किसी मंदिर या धार्मिक स्थल पर व्यास पीठ पर आसीन व्यास से सुना, जब भी इसको किसी गाँव कि चौपाल या किसी बड़े शहर के नाट्यगृह में देखा, तो इस कथा की नायिकाओं ने अपनी ओर आकर्षित किया। कितनी अथाह नाटकीयता का समावेश अपने भीतर लेकर बड़ी ही ख़ामोशी से यह चुप चाप सारी कथा को अपने कंधों पर बिना किसी से कोई खेद प्रकट किए अब तक चली आ रही हैं। इस शोध प्रबंध का मुख्य कारण ही उन नाटकीय संभावनाओं खोजना है, जिनके कारण यह नायिकाएँ अद्वितीय बनी, जिनके कारण आज भी इन पर साहित्य रचा जा रहा है। इनमें वह क्या बात है जो इनको भारतीय समाज की नज़रों में विशिष्ट पद प्रदान करती है। यही इस शोध प्रबंध का मुख्य कारण रहा है। इस कार्य के दौरान जो कुछ निकल कर सामने आया है। वह निम्नलिखित है।

अध्याय प्रथम

1) महाभारत का कथानक वास्तव में महायुद्ध के आगमन का कारण है। उसके लिए वेदव्यास ने केंद्र बिन्दु मान कर जिन पात्रों को इमारत के नीव रूप में रचित किया बात वहीं से शुरू होनी शुरू बनती है। नैतिक मूल्यों का डोलता हुआ ढांचा, इस इमारत की दीवारों के रूप में खड़ा है। द्वापर युग इस युद्ध का साक्षी बनता है। वैसे तो महाभारत को भारतीय संस्कृति में एक महायुद्ध के रूप में जाना जाता है। इसमें समाज के दोनों पहलू सम्मिलित है, पुरुष मन का अहं तथा स्त्री मन में से विलुप होती कोमलता, इन दोनों को चित्रित किया गया है।

2) कथानक अगर किसी भी रचना के प्राण हैं, तो संरचना उसका तन है। जीवन दोनों के युगम का ही नाम है। कथानक और पात्र दोनों का मिश्रण उत्तम रूप में हो तो वास्तविक क्ला तथा अमर साहित्यक कृति बन जाता है।

5) समाज दो तत्वों के संगम से है पुरुष एवं स्त्री। दोनों ही समय समय पर एक दूसरे पूरक और विरोधी भी बनते है। समाज पुरुष प्रधान ही क्यों न हो। स्त्री की महत्वता कम नहीं आँकी जा सकती। महाभारत कालीन समाज में इस पहलू का महत्व आंकना आवश्यक हो जाता है।

6) जिस प्रकार औरत के बिना सृष्टि की रचना, कल्पना संभव नहीं। वैसे ही यह नायिकाएँ हैं जिनके चरित्र और किए कार्यों से महाभारत को आगे बढ्ने की गति मिलती है। उदाहरण तह द्रौपदी जैसा पात्र महाभारत की कथा को गति देता है। इस एक नायिका से ही नायिकाओं का कथा में ममहत्व स्पष्ट है।

1) शोध में चयन का आधार पात्रों में नाटकीय संभवनयों की अधिकता को देखते किया गया है । जिन नायिकाओं ने अपने चरित्र में अत्याधिक नाटकीयता के साथ महाभारत की कथा को अपने कंधो पर उठाकर इसको गतिशीलता दी है, उन्हीं नायिकाओं को आधार बनाया गया।

<u>द्वितीय अध्याय</u>

1 रचनाकर को पूर्णतः जाने बिना उसकी कृति को भी समझना कठिन सा है। यहाँ तो वेदव्यास केवल रचनाकर ही नहीं बल्कि स्वयं इस कथा का पात्र भी है। समय समय पर खुद का प्रवेश करके कथा के प्रवाह को विशेष दिशा में गति भी देता है। वह नियोग प्रथा हो या सत्यवती का कथा से प्रस्थान करवाना, द्रौपदी को खास निर्देश हो या पांडवों का मार्गदर्शन। इस कथा में उसने भरत वंश की कथा नहीं बल्कि अपने वंश की कथा को कुरु और पांडु वंश की कथा का नाम देकर व्याख्यान किया है।

2 वेदव्यास सत्यवती का ब्राह्मण पुत्र और क्षत्रिय कहे जाने वाले धृतराष्ट्र और पांडु का पिता था। वेदव्यास ने वेदों का संकलन और संग्रह ही नहीं किया, इसके इलवा वेदव्यास भारत में धार्मिक कथा कहानियों को प्रचारित और प्रसारित करने वाले व्यक्ति विशेष और पद का प्रयवाची शब्द भी बन गया है।

3 कला, धर्म, विज्ञान, शिक्षा या और ऐसा और कौन सा क्षेत्र था जहां उस समय उन्नति नहीं थी। इस कथा में चारों युगों के पात्रों का समावेश देखने को मिलता हैं। सब कुछ अपने चरम पर था, जिसके बाद उसकी ढलान शुरू हो गई। महाभारत युद्ध के बाद वो सब सुनहरा अतीत बन गया।

तृतीय अध्याय

1) जिस प्रकार सौर मण्डल में सारे गृह एक दूसरे से विशेष दूरी पर है। सबका धरातल बिलकुल अलग तरह का है, किन्तु सूर्य है जो इन सबको एक साथ बांध कर रखता है, सबका आपस में कोई रिश्ता हो न हो पर सूर्य से है। इस प्रकार महाभारत कथा के सूर्य श्री कृष्ण है जिसके साथ यह नायिकाएँ कोई सखा, पुत्र, ससुर, इत्यादि का रिश्ता लेकर जुड़ी हुई हैं। जैसे श्री कृष्ण द्रौपदी के सखा हैं, तो उसी के पतियों के भाई और मित्र भी। कुंती को बुआ कहते है, तो गांधारी को भी माँ के रूप में मानते है। अभिमन्यु के मामा होने नाते उत्तरा के ससुर का रिश्ता रखते है।
2) मानवीय बुद्धि से परे, कल्पना मन के अंदर आते बहुत ऐसे तत्व जो सभी नायिकाओं के प्रति स्नेह, रोष, विशेष स्थान प्रदान करते हैं। उनके माध्यम से उनको चित्रित किया गया है। इनमें असाधारणता एक सी है और उसके रूप अलग, एक उदाहरण जैसे द्रौपदी और सत्यवती दोनों असाधारण प्रक्रिया से जन्म लेती है, एक अग्नि तत्व से तो दूसरी मछ्ली के गर्भ से जन्म लेती है। हिडिंबा का चरित्र और जीवन इन सबसे अलग है

3) नायिकाओं के जीवन कि चर्चा करना आवश्यक है। उसके जीवन में क्या कैसे और कब घटित हुआ। इन सबको दर्शाया गया, जो आगे के कार्य के लिए एक धरातल तैयार करती है

चतुर्थ अध्याय

1) महाभारत कभी आंशिक रूप में, कभी पूर्ण रूप में रंगमंच का हिस्सा रहा है। कोई भी रचना रंगमंच का हिस्सा तभी बन पाती है, जब उसमें नाटकीयता का समावेश रहता है। स्पष्ट शब्दों में कहें तो रौचकता ही नाटकीयता है। जो सब के मन में एक कौतूहल पैदा करके रखती है। अपने नाटकीय तत्व के कारण यह रंगमंच के लिए सदैव नवीनतम बनी

रही है। विख्यात नाटककारो द्वारा इसी में से विषय लेकर लिखना वो चरम बिन्दु है, जो पाठक तथा दर्शक को सदैव आकर्षित करता रहा और कर रहा है। भास, कालीदास, धर्मवीर भारती, गिरीश कार्नड, इन्हीं की श्रेणी में आते हैं। इस कथा में आरंभ से इति तक नायिकाओं के अंदर समाए उनके दैवीय गुण, दुर्बलता, इत्यादि कुछ इस तरह ताना बाना बुनती है कि वह रौचकता के चरम बिन्दु को प्राप्त होती है। कथा में कहीं द्रौपदी वनवासी है, तो कहीं महारानी, सत्यवती मछुआरे की पुत्री है तो कभी एक कुशल राजनीतिज्ञ सिद्ध होती है, राजमहलों में अपनी आज्ञाओं का पालन करते हुए देखने वाली महारानी कुंती लाक्षागृह से दीन असहाय होकर निकलती है। ऐसी बहुत सी नाटकीय घटनायों और तत्वों के समावेश देखने को मिलता है जिनमें बहुत सी संभावनाएं भरी पड़ी हैं। महाभारत के इस सौर मंडल का मुख्य और नाटकीय धुरी द्रौपदी ही है इसमे किसी को संदेह नहीं है। टूटती हुई मरियदा बार बार उसे तोड़ने का यत्न करती है और उनसे लड़ कर फिर से आगे जीवन की ओर बढ्ने का संदेश और हौंसला द्रौपदी ही देती है । इसी कारण वह इस विशेष कृति की विशेष पात्र कहलाती है ।

2) नाटकीयता यह वो शब्द है जो किसी भी रचना का मुख्य तत्व है, बहुत से रंगकर्मी रंगकर्म के लिए पाठ्य में यह खोजते है, कि इसमें नाटकीयता कहाँ छुपी हुई है। वो कौन से तत्व है जो नाटककर के साथ साथ, अभिनेता, और स्वयं निर्देशक की सूझ बुझ को भी उभार कर सामने लाएँगे। महाभारत कि कथा का तो प्रारम्भ ही नाटकीय तरीके से हुआ। एक यह भी विस्मय बात है। यह कृति चारों युगों को परिभाषित करती चलती है।

3) आकाशवाणी के युग से एनीमेंशन युग तक का सफर बहुत दिलचस्प रहा है। तकनीकी कला ने किस प्रकार अपना प्रभाव रचा है वह देखने वाला है। इसने नाटकीयता के सूक्ष्म तत्वों को उभार कर सामने लाया है। जिस तरह विस्तृत ढंग से इसको लिखा गया है वो किसी के रूप की चर्चा हो या किसी स्थल की चर्चा हो। इसको जब पर्दे पर उभरा जाएगा तो बहुत प्रभावशाली और सुंदर ढंग से निकाल कर आएगा जैसे वृदवान हो, या सत्यवती का मछ्ली के पेट से जन्म, चक्रविऊ में फंसा कर्ण हो या बाणों पर पड़े भीष्म। आज यहा तकनीकी कला मीडिया के माध्यम से महाभारत को और प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत कर रहा है विभिन्न माध्यमों से।

भारतीय फिल्म के इतिहास मे पहली फिल्म राजा हरीश चंद्र भी महाभारत से संबन्धित कथा पर आधारित थी। दूरदर्शन के शुरुयाती दौर में भी जिस धारावाहिक ने इतिहास रचा वह महाभारत ही था। इसके बाद अनेकों फिल्में और धारावाहिक इसमे से निकाल कर आते रहे। इसको पढ़ते समय जो दृश्य मन मे उत्पन्न होते हैं। वही इसी नाटकीयता को उभारने को लालायित करते है। स्टार प्लस पर प्रसारित महाभारत की प्रस्तुति इसकी उत्कृष्ट उदाहरण है। अब जैसी जैसी तकनीकें और आ रही हैं वैसे ही इसके प्रस्तुतीकरण की संभावनाएं और उभर कर सामने आ रही हैं और आती रहेंगी।

<u>पंचम अध्याय</u>

1) कोई भी रचना किसी विशेष समय के ढांचे में बंध कर अपना वर्चस्व नहीं खोती वो कालजयी बन जाती है । रामायण के बाद महाभारत स्वयं इसका उत्कृष्ट उदाहरण है । जिसकी पुष्टि सारे संसार में इसको खेला जाना करता है।

शोध करता की शोध का आधार वेदव्यास कृत, गीता प्रैस द्वारा मुद्रति की गई महाभारत रही है। महाभारत का मंतव्य युद्ध की बात करते हुए, युद्ध में हुए अनिष्ट को देखते हुए, असीम शांति की प्रेरणा देना है। इस कथा में बहुत अनंत छोटी छोटी कथाएँ बहुत ही महीन स्तर पर बिखरी पड़ी है, जिनको पढे और समझे बिना बाकी महभरात को समझना असंभव सा है। वो बहुत से छोटे छोटे पत्ते है जिन्होने इस कथा को बरगद बनाया उनकी छाँव का आनंद लेना भी अवशयक है। महाभारत के संक्षिप्त भागों को पढ़ कर उन्हे जाना नहीं जा सकता। इस तकनीकी युग में उन्हें मंच और पर्दे पे लाने की विधियों पर भी कार्य किया जा सकता है।गिरीश कार्नड ने इस महकथा की गंगा में से छोटी छोटी जलधारा रूपी कथाएँ ले कर ययाति ,अग्नि और बरखा की रचना कर डाली जिसका आनंद भी आम जन को विभोर करता है। चित्रा चतुर्वेदी कर्तिका का “अम्बा नहीं मैं भीष्म” उपनन्यास भी इसकी उत्कृष्ट उदाहरण है। ऐसा बहुत सा साहित्य साहित्य जगत का हिस्सा है। यह पूरा साहित्य ही महाभारत के अंशो के रूप में खोज कार्य की मांग करता है।

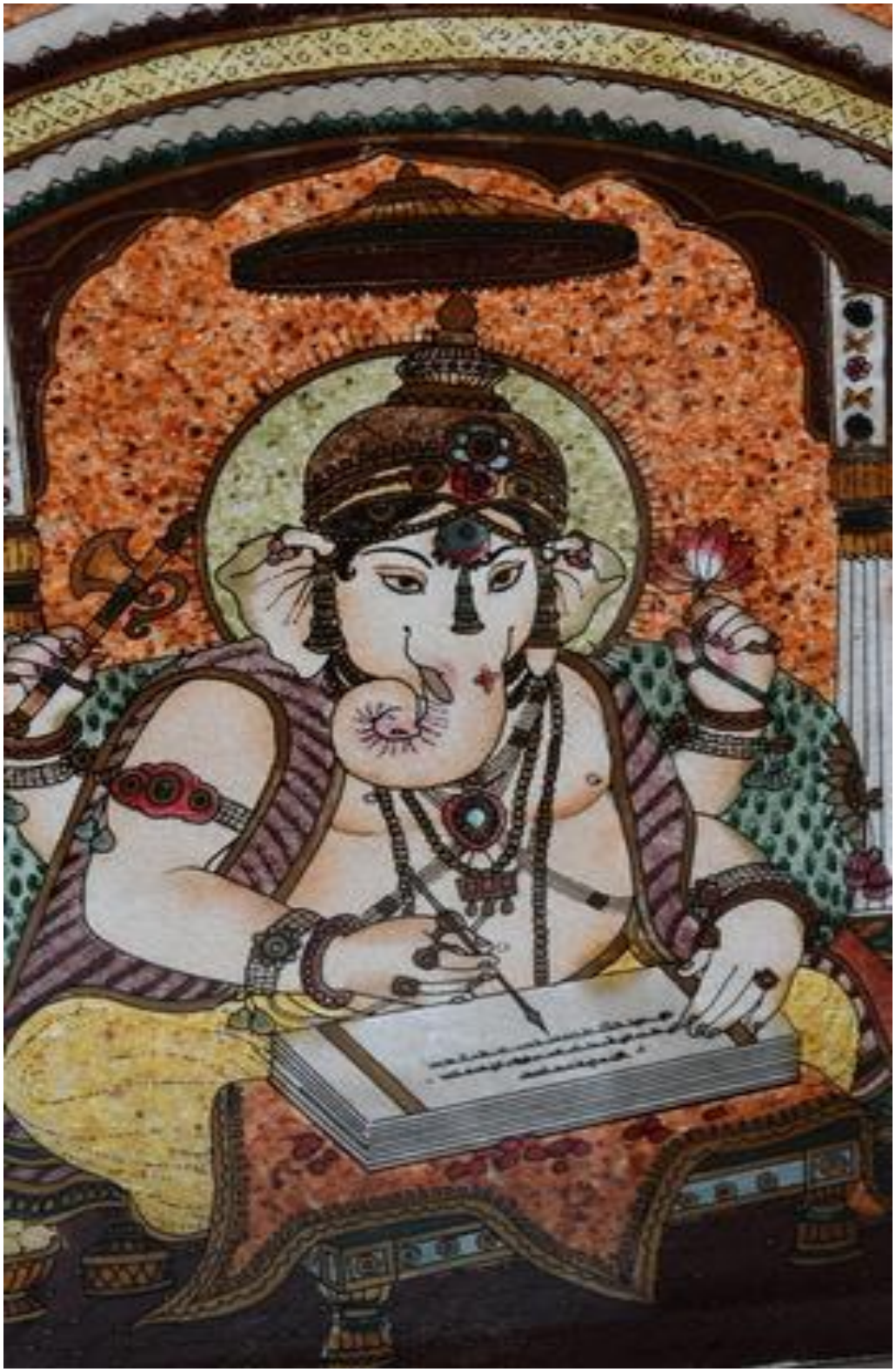

भगवान गणेश महाभारत लिखते हुए

द्रौपदी चीर हरण

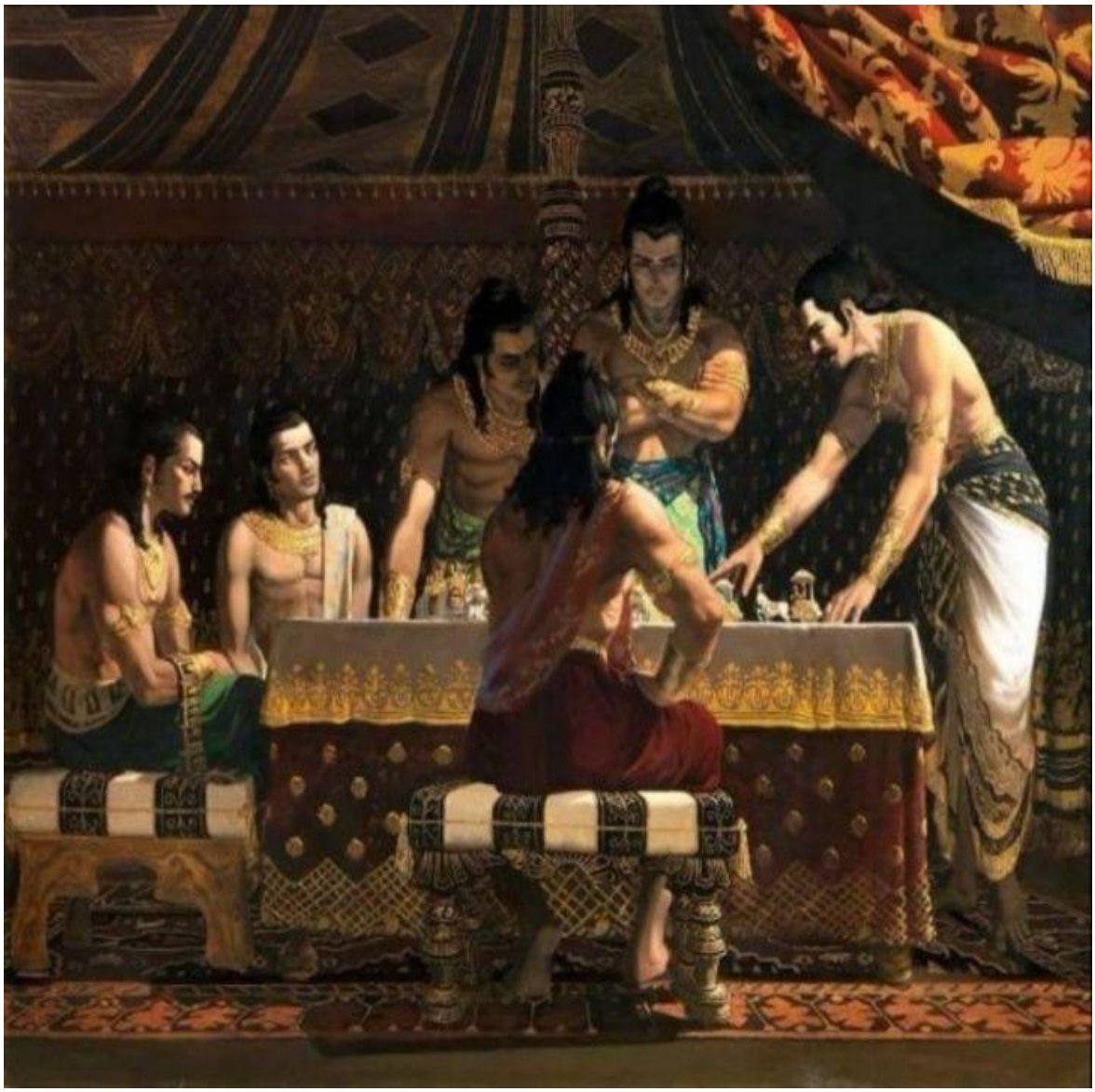

इतालवी चित्रकार ग्याम्पोलो टोमासेट्टी द्वारा बनाया गया महाभारत आधारित काल्पनिक चित्र

स्टार प्लस पर प्रसारित की गई महाभारत की मुख्य नायिकाओं का चित्र

साक्षात्कार

अनुरूपा रॉय

प्रश्न : नमस्कार जी, आप अपना परिचय देंगे ?

उत्तर : जी, मैं अनुरूपा रॉय हूँ, मुख्य तौर पर मैं एक पपेटियर हूँ । 1998 से मैं इस विधा में काम कर रही हूँ। मैं कठकथा पपेट आर्ट्स ट्रस्ट नाम की संस्था चला रही हूँ दिल्ली से ।

प्रश्न : महाभारत और भारत इन दोनों के संबंध को कैसे देखते हैं आप ?

उत्तर : देखिए एक कहावत है जो महाभारत में नहीं है वो कहीं नहीं है, इसका रिवर्स भी सही है कि जो महाभारत में है वो भारत में पक्का है। जो हमारे एपिक्स हैं उनकी अंडरस्टेंडिंग आज के जमाने में बहुत मायोपिक्स शोर्ट्साइटेड हो चुकी है। दो चीज़ इस एपिक और इंडिया के बारे में समझना जरूरी है। यह बहुत पुरानी चीज़ें है और इनको देखने का कोई एक नज़रिया नहीं है, न ही कोई इसका एक लेखक है । महाभारत भी वेद व्यास के इलावा बहुत से लोगों ने लिखा है, जो वेद व्यास के नाम पर मिलता है वो भंडारकर इंस्टीचिउट द्वारा कलेक्ट और पब्लिश किया हुआ मिलता है। वेद व्यास की महाभारत बहुत पुरानी है। यही अंडरस्टेंडिंग हमारी इंडिया की है, हम कुछ छपे हुए मैप या टेक्स्ट बूक द्वारा इंडिया को नहीं समझ सकते। यह हिस्ट्री और यह कहानी बहुत पुरानी है इसका कोई एक नज़रिया नहीं हो सकता। न इस देश को देखने का न महाभारत को देखने का। जो समझता है कि वो इन दोनों चीज़ों को समझ चुका है, वो सिर्फ गुमराह है। यह मेरा प्राइमरी बीलीव है। जितनी विभिन्नता, इतिहास, धर्म, विश्वास, कांबीनेश्न के लोग यहाँ रहते है, उतनी ही कहानियाँ महाभारत में हैं। सब ने जो कहानियाँ हैं वो एक ही नजरिए से देखी है, जैसे शकुनि को सिर्फ विलेन माना जाता है, क्योंकि वो सिर्फ शकुनि की आधी कहानी जानते हैं, चौपड़ से पहले की कहानी को वो जानते ही नहीं है । ऐसे ही भीष्म को एक पितामह की नज़र से ही देखा जाता है किन्तु वहाँ एक आदमी भी था, वो नहीं देखते..... सो मुझे लगता है इसके लिए अपने आइडिया ओर बीलीवस को पीछे रख कर इस एपीक और इंडिया को देखने की जरूरत है। यह सबसे बड़ी चीज़ है मेरे लिए जो महाभारत ने मुझे सिखाई है। खास तौर पर जो ट्राडीशनल मास्टर पपेटियर है जिनसे मिलने का मौका मिला महाभारत पर काम करते हुए, उन्होने मुझे एक ही चीज समझाई कि पुश्तों से उनको एक ही चीज़ बताई जा रही है कि रामायण और महाभारत में कोई जवाब नहीं है, बस सवाल हैं। मुझे भी यही महसूस हुआ कि इंडिया में भी सिर्फ सवाल है, बहुत सारे सवाल है,

और अगर आप इस देश में पैदा हुए हैं तो यह आपको अवसर मिला है बहुत सारे सवालों को टटोलने का, और जहां एक जवाब पर अड़ जाता है इंसान, उन्होने जहां एक सवाल पर, तो उन्होने एक अवसर खो दिया है।

प्रश्न : थिएटर और महाभारत के संबंध को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : देखिए अगर आप देखें कि महाभारत का जो मूल सवाल है वो क्या है ? कहानी कितनी भी क्यों न हो, महाभारत में एक ही चीज़ पूछी जा रही है, जो अंतिम दिन पूछा जा रहा है और हजारों सालों से यही सवाल पूछा जा रहा है, वो बहुत रौचक है, वो सवाल तब भी रेलिवेंट था आज भी रेलिवेंट है, इंडिया के संदर्भ में तब भी था और आज भी है। वह सवाल है कि युद्ध से कभी किसी का भला हुआ है या नही ? शायद इतने हजार सालों में हम इतनी तरक्की ही नहीं कर पाए कि हमारे मूल सवाल ही नहीं बदले दुनिया में। मैं भारत की नहीं पूरी दुनिया की बात कर रही हूँ, अभी यही सवाल है कि युद्ध करना है या नहीं ? जबकि हमें हर युद्ध से यही पता चला है कि युद्ध से किसी का फाइदा नहीं हुआ। फिर भी हम इस मूल सवाल पर अटके हुए हैं, इस लिए जब तक यह मूल सवाल रहेगा तब तक महाभारत रेलेवेंट रहेगा। मुझे लगता है कि थिएटर का भी बहुत बड़ा एक मूल सवाल है कि हमारी होंद क्या है ? थिएटर में हम कुछ चीज़ें हाइलाइट करते हैं जो डेली लाइफ के किसी भी हिस्से में अगर आप काला पर्दा लगा कर हाई लाइट करदे तो वह थिएटरिकल है। जो जिंदगी में रेलेवेंट है वो थिएटर में रेलेवेंट है, जो इस वक़्त के रेलेवेंट सवाल है वोई थिएटर के रेलेवेंट सवाल हैं। तो इसलिए एपिक्स इंपोर्टेण्ट है क्योंकि यह वही सवाल उठाता है जो रेलेवेंट है, अगर वो नहीं उठाते तो वह रहते ही नहीं वो गायब हो जाते हैं। अगर आप देखेंगे ऐसे बहुत से देश हैं जिनके एपिक्स अब बातों में नहीं है बस किताबी हैं। रामायण महाभारत किताबी नहीं है, हम डेली लाइफ में इनकी बात करते है रेफर करते हैं, उसके मुहावरे कहते हैं, क्योंकि आज भी वही सवाल हैं, थिएटर सिर्फ रेलेवेंट चीजों पर ही सवाल करता है, नहीं तो आपके दर्शक थिएटर देखेंगे ही नहीं, उसे दिलचस्पी ही नहीं होगी, मेरे ख्याल से यह सबसे बड़ा कनैक्शन है। दूसरी चीज यह है कि महाभारत में बहुत काम्प्लेक्सिटी है, मतलब कर्ण कुंती संवाद जो सौ साल से पुराना नाटक है से लेके जो अंधा युग है, जब भी हम नाटक देखते हैं हर बार कुछ नया देखने को मिलता है, क्योंकि वो आज के

संदर्भ में ढाला जा सकता है, क्योंकि इसमें ऐसे और इतने पात्र है जो हर समय के संदर्भ में कहीं न कहीं मेंल खाते हैं। मैंने 2001 में महाभारत पर काम किया था और फिर 2015 में, मुझे ये आज भी रेलेवेंट लगता है।

प्रश्न : किस तत्व ने आपको इसपर खेलने को मजबूर किया ?

उत्तर : देखिए महाभारत के हर पात्र में डुयलिटी है। सबसे बड़ी चीज़ है इसके हर पात्र में ग्रे एरिया है कोई भी पात्र ब्लैक व्हाइट नहीं है महाभारत में इंक्लुडिंग कृष्ण। जो पूर्ण अवतार हैं भगवान है लेकिन वो पूर्ण व्हाइट नहीं हैं, बहुत ग्रे शेड हैं इनमें भी, श्री कृष्ण को महाभारत में शाप मिलता है। यह रौचक चीज है महाभारत में हीरो विलेन नहीं हैं, जैसे जिंदगी में हीरो विलेन नहीं होते। हर इंसान कि अपनी कहानी होती है, हर सिचुएशन मिंट में वो कुछ कर रहा होता है, हो सकता है उस मिनट में आप उसे देखें तो हो सकता है वो आपको बहुत अच्छा दिखे, अगले मिनट में वो आपको बुरा दिखे, आप अपने नजरिए से जिस वक़्त देखेंगे वो इंसान बदल जाएगा, और महाभारत इसको बाखूबी दर्शाता है। इसमें बहुत से उदाहरण है। मेरे पपेट थिएटर फोरम में सबसे इंपोर्टेंट चीज़ है कलाकार और पपेट का रिलेशन, जो एक करेक्टर की डुएलिटी है, एक पपेट पपेटियर के बिना नहीं रह सकता और पपेटियर बिना पपेट के, दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। इस जुड़ाव में बहुत इंटेरस्टिंग द्वंध है कोन्फ़्लिक्ट है, GIVE AND TAKE है कह लीजिए। जो महाभारत के पात्रों को समझने के लिए बहुत इंटृस्टिंग हैं हमारे लिए ।

प्रश्न : अपने अपनी प्रस्तुति में किन किन फोरम और तकनीकों का इस्तेमाल किया ?

उत्तर : पपेट और मास्क्स का इस्तेमाल हमने ज्यादा किया है। इसमें डांस के एलिमेंट्स भी काफी रखे थे, जिसमें छऊ सबसे ज्यादा था। इसमें बहुत सी कोरिओग्राफी कलिरिप्यटू से प्रभावित थी, जैसे कि युद्ध के दृश्य। इसमें जो बड़े मानवीय कद के पपेट थे, हम उनको अपने बराबर का रखना चाहते थे, इसलिए हमने उनको हमारे ही कद और फोरम का बनाया था। जिससे कि जब वो इंटरेक्ट करे उदाहरण के तौर पर द्रोणाचार्य का वो सीन दिखाते हैं कि जब उनको बताया जाता है कि "अश्वत्थामा" मर गया है, उस सीन में जो पपेटियर हैं वो खुद पपेट के पीछे से निकल कर यह अफवाह फैलाते हैं, इस तरह पपेट और पपेटियर बराबर के एक्टर हो जाते हैं, अगर पपेट बहुत छोटा हो तो उसका पपेटियर के साथ रिश्ता बादल जाता है, हम

चाहते थे कि उनका बराबर का रिलेशन हो पपेट और पपेटियर का, हम एक्टिव रहें स्टेज पर।

प्रश्न : नाटकीयता को मंच पर कैसे निकाल कर लाते हैं ?

उत्तर : महाभारत बहुत जगह अलग अलग तरीके से सुनाई जाती है अगर आप मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ चले जाएँ तो वहाँ पंडवानी शेली में सुनाई जाती है अगर आप हिमाचल चले जाएँ तो वहाँ भीम का पहाड़ है। हमने जो महाभारत का परफ़ोर्मेंस स्टाइल अपनाया वो कर्नाटका के लेदर शेडो तकनीक से प्रेरित था। जब नाटक शुरू होता है तो शुरू का कुछ हिस्सा आदि पर्व का जब पांडव और कौरव पैदा हो जाते हैं के जन्म तक लेदर शेडो पपेट में ही हमने दिखाया है। फिर हमने आधुनिक पपेट तकनीक पर स्विच किया, जो मानव कद के पपेट हैं, जो मास्क पपेट का एक कम्बाइन फोरम है, इसको हमने बाद वाले हिस्से में रखा। इसमें हमें सिल्लाकाया का महाभारत दिखाया। यह जो महाभारत है यह कभी लिखी नहीं गई यह बस सुनाया गया है। इस कथा को सुनाने वालों कि 9वीं पीढ़ी के गुललु राजू जी है उनके माध्यम से हमने यह कहानिया ली। यह कहानियाँ अभी तक जो हमें सुनने और देखने को मिलती हैं यह उनसे बहुत अलग है। जब वह कहानियाँ आपको पता चलती हैं तो हीरो कौन रह जाता है और विलेन कौन रह जाता है,बहुत कन्फ़्युशन हो जाती है। महाभारत की कहानी के अंदर जो कहानियाँ हैं वह बहुत दिलचस्प हैं। उससे आपको पता चलता है जिंदगी को देखने के बहुत नजरिए हैं। हमारे नाटक का मेन फोकस था कि हम वो स्टीरियो टाइप तोड़ेंगे जो टेलिविजन के महाभारत, पोपुलर कलचर के महाभारत को सुन कर जो हमारे दिमाग में बस गया है। मेन स्ट्रीम नेरेटिव पर हर वक़्त सवाल उठाना हमारा उदेश्य था।

प्रश्न : आपकी नाटकीयता की क्या परिभाषा है ?

उत्तर : देखिए, नाटकीयता जो हम रंग कर्मी हैं सबसे पहले हमें समझना है हमारा काम क्या है। कुछ लोग समझते हैं हमारा काम सिर्फ मनोरजन करना है, लेकिन उसके लिए अलग चीज है, अगर आपको 3 घंटे के लिए सब कुछ भूल जाना है या पॉप कॉर्न खाना है तो वो काम बॉलीवुड कर रहा है। वो एक तरह का सब कुछ भूलाने वाला आपको वो एक नशीली पदार्थ कि तरह है वो, पर मुझे नहीं लगता कि थिएटर का काम वो है। मेरी नाटकीयता की जो पर्सनल चॉइस है कि अगर कोई मेरा नाटक देखने आ रहा है तो मेरा काम उसका मनोरंजन करना नहीं है । मेरा काम उसके दिमाग में वो बीज डालना है जो शायद सिनेमा, टेलिविजन और मेंनस्ट्रीम

मीडिया नहीं डाल रहा है – वो है जो सुनो उसपे यकीन करो, जो देखो उसपे यकीन मत करो, हर चीज़ पर सवाल उठाओ, हर चीज़ को पूछो क्या इसमें कुछ और भी है ? मेरा नाटक करने के पीछे यह सबसे पहला मकसद है। दूसरी चीज यह है कि जो चीज़ हम स्टेज पर दिखा रहे हैं वो किसी और मीडियम की कॉपी नहीं होनी चाहिए, क्योंकि हमारे मीडियम का एक वजूद है। थिएटर सिर्फ सुनी और देखी नहीं जाती है। जो देखी और सुनी जाती है वह टेलिविजन है। थिएटर महसूस की जाती है, सूंघी जाती है। थिएटर में एक्टर और दर्शक एक दूसरे को महसूस करते हैं। स्टेज पर बहुत कुछ होता है जो सिर्फ देखा और सुना नहीं होता है। एक्टर भी दर्शक को रिसपोन्स दे रहा होता है, और दर्शक भी एक्टर को रिसपोन्स दे रहा होता है। यह हमारे लिए समझना बहुत जरूरी है। मेरे लिए नाटकीयता वो मीडियम है कि सब सेंसेज को, 5 सेंसेज को नज़र में रखते हुए और शायद कभी कभी 6थ सेंस को नज़र में रखते हुए नाटक बनाते है।

प्रश्न : आपकी पसंदीदा नायिका कौन है और क्यों ?

उत्तर : यह तो कहना बहुत मुश्किल है क्योंकि महाभारत जो है वो बहुत कॉम्प्लेक्स नेरेटिव है, जैसा मैंने कहा कि इसका कोई एक वर्शन नहीं है। अगर आप बोलें कि हिडिंबा को हटा दो तो महाभारत आगे बढ़ेगा ही नहीं क्योंकि वो भी बहुत ज्यादा इंपोर्टेंट एलिमंट है, इसमें हिडिंबा के नज़र से महाभारत को देखा गया है। जितने किरदार हैं, उतने नज़रिए की महाभारत है। जैसे महाभारत में एक किरदार है "बर्बरीक" बहुत से लोगों ने उसका नाम भी नहीं सुना, उसकी भी अपनी महाभारत है। महाभारत नज़रिए का खेल है। अगर आप पंडवाणी देखेंगे वो "द्रौपदी" के नज़रिए से है। पूरा पंडवाणी द्रौपदी के नज़रीए से खेला जाता है । आप नॉर्थ केरला जाएंगे तो वहाँ पर दुर्योधन महाभारत है। वहाँ उसका मंदिर हैं जहां उसकी पूजा होती है । ऐसे आप किसी एक को नहीं कह सकते कि इसके बिना महाभारत हो सकती है। वह हमेशा डिपेंड करता है आप कौन सा वर्शन चला रहे हो। अगर आप चोपड़ा साहिब की बात करें तो बहुत से किरदार थे जो उन्होने दिखाए ही नहीं यह उनकी चॉइस थी निर्माता के तौर पर । जब हमने महाभारत किया तो हम भी बहुत सारे किरदार नहीं दिखा पाए । क्योंकि यह बहुत बड़ा है कि आप किसके बारे में बताओगे और किस बारे में छोड़ोगे। मेरे ख्याल में सेंट्रल क्रेक्टर कौन है बहुत मुश्किल है यह कहना। हमने अपने नाटक में मुख्य तौर पर द्रौपदी, गांधारी और अम्बा इन तीनों पर बहुत सारा काम किया था। पर यह हमारी चॉइस थी, इसका मतलब यह नहीं कि यह बहुत जरूरी है। हम पूरा नाटक कुंती और हिडिंबा पर भी कर सकते हैं, उतने ही सेंट्रल

क्रेक्टर यह दोनों भी है। अगर मैं कहूँ कि यह मेरे लिए ज्यादा इंपोर्टेण्ट है तो यह इंजस्टिस है। मेरी कोई फेवरेट नायिका नहीं है। लेकिन मेरी जो फेवरेट महाभारत वर्जन है वो सिलिकीयट्टा है। मुझे पंडवाणी बहुत अच्छी लगती है

प्रश्न : रंगमंच में महाभारत का भविष्य कहाँ तक देखते हैं ?

उत्तर : देखिए जब तक कोनफ्लिक्ट है, युद्ध है महाभारत कहीं नहीं जा रहा, महाभारत बहुत रेलेवेंट है। बहुत सी रौचक चीजे एक ही जगह पर हैं। जब हमने अपनी महाभारत बनाई थी तो कभी नहीं सोचा था कि सबसे ज्यादा शो हम कॉलेज स्टूडेंट्स के लिए करेंगे। हमें आज कल जो इनिविटेशन आती हैं वो युनिवर्सिटी के ड्रामाटिक सोसाइटी से आती हैं। जो मेरे लिए बहुत सरप्राईजिंग है। लोग कहते है यंग जनरेशन के लिए क्या रामायण क्या महाभारत, उनको यह सब अच्छी नहीं लगती। हाँ उनको टेलिविजन सीरियल वाली अच्छी नहीं लगती वो दौर गया, जब वो चल रहा था लोगों को बहुत अच्छा लगता था। आज की डेट में सिनेमा टेलिविजन की स्पेशल एफेक्ट कहाँ से कहाँ पहुँच गई है। जिस तरह की एडिटिंग हो रही है, जिस तरह की कॉम्प्लेक्स फिल्में बनाई जा रहीं हैं , वो चाहते हैं उनको नई कहानियाँ सुनाई जाएँ। हम एक बार कुरुक्षेत्र गए तो वहाँ हरियाणा हिमाचल और पंजाब के काफी यंग रंगकर्मी को आम लड़के लड़कियां नाटक देखने आए थे । हमने उनको गुड्डू राजा जी के माध्यम से महाभारत कि वो कहानियाँ सुनाई जो उन्होने कभी सुनी ही नहीं । जिनमें बहुत से सवाल और आज से तालमेंल रखने वाली थीं ।

जी॰चन्दन देवी

प्र्शन : नमस्कार, मैं चाहूँगा आप थोड़ा सा अपना परिचय दे दीजिए प्लीज ?

उत्तर : मैं जी॰ चंदन देवी, मैं जवाहर लाल नेहरु मणिपुर डांस अकादमी में बतौर कलाकार कार्य करती हूँ। मैं संगीत नाटक अकादमी द्वारा युवा पुरुसकार "बिस्मिल्ला खान" से सम्मानित हूँ। 20 से 25 डांस ड्रामा की अलग अलग प्रस्तुतियाँ हम कर चुके हैं । पिछले 15 साल मैं यह डांस ड्रामा कर रही हूँ।

प्रश्न : भारत और महाभारत के संबंध को कैसे देखते हैं आप ?

उत्तर : हम लोग मणिपुरी हैं वैष्णव हैं, हम यह कथा भी सुनते हैं और पढ़ते भी हैं। सब जानते हैं महाभारत के बारे में । इसके बारे में और ज्यादा कुछ नहीं कह सकती ।

प्रश्न : डांस ड्रामा को महाभारत कैसे सपोर्ट करता है ?

उत्तर : इसमें डांस स्टेप सब मणिपुरी का है सिर्फ स्टोरी महाभारत से लिया है। यह 11 संकीर्तन का, रास लीला और फोल्क डांस को कलेक्ट करके हमने इसको बनाया है।

प्रश्न : गांधारी के किस मुख्य तत्व ने आपको आकर्षित किया खेलने को ?

उत्तर : ज्यादा जानकारी नहीं है

प्रश्न : महाभारत की नारी और आज की नारी कहाँ खड़ी है ?

उत्तर : ज्यादा जानकारी नहीं है मुझे ।

प्रश्न : थिएटर में महाभारत का क्या भविष्य देखते हैं ?

उत्तर : जो आज का राजनीतिक माहौल है वो ही महाभारत का है सो यह थिएटर को सपोर्ट करेगी ।

प्रश्न : आपकी नज़र मे नाटकीयता क्या है ?

उत्तर : हंसी खुशी सब नाटकीयता है। गांधारी का श्री कृष्ण को शाप देना, द्रौपदी का चीर हरण सब नाटकीयता है।

प्रश्न : नाटकीयता को मंच पर कैसे प्रस्तुत करते हैं ?

उत्तर : हम सब पहले स्क्रिप्ट पढ़ते हैं, उसको विजुयालिज करते हैं। इसमें हमने मार्शल आर्ट्स का इस्तेमाल भी किया है, मणिपुरी संगृत्र भी इस्तेमाल किया है, रास लीला के साथ साथ पुंग

चोलम-ढ़ोल चोलम का इस्तेमाल भी किया है और मणिपुरी फोल्क डांस का इस्तेमाल भी किया है ।

प्रश्न : आपकी पसंदीदा नायिका कौन है और क्यों ?

उत्तर : मेरी पसंदीदा नायिका कुंती है , वह बहुत अच्छी है उसके अंदर प्यार है बेटों के लिए समाज के लिए ।

प्रश्न : आज के मीडिया के युग में महाभारत कहाँ खड़ी है ?

उत्तर : ज्यादा जानकारी नहीं है ।

प्रश्न : युवा मन में महाभारत कैसे स्थान बना पाएगी ?

उत्तर: बच्चो को जानना जरूरी है, हिस्टरी है, प्यार है इसमें सब है।

(जी° चंदन° देवी मणिपुर से है, वह अपनी क्षेत्रीय भाषा मे ही ज्यादा बात करती है। हिन्दी और अँग्रेजी भाषा न समझने के कारण काफी कुछ सांझा करने से वंचित रह गए)

डॉ संध्या शर्मा

प्रश्न : आप अपने बारे में परिचय देंगे ?

उत्तर : मैं अपने आप को एक टीचर मान कर चलती हूँ। क्योंकि टीचिंग के दौरान ही मैंने ये सब कुछ सीखा है। इस समय मैं इंचार्ज कलचर एक्टिविटी, एच°ओ°डी हरियाणा एग्रिकलचर युनिवर्सिटी में काम कर रही हूँ। हमारे यहाँ कलचर डिपार्टमेंट है जहां हम फोल्क लोर पर काम करते हैं, यहाँ म्यूजिक है ड्रमैटिक है। मुख्य उदेश्य हमारा फोल्क लोर है क्योंकि हम किसानों से कनेक्ट करते हैं। स्वांग और नुक्कड़ नाटक इत्यादि के द्वारा जहां तक हम लोगों से कनैक्ट हो पाएँ यही हमारा उदेश्य रहता है। मैं मुख्य तौर पर क्लासिकल वोकलिस्ट हूँ, मैंने इसमें मास्टर और नेट पीएचडी किया है कुरुक्षेत्र यूनिवेर्सिटी से। 2005 में मैं शिक्षा के क्षेत्र में आई, 5 साल मैंने डी°एन कॉलेज में मैंने बतौर लेक्चरार पढ़ाया, उसके बाद यूनिवर्सिटी में 2011 में मैं आई, अभी तक यहीं हूँ ।

प्रश्न : भारत और महाभारत के संबंध को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : देखिए जब हम महाभारत के संदर्भ में बात करते हैं महाभारत का युद्ध अवश्य कुरुक्षेत्र की भूमि पर हुआ । लेकिन इस में जगह जगह से योद्धा जुड़े हुए थे। इंद्रप्रस्थ की बात करें तो सीधे सीधे दिल्ली जुड़ जाती है, हस्तिनापुर जुड़ा ,यूपी का भी कुछ पार्ट जुड़ा हुआ था। जो इसका रिच कलचर था, जो श्री गीता का उपदेश दिया वो हरियाणा की धरती पर दिया। उससे हरियाणा वाले हम खुद को इडेंटिफ़ाई करते है। पर यह युद्ध पूरे भारत का था, जो संदेश दिया वो सबके लिए था।

प्रश्न : महाभारत और फोल्क थिएटर के संबंध को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : फोल्क थिएटर का मतलब होता है लोगों से जुड़ा हुआ संगीत, लोगों से जुड़ा हुआ नाट्य । जो हम कहना चाहते हैं जब हम उसको साधारण भाषा में बगैर ताल के बंधन के, बगैर स्वर के बंधन से उन्मुक्त होकर जब हम कोई बात कहते हैं तो वो फोल्क बन जाता है, उसको हमने अलग अलग धाराएँ जरूर दे दी कि ये लोक गीत हो गए, ये लोक नृत्य हो गए ये लोक नाट्य हो गया, मुख्य तौर पर लोक संगीत तो इन तीनों का समावेश ही है। स्वांग में भी इन तीनों का समावेश ही है। एक स्वांग कलाकार का अच्छा गायक, नृतक होना जरूरी है, उसको थिएटर की समझ होना भी जरूरी है। इसी तरह जब महाभारत की बात करें तो अज्ञातवास के दौरान

अर्जुन ने वृहनलला का रूप धारण किया था। वहाँ जब अर्जुन ने संगीत की शिक्षा दी थी तो ऐसा नहीं था कि वो उसमें बहुत ज्यादा पारंगत था, वो तो एक धनुर्धर था। उसने लोक विधा के माध्यम से जो बेस्ट हुआ वो उसने सिखाया और जिसका रिज़ल्ट भी आया। जो बात आप कहना चाहते हैं और अगर वो आपकी बॉडीलेंगुएज कह रही है, तो उसे से तो लोक कला की उत्पत्ति होगी। महाभारत में भी लोक कला के माध्यम से बहुत सारी चीजें कही गई। जब आप महाभारत में श्री कृष्ण के संवादों को पढ़ते हैं, तो आपको पता चलता है वो तो 16 कला सम्पन्न थे। उन्होने संगीत और नृत्य के माध्यम से जो चीजें कहीं उसमें कोई बंधन थोड़ी था किसी चीज का कि वो पूर्ण शास्त्रीय होना चाहिए, गायन में आपको रागदारी आनी चाहिए, नहीं... जो आपके मन को अच्छा लग रहा है, जो राधा को अच्छा लग रहा है, जो गोपियों को अच्छा लग रहा है, श्री कृष्ण ने वही तो संगीत गाया न। क्योंकि तभी तो उस से श्रृंगार रस की उत्पत्ति भी हुई न वहाँ पे जो महारास भी हुआ जो भी उस समय राधा ने साथ जो भी संवाद हुए और संगीत का प्रयोग हुआ। लोक कला और शास्त्रीय कला एक दूसरे से जुड़े हुए है, लोक कला से ही शास्त्रीय कला निकली, और जो शास्त्रीय संगीत बना वो लोक कला से ही बना बाद में। इसको अलग अलग नहीं कहना चाहिए, ये दोनों पूर्ण चीज है और एक दूसरे को औथेंटिक रूप देते हैं। शास्त्रीय संगीत लोक संगीत का पार्ट है। महाभारत का काल इसका सबसे उत्तम उदाहरण है। जहां पे इतना संगीत का काम हुआ।

प्रश्न : ऐसे कौन से तत्व है जो महाभारत पर लिखने और खेलने को मजबूर करते हैं ?

उत्तर : इसका सबसे प्यारा जो एलिमंट पता क्या है, वो है इसकी सिंप्लीसिटी। इसमें आप बहुत सिम्पल ढंग में बात कह जाते हो, जैसे कि मैं अभी आपको एक संवाद सुनाती हूँ, आप सिम्पल भी बोल सकते हैं उसको लेकिन जब आप उसको संगीत के माध्यम से बांध देते हैं न तो उसमें क्या है उसमें एक रौचकता उतपन होती है। अभी मैं आपको एक प्रसंग सुनाती हूँ जब युद्ध का शंखनाद हो चुका है और श्याम बाबा जिसको वीर बर्बरीक कहते हैं वो वहाँ आ गए, तो श्री कृष्ण क्या सोचने लगे, उसको हम सिम्पल भी कह सकते थे लेकिन उसको थोड़ा सा संगीत बद्ध करने से कितनी सुंदर बन गई वो चीज, हरियाणा के लोक संगीत में एक सबसे सुंदर बात है, कि गाना जो ठहराव का तरीका नहीं है, गाने से रागिनी से कहानी आगे बढ़ती है। ये माध्यम है

कहानी को आगे बढ़ाने के लिए ये रोचक माध्यम है, यह मुझे बहुत अच्छी लगती है , मैं आपको गा कर सुनाती हूँ यह

कृष्ण सोचे मन ही मन में, कि कौरव हारेंगे रण में

पांडव जीतेंगे युद्ध में, ये कैसी बिपदा आई (गायन के साथ)

ये बिपदा कौन है , श्याम बाबा यानि कि वीर बर्बरीक (जब वो महाभारत के रण में आते है)

अगर इसने युद्ध को लड़ा , ये तो वीर है बड़ा

अकेला रहेगा खड़ा, कौरव जीत जेंगे भाई (गायन के साथ)

ये बहर ए तबील हमारे यहाँ गाई जाती है, उसके अंदर हमने इसको बांध दिया। इसमें ऋद्धम का पार्ट भी जुड़ गया। अब कहानी आगे बढ़ा के ले जा रहा है। इसमें ये नहीं है कि एक बार आपने जिसपे गा दिया, जिसपे एक लाइन आपने गाई, आगे जो पूरे का पूरा किस्सा होगा , या रागिनी की बात होगी या जो उस गीत का पार्ट होगा, वो कहानी को आगे लेके जाएगा वो रोकेगा नहीं । तो ये इसकी बहुत सुंदर चीज थी । इसमें छ्ंद, दोहे, चौबोले काफिया और कई सारी चीजें आती हैं। यही इसकी सिंप्लीसिटी कि चीज है, आपको जो बात कहनी है वो आप संगीत के माध्यम से कहदो। क्या फर्क पड़ता है ।

प्रश्न : आपकी नज़र में नाटकीयता की क्या परिभाषा है ?

उत्तर : मेरी नज़र में इसकी एक ही परिभाषा है, जो चीज आप कहना चाहते हो जो चीज आपके मुंह से निकल रही है, जब आपका शरीर भी उसी बात को कहेगा साथ में तो वो खुद ही नाटकीयता बन जाएगा । अगर आपकी बॉडी लेंगुएज वही चीज कह रही है, साधारण से ढंग से जो आप कहना चाह रहे हो, बगैर किसी आडंबर के, किसी फालतू के नुएनसिस को डाले बगैर, आपकी भाव भंगिमा भी जब वही बात कहना चाहेगी, आपका शरीर आपकी जुबान बोल रही है उस बात को , तो वो खुद ही नाटक में कन्वर्ट हो जाएगा । इस से सुंदर तो कुछ बन ही नहीं सकता मुझे लगता है ।

प्रश्न : आपकी सबसे पसंदीदा नायिका कौन है और क्यों ?

उत्तर : मुझे द्रौपदी बहुत आकर्षित करती है हमेंशा से, उसके अपने प्रिन्सिपल रहे लाइफ के। वैसे अगर मैं एक महिला के तौर पर बात करूँ, तो मुझे कुंती की एक बात बहुत अजीब लगती है जब उसने कर्ण को छोड़ा सिर्फ दुनियादारी की मरियादा के चक्कर में, वो चीज मुझे

अखरती है और जब युद्ध से पहले कुंती कर्ण के पास जाती है उसको पांडवो से मिलने के लिए, कि मैं तुझे बड़े बेटे का दर्जा दूँगी। ये जो चीज है मुझे खटकती है यहाँ पे, कि प्रिंसिपल के साथ समझौता हुआ कहीं न कहीं, as a female अगर जब भी मैं कोई चीज खेलती हूँ या स्वांग करती हूँ। पहले मैं उसको अपने आप से कनेक्ट करती हूँ, कि क्या मैं कभी ऐसा करूंगी ? क्या ये मेरे साथ होगा तो मैं उस स्थिति में क्या रेयक्ट करूंगी ? पर जो द्रौपदी है वो मुझे इस मामले में कहीं न कहीं प्रिन्सिपल वाली लेडी लगती है । उसको मैं खेलती भी हूँ उसकी बात करती हूँ । मैंने कीचक-द्रौपदी भी किया, उसकी एक अपनी अस्मिता थी, अपना औरा था । द्रौपदी जो लेकर चलती है, सही माईने में यह द्रौपदी का संघर्ष ही तो है महाभारत। यह इसके संघर्ष से ही शुरू होता है और इसका अंत भी वहीं होता है । जब वो दुर्योधन के रक्त से अंत में नहाती है, मुझे लगता है यही द्रौपदी है यही माँ काली है। द्रौपदी ही मुझे आकर्षित करती है हमेशा से ।

प्रश्न : आपको किस नायिका में सबसे ज्यादा नाटकीय तत्व लगते हैं और कैसे ?

उत्तर : देखिए राधा अपने आप में एक संपूर्ण कलाकार थी। राधा से संबंधित आप कोई भी प्रसंग लेंगे तो वो प्रेम की परिकाष्ठा तक उसको लेके जाएगी। अगर हम गोपियों की बात करते हैं तो जब श्री कृष्ण उनको छोड़ कर आए, तो बिरह का उन लोगों ने संदेश दिया , आज भी कहते हैं कि श्री कृष्ण के इंतज़ार में वो जो गोपियाँ हैं, वो पत्तियाँ हैं, वो जो तुलसी के पौधे हैं बेसिकली वो गोपियाँ ही हैं। उन्होने अपनी पूरी जिंदगी बिरह में और श्री कृष्ण के इंतज़ार में निकाल दी। आप उन गोपियों की भी उदाहरण लेकर चल सकते हैं। जिनके लिए श्री कृष्ण ने महारास किया और लाखों श्री कृष्ण बन गए सिर्फ गोपियों के लिए उनके प्यार के लिए। इसके इलावा अगर हम बात करें अभिमन्यु की पत्नी की उत्तरा की, तो उससे भी उदाहरण ले सकते हैं। अभिमन्यु के मरने के बाद उसने अपने बेटे को उत्तराधिकारी बनाया, फिर आगे परीक्षित हुए और उनकी पूरी वंश परंपरा चली । वो बहुत बड़ी उदाहरण है धैर्य का , उसको बहुत कम समय मिला अभिमन्यु के साथ जीने का, उसके बाद सारी ज़िंदगी पांडव वंश को बढ़ाने में लगा दी। अगर द्रौपदी की बात करें तो श्री कृष्ण एक जगह वीर बर्बरीक से पूछते हैं, तुमने इस पूरे युद्ध में क्या देखा ? कौन इसका करता था और कौन कारक था इस युद्ध का ? क्योंकि इस युद्ध में सिर्फ तुम ही वो व्यक्ति हो जिसने इस सम्पूर्ण युद्ध को देखा। जो अर्जुन और भीम थे वो अपने अभिमान में थे। अर्जुन कहता था कि मैंने अपने गाँडीव के दम पर युद्ध जीता और भीम कहता था मैंने अपनी गदा के दम पर युद्ध जीता। तो श्री कृष्ण कहने लगे, नहीं- युद्ध सिर्फ एक

ही पुरुष ने देखा और वो था बर्बरीक। तो वो बर्बरीक से पूछते है कि आप बताओ अपने क्या देखा इस पूरे युद्ध में ? तो वो कहने लगे - श्री कृष्ण के इलावा सिर्फ एक ही महिला मुझे इस युद्ध में दिखाई दी और वो महिला थी द्रौपदी। द्रौपदी माँ काली का विकराल रूप धारण किए हुए खप्पर भर रही थी और खून पी रही थी। श्री कृष्ण का सुदर्शन एक के बाद एक गरदनों को अलग किए चले जा रहा था । पूरा युद्ध द्रौपदी और श्री कृष्ण के कारण हुआ , इस के करता भी यही थे और कारक भी यही थे बाकी लोग तो बस इसके हेतु थे, बाकी लोग तो बस कठपुतलियाँ थे , ये दोनों जैसे चला रहे थे सब चल रहे थे। यह पूरा युद्ध बस दो ही लोगों का था वो द्रौपदी और श्री कृष्ण का युद्ध था। द्रौपदी को माँ काली की संज्ञा दी और श्री कृष्ण को इसका करता बना दिया । अगर हम बात करें कि आप ने अपनी अस्मिता के लिए किस तरीके से लड़ना है अंत तक लड़ना है। उसकी आप जो प्रेरणा है वो आप द्रौपदी से ले सकते हो कि चाहे कितनी भी कठिन परिस्थिति आई वो अपने उदेश्य से डगमगाई नहीं । वो अंत तक उस युद्ध का हिस्सा बनी रही और अंत में वही जीती, पांडव तो क्या जीते द्रौपदी जीती ।

प्रश्न : कौन कौन से तत्वों का इस्तेमाल आप अपनी प्रस्तुति को रौचक बनाने के लिए करते है ?

उत्तर : हम इस बात का ख्याल रखते हैं कि अगर हम उसको प्रस्तुत करेंगे तो कैसे करेंगे, बहुत साधारण और आकर्षक ढंग से जिससे दर्शक हमारे साथ जुड़े । अगर दर्शक जुड़ेंगे ही नहीं और हम पारंपरिक ढंग से सुनाते चले जाएंगे सारे स्वांग को तो भी उसका कोई फाइदा नहीं है। जब तक यंग जनरेशन नहीं जुड़ेगी तब तक उसका कोई फाइदा ही नहीं है हमें। यंग जनरेशन जब तक हमें सराहती नहीं, हमारे लिए डेढ़ घंटा निकालती नहीं कोई फायदा नही हमें और हमारे अगले शो को देखने के लिए तैयार ही नहीं है तो हमारा स्वांग खेला ही बेकार जाएगा। उनके अंदर एक इन्स्पिरेश्न बनना अपने आप में एक बहुत बड़ी बात होती है । हमारे यहाँ क्या करते थे जिसको हमने बदला है, जब कथा सुनाते थे तो कहते थे "एक बार की बात है, एक पिंगला रानी होती थी, पिंगला रानी कहने लगी राजा भरथ्री से कि मुझे जो है दारोगा से प्यार है। या विक्रमादित्य क्या कह रहा है ।" तो उन्होने रागिनी गाणी शुरू करदी, कि उसके प्यार में पड़ी है पिंगला रानी, आदमी ही सुना रहे हैं और आदमी ही पिंगला का गाना गाने लगे। तो क्या हुआ कि वो कथा के रूप में चलने लगा था सारी चीज। जैसे हम अपने बच्चों को स्टोरी नरेट करते हैं । हमने कोशिश की कि हम लोग कथा नरेट न कर के अगर उस पात्र को अपने अंदर ले आएँ ! यानि कि अगर पिंगला बनना है तो मैं खुद ही पिंगला बन जाऊँ । मैं यूं कहूँ "महाराज

! आपसे एक बात कहना चाहती हूँ कि आप मुझे बहुत अच्छे लगते हो" एक तो ये बात खुद कहनी राजा से, और एक ये बात कहनी "पिंगला कहने लगी महाराज आप मुझे बहुत अच्छे लगते हो, तो क्या कहने लगी पिंगला रानी" उसमें उन्होने रागिनी सुना दी। इसमें न हो बॉडी लेंगुएज पे काम हुआ न किसी और चीज पे। बस वो कथा नरेट होती चली गई । और हमने बोला "महाराज हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं , मेरी बात ध्यान से सुनिए" तो हमने अपनी कही जैसे

"बिछरी चौपड़ सार महल में, खेल घड़ी दो चार कि हम तुम प्यार करें" (गायन में)

अपनी बॉडी लेंगुएज से भी डाल दी वो चीज, अपने भावों को भी उनके अंदर ले आए और खुद ही पिंगला बन गए तो उससे क्या हुआ खुद ब खुद वो चीज सुंदर बन गई । फर्क कुछ भी नहीं है रागिनी वही है, गाना वही है, कहानी भी वही है, सिर्फ उसका ट्रीटमंट बदल दिया । जिससे वो थोड़ा अट्रेक्टिव हो गया और यंग लोगों को अच्छा लगने लगा, हमारे स्टूडेंट्स को। हमने पहला प्रयोग अपने स्टूडेंट्स के साथ ही किया । जब हमारे बच्चो को अच्छा लगने लगा वो धीरे धीरे एनहेन्स हो गया। बस हमने इसका ट्रीटमंट बदला है । बात करने का तरीका बदला है और कुछ नहीं ।

प्रश्न : इसकी जो कथा कहानिया हैं, आप इनका चुनाव और विभाजन कैसे करते हैं ?

उत्तर : इसके अंदर सबसे पहले वही एलीमेंट आता है कि आपको क्या अच्छा लगता है। क्योंकि जब आपको कुछ अच्छा लगेगा तभी तो आप दर्शकों को कुछ अच्छा दे पाओगे। जो आप कहानियाँ पढ़ते हो, आप यूं लगालो हम 50 कहानियाँ पढ़ते हैं, फिर जा के कोई एक चीज अटरेक्ट करती है । फिर उसके अंदर अपने एलीमेंट डाले जाते हैं कि हम कैसे कहेंगे उस चीज को। सुंदर ढंग से हम क्या बेस्ट दे सकते हैं। वो कुछ चीजें मिल कर एक स्टोरी बनती है । जो आपको अटरेक्ट करेगी वोई दर्शकों को करेगी बस यही सिम्पल सी बात है।

प्रश्न : महाभारत में आप कैसे नाटकीयता देखते हैं ?

उत्तर : मुझे लगता है एक एक प्रसंग जो है अपने आप में इतना रिच है कि अगर आप उसका निचोड़ निकालना शुरू करो न तो हर चीज उसमें से सुंदर बन जाएगी। हम बात करें गांधारी की तो वो अपने आप में बहुत बड़ा एलिमंट है सेकरीफाइस का । उसने सिर्फ अपने पति के लिए आँखों पर पट्टी बांध ली सारी ज़िंदगी के लिए। जब आप उसके परिपेक्ष में बात करते हो तो एक पूरी प्रॉडक्शन निकल कर आती है गांधारी की। जब आप बात करते हो सुभद्रा की तो

वो भी अपने आप में एक बहुत बड़ा एलीमेंट है। कुंती भी एक बड़ा एलिमंट है। अर्जुन अपने आप में बड़ा सक्षम था। श्री कृष्ण का तो आप कोई भी प्रसंग उठा लो वही अपने आप में 16 कला सम्पन्न है, चाहे आप उनका वृन्दावन से संबन्धित उठालो, चाहे मथुरा का कंस संबन्धित प्रसंग उठालो, चाहे अर्जुन और श्रीमद भगवत गीता का प्रसंग उठा लो, कर्ण के साथ इनका प्रसंग है, दुर्योधन के साथ इनका प्रसंग है। भीष्म अपने आप में बहुत बड़ा प्रसंग है। महभरात इतना अमीर है कि आप इसको जितना पढ़ें इसमें से कुछ न कुछ हर बार नया ही निकलता चला जाता है। आपको लगता है आपने पढ़ रखा है, आपको लगता है आपको सब कुछ पता है। लेकिन जैसे ही इसके अंदर जाना शुरू करते हो आपको एक न एक नई चीज मिलती है । शकुनि भी अपने आप में बहुत कमाल का एलिमंट है, वो अपनी बहन को बहुत ज्यादा प्यार करता था। उसको लेके चलो तो महाभारत सिर्फ बदले का युद्ध लगता है। शकुनि का बदला ही महाभारत है। द्रौपदी का बदला महाभारत लगता है। धृतराष्ट्र अपने आप में एक ऐसा पात्र है जो इन-कोंपिटेंट होते हुए भी कोंपिटेंट है । उसमें एक अंधापन था पर उसने कभी खुद को कम नहीं समझा हर जगह पर उसने रोल प्ले किया । चाहे युद्ध के अंदर हो चाहे भीष्म के समय हो, चाहे पांडु को निकालने में हो। अगर आप धृतराष्ट्र की प्लोटिंग देखते हैं तो बहुत बड़ा पलोटर था वो। महाभारत के अंदर हर इंसान एक पूर्ण पात्र है। किसी को भी उठाओगे तो उसमें एक कहानी बनेगी। पर आपको उसकी उतनी समझ होना जरूरी है और उसके अंदर तक भी जाना जरूरी है।

प्रश्न : नायिकाओं से श्री कृष्ण का संबंध कैसे देखते हैं आप ?

उत्तर : देखिए अगर हम श्री कृष्ण को देखें तो वो इसका करता था उसको सब कुछ पता था कि क्या होने वाला है। लेकिन फिर भी उसने एफर्ट किए दुनिया को दिखाने के लिए। उसको पता था कि महाभारत का युद्ध होना है, फिर भी वो संधि के लिए गया और 10 गज भूमि की प्रार्थना करता रहा। उसको पता था द्रौपदी का चीर हरण होना है लेकिन चीर हरण के समय सहायता की, वो चाहता तो रोक सकता था लेकिन रोका नहीं। अगर वो विधाता है तो होने ही न दे, लेकिन दुनिया को दिखाने के लिए वो उसकी हेल्प कर रहे हैं चीर बढ़ा रहे हैं, साड़ी को बढ़ा रहे हैं । दुनिया के सामने उदाहरण बनने के लिए, दिखाने के लिए कि सच्चाई क्या है लोगों की। अब उत्तरा का जो वंश था उसको बचाने वाले भी श्री कृष्ण ही थे, जो अश्वत्थामा ने तो मारने की पूरी तयारी कर ही ली थी, लेकिन श्री कृष्ण ही थे जो बीच में आए जिन्होने उत्तरा को भी बचाया

और उसके बच्चे को भी बचाया वहाँ ब्रह्मअस्त्र से। एक और उदाहरण सेट करने के लिए सुभद्रा को भगा कर अर्जुन की शादी करवाई। अब जो कुंती है वो उनकी बुआ थी, उनको कर्ण से संधि करने के लिए भेजते हैं वो श्री कृष्ण ही तो भेजते हैं। वो उनको कहती है कि युद्ध में तुम पांडवों के साथ आ जाओ मैं तुम्हें बड़े बेटे की जगह देदूंगी। अब गांधारी के माध्यम से दुर्योधन को मरवाने वाले भी श्री कृष्ण थे । उनको पता था गांधारी अपनी आँखों की पट्टी उतारने वाली है और दुर्योधन को लौह पुरुष बनाने वाली है। तो दुर्योधन को भी जांघों से ढकवाकर भेजने वाले भी श्री कृष्ण ही थे। जितने भी मेंल करेक्टर या फ़ीमेंल करेक्टर थे , सबकी मुख्य धुरी तो श्री कृष्ण ही थे उसी के आस पास सब घूम रहे थे । सबसे अच्छी यह बात थी, जितना मैं इस महाभारत को समझ पाई हूँ वो यह की श्री कृष्ण ही इसके करता थे, इसके पूरक थे , वही सब करने वाले थे । चाहे वो कुंती थी, द्रौपदी थी, गांधारी थी सब उनके आस पास घूम ही रहे थे। लेकिन सब उनसे प्यार करते थे स्नेह करते थे श्री कृष्ण से।

प्रश्न : रंगमंच और लोक रंगमंच में महाभारत का क्या भविष्य देखते हैं आप ?

उत्तर : यह कलाकार के ऊपर निर्भर करता है वो किस तरीके से, कैसे और किस तरह की प्रस्तुति देना चाहता है । अगर महाभारत की बात करें तो आज का जो समय है इसके हिसाब से महाभारत बहुत प्रासंगिक लगता है यानि कि आज का भाई भतीजावाद युग हो चुका है, लोग अकेलेपन की ज़िंदगी जीना चाहते हैं। जैसा लोगों का नेचर है अगर हम इसको समाज के साथ जोड़ते हैं तो यह बहुत ही औथेंटिक चीज निकल कर सामने आती है। चाहे इसको कलाकार रंगमंच के साथ जोड़े चाहे लोक रंगमंच के साथ जोड़े, मुझे भाषा का इसमें नहीं लगता कोई बंधन बनता है । आप किसी भी भाषा में इसको कर सकते हैं। लोग मूक अभिनय में भी इसको करते हैं, इसको कोई भाषा ही नहीं होती । इसके भविष्य की बात करनी ही बेकार है, इसकी खुद की एक बहुत बड़ी जरनी है, आप इसमें से कुछ भी निकालेंगे तो वही थोड़ा है। आप जब भी इसका एक पेज खोलेंगे उसमें एक नई चीज निकल कर आएगी ऐसा मेरा मानना है। जब हम बूढ़े हो जाएंगे, या जब हम मर जाएंगे उसके बाद भी इसमें से कुछ न कुछ नया निकलता ही रहेगा। बस सोच का दर्जा बढ़ाना पड़ेगा और सोच की प्रासंगिकता बढानी पड़ेगी, समाज से इसको जोड़ना पड़ेगा, बस इतनी सी बात है। वो निर्भर करेगा कलाकार के ऊपर। 5 से ज्यादा किस्से तो इसके मैं ही कर रही हूँ। अब आप वो पांडवानी देखिए तीजन बाई जी की, पूरी ज़िंदगी उन्होने महाभारत पे निकाल दी। आज भी जब उनसे बात करती हूँ तो वह यही कहती

है " आज इस नए किस्से पे काम कर रही हूँ" । यह कथा इतनी बड़ी और रौचक है कि इसके किस्से खतम होने को ही नहीं आते।

प्रश्न : मीडिया और तकनीकी युग में महाभारत कैसे खड़ी होगी ?

उत्तर : इसका सबसे बड़ा उदाहरण तो मैं खुद को ही मानती हूँ। क्योंकि मुझे इतना सपोर्ट किया है इन सब चीजों ने, आज जो लोग बोलते हैं कि हमारी जो पारंपरिक धरोहर है, उसको सहेजने में जो आप भूमिका निभा रही हैं वो बहुत बड़ी बात है। मैं उनको बोलती हूँ कि हमारी परंपरा कोई विलुप्त थोड़ी हो गई है। सिर्फ इसमें एक इंटरस्ट ही तो लैप हो रहा था। वो इंटरस्ट अगर आप क्रिएट करना शुरू कर दें और नई जनरेशन को साथ जोड़ना शुरू करदे, घर से निकालना कोई छोटी बात नहीं है अपने आप में आज के टाइम में। क्योंकि जब टीवी पे पिक्चर देख रहे हैं, ये मल्टीप्लेक्स आए हुए हैं, ये नेटफ्लिक्स अमज़ोन यू ट्यूब सब उपलब्ध है। लेकिन अगर आप किसी को क्वालिटी की चीज देंगे, वो एक घंटा अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण होगा वो। अगर नई जनरेशन उससे कनेक्ट कर रही है तो 100 % वो आपके अगले शो में आएगी। मुझे लगता वो आर्टिस्ट पर डिपेंड करती हैं सारी चीजें। ये सारी चीजें आपको सपोर्ट करती हैं बशर्ते आप एफर्ट करते हो तो। हार कर तो कोई भी बैठ जाएगा। हम पिछले दिनों "जानी चोर" का शो कर रहे थे, वहाँ कुछ बाजुर्गों ने कहाँ "आपने 4-4 कली की पूरी रागिनी नहीं सुनाई। मैंने कहा अगर यही 4-4 कली की रागिनी सुनाने लग गए तो यही एक घंटे का शो चार घंटे का हो जाएगा । फिर चार घंटे हमें देखेगा कौन ? एक घंटा भी देख ले तो बहुत बड़ी बात है। एक कली और एक स्थायी आज की जनरेशन सुनले न यह बहुत बड़ी बात है। ये जो हजार- डेड हजार युवा अगली बार हमने देखने आ जाए हमारे लिए यही बहुत बड़ी उपलब्धि है। अगर चार घंटे लगा दिए फिर तो ज़िंदगी में कभी नहीं आएंगे। कलाकार के ऊपर डिपेंड करेंगी सब चीजें।

प्रश्न : युवा पीढ़ी के मन में महाभारत कैसे अपना स्थान बना पाएगी ?

उत्तर : देखो बात फिर वही है, बात कहने का तरीका बदलना पड़ेगा थोड़ा सा। मान लीजिए जैसे हमने गोपी-उद्धव उठाया, हमने सारी महाभारत पढली उसमें कहीं भी श्रुंगार की बात होती ही नहीं गोपियों के साथ, हमेंशा वो गोपियाँ हमें बिरह रस में ही मिली। हमने इतनी श्री मद भगवत पड़ी उसमें यही था कि गोपियाँ जो थी वो रोए जा रही थी, उनके रोने से वहाँ छोटी सी नहर बन गई, वहाँ जब उद्धव जी आए उनको श्री कृष्ण समझा, वो फिर रोने लगीं कि हमारे श्री

कृष्ण कब आएंगे ? टोटल जितनी भी बात हुई वो बिरह रस की हुई। अब हमने सोचा अगर हमने बिरह लेके जाना है, बिरह की बात करनी है , तो एक घंटा तो हमारे जो यंग बच्चे हैं ये बिरह नहीं देखेंगे। इनके साथ तो कुछ आकर्षक बात करनी पड़ेगी उसके बाद फिर आप धीरे धीरे इनको बिरह तक लेके आ सकते हो। तो हमने क्या किया हमने इस स्टोरी को कन्वर्ट कर दिया, मतलब हमने उठाई नहीं, खुद से बनाई फिर इसको। बिरह तो हमें मिल ही गया श्रीमद भगवत से, अब हम यह सोच रहे थे कि इसमें श्रुंगार कैसे डाला जाए ? फिर हमने कुछ कथाएँ पढ़ीं जिसमें पता चला कि राधा से मिलने के लिए श्री कृष्ण स्वयं राधा बन गए। एक हमने कथा सुनी कहीं कि जब राधा को मिले श्री कृष्ण को बहुत समय हो गया था, तो श्री कृष्ण वैद्य बनकर स्वांग रचाते हैं और राधा का उपचार करते हैं। यह बात गोपियों ने बताई, इस बात को जब हमें ड्रमटिकली और थिएटरीकली इसको जब कन्वर्ट किया तो वो लीलाएँ बन गई। यानि कि हम उद्धव को लेकर आए वृन्दावन में, और गोपी कहने लगी "तुम क्या जानो प्रेम क्या है ? प्रेम ही तो ब्रह्म है, ब्रह्म ही श्री कृष्ण है और श्री कृष्ण ही भक्ति है और भक्ति तो प्रेम का रूप है। यानि कि सारी चीजें क्या है ? सब प्रेम ही तो है । तो बिरह भी तो प्रेम का ही अंग हुआ न। जब श्रुंगार प्रेम का रस है तो बिरह भी प्रेम का रस हुआ। तो उन्होने बोला मैं तुम्हें ऐसी लीला बताती हूँ जब राधा से मिलने के लिए स्वयं श्री कृष्ण राधा बन गए। वहाँ क्या हुआ जब श्री कृष्ण राधा बने, राधा तो थी वहाँ पे यानि जो मेल श्री कृष्ण थे वो राधा बने, वहाँ पे पूरी एक लीला का मंचन हुआ वो श्रुंगार पर आया, श्रुंगार की पीक आई। फिर वो उद्धव जी कहने लगे क्षमा, मैं क्या तुम्हें समझाने आया, मैं तो खुद नहीं आज तक समझ पाया, मैं तुम्हें क्या ब्रह्म का ज्ञान पढ़ाऊँगा। जो प्रेम की परिकाष्ठा तक पहुँच गए वही तो ब्रह्म है असल में। तो अंत में वो जो उनसे क्षमा मांगते हैं बिरह में आते हैं। वो जो हमारी एक घंटे की नाटकीय प्रस्तुति हुई वो खुद में एक एलीमेंट बना। वही चीज है कि प्रस्तुत करने का तरीका होना चाहिए, आर्टिस्ट को पता होना चाहिए कि उसको क्या दिखाना है। तो युवा बिरह भी देखेगा और श्रुंगार भी देखेगा । लेकिन जैसे वो रसों की परिभाषा है न हमें वो रस बदलते रहने पड़ेंगे। उसमें हास्य रस भी डालना, वियोग भी डालना है श्रुंगार भी डालना है, जितने ज्यादा रसों की आप परिकल्पना वहाँ कर पाएँ, उनका रस आप दर्शकों को दे पाएँ, दर्शकों को जोड़ पाए, तो दर्शक जरूर जुड़ेंगे, ऐसी बात नहीं है हमारे यंग बच्चे भी जुडते ही हैं दूर कुछ भी नहीं है।

फ़ौजिया दास्तांगो

प्रश्न : आप अपना परिचय देंगे ?

उत्तर : मेरा नाम फ़ौजिया दास्तांगो है। मैं इंडिया की फ़र्स्ट फ़ीमेंल दास्तांगों हूँ। मैं 2006 से दास्तांगोई कर रही हूँ। इससे पहले मैं लेक्चरार थी एस॰सी॰आर॰टी में 2014 में मैंने अपनी नौकरी छोड़ दी, और खुद को फुल्ल टाइम दास्तांगोई को समर्पित कर दिया। अभी मैं जो मुख्य काम है वो है जो भी एपीक टेल्स हैं मैं उनको उर्दू में कर रही हूँ। चाहे वो राधा श्री कृष्ण हो, महाभारत हो, राम हो, कबीर हो उनको हम उर्दू में पेश करने की कोशिश कर रहे हैं।

प्रश्न : महाभारत और भारत के संबंध को आप कैसे देखते हैं ?

उत्तर : देखिए महाभारत और भारत जो है, मैं बस उसमें महाभारत का जो सार है जो मैंने अपनी कहानी में भी किया है । उसमें मैंने किसी एक एपिसोड को लेकर नहीं किया है, पूरी महाभारत को लेकर किया है। उसमें जो उसका सार है बुराई पे अच्छाई की जीत है, जो गीता का सार है,

धर्म जिसने निभाया उसे कोई मिटा सकता नहीं

उसके प्यारों पर कोई हुर्फ आ सकता नहीं (गायन में)

तो यही मेरा बिलीफ है और भारत का भी यही बिलीफ है। अगर हम आज़ादी से पहले देखें तो जो भी लड़ाई हुई वो अधर्म के खिलाफ थी । भारत का तो हर लिहाज से लिंक है ही। स्पेशली मैं समझती हूँ इसमें गीता का बहुत योगदान है हर तरफ से। अगर भारत को जानना है तो गीता को जरूर पढिए ।

प्रश्न : महाभारत और दास्तांगोई के संबंध को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : दास्तांगोई एक बहुत ही पुरानी विधा है, जिसमें उर्दू में दास्तानें सुनाई जाती हैं, और ये दास्तानें बहुत लंबी होती थी। मतलब किसी प्रकार की कहानी सुनाने को हम दास्तांगोई नहीं कह सकते। जैसे पहले दास्तानें सुनाई जाती थी, चंद्रकांता उनमें से एक है। हमने सोचा क्यों न हम महाभारत सुनाएँ ! एक तो महाभारत ऐसी चीज है, जब भी हम चाहे इसको उर्दू में सुनाएँ लोगों को कहानी पता होती है। उसके पात्रों को लोग नाम से जानते हैं। जब हम नाम लेते हैं कर्ण का, तो लोग उसको जानते है। हमारी मुश्किल काफी हद तक आसान हो जाती है । एक तो हम उर्दू में सुना रहे हैं तो ऐसा नहीं है कि लोग उससे नाबाल्द होते हैं, उनको मालूम नहीं होता, लोगों को मालूम होता है। दूसरा जो हमारी महाभारत है वो पूरी पोएटिक बेस्ड है। हम

ऐसे शायरों को भी सामने ला रहे हैं, जो बहुत पुराने हैं, ऐसा नहीं है कि हमने शायरी लिखवाई है बकायदा। यह बहुत पुरानी शायरी लिखी हुई है, बहुत सालों पहले लिखी गई है। महाभारत जो है इसका भारत की गंगा-जमुनी तहज़ीब का भी हिस्सा रहा है। दास्तान-ए-राम है, महाभारत है ये सब पहले से उर्दू में लिखी गई है। आज भी हिंदुस्तान में कई जगह ऐसे है जहां उर्दू में रामायण होती हैं। रामायण तो होती है, हर साल होती है, तो हमने सोचा कि हम महाभारत पहले करें। इसमें भी जो हमने फोकस किया है, वो किसी भी भूमि को लेके नहीं किया है। मुख्य तौर पे जो हमारा फोकस है वो है गीता और उसकी बातें, और हर तरह की अच्छी चीज़ें।

प्रश्न : आपको कौन सा तत्व इसकी ओर खेलने, पढ़ने अथवा लिखने को आकर्षित करता है ?

उत्तर : हमारी दास्तांगोई के न चार एलीमेंट है , रज़्म-बज़्म-इश्क़ और अय्यारी। रज़्म यानि जंग, बज़्म यानि ऐश इशरत, इश्क़ यानि मोहब्बत और अय्यारी यानि ट्रिक्स। ये चारों एलिमेंट्स महाभारत में हैं। जो हमारी दास्तांगोई की बेसिक चीज़ें हैं। ये सब महाभारत में हैं तो हमने इसे किया।

प्रश्न : आप कैसे महाभरात में नाटकीयता देखते हैं ?

उत्तर : देखिए दास्तांगोई में हम कोई सेट नहीं लगा सकते, हम कोई और चीज़ें इस्तेमाल नहीं करते । हम बस दो लोग बैठते हैं और एक कहानी सुनाते हैं। हमारे पास जो नाट्य है वो हमारा फेशियल एक्स्प्रेश्न हैं, हमारा लहजा है, हमारी ज़ुबान का उतार चढ़ाव है, हमारी आवाज़ का उतार चढ़ाव है। हम अपनी आवाज़ से ही चाहे वो जंग है, जंग का मंज़र पैदा करते हैं, चाहे कोई मोहब्बत की बात है हम वो पैदा करते हैं, चाहे वो बाप बेटे का रिश्ता है, जब युधिष्ठिर जाते हैं इजाज़त लेने जंग की भीष्म पितामह के पास तो वो भी हम अपनी ज़ुबान से पैदा करते हैं । तो हमारी ज़ुबान का उतार चढ़ाव है , हमारी अदाईगी है, हम उससे खेलते हैं बस, हमारे पास और कोई हथियार नहीं है खेलने के लिए।

प्रश्न : आपकी नज़र में नाटकीयता की परिभाषा क्या हैं ?

उत्तर : हमारी नाटकीय परिभाषा ये है कि जो भी आप सुन रहे हैं, उसको हम एक सिनेमा हाल में बदल देते हैं। आपके सामने हमारे लफ़्ज़ो से, वो आपको लगता है कि आप हमें सुन नहीं रहे हो, वो आपके सामने एक फिल्म लगा रखी है और आप वो देख रहे हैं। ये हमारी परिभाषा है।

हमारी सबसे पावरफुल, जो हम काम कर रहे हैं, हमारी दास्तांगोई में हमारी स्क्रिप्ट बहुत पावरफुल होती है।

प्रश्न : पारंपरिक तरीकों के इलावा भी अपने कोई और एलिमेंट्स इस्तेमाल किए हैं आपने इसको और ज्यादा रौचक बनाने के लिए ?

उत्तर : जी हमने पारंपरिक तरीका ही इस्तेमाल किया है। और इसमें हमने कुछ इस्तेमाल नहीं किया, न हमने इसमें कोई म्यूजिक डाला है, बस अपने जेसचर-पोसचर, अपनी बॉडी इस्तेमाल की है बस हमने।

प्रश्न : प्रस्तुति के लिए आप इसकी कथा कहानियों का किस तरह से चुनाव और विभाजन करते हैं ?

उत्तर : हमारी एक ही कहानी है हम वो एक ही सुनते हैं, और वो है इस कथा का जो निचोड़ है वो। हम उसको लेकर चल रहे हैं।

प्रश्न : महाभारत की कौन कौन सी नायिकाए नाटकीयता का स्रोत हैं और कैसे ?

उत्तर : देखिए महाभारत की जो नायिकाए है वो इतनी ज्यादा पावरफुल हैं, कि उसमें से किसी एक को ये कहना कि उसमें ज्यादा एलिमेंट्स है, इसमें नहीं है, मैं समझती हूँ ये बहुत बड़ी नाइंसाफी होगी। मैं समझती हूँ महाभारत की हर एक नायिका, हर एक, जो उनका कंट्रीबिउश्न रहा है वो नकारना नहीं चाहिए। मैं किसी का भी कद कम नहीं करना चाहती। हर मोड पर हर पात्र का एक योगदान रहा है। अभी हम यही सोच रहें हैं, किस को करें, किस को पिरोएँ, उसी पे हमारा काम चल रहा है।

प्रश्न : आपकी पसंदीदा नायिका कौन है ? और क्यों ?

उत्तर : मुझे असल में सबसे ज्यादा अपील द्रौपदी करती है। क्यूंकी मेरा द्रौपदी को देखने का एक अलग नज़रिया है। मतलब द्रौपदी की शादी हुई, फिर उसको पूछे बिना कहा गया आप पांचों की पत्नी हैं। मुझे असल में द्रौपदी का एंगल देखना है कि द्रौपदी कैसे एक फ़ीमेंल होते हुए, एक वो अपनी मोहब्बत, मैं उसका वो वाला एंगल एक्सप्लोर करना चाहती हूँ। स्पेशली उसी को ही दांव पर लगाया जाता है । एक औरत से बिना पूछे उसे दांव पे लगा देना, वो पूरा एक दर्द है। हालांकि कुंती में भी बहुत दर्द मानती हूँ क्योंकि जब उसको अपनी ही औलाद को छोडना पड़ा। ये बहुत तकलीफदेह चीज है किसी भी औरत के लिए। चाहे उसने उसको पैदा नहीं किया, वो उसको दिया गया। फिर भी एक माँ के लिए, माँ की ममता, वो जो उसकी तड़प

है, पूरे महाभारत में दिखती है।आखिर में भी दिखती है जब वो कर्ण के पास जाती है । वो एक मजबूर माँ है वो। ये दो करेक्टर ऐसे हैं जिनको मतलब मैं और जानना चाहती हूँ अभी। मुझे बहुत हैं ये।

प्रश्न : श्री कृष्ण से नायिकाओं के संबंध के बारे में क्या सोचते है ?

उत्तर : श्री कृष्ण एक डोरी है। महाभारत में मैं श्री कृष्ण को एक डोरी की तरह देखती हूँ जिसने सारी चीजों को बांध रखा है। श्री कृष्ण का हर एक से रिश्ता है। कोई भी ऐसा नहीं है जिसको आप कहेंगे कि इसका तो कोई तालुक नहीं था श्री कृष्ण से। वो दुर्योधन के पास गए कि 5 गाँव देदो, मत करो ये जंग, चाहे उन्होने द्रौपदी को बचाया, तो वो न मैं समझती हूँ कि वो न हमेंशा एक एमोशनल ऐंकर की तरह देखा है मैंने उन्हें, वो हर एक की लाइफ में रहे हैं। श्री कृष्ण एक मजबूत डोर हैं, महाभारत को पिरोने में बहुत अहम किरदार अदा किया। अगर आप श्री कृष्ण के किरदार को हटा दें तो आप सोचिए क्या होगा ? आप हटा ही नहीं सकते। वो हर जगह हैं असल में, श्री कृष्ण को सब मालूम था वो विधि का विधान जानते थे पहले से, ये भी एक वजह है उनकी लोगों के साथ कनैक्ट होने की।

प्रश्न : दास्तांगोई में आप महाभारत का भविष्य कहाँ तक देखते हैं ?

उत्तर : महाभारत के भविष्य की तो ये बात है, आप यकीन मानिए जब से मैंने महाभारत शुरू की है, मेरे इतने शो महाभारत के हुए है, शायद ही किसी और चीज़ के हुए हों। क्योंकि इतना ज्यादा लोगों ने हमें प्यार दिया है। चाहे वो स्कूल हो, कॉलेज हो, फ़ेस्टिवल्स हों, मतलब लोग बार बार बुलाते हैं, लोग कहते हैं महाभारत ही कर दो यार। महाभारत पे तो इतनी मोहब्बत लोगों ने हमें दी है। हमें लोगों ने सराहा भी है कि एक मुस्लिम होकर हम यह काम कर रहे हैं। हम पूरी कंविक्षन के साथ ये यह काम कर रहे है। अगर मैं महाभारत करती हूँ तो सिर्फ सुनाने के लिए नहीं करती। मेरा एज़ एन एक्टर, एज़ एन ह्यूमन मेरा बिलिव है उन किरदारों पर, वही लोगों को नज़र आती है मेरी परफ़ोर्मेंस में। महाभारत हमारे लिए सीर्फ एक एक प्रस्तुति नहीं है, महाभारत हमारे दिल की चीज़ है। महाभारत वो चीज़ है, जब भी हम दास्तांगोई करते है, हमें जब तक उस कहानी से मोहब्बत नहीं है, हम वो नहीं करते। मैं ऑन डिमांड नहीं कर सकती, कि अगर कोई आपको कह दे कि आपको ये करना है। पहले मैं उसे पढ़ूँगी उसे अपनाऊँगी, दास्तांगोई में अपनाना पड़ता है मुझे चीजों को और तब मैं उसे परफ़ोर्म कर पाती हूँ। जब हम महाभारत की रिहर्सल करते थे, हमें खुद को दिखती थी वो चीज, जब हम बोलते

होते थे। तो हमने इस हद तक अपनाया है इस चीज़ को। उसी का और ऊपर वाले का मैं कर्म मानती हूँ कि लोगों ने भी बहुत प्यार दिया है।

प्रश्न : वेद व्यास जी के बारे में क्या सोचते हैं आप ?

उत्तर : वेद व्यास जी ने जब श्री गणेश जी के साथ ये लिखी , वो बोल रहे थे और गणेश जी लिख रहे थे। उन्होने के बहुत अच्छी बात कही कि जब तक आप सारे श्लोक समझ नहीं लेंगे तब तक आप कलम नहीं रोकेंगे। तो एक लेखक के तौर पे उनका जो कनविकशन है। उन्होने सिर्फ लिखा ही नहीं उसे, उन्होने उसे अपनाया है। क्योंकि बेसिकली यही डील हुई थी। वो बोलते गए और वो लिखते गए, लिखते गए, और लिखते गए, आलम ए दीवानगी में ही यह काम हो सकता है। उनका भी एक हमें शुक्र अदा करना चाहिए वेद व्यास जी का, उन्होने ये चीज़ लिखी और हम तक यह । आज हम सभी लोग अलग अलग तरीके से उसको आज की जनरेशन तक पहुँचाने की कोशिश कर रहे हैं। मेरे बचपन में टीवी पे महाभारत आता था, जो आज भी आता है। तब सड़कों पे सन्नाटा होता था और हम देखते थे बैठ के । मगर आज की जनरेशन को शायद इसमें उतनी दिलचस्पी नहीं है, क्योंकि आज इतना मोड्रन जमाना है। पर महाभारत कभी पुरानी नहीं हो सकती। वेद व्यास जी जो बीज बो के गए हैं न, महाभारत को कहते हैं कि यह कभी ओल्ड फ़ैशन नहीं हो सकती। महाभारत को हर युग ने, हर तरह के लोगों ने, अपने अपने तरीके से एक्सप्लोर किया है। चाहे वो हमने दास्तांगों ने किया है, चाहे वो लेटेस्ट महाभारत सीरियल है, चाहे वो पुराना महाभारत है, चाहे वो कोई मूवी हैं, चाहे वो कोई एनिमेंट्ड़ चीज है । हर एक इंसान, महाभारत एक ऐसी चीज़ है वेद व्यास की दी हुई कि हर इंसान, हर जनरेशन उसको अपने तरीके से एक्सप्लोर कर देगी। इससे बड़ी और क्या बात हो सकती है।

प्रश्न : दास्तांगोई के ऐसे कौन से पिल्लर है जिस पर सारी प्रस्तुति खड़ी होती है ?

उत्तर : अभिनय जो हम बैठ कर करते हैं, हमारी आवाज़, हमारी स्क्रिप्ट और हमारी अदाईगी ये चार चीजे हैं।

प्रश्न : इस पौराणिक कथा को आधुनिक युग में कैसे देखते हैं ?

उत्तर : देखिए इस वक़्त के जो हालात हैं दुनिया के, यह लड़ाई है मैं हमेंशा बोलती हूँ धर्म की अधर्म के खिलाफ, और जो गीता का सार है न सब प्पसंद है मुझे

कि धर्म जिसने निभाया उसे मिटा कोई सकता नहीं

उसके प्यारों पर कोई हरफ आ सकता नहीं (गायन)

ये इस वक़्त आज की जनरेशन को सबसे बड़ा सीख है जो गीता ने बताई है। हमारी एक दास्ताँ है कर्ण की जब वो बिलकुल मरने वाला होता है, तो श्री कृष्ण और अर्जुन आते हैं उसके पास भेष बदल कर जाते हैं दान मांगने के लिए, वो सब हमने पोएट्री में बताई है, जब वो कहता है मेरे शस्त्र लेलो, तो वो कहते हैं शस्त्र तो हम लेंगे नहीं हम ले ही नहीं सकते, आदमी की जो फितरत है न वो मरते मरते भी अपना कर्तव्य नहीं छोडता। ये हमें इस जनरेशन को सिखाना है। ये होता है न आज कल लोग रिकॉर्डिंग करते हैं, वीडियो बनाते हैं सबूत के लिए, स्टिंग ऑपरेशन होते है। महाभारत एक ऐसी चीज हैं जहां पे ज़ुबान, अगर जो कह दिया सो कह दिया। आपको किसी भी रिकॉर्डिंग कि जरूरत नहीं थी। इससे बड़ी और क्या चीज़ हम इस जनरेशन को सिखा सकते हैं। ये ज़ुबान की इतनी वेलीऊ कि अगर कुछ कह दिया तो भाई ये कह दिया बस। माँ ने कह दिया पाँचों में बाँट लो तो बस बाँट लो, भीष्म ने कह दिया मैं नहीं करूंगा शादी तो नहीं करूंगा। कोई वीक मोमेंट नहीं आया इन लोगों की लाइफ में, ऐसा नहीं हुआ कहीं भी डगमगाएँ हों ज़ुबान को लेके, या पलटे हों, ये कितनी अच्छी बात है, इससे बड़ी क्या बात हो सकती है।

प्रश्न : मीडिया और तकनीकी युग में महाभारत कैसे खड़ी रह पाएगी ?

उत्तर : देखिए ऐसे ही होंगी जैसे इस युग में वो वेब सिरीज़ हो रहीं हैं। देखो दास्तांगोई में हम महाभारत सुना रहे हैं न। आज भी देखिए न इतने पुराने सीरियल थे, जब ये फैसला लिया गया इनका टेलेकास्ट किया जाएगा, तब रामायण और महाभारत को ही क्यों चूज़ किया गया। आपकी सही बात है मैं इससे इंकार नहीं कर रही, कि इतना कुछ है देखने को, मगर लोग न उससे बेज़ार भी हो गए हैं, लोग वापिस अपनी जड़ों की तरफ जा रहे हैं। स्पेशली ये जो लोकडाउन है न, इसने तो लोगों को बिलकुल बेसिक की तरफ धकेल दिया है अपने। मतलब अब जो दुनिया चेंज होगी न, चाहे सब ऑनलाइन है, पूरी दुनिया ऑनलाइन हैं, सब लाइव शेषन कर रहे हाँ। मगर बेसिकली ये टाइम आ गया है बैक टु पवेलियन जाने का वो वाली बात है। और महाभारत आज भी है इसका सबसे बड़ा सबूत ये है कि जब ये फैसला लिया गया कि, अब आपके पास कंटेन्ट नहीं है जी, इसकी वजह से शूटिंग रुक गई, अब क्या दिखाएंगे ? महाभारत और रामायण दिखाएंगे। कयोंकि इनके लिए प्यार किसी का कम नहीं हो सकता और ये न कोई रेलीजियन बेस्ड चीज नहीं है ये, इसको सब देखेंगे सबको इंट्रर्स्ट है। बार बार

देखते हैं सबको मालूम है कहानी में क्या होने वाला है। कोई फिल्म स्टार नहीं हैं उसमें कि हम सीज़न टू का इंतज़ार करेंगे जी क्या होगा इसमें। सबको पता इसमें क्या होगा, कौन सा पात्र क्या बोलेगा, ये जो सीन हो रहा है इसमें क्या होगा- द्रौपदी का चीर हरण होगा। मगर..... मगर एक्साइटमेंट वही रहती है आज भी। तो ये तो आप भूल जाइए कि इस टेक्नॉलजी में महाभारत और रामायण को कुछ भी होगा। इवन श्री कृष्ण हो या बाल गोपाल इनकी जितनी भी चीज़ें हैं ये ख़तम नहीं होने वाली। इम्पॉसिबल ।

प्रश्न : युवा मन में महाभारत कैसे अपना स्थान बनाएगी ?

उत्तर : मुझे लगता है, हमने न आज के यूथ को बहुत एक माइंड सेट कर दिया कि ये आज का यूथ है ये इण्ट्रस्ट नहीं लेगा । जब मैं अशोका यूनिवरसिटि में जाती हूँ दास्तांगोई पढ़ाने, तो आज का यूथ क्यों रजिस्टर्ड करता है, जब मैं जामिया जाती हूँ दास्तांगोई पढ़ाने तो क्यों रजिस्टर्ड करता है। मैंने महाभारत की तैयारी करवाई थी अशोका यूनिवर्सिटी में, सो आज का जो यूथ है, हमने न ये सोच कर तक्नोलोजी- तक्नोलोजी- तक्नोलोजी, ऑनलाइन- ऑनलाइन- ऑनलाइन हमने न इतना इनको दे दिया, कि ये वो चीज एक्सपिरियन्स करते हैं जो चीज़ हम इन्हें एक्सपिरियन्स करवाते हैं। चाहे वो थिएटर हो या कुछ और वो मंत्र मुग्ध होते हैं, उनको लगता अरे वाह ये तो हमने देखा ही नहीं था। बेसिकली हमारी भी तो डिलीवरिज कम हुई हैं न उनके लिए। डिमांड कम हो गई- डिमांड कम हो गई, आप कुछ दो तो सही, उसकी चिंता है ? आप देखिए ये जो स्टोरी टेल्लर हैं, आजकल अच्छे स्कूलों में ये ट्रेंड हो गया है, टीचर तो होंगे ही, एक स्टोरी टेल्लर भी वो लोग एपाइंट कर रहे हैं। अगर कुछ नहीं है तो अपने टीचर की वर्कशॉप्स करवा रहे हैं स्टोरी टेल्लिंग की बुला बुला के। हमें बुलाते हैं कि आप हमारे टीचर को सिखाइए, इनको तकनीक सिखाएँ । अगर ये इस पुरानी चीज़ है तो चला दो कार्टून इतनी सारी कहानियाँ हैं । क्यों वो इसमें इन्वेस्ट कर रहे हैं ? अभी मैं 40 प्रिन्सिपलस के सामने डेमो देके आई हूँ महाभारत का, क्यों उन्होने कहा आप हमारे स्कूल में आकार करिए।

कविता काने

प्रश्न : महाभारत और भारत, इनके संबंध को कै से देखते हैं आप ?

उत्तर : Mahabharata is timeless lending Bharat its values, ethos and deep philosophical maturity.

प्रश्न : एक महिला की नज़र से महाभारत को आप कैसे देखते है ?

उत्तर : I try to see the Mahabharata through its women's eyes because we rarely see the epics through this perspective. It is richly populated with diverse women characters as varied and vast as the epic itself but often we don't register their huge contribution in the narrative.

प्रश्न : आपको कौन सा तत्व इसकी ओर खेलने, पढ़ने अथवा हलखने को आकहषित करता है ?

उत्तर : Its layered identity through the remarkable democratic and depth of thought in the epic. That is what makes it so relatable and thus relevant to us even after thousands of years.

प्रश्न : अपनी रचना को और ज्यादा रौचक बनाने के लिए आप किन तत्वों का इस्तेमाल करते हैं ?

उत्तर : उत्तर नहीं दिया गया

प्रश्न : आप कैसे महाभरात में नाटकीयता देखते हैं?

उत्तर : Each character, each episode can be expanded into a book. That is how complex and layered the narrative is. Importantly, each is a masterpiece of storytelling.

प्रश्न : नाटकीयता की पररभाषा आपकी नज़र में क्या है ?

उत्तर : Dramatization has to be rational and believable. Alternative perspective has to be based on knowing and respecting the original text, and I try to adhere as closely as I can.

प्रश्न : पात्रों में आप नाटकीयता कैसे ढूंढते हैं ?

उत्तर : My contemporarising content and context.

प्रश्न : महाभारत की कौन कौन सी नायिकाएँ नाटकीयता का स्रोत है और कैसे ?

उत्तर : I think all of them! Each one is unique, deserving full attention. Even the most minor character has a major impact on the narrative.

प्रश्न : आपकी पसंदीदा नायिका कौन है और क्यों ?

उत्तर : Urmila. She is the most overlooked yet the most enigmatic character in the Ramayana.

प्रश्न : अपने पात्रों की सहायता से आप नाटकीयता का सृजन कैसे करते हैं ?

उत्तर : Since most of my protagonist are minor characters, there is not much information and matter on them. I flesh them out entirely through the bigger characters and the events revolving around them, dramatizing them in the process.

प्रश्न : आप लेखन के लिए कथा कहानियों का किस तरह से चुनाव करते हैं ?

उत्तर : Ideation is always the most difficult and the elusive part of writing. Mostly its while doing research and reading that I am inspired by a character or episode who can sustain my interest and creativity for it to be turned into a 300 page book.

प्रश्न : श्री कृष्ण से नायिकाओं के संबंध के बारे में क्या सोचते है ?

उत्तर : उत्तर नही दिया गया

प्रश्न : रंगमंच में महाभारत का भविष्य क्या है ?

उत्तर : Literature the arts and the epics are irrevocably intertwined. They will always the single biggest source and influence. That is what makes them timeless.

प्रश्न : वेदव्यास के लिए कुछ शब्द ?

उत्तर : उत्तर नहीं दिया गया

प्रश्न : मीडिया और तकनीकी युग में महाभारत कैसे खड़ी होगी ?

उत्तर : Besides being influential, they are highly adaptable to any media - be it literature, folk lore, theatre or graphic novels, vlogs, video games or mobile apps. They will survive and flourish!

प्रश्न : युवा मन में महाभारत कैसे अपना स्थान बनाएगी ? कहाँ तक बना पाएगी ?

उत्तर : The sheer depth and complexity provides all the factors needed to hook the new generation too. It tackles universal elements, emotions and experiences which are equally gripping for the fresher audience.

प्रश्न : इस पौराणिक कथा को आधुनिक युग में कैसे देखते हैं ?

उत्तर : The epics In today's times are dedicated to exploring stories, figures and themes and far from being relics of the past, continue to have significance. Contemporary revisionings and reinterpretations reflect modern and current socio-political ethos holds both explicit and implicit rendering. They have survived to this day due to the fact that their narratives are still valid in contemporary contexts and correspond to situations that occur in our own day and age. Above all, the power of the epics lies in their symbolism, which not only helped shape the origins of modern story-telling, but also influenced the most tone-setting stories of our modern popular culture.

(यह साक्षात्कार उन्होने ई मेल पर भेजा था, प्रश्न सूची उन्होने ई मेल पर ही मँगवा ली थी)

डॉ कविता शर्मा

(साउथ एशियन युनिवर्सिटी की प्रेसिडेंट हैं और दिल्ली मे विभिन्न शिक्षण संस्थानों मे सेवा दे चुके हैं।)

प्रश्न : महाभारत और भारत, इनके संबंध को कैसे देखते हैं आप ?

उत्तर : अब यह तो पुराना इतिहास है यह पहले जय थी, फिर इसमें चीज़ें जुड़ती गई और फिर यह अब करीब एक लाख शलोकों की महाभारत हो गई । तो यह बढ़ती गई, जय से भारत और फिर महाभारत। दूसरा इसके अंदर ही है कि व्यास ने इसे लिखना शुरू किया, क्योंकि व्यास एक बहुत ही नाटकीय पात्र है। वो इस कथा में भाग लेने वाला भी है और इसका साक्षी भी है। दरअसल सारी कहानी ही उसके परिवार की है। देट इस बिगगेस्ट आइरनी, यह उन्हीं की सब संताने है जो युद्ध कर रही हैं। वो सन्यासी होते हुए भी पूरी तरह से इसमें लिप्त हो गए । वो एक ट्रेजिक करेटर भी है। वो अपने परिवार की तबाही भी देख रहा है, और रोकने में असक्षम है। कहा गया है जो इस कथा में नहीं है वो सारे संसार में कहीं नहीं है। इसीलिए इसके बहुत सारे इंटरपिटेश्न हैं। हर एक आदमी अपनी तरह से महाभारत को देखता है पढ़ता है और अमल करता है।

प्रश्न : आप महाभारत को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : मुझे इसमें जिंदगी का यथार्थ लगता है। इसलिए मैं इससे थकती नहीं हूँ। मैं इसको इधर से उधर से, कई तरफ से पढ़ती रहती हूँ इसको। लोग कहते हैं कि महाभारत घर पे नहीं रखनी चाहिए क्योंकि महाभारत रखने से झगड़ा होता है। तो वो झगड़ा क्यों होता है ? मुझे लगता है एक बार अगर आपने महाभारत को आपने आप में समा लिया तो आपका झगड़ा हो ही नहीं सकता। झगड़ा इसलिए होता है क्योंकि आप आशा करते हैं कि यह मेरा पिता है, सास है, देवर है, भाई है ये मेरे लिए यह करेगा। ये सबकी भूमिका अगर आप रामायण में पढ़ें तो बहुत आइडियालाइज्ड है। अगर आप महाभारत देखे तो आपकी किसी से कोई आशा ही नहीं रह जाती, यही जिंदगी है। जैसे द्रौपदी का जब चीर हरण हुआ, भरी सभा में हुआ, वहाँ कौन नहीं था ? सभी थे , लेकिन कोई नहीं बोला । विदुर जी बोले लेकिन वो छोड़ कर चले गए, भाई जाने से क्या होगा ? या किसी की सुनी नहीं गई, या कोई बोला ही नहीं, अब बोला क्यों नहीं ? सबकी अपनी अपनी प्रॉब्लेम्स हैं बोलने में, सबकी अपनी अपनी आकांक्षाएँ थी, सबकी अपनी अपनी इच्छाएँ थी। तो जिंदगी में आपको यही पता लगता है। यह सोचना कि मैं उसका किया, मेरा यह

फलां लगता है, तो इसलिए उसको यह कहना चाहिए । महाभारत हमें सिखाती है कहीं कुछ होना नहीं चाहिए। हम तो वही करते हैं जो हमको समझ में आता है, जो हमारे सेल्फ इंटरेस्ट में होता है। अगर एक बार आपको ये समझ में आ जाए तो आपका किसी से झगड़ा हो ही नहीं सकता, क्योंकि आपकी किसी से कोई चाह ही नहीं है। किसको नहीं पता था ? वहाँ कुंती भी है गांधारी भी हैं, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य सब वही थे। हर एक आदमी सेल्फ इन्टरेस्ट पे काम करता है। अब प्रोबलम क्या है ? सेल्फ इंटरेस्ट एक दूसरे के कोलाइड करते हैं । समाज में झगड़ा किस बात का है ? कि आज जो मेरा सेल्फ इंटरस्ट है, उसका क्लैश आपके सेल्फ इंटरस्ट से होगा। अगर दोनों का सेल्फ इंटरस्ट एक है तो दोनों का ग्रुप एक हो जाएगा। उसमें रिश्ते-नाते इन सबकी तो बात ही नहीं आती। तो महाभारता हमको क्या सिखाता है, you should not have just self interest – you should have inlightend interest। ये ध्यान से समझने की बात होती है। महाभारत के बीच में कहा गया है न कोई नाता रिश्ता नहीं है बिना सेल्फ इंटरस्ट के, पति पत्नी भी में भी यह है, बच्चे भी अपने सेल्फ इंटरस्ट के लिए ही प्यार करते हैं। हमें इनलाइटेड इंटरस्ट पे काम करना चाहिए, पर आप सेल्फ इंटरस्ट भी नहीं हटा सकते।

प्रश्न : आपको कौन सा तत्व इसकी ओर खेलने, पढ़ने अथवा लिखने को आकर्षित करता है ?

उत्तर : देखो एक तो ये मैंने आपको बताया मुझे इसके करेक्टर बहुत फेसिनेट करते हैं। उनका डिस्कशन, उनका आपस का एनलेसिस, उसका एक दूसरे के संग का रिश्ता, यह मुझे बहुत आकर्षित करता है। दूसरा मुझे इसके नेरेटिव स्टाइल बहुत आकर्षित करता है। एक कहानी में से दूसरी कहानी अरु दूसरी कहानी में से तीसरी कहानी निकलती है। एक मुद्दे को लेकर तीन चार जगह आपको वही मुद्दा मिलता है और अलग अलग हालातों में। तो जो एक्सप्लोरेश्न है न किसी भी सिचूएश्न का, वो एक तरफा नहीं है, मल्टीपल विज़न और मल्टीपल वॉइस है इसमें। यही कमाल है, एक ही चीज़ को आप कितनी तरह से देख सकते हैं और समझ सकते हैं। निर्भर करता है देश और काल पर। आप किस जगह देख रहे हैं और किस समय देख रहे हैं और किन हालातों में देख रहे हैं। ये जो होता है न कि ये अच्छा है, ये गलत है, ये सही है, इट टेक्स इट अवे। वही चीज एक और स्थिति में सही है, एक और स्थिति में गलत है। ये जो एकप्लोरेश्न होता है न, किसी की नज़र में सही है किसी की नज़र में गलत है। इसी को महाभारत में बहुत अच्छे तरीके से समझाया गया है।

प्रश्न : अपनी प्रस्तुति को रौचक बनाने के लिए आप किन तत्वों का इस्तेमाल करते हैं ?

उत्तर : देखिए मेरा क्रिएटिव राइटिंग सब्जेक्ट तो नहीं है न। मैं तो ज्यादा एनेलिसिस करती हूँ । मैंने आज तक उस टाइम तक कोई चीज नहीं लिखी जब तक उसमें मेरा गहरा रुचि न हो। मैं वही सब्जेक्ट लेती हूँ जिसमें मुझे मज़ा आता है। उससे क्या होता है कि आप पाठक से अच्छी तरह जुड़ पाते हैं। दूसरा दिमाग में बहुत कुछ होता है यह भी लिख दो इसने, यह भी डाल दो, ये भी होना चाहिए वो भी होना चाहिए। पर मैं देखती हूँ असल में मैं क्या कह रही हूँ। अगर एक बार जब मुझे पता चल गया, वॉट इज़ द क्रक्स ऑफ इशू, कोरे इशू क्या है और मैं क्यों कह रही हूँ। जब मैं "क्वीन्स ऑफ महाभारत" लिखी। मेरा कोर इशू था कि मैं कह क्या रही हूँ कहना क्या चाहती हूँ ? शक्तिशाली महिलायों को पुरुषों द्वारा बाहर फेंक दिया गया। वो जब भी डावांडोल होने लगता है न तो द्रौपदी उसको चाबी भरती है। या कुंती उनको चाबी भरती है कि भाई यह सब हो क्या रहा है। वो पित्रसत्ता समाज है, वो खुद तो जाकर लड़ नहीं सकती। इस लिए वो पुरुषो को प्रेरित करती हैं। जब मैं लिख रही थी तो बहुत बिम्ब मन में आए । एक मेरी इंटरपिटेश्न थी "फ़ाइर वॉकिंग" यह द्रौपदी से संबन्धित है। द्रौपदी आग पर चल रही है, पांडवों का युद्ध में मार्ग दर्शन करने के लिए। ये उसकी एक तरह की अग्नि परीक्षा थी। अग्नि परीक्षा सीता की नहीं द्रौपदी की भी थी। एक चीज़ मैंने और खोजी जब मैं रीयूनियन आइरलैंड गई, वहाँ द्रौपदी के मंदिर हैं। फिर मैंने उसको री कनेक्ट किया तो आपके तमिलनाडू में भी द्रौपदी के मंदिर हैं। जब आप सोचना शुरू करते हैं कि आप कहना क्या छह रहे हैं क्या कह रहे हैं, तब आप उन चीजों को ढूँढना भी शुरू करते हैं। द्रौपदी को वर्जिन माना जाता है, उसके पाँच पति हैं फिर भी वर्जिन ? वर्जिनिटी है क्या ? इट्स आ स्टेट ऑफ माइंड। यह क्यों है, क्योंकि उसके पाँच पति है और उन सबमें मेंटली माइंड डिस्टेन्स करके रखना है। वो सिर्फ एक में व्यस्त नहीं हो सकती या जुड़ सकती। और यह करना सबसे मुश्किल है। मैंने एक चीज डिस्कोवर की द्रौपदी विजय है जमीनी स्तर पर भी, ऐसे बहुत से गाँव की देवियाँ हैं जिनके नाम कुछ और हैं पर वो द्रौपदी से ही जुड़ती हैं। खौज के दौरान मैंने एक किताब पढ़ी "द्रौपदी एमंग, दलित-राजपूत अँड मुस्लिम्स", सो द्रौपदी का एक ऐसा मंदिर है जिसके करता धर्ता मुस्लिम हैं। जब आप इन चीजों के बारे में सोचना और खोज़ आरंभ करते हैं तो आप बहुत अचंभित होते हैं। अगर आप सोचते हैं ठीक हैं मैं ये सोचता हूँ कि यह महिला पुरुषों से ज्यादा शक्तिशाली है, तब आप उन चीजों को ढूँढने लगते हैं और आपको वो मिलती भी हैं। गांधारी की उदाहरण लें, जब दुर्योधन अपने बाप धृतराष्ट्र कि बात नहीं सुनता है तो वो किसको बुलाता

है ? गांधारी को । इसका मतलब कि आपके जो नायिकाएँ हैं वो बहुत शक्तिशाली हैं। इस कथा के एक महत्वपूर्ण नायक भीष्म की मौत भी अम्बा यानि शिखंडी के हाथों होती है।बहुत सी उदाहरण आपको मिलेंगी, आप इस कथा में पाते हैं कि यह नायिकाएँ बहुत शक्तिशाली हैं। जब आप ढूँढेंगे शक्ति क्या है ? उन्होने ऐसा एक्ट क्यों किया ? किस तरह से किया ? आप पहले खुद को कहना पड़ेगा कि आप कहना क्या चाहते हैं ? जब आप इसको महसूस करोगे आप आस पास इसको ढूँढना शुरू कर दोगे और आपको यह मिलना शुरू हो जाएगा । फिर यह सब तत्व आप अपनी रचना में डालना शुरू कर दोगे उसमें फैलाना शुरू कर दोगे।

प्रश्न : आपकी नज़र में नाटकीयता की परिभाषा क्या है ?

उत्तर : इसको चंद शब्दों में परिभाषित करना थोड़ा कठिन सा है। यू बिल्ड उप अकस्पेकटेशन टू समथिंग, एंड देन इट्स टर्नस आउट कुइट अनोदर, एंड एकूईली वेलिड, इट्स नोट इनइंपोज टर्नइंग अराउंड, इट कुड़ आल्सो फलो इन अनोदर डाइरेक्शन। मुझे लगता है यह बहुत ड्रामेंटिक है ।

प्रश्न : आप महाभारत की नायिकाओं को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : इन सबकी अपनी अपनी आकांक्षाएँ हैं। वो अपने सपनों को पूरा करने की कोशिश करती हैं। सत्यवती की आकांक्षा भी बहुत नाटकीय है, वो सिर्फ इस शर्त पर विवाह करती है कि उसका पुत्र ही राजा होगा। पर अंत में क्या होता है ? वो पुत्र विहीन हो जाती है, बस पुत्र वधुएँ ही रह जाती हैं। फिर वो भीष्म को कहती है कि आप गद्दी संभालो या उत्तराधिकारी दो। वही भीष्म जिसका अधिकार छीना होता है। यही तो नाटकीयता है। वो मना कर देता है और समय उसको शादी से पहले वाले पुत्र के पास धकेल देता है। क्या होगा आप नहीं जानते, कोई नहीं जानता, यही ड्रामा है। और जो उसका शादी से पहले का पुत्र है वो सन्यासी है ! फिर उसकी सहायता से वो उत्तराधिकारी पैदा करवाती है। एक सन्यासी से पुत्र की प्राप्ति करवा रही है, ये सब हाई ड्रामा ही है।

प्रश्न : महाभारत की कौन कौन सी नायिकाए नाटकीयता का स्रोत हैं और कैसे ?

उत्तर : यहाँ तो सब एक से एक बढ़कर हैं। द्रौपदी भी अपने आप में एक है, उनकी तो जिंदगी कभी सही चली नहीं । कुंती भी एक अलग ही नायिका है, जब उसने और उसके बेटों ने सारा बनवास जिया, युद्ध जीत लिया और सिंहासन पर बैठ गए, उधर जब धृतराष्ट्र और गांधारी ने निर्णय किया कि वह बनवास को जाएंगे, कुंती भी निर्णय करती है कि वो भी जाएगी, ये क्या है

सारी जिंदगी बनवास घूमें कष्ट सहे और जब सब सही हो गया आप फिर बनवास पे चल दिए। फिर वो गांधारी, वो खुश है कि उसकी तो शादी होने वाली है शक्तिशाली हस्तीनापुर में। पर वो तो अंधा है, उसने आगे आ कर विरोध तो नहीं किया, पर आँखों पे पट्टी बांध ली, यह तो मूर्खता है, न तो उसको दिखता है न इसको दिखता है। पता ही नहीं हो क्या रहा है । वो भी भरी सभा में आपको पता ही नहीं हो क्या रहा है। पट्टी क्यों बांधी उसने ? गुस्से में बांधी थी ? या इसलिए कि मेरे पति को नहीं दिखता तो मैं भी नहीं देखूँगी। ज़ाहिर है गुस्से के कारण, कि तुमने मुझसे बिना पूछे राजनीति के कारण मेरी शादी करदी। तो ठीक है मैं भी नहीं देखती हूँ। हाँ वो नाटकीय है पर मुझे कुंती और द्रौपदी जितनी नहीं लगती। उसकी न बृडिंग प्रेजेंस है।

प्रश्न : आपकी पसंदीदा नायिका कौन है और क्यों ?

उतर : मैं कहना चाहूंगी द्रौपदी, क्योंकि सिर्फ वही एक है जो पुरुषों से आज़ाद है। उसका जो अस्तित्व है न वो किसी पुरुष पर निर्भर नहीं है। पर सबके प्रति सामान्य है। जिस तरह से वो सभी में सबको प्रश्न करती है। उसकी अपनी एक अलग व्यक्तित्व है। सिर्फ वही एक ऐसी नायिका है जो जंगल में भी रानी ही रही। लोग आते हैं उसकी आज्ञा मानते हैं। उसका आज़ाद मन, सोच, पित्र सत्ता के प्रति उसके विचार , लोग द्रौपदी को एक विकटिम के तौर पर देखते हैं न, पर मैं उसे नहीं देखती। क्योंकि द्रौपदी जो कभी चुप नहीं रही। तो उसने चुप होकर पाँच लोगों से कैसे शादी करली ? लोग कहते हैं कुंती ने अनजाने में कहा , अनजाने में नहीं कहा। अगर आप ध्यान से पाठ पढ़ो तो स्वयंवर के बाद झगड़ा हुआ कि ब्राह्मण कैसे एक क्षत्रिय कन्या को ले गए। वहाँ भीम कहता है आप लोग जाओ, मैं और अर्जुन इन सबको देख लेंगे। तो वो लोग वापिस घर चले गए थे, पहुँच गए थे, बिना अर्जुन-भीम और द्रौपदी के। ये बात अवश्य है कि उन्होने अपनी माँ को बताया होगा कि सभा में क्या हुआ। वो जानती थी, उसने अनजाने में थोड़ी कह दिया होगा कि आप बाँट कर लेलो। उसने जानते हुए यह सब कहा, क्योंकि उसको यह अहसास हो गया था कि अगर इन पांचों को बांध कर रखना है, तो वहाँ एक शक्तिशाली औरत की जरूरत है। वह बजुर्ग होती जा रही है वह हर समय उनको नहीं बांध सकती। सो इसके लिए एक ही योग्य औरत है और वो है द्रौपदी, और वो सही थी। तो मुझे द्रौपदी इसलिए सबसे ज्यादा अच्छी लगती है।

प्रश्न : श्री कृष्ण से नायिकाओं के संबंध के बारे में कैसे देखते हैं ?

उत्तर : श्री कृष्ण का बाकियों से तो खाली अडवाइसरी रोल है अकसेप्ट द्रौपदी । वो उसको कहती है कि तुम मेरे सखा हो, अब "सखा" का क्या मतलब है ? ये उसकी मॉरल स्ट्रेंथ, बिलवड कुछ भी हो सकता है और सिर्फ वो ही है जिससे वो अपनी सुरक्षा की उम्मीद करती है। कोई भगवान वाली नज़र से नहीं मानव की नज़र से । सो दैट इज़ द ओन्ली कॉम्प्लेक्स रिलेशनशिप कृष्ण विद द वुमेंन। बाकियों के संग ऐसी उलझन नहीं है। कुंती तो उसकी बुआ लगती है। पर द्रौपदी के संग कम्पलेकसिटी है दोस्त, लवर, रक्षक, ये सब मानवीय तौर पे है न कि भगवान के तौर पे। उसके पाँच पति है पर फिर भी अनाथ है। वो समय समय पर उनके सामने कहती भी रहती है कि उसे अब श्री कृष्ण पर ही भरोसा है। वो भीम को भी यही कहती है, क्योंकि सिर्फ भीम ही अकेला है जो उसकी केयर करता है। यही इस रिलेशन का कॉम्प्लेक्स है।

प्रश्न : आधुनिक मीडिया और तकनीक के युग में महाभारत कैसे खड़ी होगी ?

उत्तर : देखिए तकनीक तो तकनीक है। वो आपको बुरा या अच्छा नहीं करती। यह आपका मन है कि उसका इस्तेमाल कैसे करते हैं। तकनीक तो पहले भी थी, जितने साधन थे आप करते ही थे। आपने दीया जलाया, पर्दा खड़ा कर दिया, आप शेडो प्ले करते थे। यह भी तो एक अपनी तरह से तकनीक थी न। अब तकनीक बदल गई है। may be you can use it realy speaking, to revive all this, which would be invelueable . you can revive it, you can archive it. Even the singing tradition of mahabharat, it can all be rewived. All the regional mahabharats in worse also can be used in this, and they are also different from each others. तो ये पहले मुमकिन नहीं था कि आप पहले इकट्ठा करलें, पर अब आप इकट्ठा कर सकते हैं। तो मुझे लगता है हम लोग, हर एक आदमी कहता है कि पुराना समय बड़ा अच्छा था, वो पुराना समय था कौन सा ? क्योंकि जब आप उस पुराने समय में थे तब भी पुराना समय ही अच्छा था । ऐसा तो मैंने किसी को कहते सुना ही नहीं कि जी यह समय बढ़िया है, पुराना समय अच्छा नहीं था। अपने समय अनुसार हर समय अच्छा होता है। अब आपके पास टेक्नालजी है, आप या तो उसका शेल्लो इस्तेमाल करलें। या जो आप अपनी धरोहर सुरक्षित नहीं रख सके, उसे सुरक्षित करके आने वाली पीढ़ी को अवगत करवा सकें। अब हर एक आदमी तो नाटक देखने नहीं जा पाता। लेकिन आपके पास अगर प्ले है तो आप टीवी पे जरूर देख लेते हैं कभी।

प्रश्न : युवा मन में महाभारत कहाँ तक स्थान बना पाई है ?

उत्तर : देखिए नहीं स्थान बना पाई है वो हम लोगों कि अपनी गलती है न। क्योंकि शुरू से तो हम किसी को कुछ बताते नहीं हैं। अगर कोई यदि बताता भी है तो बहुत खराब तरीके से बताता है। उसका एप्लिकेशन क्या है जीवन में। अगर मैं महाभारत पढ़ूँगी तो उसके 18 अध्याय और एक लाख श्लोक मैं क्यों पढ़ूँगी ? मेरी ज़िंदगी में और काम भी तो हैं करने के लिए। अगर मुझे उसका अपनी जिंदगी से जुड़ाव दिखाई पड़े, इसमें से मुझे कुछ हल दिखाई पड़ते, या मुझे उसके हालातों से दिखता कि सही बात हो रही है। या तो हम बहुत ही कट्टर तरीके से बताते हैं इसको, जो बिलकुल गलत है, फिर हम उसको सेनेटाइज़ कर देते हैं कि ऐसा नहीं था वैसा नहीं था। अरे ! हमारी सभ्यता ही इतनी खुली हुई थी, ऐसा नहीं था – वैसा नहीं था क्या है ? हम सौभाग्यशाली हैं कि हमारे पास खुला सब्जेक्ट है, हम उसे संकुचित क्यों किए जाए रहे हैं ? दूसरी चीज ये है, कि बाकी लोगों को , अब पूरी जनरेशन ग्रो-अप हो चुकी है। जिनको खुद ही नहीं मालूम है, उनकी अपनी जानकारी है वही टीवी सीरियल पर बेस्ड है। उसके आगे क्या है ? यह न तो टीवी ने दिखाया और न ही उन्होने पढ़ा। वो चित्रलेखा का है न "न तो भगवान ने मुझे याद किया, और न ही मैंने भगवान को याद किया", तो न तो टीवी ने ही दिखाया और न ही उन्होने पढ़ा आगे। पर फिर भी यह होल्ड है अब लोग फिर वही "रामायण और महाभारत" देख रहे हैं न। मतलब अभी स्कोप है इनकी दोबारा प्रसारण से। कहीं न कहीं उसको वर्तमान जीवन से जोड़ने का समय है। यूथ को कोई कुछ बताता ही नहीं है न, वो खुद ही ढूंढते है, या कहीं कुछ देख कर आए, या पहले हमारे भारत से बाहर जाएगा, और फिर वहाँ से भारत आएगा। पीटर ब्रुक ने महाभारत ने उसकी प्रस्तुति की तो बहुत सारे इलीट यूथ ने उसे देखना शुरू कर दिया, पीटर ब्रुक की आँखों से, तो बताता कौन है उनको ?

असीमा भट्ट

प्रश्न : आपका संक्षिप्त परिचय जी ?

उत्तर : मेरा नाम असीमा भट्ट है और मैं बिहार के गया जिले से संबंधित हूँ। मैंने अपनी मास्टर मगध यूनिवेर्सिटी से ह्यूमन साइकोलोजी से की है। थिएटर एंड फिल्म शिक्षा की बात करें तो मैंने FTII पुणे से फिल्म ऐपरीसीएश्न का कोर्स किया है और मैं NSD से शिक्षित हूँ 2000 बैच में । इसके इलावा बहुत सी बॉलीवुड फिल्मों और टीवी नाटकों में काम किया है मैंने। पर थिएटर मेरा पहला प्यार है। मैं लगातार प्रोफेशनल थिएटर करती रहती हूँ ।

प्रश्न : महाभारत और भारत इनके संबंध को कैसे देखते हैं आप ?

उत्तर : भारत ही महभरात है और महाभारत ही भारत है। कोई और कुछ नहीं नहीं है।

प्रश्न : एक महिला के तौर पर आप महाभारत को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : जो महाभारत है ये सब कलाओं का बहुत बड़ा योग लगता है। एक ऐसा बॉल जिसके अंदर सारे रंग है। रंगकर्मी की भाषा में कहे तो सारे नव रस और भाव हैं। इन सब रसों या भावों को देखना है या समझना है तो महाभारत को देखना चाहिए। यहाँ प्रेम भी है, क्रोध भी है, घृणा भी, प्रेम भी है, वात्सल्य भी है, यहाँ सब कुछ है। इसलिए यह हमारे देश का महाग्रंथ भी है। इसमें इंसानी रिश्तों और मानवीय मानसिक बेहेवियर की बात है। यह इतना वर्तमान प्रासंगिक है, तभी तो आप इस पर रिसर्च कर रहे हो और मुझे ढूंढ कर बात भी कर रहे हो। यह हमेंशा ही माना जाएगा कि यह प्रासंगिक है। महाभारत का हर प्रसंग बहुत प्रासंगिक है। मैं पिछले आठ दस सालों से महाभारत कर रही हूँ। मैं इसको पढ़ती गई करती गई मुझे लगता है न इसका हर पात्र न शापित है। वो कहते हैं न ऐसी बद्द-दुआ लगी है कोई दुआ असर नहीं कर रही है। उसमें अगर देखा जाए तो सभी बेचारे है, सभी सहानुभूति और दया के पात्र हैं। चाहे आप किसी को भी ले लीजिए। मेरे द्रौपदी नाटक में मैं एक संवाद रखती हूँ "आप सचमुच अंधे हैं या अंधे होने का ढोंग रचते हैं ?" फिर बाद में वो कहती है "माना धृतराष्ट्र अंधे हैं, पर सभी में जो बाकी लोग बैठे हैं वो तो अंधे नहीं हैं, या अपने ने धृतराष्ट्र की तरह आँखों में पट्टी बांध राखी है ?"। आज भी हम देखे अगर किसी औरत की ज़िंदगी में कुछ होता है तो हम एक तकिया कलाम बोल कर पल्ला झाड लेते हैं "अरे ये तो उसका पर्सनल मैटर है'। लेट गो, पर्सनल मामला, छोड़ो परे , ऐसे करते करते हम बहुत आगे आ जाते हैं जिसका नतीजा महाभारत के रूप में होता है । एक दम से कुछ नहीं होता । छोटी छोटी धतनाएँ घटती रही और बढ़ती रही

फिर उसका रूप जो है महाभारत के रूप में निकाल कर आता है। आज की डेट में हमारे जो ह्यूमन एमोशन हैं, ह्यूमन वेलीऊ हैं, वो सब इसमें पहले से दिखाई दे रहा है। जिसके पास पैसा, पावर और पोजीशन होता है, उसमें औटोमेंटिक लस्ट आ जाती है, वो औरतों को पाने के लिए बहुत मेंनुपूलेट करने लगता है। चाहे आप अपने आस पास देख लें ऐसा ही होता है। कोई खेती करने वाला मजदूर वासना में औरतों के पीछे नहीं भागता। यही हुआ है महाभारत में ! एक द्रौपदी थी महाभारत में, जिसको कहा गया वो सबसे सुंदर थी। लाइक वो ब्रह्मांड सुंदरी थी। ऐसी औरत को कौन नहीं पाना चाहेगा ? सिर्फ सुंदरी नहीं थी, वो क्या कहते हैं न ! बिऊटी विद ब्रेन । औरतों के लिए बहुत मुश्किल हो जाता है भाई। वो अमृता प्रीतम ने कहा है न "आपने औरतों के साथ सिर्फ सो कर देखा है, कभी उनके साथ जाग कर देखिए"। घूम फिर के सारा किस्सा और लड़ाई एक औरत की देह उसका सौन्दर्य और पावर की लड़ाई पर आ जाता है। आज तक हिंदुस्तान में यही होता आया है।

प्रश्न : ऐसे कौन से तत्व हैं, जिसने आपको इस पर खेलने-लिखने अथवा पढ़ने को आकर्षित किया ?

उत्तर : मेरे लिए सबसे पहली बात यह थी मुझे कोई ऐसा प्ले करना है जो मेरे लिए बेंच मार्क बने। तो महाभारत के बारे में बहुत सुनते रहे थे, अभी भी सुन रहे हैं लोगों से। लोग हर बात पर उदाहरण देते हैं इसकी, देखो कृष्ण ने ये कहा, कौरवों ने ये कहा और पांडवों ने ये किया। आज भी बात बात पे हम इसको उदाहरण में ले आते हैं। दूसरा एक ये एंगल था कि लोग औरतों को कह देते हैं, अरे ये तो द्रौपदी है। जिस एंगल में मैंने सुना वो ये था कि वो चरित्रहीन है। ये मैं अपनी बात बता रही हूँ। क्या क्या चीजों ने मुझे द्रौपदी को करने के लिए एक आग जगाई। द्रौपदी-द्रौपदी बहुत सुनती थी और फिल्मों का भी बहुत असर था, सावित्री बा जी, हेमा मालिनी जी भी द्रौपदी करती थी और सोनल मान सिंह भी, तो ये सब मैंने देखा हुआ था, असर था और महाभारत तो सुनती रहती थी। आए दिन समाज में भी कुछ न कुछ होता रहता था तो मुझे भी लगा मुझे यह करना चाहिए। तब जो सवाल मन में आया जब ये इतने लोग कर चुके है। तो लोग मेरा क्यों देखेंगे ? ,मैं नया क्या करूँ ? इसके लिए मैंने बहुत सी स्क्रिप्ट पढ़ी, अलग अलग विद्वानो से मिली, जहां जो मिला वो पढ़ा, जो भी किताबें मुझे उन दिनों मिलती थी मैं उनको पढ़ती, प्रस्तुतियाँ देखीं फिर इसको लिखा और किया । मेरे मन में ये बात थी मेरा नाटक रिपेटेटिव न लगे, इस में न्यू एंगल, न्यू अप्रोच, और न्यू कांसेप्ट हो। एक दिन मेरे को प्रतिभा रॉय

जी की एक किताब मिली "यज्ञासेनी" उसमें ना साइक्लोजिकल अप्रोच था। बस मैंने वही पकड़ लिया मनोविज्ञान, वो कहते हैं न हुक पॉइंट, बस मुझे वही हुक पॉइंट मिल गया। अरे हाँ अगर ऐसा हुआ होगा तो उसकी मानसिक दशा क्या रही होगी ? मेरा मेंन हुक पॉइंट यह रहा, द्रौपदी के नाते जब मैं प्रस्तुति करूँ मेरे मन में यह रहे कि पाँच पतियों की एक पत्नी के नाते उसकी मनोदशा और संघर्ष क्या रहा होगा ? उसको मैंने पूरा मन में लिया, रखा और सोचा कर के देखूँ। इस के बारे में मैं रिसर्च लेती गई और हाँ साथ में मैं न डीप मेंडिटेशन में चली जाती थी घंटों। वहाँ मैं खुद को देखती थी, मैं कृष्ण के साथ हूँ, मैं अर्जुन के साथ हूँ, मुझे डीप विज़ुयल और डाइलोग आने लगे। इसका यह प्रभाव पड़ा जो मैंने देखा,समझा और महसूस किया , वो मेरे दर्शकों को लगता है वो भी कहते हैं हाँ यही हुआ होगा। मैंने न इसका बड़ा आधुनिक अप्रोच भी रखा है, मैं स्कूल और कॉलेज में ये खेलती हूँ न तो मैं बीच बीच में यानि द्रौपदी अंग्रेज़ी भी बोलती है। इस से थोड़ा पंच भी आ जाता है लोगों में और सरकास्टिक भी है। इसी द्रौरण निर्भया कांड भी हो गया था, मैंने उसको भी इसमें जोड़ दिया और कहा " तुम भरी सभा में मेरा चीर हरण कर रहे थे, नंगा कर रहे थे, क्या करने के लिए ? नंगा करके क्या मेरी आरती पुजा करते ? गैंग रेप की तैयारी थी जैसे बीच सड़क पे चलती बस में निर्भया का किया गया। यह इस तरह के संवाद भी इसमें आते चले गए ।

प्रश्न : अपनी प्रस्तुति को और ज्यादा रौचक बनाने के लिए आप ने किन तत्वों का इस्तेमाल किया ?

उत्तर : मैंने पहले सारे फ़ैक्ट को पकड़ा। महाभारत में क्या क्या हुआ, उसके सारे पात्रों को लिया। अब उसमें ऐसा क्यों किया ? यह पकड़ा, मानसिक तौर पर, कि इसमें ऐसा क्यों किया ? कहते हैं न दु:शासन ने उसका चीर हरण क्यों किया ? ये आता है कि वो उसपे हंसी थी। मर्द अपना अपमान नहीं झेलते, मेल ईगो, आप समझ रहे हैं न। अपने अगर किसी लड़की को पसंद किया और उसको प्रोपोज किया, उसने मना कर दिया तो आप प्रसनेलिटी पे प्रश्न चिन्ह उठ जाता है। मैंने इन इन सारे फ़ैक्ट और इसके पीछे के कारणों को रखा। ऐसा हुआ तो क्यो हुआ ? मैंने आपको बताया न मुझे जहां जहां जो जो मिल रहा था, मैंने उनको पकड़ा और एक रौशनी की तरह उस पिरो कर रख दिया। कृष्ण का इस सारे युद्ध में क्या स्वार्थ था ? उसे क्या मिला ? वो अंधा युग में आता है न "इस 18 दिनो के युद्ध में मैं ही तो हर बार मारा हूँ माँ"। इसका मतलब वो एक महान क्रिएटर था, वो आपको आपके जीवन का तथ्य और सच्चाई

दिखाना चाहता है। कृष्ण सारी सच्चाई को उधेड़ कर आपके सामने ला कर रख देते कि यह जीवन है, यही सत्य है, इसी का सामना अपने करना है जो ये आपके कर्म हैं और आप इससे भाग नहीं सकते। एक बात और जो आप ब्रह्मांड को देंगे वही आपके पास लौट कर आएगा। यही बाते और यही फिलोस्फ़ी मैंने इसमें रखी है और प्रस्तुत किया है। लोगों को यह पसंद भी आ रहा है।

प्रश्न : आप महाभारत में नाटकीयता कैसे देखते हैं ?

उत्तर : सबके करेक्टर में लारजर देन लाइफ है न। नाटक में यह भी कहा गया है कि आपको थोड़ा लारजर देन लाइफ दिखाना है, थोड़ा क्यों बहुत। क्योंकि यह कैमरा नहीं है, कैमरा लेंज नहीं है कि आपके हर इमोश्न को ज़ूम कर के दिखा रहा है। वहाँ सब कुछ खुली आँखों के लोगों के सामने है। महाभारत के सभी पात्र भी लारजर ही लगते हैं जैसे कौरवों का 100 होना, नाटकीयता नहीं लगता ! एक औरत कैसे 100 बच्चों को जन्म दे सकती है, अति नाटकीयता लगती है। सब कुछ इतने पात्र है, द्रौपदी के साथ इतना कुछ होते जाना और सहते जाना, यही कहा जाना कि वो बहुत अवेयर थी, द्रौपदी के बारे में यह भी कहा जाता है कि उसका इंटीउष्ण बहुत स्ट्राँग था। उसको पता था कि उसके साथ क्या होगा आने वाले समय में यह सारी बातें भी हैं। एक तो नाटकीयता थी ही वहाँ सारे पात्रों में। दूसरा नाटकीयता के साथ साथ आपका फ़ैक्ट जितना औथेंटिक होगा, वो उतना वर्क करता है। केवल नाटकीयता से वो चीज़ें केवल नाटकीय ही बन कर रह जाएंगी, तो वो छुएंगी नहीं। समझ रहे हैं न आप। अति नाटकीयता के साथ साथ कहानी का औथेंटिक होना क्यों, सच्चा होना, और आपका कनवीक्षन होना, एक अभिनेता के तौर पर आपका उसमें कितना कनविकशन है ? अगर मैं अपने नाटक में कहती हूँ "मेरा दिल करता है, मैं कौरवों की नहीं अपने पाँचों नपुंसक पतियों की हत्या कर दूँ", नाटक के बाद अगर लडकीयाँ मुझे पकड़ लेती हैं और कहती हैं कि मेरे रौंगटे खड़े हो गए, कि यही हुआ होगा , इस हद तक नाटकीयता ... हो सकता है यही हुआ हो मैं तो नहीं थी न वहाँ, लेकिन मैंने उसकी आत्मा के इतना अंदर उतर कर देखा। जो अगेन भरत मुनि के नाट्य शास्त्र में सात्विक अभिनय की जो बात है। वो अंदर आत्मा में घुस कर देखने की बात है। जब आप इसमें घुस जाते हो तो आपको मेंथड करने की जरूरत नहीं रहती। इतना औथेंटिक बनाने के लिए नाटकीयता के साथ साथ अगर वास्तविकता नहीं है, और वास्तविकता में सच्चाई नहीं हो, तो फिर बात नहीं बनती है। सभी नाटक करने वालों को सिर्फ नाटकीयता पर ध्यान न दे कर के

उसकी वास्तविकता पर भी उतना ही गौर करना चाहिए ध्यान देना चाहिए। तब नाटकीय होते हुए भी यह लगते हुए भी, जैसे जब हम फिल्म देखते हैं, कि उसने उसकी हत्या करदी तो आप उससे रिलेट कर जाते हैं भई हाँ उसकी हत्या हो गई। या आपके मुंह से कोई सिसकी निकाल जाती है, उफ़्फ़। यह जानते हुए भी कि यह नाटक है या फिल्म है। आप यह तब रिलेट कर पाते हैं क्योंकि वहाँ वास्तविकता है। तो यह नाटकीयता में वास्तविकता, ईमानदारी, इस पे कलाकारों को काम करना बहुत जरूरी है वरना वो जो मेंन सी बारीक सी चीज़ चूक जाती है, जब वो चूक जाती है तो बात असर नहीं करती।

प्रश्न : आपकी नज़र में नाटकीयता कि परिभाषा क्या है ?

उत्तर : अभी जो मैंने आपको बाताया था,यही मेरी नाटकीयता कि परिभाषा है। नाटक होते हुए भी वो नाटक नहीं लगे, तुम दिखाओ कि तुम दिखा रहे हो । ब्रेक्थ ने कहा था – आप एक किरदार हो , आप वो व्यक्ति स्वयं नहीं हो जिसका किरदार आप निभा रहे हो। पर आप उसे अपनी वास्तविकता और ईमानदारी से निभा रहे हो। मान लीजिए एक नाटक को आपने कई बार खेला है, किसी को डबल कास्टिंग के साथ खेला होगा, कभी पूरे कलाकारो के साथ खेला होगा। क्यों कहते हैं कि यार फलां वाले ने जो किया था न, इसमें वो बात नहीं थी। क्यों कहते हैं ? इसलिए नहीं कि वो एक्टर बड़ा है, उस एक्टर का अप्रोच बड़ा ऑनेस्ट रहा उसमें । ऑनेस्टी हमेंशा बड़ी होती है किसी से भी। नाटकीयता के बावजूद भी करेक्टर में जो एक ऑनेस्टी होती है, ये दिखते हुए भी कि यह नाटक है, हम दर्शकों को अपने साथ बहा ले जाते हैं। आप हँसते है तो वो आपके साथ हँसते हैं, आप रोते हैं तो वो आपके साथ रोते हैं।

प्रश्न : आप अपने पात्रों में नाटकीयता कैसे ढूंढते हैं ?

उत्तर : पूरी साइकोलजी से, क्योंकि मैं साइकोलजी की स्टूडेंट भी हूँ मेरा काम और आसान हुआ। करके देखो और फील, अगर मेरे साथ ऐसा होता तो मैं क्या करता। ऐसा नहीं कि आपकी हत्या का सीन है तो हत्या कर के देखो, पर हाँ जहां तक हो सके उसके फील के एंड तक जाकर देखो। हर एक्टर अपनी अपप्रोच अपनाता है। कहते है नसीर साब, पंकज कपूर साब अपने घर में भी वही कॉस्ट्यूम पहन कर घूमते रहते हैं जो करेक्टर वो कर रहे होते हैं । इसलिए नहीं कि उनका फेंसी ड्रेस करने का शौंक है। अगर एक बार आप अपने कॉस्ट्यूम पहन लेते हैं तो किरदार की आधी फीलिंग तो उसी समय आपमें आ जाती है, आप उसको महसूस करने लगते हैं। आप सोचना शुरू कर देते है कि हाँ अब यह किरदार हूँ। आपका

बिहेवियर 90 % तक वैसा हो जाता है। एक बार मुझे नाटक के बाद एक सवाल पूछा गया कि अपने इसका रिहरसल कितनी देर तक किया था ? मैंने कहा कि कब नहीं करती हूँ ! हर समय मैं उसको जीने की कोशिश करती हूँ। अगर मैं फिजिकली रिहर्सल नहीं कर रही तो फिर भी मैं मेंटली और इमोशनली करती ही रहती हूँ। मेरे इस नाटक के कुछ संवाद है जो मेरे मन में खाना बनाते वक़्त आए। यही सारे तरीके है एक अच्छा एक्टर बनने के, उसके रियाज़ के, रिहरसल के, यही कुछ तो टिपस हैं जो बड़े एक्टर भी करते हैं और देते है। और कुछ इसमें रॉकेट साइन्स नहीं है।

प्रश्न : महाभारत की कौन कौन सी नायिकाए नाटकीयता का स्रोत हैं और कैसे ?

उत्तर : सबके में है, कुंती में है, उत्तरा में है, गांधारी में है। सब औरतों का दर्द एक सा लगने लगता है। जैसा मैंने पहले भी कहा, महाभारत की हर एक औरत अभिशापित है। सबके सार अगर इक्सप्लेन करने लगें तो..... आप गांधारी ले लीजिए न, वो एक ही लाइन ले लीजिए जो अंधा युग में कहा "जने नहीं थे मैंने कंकाल", एक औरत का एक बेटा मर जाए तो कैसा लगता है, उसके 100 के 100 बेटे की लाश पड़ी है..... और 100 के 100 बहू विधवाएँ विलाप कर रही हैं। आप इसमें दर्द देखो। ये सुनने में ही रौंगटे खड़े हो जाते हैं। महाभारत की हर महिला पात्र जो हैं, उतनी ही सेंटर करेक्टर हैं, उतनी ही लीड करेटर है, जितनी द्रौपदी हैं। क्योंकि केद्रित हो गई, ग्लेम्राइज्ड हो गई, पर महाभारत की हर महिला नायिका उतनी ही शापित है जितनी द्रौपदी। मेरा मन है कभी मौका मिला तो मैं उन सब नायिकाओं को भी खेलूँगी। ये जो जितनी भी औरतें थी, सत्यवती हो, कुंती हो या गांधारी हो ये सब जो हमारी पित्रसत्ता के समाज में बंधीं थी, उसमें अपनी लाइफ को तहस नहस कर लिया। वहाँ उत्तरा भी उससे बर्बाद हो गई। इस सब को नाटक में सवाल उठाऊँगी।

प्रश्न : आपकी सबसे पसंदीदा नायिका कौन है और क्यों ?

उत्तर : द्रौपदी करने के बाद न मुझे उत्तरा में न एक सोच दिखाई दे रही है। वही जो कहते हैं मुझे अब सारी उम्मीद अब यंग जनरेशन से है। चूंकि उत्तरा को उतना डिस्क्राइब नहीं किया गया है महाभारत में, एक कहते हैं न एक टीज़र देकर छोड़ दिया गया। एक इतनी मासूम सी लड़की के बारे अपने बस थोड़ा सा दिखा कर छोड़ दिया। अब वो टीजर मुझे हौंट कर रहा है, मुझे लगता है उत्तरा। दूसरा निजी तौर पर भी एक अभिनेता के तौर पर भी मैं विश्वास करती हूँ कि यंग जनरेशन बहुत कुछ कर सकती है।

प्रश्न : आप अपने लेखन के लिए कथा और कहानियों का चुनाव किस तरह से करते हैं ?

उत्तर : पहले कहानी ही पावरफुल होनी चाहिए। मुझे नसीरुद्दीन शाह साब की एक बात याद आ रही है एक बार उन्होने कहा था। अगर स्क्रिप्ट में दम नहीं होगा, तो कितना भी अच्छा एक्टर है वो क्या उखाड़ लेगा ? मतलब आप क्या कर लोगे ? और आगे भी उन्होने एक बात काही थी अगर स्क्रिप्ट भी बहुत अच्छी हो और एक्टर अच्छा नहीं है तो क्या कर लोगे ? मतलब अच्छी स्क्रिप्ट और अच्छा एक्टर दोनों का चोली दामन का साथ है। मेरा मानना है कि स्क्रिप्ट अच्छी होनी चाहिए, कहानी में दम होना चाहिए, जैसे मैं गांधारी के संवाद को बहुत पावरफुल मानती हूँ। अगर को भी नई एक्ट्रेस "जने नहीं थे मैंने कंकाल" फील करके और जान करके बोलेंगी, तो दर्शकों की आँखें भर आनी चाहिए। जैसे कि फिल्म जगत का एक और पावरफुल संवाद है जिसका कोई तोड़ नहीं आया। त्रिशूल में शशि कपूर साब कहते हैं "मेरे पास माँ है", इसके लिए आपको उतार चढ़ाव करने की या एफर्ट करने की जरूरत नहीं है। मेरा यही मानना है रेयलिस्टिक अप्रोच होनी चाहिए, स्क्रिप्ट और कहानी तो होनी चाहिए अच्छी, अगर नहीं होगी तो चुनोगे क्यों ? अच्छा जोड़ तोड़ से गूठ देने से कभी डाइलौग अच्छे नहीं होते हैं, रेयलिस्टिक अप्रोच से ही अच्छे होते हैं । किसी भी नाटक को आप चुन रहे हैं, किसी भी कविता और कहानी को ही अगर आप करना चाह रहे हैं, तो उसमें कोई बात होनी चाहिए।

प्रश्न : मीडिया और तकनीक के युग में महाभारत कैसे खड़ी हो पाएगी ?

उत्तर : देखिए महाभारत जो है न, मैं फिर दोबारा वही कहूँगी, इतना प्रासंगिक है न कि पीटर ब्रूक का महाभारत भी पसंद किया गया और बी आर चोपड़ा का भी किया गया। अगर असीमा जैसी लड़की प्रभावित होती है तो कहीं न कहीं इनके इमेजिस भी थे। अगेन जो सॉलिड कहानिया हैं न, जैसे तमस है उसके एपिसोड यू-ट्यूब पे पड़े है। मैं कभी कभी वो भी देखने लगती हूँ। जबकि आप देखोगे वो टेकनिकली इतने हाइ नहीं है। बहुत सादगी से बनाई गई थी वो चीज। हाँ नेटलिक्स पे आपको बहुत कुछ मिल जाएगा पर उसमें स्टोरी और इमोश्न गुम हो जाते हैं। मेरा युवाओं से यही आग्रह है कि कुछ भी नया जो आप देख रहे हो या पढ़ रहे, उससे पहले न पुराना पढलो। अगर आप आज के नए रायटर को पढ़कर मान लोगे कि यही बैटर है। और पास को आपने पढ़ा ही नहीं है, तो आप कभी जान ही नहीं पाओगे बेहतर कविता क्या होती है। बेहतर लिट्रेचर क्या होता है अगर आपने मंटो को नहीं पढ़ा। बेहतर को जानने के लिए यही है कि आपको थोड़ा पीछे जाना पड़ेगा। ये जो अमज़ोन है, नेट्फ़्लिक्स है स्टार है ये टेकनों

रेवोलुशन है, जिसका एमोशन से कोई वास्ता नहीं है। अनफ़ौरचूनेटली टेक्नालजी ने हमें थोड़ा..... सोर्री थोड़ा बहुत जो है टेक्निकल बना दिया है, फाल्स बना दिया है, आर्टिफ़िशियल बना दिया है। मुझे लगता है इस से थोड़ा बचने की जरूरत है। टेक्नालजी का दिमाग पर हावी हो जाना ये एक खतरा भी है।

प्रश्न : आज की युवा पीढ़ी के मन में महाभारत कहाँ तक अपना स्थान पाई है ?

उत्तर : बिलकुल अपना स्थान बना पाई है। इसलिए तो मैं कर रही हूँ 10 साल से कर रही हूँ। हर शो में मुझे बेहतर रिसपोन्स ही मिलता है। इसलिए मैं बोलती हूँ महाभारत इतना रेलिवेंट है, कि यूथ जुड़ता है। अगर अभिमन्यु चक्रविऊ में कूद पड़ा, क्योंकि वो यूथ है। और यूथ कहता है हाँ मैं ये कर सकता हूँ। उनको लगता है मैं दुनिया बदल दूंगा। इसका उदाहरण है हमारा आज का यूथ और अभिमन्यु। मैं भी यही सोचती हूँ कि वो कुछ भी कर सकते हैं। अगर उनकी ऊर्जा को सही दिशा में इस्तेमाल किया जाए। इसलिए मैं बार बार कह रही हूँ अगर मुझे दोबारा करना पड़े तो मैं उत्तरा और अभिमन्यु पे करूंगी, यूथ से मुझे बहुत उम्मीद है। मैंने स्कूल कॉलेज जहां भी ये नाटक किया है मुझे बहुत जबरदस्त रिसपोन्स मिला है। एक दो लड़कियों ने तो मुझे आकार यहाँ तक कहा कि हम ये नाटक करना चाहती हैं हमें करवाओ।

संदर्भ सूची

इस शोध कार्य का मुख्य आधार ग्रंथ

- महर्षि, वेदव्यास. *महाभारत.* गीता प्रेस. 1997.

हिन्दी पुस्तकें

- ओशो, *नारी और क्रांति.* ओशो साहित्य (हिन्द पॉकेट बुक्स). 2013.
- आलोक, सीतेश. *महागाथा.* भारतीय ज्ञानपीठ.
- अंकुर, देवेन्द्र राज. *पढ़ते-सुनते-देखते.* राजकमल प्रकाशन. 2008.
- कोहली,नरेंद्र, *महासमर-आनुषंगिक.* वाणी प्रकाशन. 2010.
- कोहली, नरेंद्र. *जहाँ है धर्म वहीं है जय.* दिल्ली: वाणी प्रकाशन. 2005.
- कोहली, नरेंद्र. *सैरंध्री.* वाणी प्रकाशन. 2008.
- कोहली, नरेंद्र. *हडिम्बा की अत्मकथा.* दिल्ली:वाणी प्रकाशन. 2012.
- कुमार, सिद्दनाथ. *नाटकलोचन के सिद्धान्त.* वाणी प्रकाशन. 2004.
- गौड़,गणेशदत्त. *आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन* . सरस्वती पुस्तक सदन. 1965.
- गर्ग,शेरजंग. *स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग.* साहित्य भारती. 1973.
- गायकवाड, ज्ञ. *आधुनिक हिन्दी नाटकों में संघर्षतत्व* . पुस्तक संस्थान. 197
- चातक, गोविद. *प्रसाद के नाटक: सृजनात्मक धरातल और भाषिक चेतना* . आत्माराम एंड संस. 1972.
- चातक,गोविंद. *आधुनिक हिन्दी नाट्य:भाषिक और संवादीय संरचना* . तक्षशिला प्रकाशन. 1982.
- चतुर्वेदी, कर्तिका चित्रा. *अम्बा नहीं मैं भीष्म.* भारतीय ज्ञानपीठ. 2003.
- चतुर्वेदी, कर्तिका चित्रा. *महाभारती.* भारतीय ज्ञानपीठ. 2007.
- जोशी दिनकर/त्रिवेदी प्रसाद शूकला, *महाभारत में मातृ-वंदना.* ज्ञान गंगा. 2008.
- जोशी, दिनकर. *महाभारत में पितृ-वंदना.* ज्ञान गंगा. 2008.
- डॉ नगेन्द्र. *भारतीय साहित्य कोश* . नेशनल पब्लिशिंग हाउस. 1981.
- डॉ नगेन्द्र. *अरस्तू का काव्यशास्त्र* . भारती भंडार. 1986.
- डॉ पालीवाल, चंद्रव्रत. *महाभारत "दक्षिण पूर्व एशिया में".* समानांतर प्रकाशन.

- डॉ धवन, मधु. *साहित्यक विधाएँ सैद्धांतिक पक्ष.* वाणी प्रकाशन. 2008.
- डॉ यूगेश्वर. *भारत का महाभारत.* मीरा पब्लिकेशन. 2012.
- डॉ राजेन्द्र. *संस्कृत और संस्कृति, प्रभात प्रकाशन.* 2010.
- डॉ दुबे, सत्यनारायण. *भारतीय क्ला और संसक्ति.* 1968.
- डॉ शर्मा, कृष्णदेव. *पाश्चात्य काव्यशास्त्र.* विनोद पुस्तक मंदिर. 1982.
- डॉ दीक्षित, जगदीश दत्त. *भास की भाषा संबंधी तथा नाटकीय विशेषताएँ.* आर्य बूक डिपो.
- डॉ विनय. *महाभारत का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव.* सन्मार्ग प्रकाशन. 1966.
- डॉ नरसिंहचारी, एस टी. *सौन्दर्य तत्व विमर्श.* वाणी प्रकाशन. 2010.
- डॉ नरसिंहचारी, एस टी. *तेलगु साहित्य संदर्भ और समीक्षा.* वाणी प्रकाशन. 2004.
- तनेजा,जयदेव. *समसामयिक हिन्दी नाटकों में चरित्र सृष्टि.* सामयिक प्रकाशन. 34.
- थरूर, शशि. *मैं हिन्दू क्यों हूँ.* वाणी प्रकाशन. 2018.
- द्विवेदी, नारायण. *रही मासूम रज़ा और उनके औपन्यासिक पात्र.* जानकी प्रकाशन.
- द्विवेदी, जगत नारायण. *महाभारत के पात्र-2.* प्रभात प्रकाशन. 2010.
- दईया, पीयूष. *अभिलेश- एक संवाद.* राजकमल प्रकाशन. 2010.
- द्विवेदी, हजारी प्रसाद. *हिंदी साहित्य की भूमिका.* राजकमल प्रकाशन. 2019.
- नारायण, बद्री. *उपेक्षित समुदायों का आत्म इतिहास.* वाणी प्रकाशन. 2006.
- पं चतुर्वेदी, सीताराम. *भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच.* हिन्दी समिति सूचना विभाग. 1964.
- प्रो (डॉ) तातेड़, सोहन राज और डॉ गांधी, प्रेम लता. *कला शिक्षा.* राजलक्ष्मी पब्लिकेशन. 2016.
- पोद्दार, वसुदेव. *रामायण- महाभारत काल_ सिद्धान्त और इतिहास.* भारतीय ज्ञानपीठ. 2006.
- पालीवाल, रीतरानी. *रंगमंच : नया परिदृश्य.* वाणी प्रकाशन. 2018.
- प्रेमशंकर. *कामायनी का रचना संसार.* वाणी प्रकाशन.
- बक्शी,रमेश. *कहानी में औतुक्य का अनुतत्व* . सरस्वती पुस्तक सदन. 1966.

- बांदीवाडेकर, चंद्रकांत. *भारतीय साहित्य पे महाभारत का प्रभाव.* आर्य प्रकाशन मंडल. 2009.
- बसु, बुद्धदेव. *महाभारत की कथा.* भारतीय ज्ञानपीठ. 2004.
- बाली, सूर्यकान्त. *महाभारत का धर्म संकट.* प्रभात प्रकाशन. 2014.
- बसु, प्रतिभा. *महाभारत के महारणय में.* राजकमल प्रकाशन. 2012.
- भारती, धर्मवीर. *अँधा युग.* किताब घर प्रकाशन. 2007.
- मिश्र, विद्यानिवास. *महाभारत का काव्यार्थ.* नेशनल पब्लिशिंग हाउस. 1998.
- मिश्र, यतीन्द्र. *कला का सौन्दर्य, साहित्य तथा अन्य कलाएँ (खंड 1).* वाणी प्रकाशन.
- रॉय, प्रतिभा. *यज्ञासेनी.* न्यू दिल्ली:रूपा पब्लिकेशन. 1995.
- राय, प्रतिभा. *द्रौपदी.* राजपाल एंड संज्स. 2012.
- राकेश. *नरेंद्र शर्मा और द्रौपदी.* प्रकाशन केंद्र.
- राकेश,मोहन. रंगमंच और शब्द : लेख नेमिचन्द्र जैन , नतरंग,खंड-5, अंक 18, जनवरी-मार्च 1972.
- ललितांबा, बी° वाई°. *भारत की लोक संस्कृति.* प्रभात प्रकाशन.
- लाल लक्ष्मीनारायण. *रंगमंच और नाटक की भूमिका*. नेशनल पब्लिशिंग हाउस. 1975.
- वेदलंकार, हरीदत्त. *भारत का सांस्कृतिक इतिहास.* आत्मा राम एंड संस. 2009.
- शर्मा, एस एन. *व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक एवं अध्यात्मिक विमाए.* माधव प्रकाशन. 2014.
- शर्मा,राजमणि. *काव्यभाषा : रचनात्मक सरोकार.* वाणी प्रकाशन. 2017.
- शोभा,निगम. *व्यास कथा.* वाणी प्रकाशन. 2008.
- सिंहल,कृष्ण. *हिन्दी गीति नाट्य*. भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन. 1964.
- सिंह, बच्चन. *महाभारत की संरचना.* भारतीय ज्ञानपीठ. 2011.
- सिंहल,निर्मल. *नई कहानी और अमरकांत.* राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड. 1999.
- हेमंत,निर्मला. *आधुनिक हिन्दी नाटककारों के नाट्य सिद्धान्त*. अक्षर प्रकाशन. 1973.

- श्रोत्रिय, प्रभाकर. *भारतीय साहित्य पर महाभारत का प्रभाव.* आर्य प्रकाशन मण्डल. 2009.

धर्म ग्रंथ

- श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी
- महर्षि मनु – अनुवादक, श्री 108 स्वामी दर्शनानंद सरस्वती. *मनु समृति.* पुस्तक मंदिर. 1962.

पंजाबी पुस्तकें

- स्वराजबीर. *कृष्ण.* चेतना प्रकाशन. 2005.

अंग्रेजी पुस्तके.

- ब्रुक्स, क्लीन्थ. हेलमेन,रोबर्ट बी. *अंडरस्टेंडिंग ड्रामा.* स्टीन्र्स प्रैस. 2008.
- डेवासोन,एस॰डबलिउ. *ड्रामा एंड द ड्रमैटिक*. मेथिउन एंड कं लिमेटिड. 1970.
- ड्रेवर,जेम्स. *अ डिक्शनरी ऑफ साइकोलोजी*. फोर्न रेफरेंस बुक्स. 1966.
- ईगरी,लोगस. *द आर्ट ऑफ ड्रमैटिक राइटिंग.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस. 1960.
- ईलियट,टी॰एस. *सेलेक्टेड एससेज़* . फबर एंड फबर लिमेटड. 1934.
- हडसन, डबलिउ एच. *एन इंटरोंडकशन टू द स्टडी ऑफ लिट्रेचर.* जिओर्ज जी हाररप एंड कंपनी. 1913 .
- होरने, कारेन. *नैरोसिस एंड ह्यूमन ग्रोथ*. रोटलेज एंड केगन पॉल लिमिटेड. 1950.
- के लैंगर,सुजन. *फीलिंग एंड फोरम*. रोटलेज एंड केगन पॉल लिमिटेड. 1953.
- लॉसन,जॉन हॉवर्ड. *थियरि एंड टेक्निक ऑफ प्ले राइटिंग एंड स्क्रीन राइटिंग*. द वेन रीस. 1975.
- निकोल,ए. *द थियरि ऑफ ड्रामा*. दोआबा हाउस. 1969.
- पीकॉक,रोनाल्ड. *द आर्ट ऑफ ड्रामा*. रौटलेज एंड केगन पॉल. 1975.
- सत्यान,जे एल. *ड्रमैटिक एक्सपिरियन्स.* कम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रैस. 1965.

अनुवादित पुस्तकें

- गैरोला, वाचस्पति. *संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास.* चौखंबा विद्याभवन. 1960.
- भट्टाचार्य, सुखमय. जैन, पुष्पा. *महाभारत कालीन समाज.* लोकभारती प्रकाशन.
- ब्रैंडर मेंथयूज़/इन्दुजा अवस्थी. *नाटक साहित्य का अध्ययन.* आत्माराम एंड संस. 1964.
- चेनी शेल्डान/श्री कृष्ण दास. *रंगमंच – नाटक अभिनय और मंच शिल्प.* हिन्दी समिति सूचना विभाग. 1965.

साक्षात्कार

- भारती, संत रुद्राणी. साक्षात्कार. 7जनवरी 2015.
- भारती, श्री सर्वेषा. साक्षात्कार. 19जनवरी 2015.
- धालीवाल ,केवल. साक्षात्कार. 25 फरवरी 2016.
- भरद्वाज, नितीश कुमार. साक्षात्कार. 28 जनवरी 2017.
- कौशिक, अतुल सत्य. साक्षात्कार. 28 जनवरी, 2017.
- बेनर्जी, बरुन. दूरभाष. 4 जून 2017.
- नायर, संतोष. दूरभाष. 31 मार्च 2018.
- डॉ सलाउद्दीन पाशा, सय्यद . दूरभाष. 31 मार्च 2018.
- शर्मा, मुकेश. साक्षात्कार. 24 जनवरी 2019.
- रॉय, अनुरूपा . दूरभाष . 30 मार्च 2020.
- देवी, जी चंदन . साक्षात्कार . 21 फरवरी 2020.
- बाई, तीजन. दूरभाष. 21 अप्रैल 2020.
- डॉ शर्मा, संध्या. दूरभाष. 19 अप्रैल 2020.
- दास्तांगों, फ़ौजिया . दूरभाष . 2 मई 2020.
- काने, कविता . ई मेल. 22 अप्रैल 2020
- डॉ शर्मा, कविता. दूरभाष. 10 अप्रैल 2020.
- भट्ट, असीमा. दूरभाष . 28 मार्च 2020.
- डॉ प्रसाद, नीना . दूरभाष . 17 अप्रैल2020.

<u>वेबसाइट व् ब्लॉग लिंक</u>

- थिएटर पीपल. द महाभारता ऑफ वुमेन. 9/4/2013. यू ट्यूब. 23/3/2015. https://www.youtube.com/watch?v=3D3KW333tmU
- त्रिपाठी, राजीव. पुरुष से ऊंचा स्थान है नारी का हिन्दू परंपरा में. प्रवक्ता. प्रवक्ता डॉट कॉम. 13/8/ 2010. गूगल. 10/12/ 2016. http://www.pravakta.com/male-and-female-high-point-in-the-hindu-tradition
- मियागी, सतोषी. नल चरित्रम. शिजूका परफोरमिंग आर्ट सेंटर. रंगमंच पर जापानी महाभारत. 16 /7/2014. गूगल. बीबीसी. 19/5/2015. http://www.bbc.co.uk/hindi/multimedia/2014/07/140715_japanse_mahabharat_play_gallery_an
- डॉ शर्मा, कविता. द क्वीन्स ऑफ महाभारता. सीईसी.19/4/12. यू ट्यूब.4/6/2016 https://www.youtube.com/watch?v=TDLNurW6GAs
- कृष्ण, राम. जानिए महाभारत धारावाहिक बनने का किस्सा. 21/4/2014. दैनिक जागरण. 8/2/2017. http://www.amarujala.com/entertainment/television/how-to-make-mahabharat-serial
- मित्तल, गिरीश कुमार. महाभारत: कृष्ण और भीष्म के विचारों का टकराव. 28/1/2014. नवभारत टाइम. 9/6/2018. http://navbharattimes.indiatimes.com/articleshow/37332925.cms
- रॉय, अनुरूपा. कठकथा पपेट थिएटर. यू ट्यूब. 5/11/2017. मेला ऑन एसएबीसी. 24/1/2018.
- https://www.youtube.com/watch?v=VFHdIGVc9R4
- चित्रकला. भारत डिस्कवरी. ओआरजी. 4/5/2019. http://bharatdiscovery.org/india/चित्रकला

- मेवाड़ की चित्रकला. भारत डिस्कवरी. ओआरजी. 4/5/2019. http://bharatdiscovery l org/india/मेंवाड़_की_चित्रकला
- दास, अनुतमा. अ स्पेक्टकुलर मिउज़ियम ऑफ स्पीरचूयल आर्ट, ओपेन इन फ्लोरेंस. 24/7/2013. इस्कॉन न्यूज़. 25/2/2019 https://iskconnews l org/a-spectacular-museum-of-spiritual-art-opens-in-florence,3985
- नायर, संतोष. संध्या प्रोडकशन-द गेम ऑफ डाइस. यूट्यूब. 29/9/2011. संध्या संतोष नायर. 12/2/2017. https://www l youtube l com/watch?v=iJCJNlo7fnk&t=185s (Sadhya's production- The Game of Dice
- ब्रूक, पीटर. पीटरस ब्रुक्स द महाभारता. 11/1/2015. यू ट्यूब. स्पेस एंड इंटेलिजेंस चैनल. 30/11/2015. https://www l youtube l com/watch?v=yhqkRGISQr8
- मियागी, सतोषी. महाभारत. जमन प्रोडकशन. 28/9/2011. यू ट्यूब. 22/8/2014. https://www lyoutube l com/watch?v=NTIrLXUmxJ8
- हिरोशी कोइके ब्रिज प्रोजेक्ट. पैन एशिया प्रोजेक्ट ऑन महाभारत. 14/11/2015. यू ट्यूब. 7/7/2019. https://www lyoutube lcom/watch?v=dHDAy9tFVw4&list=PLGMhI8jE06EycSKQdcgSFb_ztoM08f2JI
- कौशिक, अतुल सत्या. द्रौपदी नाटक. द फिल्म एंड थिएटर सोसाइटी. 26/8/2016. यू ट्यूब. 30/5/2017. https://www l youtube l com/watch?v=tvdv_vYWa6c&t=174s
- शर्मा, मुकेश. कोमल गांधार. संवाद थिएटर ग्रुप और नैक्सट जेन प्रोडकशन. 19/11/2017. यू ट्यूब. 5/6/2018. https://www l youtube l com/watch?v=zkZEnNhsJW8
- बंसल न्यूज़. उमेश चौधरी. माता कुंती की गाथा. यू ट्यूब. 13/3/2017.

टेलीविज़न धारावाहिक और फिल्में

- चोपड़ा ,बी आर. निर्देशक. महाभारत. 1988.
- ब्रूक, पीटर . निर्देशक. महाभारत. 1989.
- सागर, रामानंद. निर्देशक. श्री कृष्णा . 1993.
- आनंद कुमार, सिद्धार्थ . निर्देशक. महाभारत. 2013.
- खान, अमान. निर्देशक. महाभारत . 2013.

<u>रिसर्च पेपर और मैगज़ीन</u>

- द्विवेदी रामअवध, समालोचक- कल्पना और यथार्थवाद. फरवरी 1959 – यथार्थवाद विशेषांक, चौथा अंक.
- स्कैनर, वर्ष 3, अंक 1,